A COMPARATIVE STUDY OF FOLK POETRY IN HINDI AND MALAYALAM LITERATURE.

Thesis Submitted to
THE UNIVERSITY OF COCHIN
for the Degree of
DOCTOR OF PHILOSOPHY

by

K. KARUNAKARAN M. A.

UNDER THE SUPERVISION
of
Dr. N. E. VISWANATHA IYER M. A. (Hind
M. A. (Sanskrit), Ph. D.

DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF COCHIN
COCHIN-22
KERALA
1979

A COMPARATIVE STUDY OF FOLK POETRY IN HINDI AND MALAYALAM LITERATURE.

Thesis Submitted to
THE UNIVERSITY OF COCHIN
for the Degree of
DOCTOR OF PHILOSOPHY

by

K. KARUNAKARAN M. A.

UNDER THE SUPERVISION
of
Dr. N. E. VISWANATHA IYER M. A. (Hindi)
M. A. (Sanskrit), Ph. D.

DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF COCHIN
COCHIN-22
KERALA
1979

हिन्दी और मलयालम साहित्य के लोक काव्य का तुलनात्मक अध्ययन

कोचिन विश्वविद्यालय की
पी. एच.डी उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्ता
के. करुणाकरन एम. ए.

निर्देशक
डा०. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर
एम. ए. (हिन्दी) एम. ए. (संस्कृत) पी. एच. डी

हिन्दी विभाग
कोच्चिन विश्वविद्यालय
कोच्चिन - २२
केरल

१९७९

CERTIFICATE

This is to certify that this thesis is a bonafide record of work carried out by Shri K. Karunakaran, M.A., under my supervision and guidance for Ph.D., and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any University.

Department of Hindi,
University of Cochin
Cochin 682 022

Dr. N.E. Viswanatha Aiye
M.A.(Hindi), M.A.(Com
Ph.D.
Supervising Teacher.

विषय - सूची

पृष्ठ

प्राक्कथन ... ... 1 - 18

प्रथम अध्याय ... ... 19 - 76

लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य

विषय प्रवेश - लोक शब्द, स्थान विशेष, लोक शब्द की व्युत्पत्ति, लोक शब्द की परिभाषा, लोक संस्कृति एवं शिष्ट संस्कृति, लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य, लोक-संस्कृति [फोकलोर], लोक साहित्य का क्षेत्रात्मक अनुसंधान, लोक साहित्य सामान्य दृष्टि से, लोक साहित्य की परिभाषा, लोक साहित्य की विशेषताएं एवं महत्व, ऐतिहासिक महत्व, भौगोलिक महत्व, सामाजिक महत्व, धार्मिक महत्व, आर्थिक महत्व, सांस्कृतिक महत्व, नैतिक महत्व, भाषाशास्त्रीय महत्व, साहित्यिक महत्व, लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य में भेद, लोक साहित्य और नया युग, लोक साहित्य और अन्य विज्ञान, पुरातत्व, इतिहास, समाजशास्त्र, नृ-विज्ञाप [नरतत्वशास्त्र], मनोविज्ञान, भाषा विज्ञान, भूगोल, अर्थशास्त्र, पाठ विज्ञान, धर्म विज्ञान,शास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, साहित्य, लोक साहित्य का वर्गीकरण, अगेय विभाग, गेय विभाग- याने लोककाव्य लोककथा, परिकथा, सकल कथा, लोकनाट्य, लोकोक्ति,

पृष्ठ

लोकोक्तियों का विभाजन, मुहावरे, मुहावरों की विशेषताएं अपरिवर्तनशीलता, लक्ष्यार्थ की प्रधानता, पहेलियां, पहेलियों का वर्गीकरण, ढकोसला,

दूसरा अध्याय .... 77 - 159

लोक-काव्य [फोक पोयट्री]

सैद्धान्तिक विवेचन और परंपरा का परिचय, लोक-काव्य क्या है ?, लोक-काव्य संबन्धी मान्यताएं:विभिन्न मत, ग्रिम का सिद्धान्त - समुदायवाद, श्लेगल का सिद्धान्त- व्यक्तिवाद, स्टेथल का सिद्धान्त [जातिवाद], बिशप परसी का सिद्धान्त : चारणवाद, प्रो॰ चाइल्ड का सिद्धान्त - व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद, लोक-काव्य : दो भेद - लोक गीत और लोक गाथा, लोक-गीत : परिभाषा और व्याख्या, नाम जोड़ना, पुनरावृत्ति, प्रश्नोत्तर का प्रयोग, संख्या, लोक गीतों की वर्गीकरण- पद्धति, संस्कारों की दृष्टि से, रसानुभूति की दृष्टि से, शृंगार रस, करुणरस, ऋतुओं और व्रतों के क्रम से, विभिन्न जातियों के प्रकार से, क्रियाओं के आधार पर, रामनरेश त्रिपाठी का वर्गीकरण, पारीक का वर्गीकरण, मालेराव का वर्गीकरण, डा॰ सत्येन्द्र का वर्गीकरण, पुरुषों के गीत, साधारण गीत, अनुष्ठानों के गीत, मांगनेवालों के गीत, ग्रामीण गीत, प्रबन्ध गीत, मुक्तक गीत, स्त्रियों के गीत, संस्कार विषयक गीत, तिथि वासरक, जन्म गीत, जांति के गीत

छठी के गीत, सोहले, नेगपच्चा, संस्कार, तिथिवारक,
मासपरक, वैवाहिक वयस्काओं के, बालिकाओं के गीत,
मुक्तक, भावनात्मक, अन्य गीतों का वर्गीकरण, बालकों
का गीत, अवसरोपयोगी गीत, तीर्थयात्रा के गीत,
साधारण, किसान के गीत, श्याम परमार का वर्गीकरण,
डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय का वर्गीकरण, संस्कार गीत,
लोक-गाथा, लोक-गाथा की परिभाषा, लोक-गाथा और
बैलेड, लोक-गाथाओं की विशेषताएं, रचयिता का अज्ञात
होना, प्रामाणिक मूल पाठ का अभाव, संगीत तथा नृत्य
का अभिन्न सहयोग, स्थानीयता का प्रचुर प्रभाव, मौखिक
प्रवृत्ति, उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव, अलंकृत शैली का
अभाव, रचयिता के व्यक्तित्व, लंबी कथानक की मुख्यता,
टेक पदों की पुनरावृत्ति, लोकगाथाओं का वर्गीकरण,
विषय गत दृष्टि से, आकार संबन्धी वर्गीकरण, लघुगाथाएं,
बृहत् गाथाएं, डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय का वर्गीकरण,
प्रेम कथात्मक लोक-गाथाएं [लव बैलेड्स], वीरकथात्मक
गाथाएं [हीरोइक बैलेड्स], रोमांच कथात्मक गाथाएं
[रोमैंटिक बैलड्स], प्रोफेसर कीट्रिज का वर्गीकरण,
प्रो॰ गूमर का वर्गीकरण, प्राचीनतम गाथाएं, कौटुंबिक
गाथाएं, विषय गत भिन्नता, लोक तत्व की परंपरा
अन्य काव्यों में, भारतीय परंपरा, वैदिक ग्रन्थों में,
पुराणेतिहासों में, बौद्धजातकों में, हिन्दी में लोक-काव्य
की परंपरा, पूर्ववर्ती परंपरा : हिन्दी में, प्रारंभिक युग,
कबीर की रचनाएं, सूर की रचनाएं, जायसी में,

तुलसी में, एक छन्द द्रष्टव्य, हिन्दी के लोक काव्यों का इतिहास, राजस्थानी, ब्रजभाषा में, अवधि, बुन्देल खण्डी, छत्तीसगढी, मालवी, कौरवी, मगही, मैथिली, भोजपुरी, कनोजी,

तीसरा अध्याय .... 160 - 273

हिन्दी की विभिन्न बोलियों का लोक गीत
संक्षिप्त सर्वेक्षण-

मागधी समुदाय, अवधी समुदाय, ब्रज समुदाय, राजस्थानी समुदाय, मैथिली लोक गीत, संस्कार गीत, विवाह के गीत, बटगमनी, मटोती, छठ के गीत, भगवती के गीत, महेशवाणी गीत, माता शीतला के गीत, नदी के गीत, साँपपूजा के गीत, बरगम गीत, झिझिया के गीत, श्रमगीत, चाँचर, जाँत के गीत, पमरिया के गीत, ऋतु गीत, फाग, चैतावर, मधुश्रावनी, बट सावित्री, पावस, मलार, साँझ, बारहमासा, झुमर, जट-जटनी, श्यामा-चकेबा, रास, नटुआ के गीत, नचारी, मगही लोकगीत, मगही का क्षेत्र, मगही के लोकगीत, संस्कार गीत, सोहर, मुंडन के गीत, जनेऊ गीत, विवाह के गीत, धार्मिक गीत, एक धार्मिक गीत, श्रमगीत, जँतसारी, नृत्य गीत, जगुली नृत्य गीत, ऋतु गीत, एक बरसाती गीत, चैता, त्योहार गीत, भइयादूज, माता भइया गीत, भोजपुरी लोक गीत, संस्कार गीत, सोहर, मुंडन, जनेऊ के गीत, विवाह, मृत्युगीत, ऋतुगीत, एक कजली गीत, फगुआ, बारहमासा, त्योहार गीत, नागपंचमी, बिहुला, गोधन, पिड़िया; एक पिड़िया गीत, छठी गीत, जाति संबन्धी गीत, पचरागीत,

पचरागीत, खिउरिया, श्रमगीत, जँतसार, रोपनी, सोहनी
देवी देवताओं के गीत, अवधी लोक गीत, अवधी का लोक-गीत
ऋतु गीत, कजली, रेखता [होली], बारह मासी, श्रम गीत,
जँतसार, निराही, मंगल रोपनी, खेत में कटनी, नील बीनने
का गीत, कोल्हू का गीत, चरखे का गीत, मेले के गीत, जन्म
सोहर, दोहद, विवाह के गीत [भँवर गीत], संस्कार गीत,
सोहर, मृत्यु का एक गीत, धार्मिक गीत, एक शीतला माता
गीत, निर्गुण, बालगीत, विविध गीत, पाटनी, बघेली लोक
काव्य, भाषा सीमा, संस्कार गीत, जन्म गीत, मुंडन, जनेऊ,
विवाह के गीत, वरमा के गीत, कन्यादान के गीत, भाँवर,
बिदागीत, ऋतुगीत, कजली, फाग, बारहमासी, प्रेम-गीत,
दादरा, बिरहा, बालगीत, एक बालगीत, आदिवासियों का
गीत, करमा गीत, छत्तीसगढी लोक गीत, लोकगीत, नृत्यगीत,
सुआगीत, डंडा गीत, मंडई गीत, करमा गीत, ऋतु गीत, बारह
मासा, होली, प्रणय गीत, त्योहार गीत, गौरा गीत, संस्कार
गीत, विवाह के गीत, धार्मिक गीत, बालगीत, बुन्देली लोक
गीत, एक सावन गीत, राछरे, फाग, श्रमगीत, बिलवारी,
त्यागहार गीत, नौतार के गीत, दिवारी के गीत, कार्तिक
गीत, खेल के गीत, संस्कार गीत, सोहर, विवाह के गीत,
भाँवर, बिदाई, धार्मिक गीत, माता का भजन गीत,
गाथा के गीत, बालगीत, मामुलिया का खेल, सुअटा,
गालियों का गीत, चमार के गीत, ब्रजलोक गीत, होली, धार्मिक
गीत, देवी, संस्कार गीत, विवाह गीत, भाँवर, बिदाई का
गीत, खेल के गीत, कबडी का गीत, कोडा जमाल शाही, चील
दटा, लिरिया, आटे-बाटे, चटका बटकन, छारा छारा,
भोजी लोकगीत, संस्कार गीत, सोहर, बरुवागीत, विवाह
गीत, बन्ना गीत, बिदाई के गीत, ऋतु तथा पर्व के गीत,

फाग, बारह मासा, मेला के गीत, श्रमगीत, जंतसार, रोपा-निराई गीत, जाति गीत, अहीरों के गीत, चमारों के गीत, कहारों के गीत, राजस्थानी लोक गीत, ऋतु गीत, झूला गीत, तीज, होली फाग, श्रम गीत, भात, नन्द भावज, कुरजाँ, संस्कार गीत, विवाह के गीत, बनड़ा, भाँवरे, धार्मिक गीत, सेठल का गीत, बाल गीत, मालवी लोक गीत, कुलज‍ऊ ‖एक सोहर‖ प्रेम गीत, आफू, गूजरी, बाल गीत, साँझी, विवाह गीत, बीरा भात, विदा, कौरवी लोक गीत, श्रमगीत, मलहोर, मजदूरिन का सपना, एक सावन गीत, पटका, बारह मासा, त्योहार गीत, संस्कार गीत, विवाह गीत, धार्मिक गीत, गंगा स्तुति, बालगीत, खड़ी बोली का लोक गीत,

चौथा अध्याय .... 274 - 36

मलयालम लोक गीत - संक्षिप्त सर्वेक्षण

केरल राज्य एवं मलयालम भाषा, थोड़ा इतिहास, मलयालम लोककाव्य, लोकगीत, लोकगीतों का श्रेणी विभाजन, धार्मिक अनुष्ठानों से सम्बन्धित गीत, मजदूरों के गीत ‖श्रमगीत‖, खेल और विनोद के गीत, ख्रिस्तीय गीत ‖नस्राणिप्पाट्टु‖, इस्लामिक गीत ‖माप्पिलप्पाट्टु‖, आचारप्पाट्टुकल ‖सांस्कृतिक गीत‖, जन्म संस्कार के गीत ‖सोहर विभाग के गीत‖, पुत्र प्राप्ति का गीत, याचकप्पाट्टु ‖दोहद‖ संतोयप्पाट्टु ‖शिशुजन्माह्लाद‖ मच्चिप्पाट्टु ‖बांझ स्त्री का दुःख गीत‖, ताराट्टुपाट्टु ‖लोरी गीत‖, शिशुगीत, तुपिप्पाट्टु, कल्याणप्पाट्टु ‖विवाह संस्कार के गीत‖ अटच्चुतुरप्पाट्टु, कण्णाक्कुपाट्टु ‖मरसिमा‖, अनुष्ठानिक गीत ‖अनुष्ठानप्पाट्टुकल‖, पूर्वधार्मिक विधाएं, सर्पप्पाट्टु ‖नागाराधना के गीत‖, नागोत्पत्ति संबन्धी गीत, परदेवप्पाट्टु ‖कुलदेवता स्तुति‖, एक परदेव पाट्टु,

कळमपाट्टु [आलंबन गीत], तीयाट्टु, तोट्टम, तोट्टम पाट्टु, अय्यप्पन पाट्टु, कुत्तियोट्टप्पाट्टु, कुत्तियोट्टम का एक गीत, तट्टु मरुत्तट्टु [प्रश्नोत्तर] अर्ध धार्मिक अनुष्ठानिक गीत, नावेरुप्पाट्टु, एक गीत, पिणिप्पाट्टु [केलर पाट्टु] वारुप्पाट्टु, ओणप्पाट्टु, ओणम वरुम्नु, ओणम का महत्व, तिरुवातिरप्पाट्टु, एक तिरुवातिरप्पाट्टु, भरणिप्पाट्टु, पूरप्पाट्टु, विशेष जातियों का गीत[जाति गीत] पाणर पाट्टु, तुकिलुणर्त्तल पाट्टु [जागरण के गीत] कणियारपाट्टु, वेलरप्पाट्टु, पुल्लुवर, ब्राह्मणिप्पाट्टु, नस्राणि पाट्टु[ख्रिस्तीय गीत],आराधना संबन्धी गीत, मर्गोम्माप्पाट्टु, नल्लोरेत्तलम, मर्गंकरप्पाट्टु, रंपानपाट्टु, पल्लिप्पाट्टु, कल्याण पाट्टु, आरंभदिनप्पाट्टु, अंतवार्त, मयिलांचिप्पाट्टु [मेहंदी के गीत], मंगल्यपाट्टु, वातुप्पाट्टु, कल्याणरात्रि के गीत- अटच्चु तुरप्पाट्टु, कल्याणक्कलीप्पाट्टु, मार्गकलिप्पाट्टु, माप्पिलप्पाट्टु [इस्लामिक गीत], आराधना प्रधान गीत, मालप्पाट्टु, नूलमालप्पाट्टु, वेदान्त गीत [कप्पप्पाट्टु] वीरगीत, पटपाट्टु, कल्याणप्पाट्टु, ओप्पनप्पाट्टु, पणिप्पाट्टु [मज़दूरों के गीत], कृषक गीत, चेम्नोल्लु, ताराप्पाट्टु, नेरम पोय नेरत्तु, वञ्चिप्पाट्टु [नाव-गीत] वट्टिप्पाट्टु, वण्डिप्पाट्टु, इञ्जप्पाट्टु, एक इञ्जप्पाट्टु, वेट्टप्पाट्टु, मान[हिरण],खेल और मनोरंजन के गीत [कलि-तमाशप्पाट्टु], संघकलिप्पाट्टु, एवामत्तुकलिप्पाट्टु, एक विशुगीत, पेवरनाटकप्पाट्टु, वट्टक्कलिप्पाट्टु, कोल्कलिप्पाट्टु, तलयाट्टक्कलिप्पाट्टु, पेण्कलिप्पाट्टु, मार्ग कलिप्पाट्टु, प्रेम गीत, वेदान्तप्पाट्टु,

पृष्ठ

पांचवां अध्याय .... 369 - 468

हिन्दी की विविध बोलियों की लोक गाथाओं का संक्षिप्त और प्रमुख लोक गाथाओं का विस्तृत अध्ययन

मैथिली लोक-गाथाएं, लोरिका, रम्मू सरदार, सलहेस, दीना-भद्री, बिहुला, ब्रजभान का कथागीत, गोपीचन्द, अजुरा का कथा गीत, नेवार का कथागीत, जलेच्छी, मगही लोकगाथाएं, भोजपुरी लोक-गाथाएं, आल्हा, लोरिक, विजयमल, बाबू कुंवर सिंह, शोभानयका बनजारा, सोरठी, बिहुला, राजा भरथरी, राजा गोपीचन्द, अवधी की लोक गाथाएं, श्रवण-कथा, शिव-पार्वती, कुसुमा, चन्द्रावली, बघेली की लोक-गाथा, छत्तीस गढ़ी लोक गाथाएं, राजा वीरसिंह, देवी कथा-गाथा, बुंदेल खण्ड की लोक-गाथाएं, जगद्देव-पंवारा, कोरस देव, अमानसिंह, ब्रज की लोक-गाथाएं, रांझा, जाहर पीर, ढोला, चन्द्रावली, कनोजी लोक गाथाएं, ऊमदेव, धन्नइया का पंवाडा, राजस्थानी लोक-गाथाएं, पाबूजी, नागजिये का पंवाडा, मेणादे, निहलदे, कौरवी या खड़ी बोली लोकगाथाएं, मालवी लोक-गाथा, चैनसिंह, हूंगासिंह, नर्मदा में नाव डूबे, हिन्दी की प्रमुख लोक-गाथाओं की विस्तृत व्याख्या, आल्हा, आल्हा और परमाल रासो, आल्हा का मूलपाठ, रचयिता, कथा, आल्हा गाथा की ऐतिहासिकता, आल्हा के चरित्र, लोरिकी, लोरिक की कथा भिन्न बोलियों में, लोरिकी की कथा, लोरिकी की ऐतिहासिकता, विजयमल, लोक गाथा की कथा सूचना, गाथा के अन्य रूपों का दिगदर्शन, विजयमल लोक गाथा की ऐतिहासिकता, बाबू कुंवरसिंह, भारतीय विद्रोह की भूमिका, विद्रोह के कारण, कुंवर सिंह का अन्त्य, शोभा नयका बनजारा, कथा संग्रह, ऐतिहासिकता का पक्ष, सोरठी, रोमांच तत्व, ऐतिहासिकता, गायकों का विश्वास, गुरु गोरखनाथ का उद्धरण

स्थानों का नाम, बिहुला, कथा, ऐतिहासिकता, राजा भरथरी भरथरी लोकगाथा की ऐतिहासिकता, राजा गोपीचन्द, गोपीचन्द गाथा की ऐतिहासिकता, संत असंत, निष्कर्ष ।

छठा अध्याय .... 469 - 547

मलयालम लोक-गाथाओं का संक्षिप्त परिचय

वर्गीकरण, धार्मिक कथागीत, कांक्षमाप्पाट्टु, अय्यप्पन कथप्पाट्टु, पुलिशेर्च का एक प्रसंग, ईश्वरोर्व: एक शास्तापाट्टु, वावरस्वामिप्पाट्टु, सीता दु:ख पाट्टु, मावारतम पाट्टु, भीमकथाप्पाट्टु, सामाजिक गाथाएं, वटक्कनपाट्टु, पुत्तुरमपाट्टु, आरोमल चेकवर, पुत्तरियंकम, उण्णिआर्चा, आरोमुण्णी, तच्चोलिक्कप्पाट्टु, ओतेनन का विवाह, पोन्नापुरम कोट्टा, ओतेनन की वीर मृत्यु, तच्चोलि चन्तु, पालाट्टु कोमन, पुतुनाटल केलु, इलनाटनपाट्टु, वीरइलनाटनपाट्टु, तण्णीर मुक्कं चुकप्पाट्टु, वेडुम्नूर कु गाति, अतियाकपिक्कप्पाट्टु, तेकनपाट्टु, ऐतिहासिक गीत, इरविक्कुट्टिपिल्ला पाट्टु, तंपुरान पाट्टु, उलकुटे पेरुमालप्पाट्टु, अंकुतंपुरानपाट्टु, वलिय तंपिकुंचितंपीपाट्टु, पट्टाणिकथप्पाट्टु, ऐतिह्याधिष्ठित कथागीत, कन्निक्यम पोर, वटकि ल्लमला, पूवादेवी, अतिमानुषिक कथागीत, नीली कथाप्पाट्टु, सामान्य निरीक्षण,

सातवाँ अध्याय .... 548 - 594

हिन्दी और मलयालम लोक-गीतों का तुलनात्मक अध्ययन

सांस्कृतिक, पुत्रजन्म, मुंडन, विवाह गीत, विवाह में मेंहदी का महत्व, मृत्यु गीत, ऋतु गीतों की तुलना, विभिन्न जातियों के गीत

श्रमगीत, अन्य विविध गीतों में तुलना, ऐतिहासिक गीत, राजनैतिक गीत, अन्य विविध गीतों की तुलना, पारिवारिक संबन्धों के गीत, नारी पक्ष का महत्व, आदर्श सतीत्व के गीत, सामाजिक कुरीतियों के व्यंजक गीत, नीति संबन्धी गीत, बालगीत, हास-परिहास के गीत, निष्कर्ष हैसिल अपनी सब.जन मिट्ठा,

आठवाँ अध्याय .... 595 - 653

हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं का तुलनात्मक अध्ययन

हिन्दी और मलयालम लोकगाथाओं में विषय वस्तु, आल्हा और तच्चोलिप्पाट्टु, लोरिकायन और इरवलाञ्ञ पाट्टु, विजयमल और चेरुकुन्नूर आदि, प्रेम कथात्मक लोक गाथाएं, सहलेस और आरोमल चेकवर के गीत, दीना भद्री और वन्नु केळु के कथागीत, हिन्दी और मलयालम रोमांच कथात्मक लोक-गाथाएं, सोरठी और पंचवकाट्टु नीली, कमाण्डलि और उलेची की गाथाएं, इतिहास प्रधान लोककाव्य, बाबू कुंवरसिंह और इरविकुट्टिपिल्ला, हिन्दी और मलयालम लोक काव्यों में भाव साम्य, हिन्दी और मलयालम लोक-गाथाओं में सांस्कृतिक महत्व, हिन्दी और मलयालम लोक गाथा में मानवेतर तत्व, लोक-काव्यों में कलापक्ष - हिन्दी और मलयालम, साहित्यिक महत्व, हिन्दी और मलयालम लोक-गाथाओं में लोक संस्कृति की अभिव्यक्ति, लोक संस्कार की अभिव्यक्ति, जीवोत्पत्ति विषयक लोक-विश्वास, कन्या विवाह विषयक लोक विश्वास, विवाहादि कार्यों में लग्न पत्रिका, विवाह संस्कार, विवाह संस्कार, लोक विश्वास, शकुन और अपशकुन संबन्धी लोक विश्वास, वन संबन्धी लोक विश्वास, पर्वत विषयक लोक विश्वास, नदीगण संबन्धी लोक विश्वास, तप और इन्द्रासन विषयक लोक-विश्वास, मृतक को जीवित रखने का लोक-विश्वास ।

नवाँ अध्याय .... 654 - 692

उपसंहार

हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों में दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक भावों का निरूपण एवं उपसंहार

लोक-काव्य में दर्शन का भाव, मनोवैज्ञानिक भावों का निरूपण, नारी-मनोविज्ञान - एक अन्य रूप, लोक-काव्य में सामाजिक भावों का स्वरूप, प्रेम महत्व सम्बन्धी, सीता की कथा, वसुधैव कुटुंबकं वाला आदर्श, सामाजिक बातों में तीजत्योहारों का संबन्ध, पक्षी पशु वृक्ष आदि का निरूपण, पशु, वृक्ष, फूल, लोककाव्यों में संगीत तत्व, नृत्य और लोक-काव्य, ताल, लोक-काव्यों का कुछ समान ध्येय और आदर्श, उपसंहार ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची .... 693 - 706

प्रा क्क थ न

मानव जीवन एक ऐसा विशाल सत्य है कि यह व्यक्ति से आरंभ होकर समष्टि की अपारता को छूता है। यह संपूर्ण प्रकृति के मनस तत्व को प्रकाशमान बना देता है। इस महान तथ्य का विश्लेषण करना कठिन काम है। तोभी शोध कार्य के रूप में मुझे जो सुअवसर प्राप्त हुआ उसका सहारा लेकर मैं ने अपने मन की उस साध को सार्थक बनाने की चेष्टा की थी, वही यह शोध प्रबन्ध है। वर्षों से मेरे मन में मेरे अपने गाँव वाले लोक गायकों की ओर बड़ी भक्ति थी। उन व्यक्तियों से, जिन्होंने अपने हाथ में नंतुणी लेकर सबेरे सबेरे मेरे घर के गवाक्ष में आकर "तुयिलुणर्तल" के गीत [जागरण-गीत] गाकर मेरे बालक मन को आनंद विभोर कर दिया था, जिन "पुल्लुवन" और "पुल्लुवत्ती" ने [एक जाति विशेष के पुरुष और स्त्री] आकर अपनी वीणा और घट बजाकर मेरे आँगन में गानामृत की वर्षा बरसाई है, और जिन जिन पनिहारिनों और अन्य खेत मजदूरिनों ने मेरे घर के सामने के खेत में, पानी सिंचाने, बोने, निराने, काटने, और पीसने के समय मधुर शब्द से गीत गागाकर मेरे बाल-मन को कल्पना विमान में बिठाकर ऊपर उठाया था, उन सब के प्रति झुकाव थी। बचपन से ही मेरे मन में गान-गंगा बहाकर इस ओर मुझे आकृष्ट करनेवाले ऋषि सदृश स्वर्गीय मेरे दादा थे, उनके प्रति आज भी मुझे श्रद्धा है। उनके नाम, उन सब के लिए कुछ लिखने की मेरी साध इस प्रबन्ध के अर्पण के द्वारा मैं ने पूरी की है।

हर देश की सांस्कृतिक सत्ता का उत्स वहाँ का लोक जीवन है। जन जन के मन और आचरण में सन्निहित जीवतत्वों में संस्कृति का विकसित होना स्वाभाविक है। इस विकास से अनुभव देय होनेवाला सौरभ समस्त जनता का होता है। प्रत्येक देश की सांस्कृतिक सत्ता की ओर दृष्टिपात करने पर यह तथ्य निश्चित रूप से दृष्टिगोचर हो जाता है, जिस की व्याप्ति भारत के हर प्रान्त की संस्कृति में भी देखी जा सकती है। जन जीवन में बिखरे पड़े कितने कितने लोकाचारों, संस्कारों एवं परम्परागत विश्वासों में यह संस्कृति अपनी पंखुड़ी का निर्माण करती है। यह तभी स्पष्ट हो जाता है, जब हम लोक साहित्य का अध्ययन कर लेंगे। ऐसी हज़ारों खण्डहरों में हमारी संस्कृति के गठन के ईंट, पत्थरों का परिचय पा सकते हैं। अनादि काल से ही लोक जीवन से निष्पन्न सौन्दर्यानुभूति का परिचय प्राप्त हो जाता था। उस समय शास्त्रीय दृष्टि इस ओर होती भी नहीं थी। उस समय से ही लोक प्रांगण में प्रादुर्भूत अनेक सौन्दर्य संयुक्त भावनाओं के द्वारा देश की संस्कृति का स्वरूप संवारा जा रहा था। आज के परिष्कृत समाज में भी सांस्कृतिक सरिता लोकवाणी के पथ पर सहस्र धारा होकर प्रवाहित हो रही है। यह युग बुद्धिमानी एवं कर्मठता का है तो भी लोक-विश्वास एवं लोकाचारों का विकास वैसा तो कायम है, जैसा प्राचीन ज़माने में था। इस कारण से इतना कहना अधिक नहीं होगा कि हमारी संस्कृति की आत्मा लोक संस्कृति में गूंज उठती है उसका निवास स्थान भी आम जनता का जीवन क्षेत्र है। लोक संस्कृति की सर्वाधिक महत्व पूर्ण विशेषता सचमुच आत्म सत्ता है। "आत्मौपम्येनसर्वत्र" के सिद्धान्त पर आगे बढ़ता हुआ लोक संस्कृति का प्रत्येक चरण समस्त प्रकृति व्यापिनी विविधता को एक धागे में पिरो कर रखता है। समस्त विश्व में बिखरे लोक-जीवन नानात्व में एकत्व की भांति बाह्य-वैविध्य और बहुरूपता से आच्छादित होते हुए भी आन्तरिक ऐक्य और अनन्यता के आलोक से प्रकाशित है। "आत्मवत् सर्वभूतेषु" की आधार शिला पर स्थित होकर लोक हृदय का आशय सभी कुछ हो जाता है।

देश-कालों की सीमाओं को लाँघते हुए लोक साधक नैसर्गिक भाव - वृत्तियों की उपासना में अपनी आत्मा का विकास कर रहा है । इस विकास चेष्टा की विश्वोन्मुख प्रवृत्ति एकात्मानुभूति की परम सीमा पर पहुँचती है । यहाँ आध्यात्मिकता का दर्शन भी हो सकता है । विभिन्न साम्प्रदायिक संगठनों के रूप में इस आध्यात्मिक स्वरूप का प्रकाशन होता है । दूसरे अर्थ में आत्म समता की भावभूमि पर स्थित लोक जीवन ही विश्व की सांस्कृतिक धार्मिक, ऐतिहासिक और सामाजिक प्रगति का प्रेरक तत्व है ।

लोक-जीवन से संबन्ध रखनेवाली भावात्मक एवं सृजनात्मक सामग्री ही लोक संस्कृति कहला सकती है । लोक मानव के भावजगत की संचित है लोक साहित्य । यह सामान्य जनता के हर्षोल्लास के क्षणों एवं मनःस्थितियों का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण है । इसके अन्तर्गत लोक गीत, लोकगाथा, लोक-कथा, लोक-नाट्य पहेलियाँ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, ढकोसले, सुभाषित इत्यादि का समावेश रहता है । मानव भावनाओं का अत्यन्त कोमल सहज एवं रसात्मक अभिव्यक्ति का जो प्रभावकारी प्रमाण लोक-काव्य में होता है वह अन्यत्र कहीं इतना सुलभ नहीं । लोक-गीतों में सामान्य जन जीवन का एक अंश स्वरों के आरोह अवरोह में बाँध कर मुखरित होता है । भावनाओं का जो उन्मत्त विलास लोक काव्य में प्रतिबिंबित होताहै, वह सहृदय व्यक्ति को विस्मय विमुग्ध कर देता है ।

यह युग हृदय पक्ष से अधिक बुद्धि पक्ष को प्रधानता देनेवाला है । इस कारण से मस्तिष्क की उपलब्धियों से गौरवान्वित होकर मनुष्य ने हृदय की सच्ची संपदा को उपेक्षित सा कर लिया है । इस कारण से लोकगीत विभूतियों की ओर भी उपेक्षा की भावना बनी रही । इसके फल स्वरूप अभिव्यक्ति कला शिक्षित समाज में बढ रही । कलाकारों का कर्मपथ भी बौद्धिक सानी में पड़कर नियमों की जंजीरों में जकड़ गया । वह सामान्य

जन जीवन से सर्वथा परे एक ऊंची धरातल पर प्रतिष्ठित होने लगा। लोक-कला एवं साहित्य की मांग किसी से भी न उठी तो भी लोक-कलाकार ने निश्चिन्त रूप में अपनी भाव मय सृजन प्रक्रिया को जारी रखा। ग्रामीण अंचलों, गांव मन्दिरों, पेड़ की छायाओं, चबूतरों, खेतों खलिहानोंआदियों में उसका प्रदर्शन प्रवर्तन होता रहा। स्वर साधना चलती रही, गीतों के मधुर बोल बिखरते रहे। इन कला सामग्रियों में जीवन की, वास्तविक संस्कृति के तत्व समाविष्ट रहे।

वर्तमान युग मानवीय मूल्यों की ओर निषेधात्मक प्रवृत्ति का नहीं जागरण के प्रथम स्पर्श में ही बुद्धि की विलक्षणता और चमत्कारिता का परिचय करके हृदय गम्य चमत्कारिता के आदर्श पर अभिव्यक्ति का मूल्यांकन होने लगा प्रगति की एक तीव्र लहर के आघात से लोक कलाओं पर आच्छादित अनास्था का आवरण छिन्न भिन्न हो उठा, और शताब्दियों से सोई हुई कोमल भावचेतना की परतों का विच्छेदन करती हुई विशाल वायु मंडल से प्रसारित हो गयीं और श्रोता ओं का सजग हृदय उन स्वरों में समाहित संवेदनशील मर्मानुभूति को सहेजने केलिए व्याकुल हो उठा। पाश्चात्य लोक साहित्य के क्षेत्र में जो अनुसंधानात्मक प्रवृत्ति शुरू हुई उसकी झलक सुदूरवर्ती हमारे देशों को भी चमत्कृत करने लगा। पहले इस कार्य के मूल में विभिन्न जातियों के प्रति जिज्ञासा-वृत्ति की प्रेरणा निहित थी जिसने आगे चलकर अन्य तत्वों में भी एक वैज्ञानिक रूप धारण कर लिया।

भारत के लोक-साहित्य क्षेत्र में अनुसंधानात्मक कार्य का आरंभ अंग्रेजी शासन के समय में हुआ। भारतीय जन जीवन की गहराइयों में छिपे लोक-तत्वों का सम्यक ज्ञान ही इस प्रयास का मूल मूल उद्देश्य था ।

इस लोक दर्शनी दृष्टि के विस्तार का प्रथम श्रेय निर्विवाद रूप से अंग्रेज़ों को प्राप्त है । बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में अंग्रेज़ों से अनुप्रेरित होकर और उनके प्रयत्नों का फल अनुकरणीय जान कर भारतीय साधकों में भी लोक-साहित्य के प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ । भारत के विभिन्न प्रान्तों में लोक-साहित्य के अध्ययन की पोठीलहरें उत्पन्न होने लगीं । हिन्दी की विविध बोलियों में लोक साहित्य पर अध्ययन होने लगा । मलयालम के लोक साहित्य क्षेत्र में भी इसका असर कुछ पड़ा । लोक-गीतों लोक-गाथाओं के संग्रह-ग्रन्थ तो विशाल संख्या में प्राप्त होते हैं पर विवेचनात्मक अध्ययन का अभाव तब भी रहा ।

लोक साहित्य के विविध अंगों में सबसे अधिक कार्य लोक-गीतों पर हुआ है । हर कहीं जन कंठों में निवास करने वाले अनेक गीतों को लिपि बद्ध करके उन्हें काल के गर्भ में विलीन होने से बचाया जा रहा है । इस दृष्टि से लोक गीतों में निहित भाव संवेदनाओं, युग नीतियों एवं परम्पराओं का तुलनात्मक अध्ययन पूर्णतया अपेक्षित है ।

अभी तक हिन्दी और मलयालम के लोक साहित्य संबन्धी अध्ययन के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन प्रणाली की वांछनीय प्रगति का अभाव रहा है । मेरे इस प्रबन्ध के द्वारा इस रिक्तता का किंचित भी निराकरण हो सकता है तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूँगा । हिन्दी और मलयालम भाषाएं भिन्न भिन्न कुल की हैं । हिन्दी आर्य भाषा है, मलयालम द्राविडी । आर्यभाषा में प्राप्त एक साहित्य विधा की तुलना द्राविड कुल की एक भाषा में प्राप्त समान प्रकृति की साहित्य-विधा से करते समय जो भाषा गत वैषम्य सामने आता है, उसके रहते हुए भी, समान स्वभाव की एक साहित्य विधा की समता की सुविधा प्राप्त भी है । यहाँ एक भाषा में प्राप्त लोक साहित्य की एक विधा की तुलना दूसरी एक भाषा में प्राप्त लोक साहित्य की उसी विधा से की जाती है । यह कार्य अनेकों अर्थों में सार्थक काम है ।

ऊपर मैं ने लोक साहित्य क्षेत्र में प्राप्त अध्ययन प्रणाली का जो उल्लेख किया है, उसके समान तुलनात्मक अध्ययनों का प्रयत्न कम हुआ है । हिन्दी और मलयालम साहित्य के लोक काव्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रथम बार आता है । यह मौलिक कार्य इस दृष्टि से महत्व पूर्ण है ।

लोक साहित्य की काव्य-विधा पर यहाँ मैं ने जो प्रबन्ध प्रस्तुत किया है, उस में कुल नौ अध्याय हैं । इन अध्यायों में हिन्दी और मलयालम दोनों भाषाओं में प्राप्त लोक-काव्य [फोक-पोयट्री] का गौरवपूर्ण अध्ययन हुआ है । प्रथम अध्याय में लोक शब्द, लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य के पारिभाषिक रूपों पर प्रकाश डाला गया है । पहले लोक शब्द की व्याख्या की गयी है । लोक शब्द की प्राचीनता का प्रमाण वेदों में प्राप्त है । "भुवन" और "स्थान" के अर्थ में प्रयुक्त होता हुआ, यह शब्द अन्त में जन का पर्याय हो गया । लोक की सत्ता अत्यंत व्यापक है । लोक के अंतर्गत वह समस्त सरल, स्वाभाविक मानव समाज समाविष्ट है, जो आडंबर मयी, शिक्षा एवं उससे आर्जित विलासिता से परे रहकर प्राकृतिक जीवन व्यतीत करता है । इस के बाद लोक-संस्कृति की परिभाषा दी गयी है । फोकलोर और लोक-संस्कृति की परिभाषाएं दी गयी है । फोक लोर और लोक संस्कृति या लोक वार्ता का पारस्परिक संबन्ध दिखाते हुए उस की व्यापकता एवं विविध भाषाओं में फोक लोर शब्द के उपयोग का विवेचन आदियों पर विचार किया है । फोक लोर शब्द असंस्कृत के ज्ञान का बोधक है । सामान्य जनजीवन के अध्ययन के मार्ग में इकट्ठी की गयी सामग्री को जो जन जीवन का शास्त्र है, फोक लोर संज्ञा दी गयी है । लोक संस्कृति में अंतर का भाव और लोक-जीवन में व्याप्त समस्त मानसिक एवं क्रियात्मक विषयों की गणना भी यहाँ हुई है । लोक साहित्य एवं लोक संस्कृति का अंतर और अंगांगि भाव के रूप में लेकर उनका विचार भी इस खण्ड में किया गया है । लोक साहित्य की मुख्य विधाएं - अगेय और गेय विभागों का वर्गीकरण एवं अगेय विभाग की व्याख्या भी इस अध्याय में किया है ।

अंतिम विभाग में लोक कथा लोक - नाट्य, मुहावरे, आदियों पर विचार किया गया है । लोकोक्तियों, मुहावरों, ढकोसलों का विवरण भी यहाँ किया है । लोक - साहित्य का महत्व और उसका अन्य विषयों से संबन्ध भी दिया गया है । महत्ता के प्रत्येक धरातल पर, लोक साहित्य को रख कर उस की सम्यक समीक्षा की गयी है ।

दूसरे अध्याय में इस प्रबन्ध के मुख्य विषय लोक काव्य का सैद्धान्तिक विवेचन और परंपरा का विवरण है । यहाँ प्रथमतः परिभाषा एवं व्याख्या दी गयी है । लोक - काव्य का वर्गीकरण रूप परक दृष्टि से लोक गीत और लोक गाथा है । गीत आकार में छोटे हैं और गाथाएं आकार में बड़ी हैं । इसके बाद सैद्धान्तिक रूप में लोक गीत की परिभाषा एवं लोक - गीतों का वर्गीकरण किया है । लोक - गीतों के वर्गीकरण की पद्धति, विभिन्न मतों के आधार पर उस का विश्लेषण भी किया है । उस के बाद लोक-गीतों के समग्र रूपों को निश्चित वर्गों में विभाजित किया गया है - संस्कारों की दृष्टि से, रसानुभूति की दृष्टि से ऋतुओं की दृष्टि से और अन्य विविधता की दृष्टि से । इस के बाद लोक गाथाओं की परिभाषा एवं लोक-काव्य की उत्पत्ति संबन्धी भिन्न मतों पर विचार किया गया है । लोक काव्य की भारतीय परंपरा पर भी यहाँ विचार किया गया है । इस प्रकार लोक-काव्य का तात्विक विवेचन दूसरे अध्याय में प्राप्त है । परम्परा की दृष्टि से हिन्दी लोक-काव्य का अध्ययन भी प्रस्तुत किया है ।

तीसरे अध्याय में हिन्दी की विविध बोलियों में प्राप्त लोक-गीतों का संक्षिप्त सर्वेक्षण है । पूर्व से पश्चिम के क्रम से, मैथिली, मगही, भोजपुरी, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, बुंदेली, ब्रज, कन्नौजी, राजस्थानी, मालवी, आदि बोलियों में प्राप्त समस्त लोक गीतों का संक्षिप्त सर्वेक्षण हुआ है ।

पंजाबी और पहाड़ी लोक - गीतों पर भी थोड़ा विचार किया गया है । उन गीतों के वर्गीकरण परिभाषा और उदाहरण भी दिये हैं । संस्कार गीतों के अन्तर्गत, जन्म संस्कार संबन्धी गीत, विवाह संस्कार के गीत, और मृत्यु संस्कार संबन्धी गीत मुख्य हैं । नामकरण, कर्णछेदन यज्ञोपवीत जैसे संस्कार संबन्धी गीत भी हैं । जन्म संस्कार के गीतों में - पुत्रकामना बंध्यत्व दुःख दोहद, प्रसव - कष्ट, उस समय की दवादारू मंत्र तंत्र, पुत्र जन्म - आनंद, मंगलाचरण, बधाई, रोचना, पालना [लोरी] झुन झुना, कठुला, आशीष, छठी, अन्नप्राशन, मुण्डन, छेदन, आदि विषयों एवं अवसरों से संबन्धित लोक - गीतों का यथावत् परिचय किया है । यज्ञोप वीत संस्कार संबन्धी गीतों में यज्ञोप वीत की विभिन्न विधियों के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों का अनुशीलन हुआ है ।

विवाह संस्कार संबन्धी गीतों में समस्त हिन्दी प्रदेशों में प्रचलित वैवाहिक रीतियों के समय गाए जानेवाले गीतों का वर्णन है । विविध बोलियों में विशाल संख्या में विवाह गीत प्राप्त हैं । उन में कन्या पक्ष और वर पक्ष के गीतों का पृथक, पृथक, विवेचन हुआ है । इन गीतों में, तिलक, तेल, हल्दी, माटी, गोठाई, सिला पोहनी, मण्डप, कलशा धराई, बरयात्रा, द्वार पूजन, कन्यादान, भांवर, कोहबर, बाती, मिलाई, कुआ-पूजन, विदाई, कंगन छुड़ाई, आदि विधियों का उल्लेख हुआ है ।

मृत्यु - संस्कार संबन्धी गीतों को गाने का प्रचलन सारी बोलियों में समान रूप से नहीं है । तथा भी कुछ लोकगीत सारे क्षेत्र में समान रूप से प्राप्त हैं । नाथ पंथी योगियों के और कबीर के कुछ गीत भी इस अवसर पर गाये जाते हैं । उन गीतों को लोक-गीतों में स्थान दिया गया है । लोक गीतों में मृत्यु गीतों का स्थान महत्व पूर्ण है । सारी दुनियां में मानव जीवन इन संस्कारों से होकर चलता है ।

ऋतु संबन्धी गीतों में विभिन्न ऋतुओं में गाये जाने वाले गीतों का वर्णन हुआ है । हिन्दी प्रदेशों में मुख्य रूप से वर्षा-ऋतु और वसंत ऋतु के गीत अधिक गाये जाते हैं । वर्षा-ऋतु के गीतों में सावन या झूले के गीत, चौमासा, बारहमासा, कजली, सोहनी या निर्वाही के गीत, रोपनी के गीत आदि गाते हैं । होली, फाग, चैता, वसंती, फूलगीत आदि वसंत के गीत हैं । ग्रीष्म के समय भी, कुछ गीत गाये जाते हैं जिन्हें, पपिहरा, हवाई आदि नाम भी दिये हैं । ऋतु संबन्धी गीतों का अलग अलग कई संकलन हिन्दी में प्राप्त है । उन सब का उल्लेख और संक्षिप्त अध्ययन इस अध्याय में हुआ है । व्रतों और त्योहारों के गीतों में भिन्न क्षेत्रों और बोलियों में भिन्न भिन्न गीत प्राप्त हैं । इन गीतों को व्रत और उपासना के गीत, तीज त्योहारों का गीत, इस प्रकार विभक्त किये हैं । व्रत गीतों के अन्तर्गत शीतलाष्टमी, रामनवमी, नागपंचमी, बहुरा, जन्माष्टमी, हरितालिका, तीज, नवरात्रि, गोधन, पिड़िया और षष्ठीमाता के गीत, आदि उल्लेखनीय हैं । गंगा मइया, सूर्य शंकर, अम्बिका, गिरिजा, गणेश आदि की उपासना के गीत भी इस विभाग में उद्धृत हैं । त्योहार गीतों में विभिन्न त्योहारों के अवसर पर गाये जानेवाले विभिन्न खेल के गीतों का विवरण भी दिया है ।

जाति गीतों में विभिन्न बोलियां, पृथक पृथक आस्था रखती हैं । अहीरों, कहारों, तेलियों, गड़रियों, धोबियों, चमारों दुसाधों, भाण्डों, गोंडों, कुम्हारों, मछुओं आदि के भिन्न भिन्न जाति गीत होते हैं । उन सब का यथावसर विवरण और उदाहरण दिये गये हैं । कुछ ऐसी भिन्न जातियों के गीतों का भी उदाहरण दिया है, जो सारे प्रान्तों में समान रूपों से देखे नहीं जाते । श्रम गीतों की विस्तृत व्याख्या भी इस अध्याय में प्राप्त है ।

अन्य विविध गीतों के अन्तर्गत उन लोक गीतों की गणना की गयी है जो अन्य किसी वर्ग में समाविष्ट नहीं हो पाये हैं । इन गीतों में खेल और विनोद के गीत बच्चों के गीत नृत्यगीत आदि आते हैं ।

चौथे अध्याय में मलयालम लोक गीतों का संक्षिप्त सर्वेक्षण है । इसमें पहले केरल राज्य और मलयालम भाषा के इतिहास का थोड़ा विवेचन किया है । फिर समस्त मलयालम लोक-काव्यों का वर्गीकरण और विवेचन प्रस्तुत किया है । वर्गीकरण की पद्धति में रूप परक एवं वस्तुपरक दोनों को स्थान दिया है । लोक गीत और लोक गाथा [कथागीत] संज्ञा ही रूप-परक वर्गीकरण के समय स्वीकृत है । फिर लोक-गीतों के श्रेणी विभाजन के समय धार्मिक अनुष्ठान के गीत और अर्ध-धार्मिक गीत - दो विभाजन भी दिये हैं । मलयालम में ऐसे कुछ लोक गीत प्राप्त हैं, जिनका उपयोग सिर्फ धार्मिक अनुष्ठानों में होता है ।. कुछ गीत ऐसे भी हैं जिनका उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों के साथ साथ अन्य त्योहारों के अवसरों पर भी होता है । ओणप्पाट्टु इस विभाग में आते हैं । विविध पेशेवारों के कुछ गीत ऐसे हैं, जो काम करते समय उनकी थकान को भुलाने में काम आते हैं । मजदूरों के मानसिक उल्लास केलिए गाये जानेवाले गीत भी इस विभाग में आते हैं, इन्हें श्रमगीत कहा जाता है । खेलों और विनोदों में काम आनेवाले गीतों को "खेल और विनोदों का गीत" नाम दिया है । केरल में पाश्चात्य देशों से आकर धर्म-प्रचार करनेवाले ईसाइयों ने केरल की स्थानीय आचारों को एक हद तक अपनाया है । इनके धर्म से संबन्धित आचारानुष्ठानों का प्रतिपादन करते हुए और यहाँ के जन जीवन से संबन्ध जुटाते हुए कई गीत मलयालम में आये । इन्हें ख्रिस्तीय गीत या मार्गप्पाट्टु नाम है । उन गीतों का परिचय भी इस अध्याय में प्राप्त है । उसी प्रकार केरल के मुसलमानों के जीवन से संबन्ध संबन्ध रखनेवाले कई इस्लामिक गीत मलयालम लोक गीतों के बीच प्रचलित हैं । उनका नाम मापिळप्पाट्टु है । उन गीतों पर निष्कृष्ट एवं शोध परक अध्ययन इस अध्याय में प्राप्त है । इसी प्रकार मलयालम लोक गीतों को आचारप्पाट्टु अनुष्ठानप्पाट्टु नाम भी है जिन्हें धार्मिक और अर्ध धार्मिक गीत नाम दिया है ।

श्रम गीतों में कृषक गीत, खेत में काम करनेवाले मज़दूर-मज़दूरिनों के गीत, नाव खेनेवाले मज़दूरों के गीत, गाड़ी हाँकनेवालों के गीत, शिकार करने में जंगलों में घूमते फिरनेवालों के गीत, आदि (इस विभाग में) आते हैं। श्रम से संबन्ध रखने वाले उन सभी गीतों पर इस अध्याय में शोध परक दृष्टि डाली गयी है। खेल और विनोद के अवसरों पर गाये जानेवाले जैसे - सीक्कलि एषामतु कलि, ऐवरनाटक्कलि, वट्टक्कलि, कोलक्कलि, तलयाट्टम कलि, पेण्णुकलि, मार्गकलि आदियों का इस अध्याय में परिचय पा सकते हैं। विविध गीतों की श्रेणी में प्रेमगीत जैसे और भी कई गीत मिलाए गये हैं। संक्षेप में मलयालम लोक साहित्य के क्षेत्र में प्राप्त प्रकाशित एवं अप्रकाशित समस्त गीत विधाओं पर समग्र एवं संक्षिप्त रूप में इस अध्याय में प्रकाश डाला गया है।

पाँचवें अध्याय में हिन्दी की विविध बोलियों में प्राप्त लोक गाथाओं का संक्षिप्त, एवं हिन्दी की प्रमुख लोक गाथाओं का विस्तृत अध्ययन है। इस अध्याय में मैथिली से लेकर समस्त बोलियों में प्राप्त लोक गाथाओं का संक्षिप्त सर्वेक्षण हुआ है। आल्हा, लोरिका, रम्भू सरदार सलहेस, दीना-भद्री, बिहुला, कुव-भान, गोपीचन्द, बहुरा, नेवार, जलेशी, सिगुला, जट-जटनी, विजयमल, बाबू कुंवरसिंह, शोभानयका, सोरठी, राजा भरथरी, मदनकुमार, शिवपार्वती, कुसुमा, चन्द्रावली, रामायण कथा, नलदमयंती, राजा वीर सिंह, देवी कथागीत, जगदेव, कोरम देव, अमानसिंह, राधा, जाहर पीर, ढोला, उमदेव, धनवया, पाबूजी, मामछिया, मैनादे, निहालदे, संत बसंत, राजा कारक मल्ल - इसी प्रकार विविध बोलियों में प्रचलित क्षेत्रीय लोक गाथाएँ एवं पंवाड़ों एवं कथागीतों की संख्या अधिक है। इन में प्रत्येक लोक गाथा पर प्रत्येक बोली के आधार पर इस अध्याय में विचार किया गया है। इन लोक-गाथाओं में से, समस्त बोलियों में या सारे हिन्दी प्रदेशों में प्रचलित प्रसिद्ध और विशाल आकारों की कुछ लोक गाथाएँ भी प्राप्त हैं। उनमें आल्हा, लोरिकायन, विजयमल, बाबू कुंवर सिंह, शोभानयका बनजारा, सोरठी, बिहुला, ढोला, भरथरी, संत बसंत आदि हिन्दी की प्रमुख लोक-गाथाएँ

इन का प्रचार समस्त हिन्दी प्रदेशों में एक या दूसरे नाम में हुआ है । उन गाथाओं का साहित्यिक और सामाजिक महत्व अधिक है । इन गाथाओं पर प्राप्त रूप रेखाओं का शोधपरक अध्ययन भी प्रस्तुत किया है । इसके अलावा इन लोक गाथाओं की विशेषता पर इस अध्याय में विचार किया गया है ।

छठे अध्याय में मलयालम लोक गाथाओं का संक्षिप्त परिचय है । इन गाथाओं का वर्गीकरण पहले किया जा चुका है । उनमें धार्मिक कथागीत, प्रथम आते हैं । धार्मिक कथागीतों के बीच कालिकथप्पाट्टु प्रमुख हैं । श्री भद्रकाली की कथा को गाथा में नाटकीय ढंग से गाया गया है । तोरम्, मुटियेरर, कळमेषुत्तुपाट्टु, आदि विविध रूप में एवं कालिनाटक के रूप में भी यह गाथा गायी जाती है । सबों में दारिक वध कथा वर्णित है ।

अय्यप्पन कथप्पाट्टु भी एक धार्मिक गाथा है । इसमें भी अय्यप्पन की कथा गाथा के रूप में प्रस्तुत है । अय्यप्पन का जीवन वृत्त, कई युद्ध अन्त में शबरी मला में स्थायी निवास ये गाथा की मुख्य घटनाएं हैं । पुलिवरेर्व, हंसरेर्व, पन्तलम रेर्व, इस प्रकार भिन्न छन्दों में यह गाथा प्राप्त है । सीता दुःखप्पाट्टु, माबारतम् पाट्टु, भीमन कथप्पाट्टु इस प्रकार कई गाथाएं इस श्रेणी में और भी प्राप्त हैं । उन सब का संक्षिप्त सर्वेक्षण इस अध्याय में किया गया है । इसके बाद सामाजिक गाथाओं का विवेचन है । उन गाथाओं में वीरगिक गाथाएं अधिक हैं । वटक्कनपाट्टु नाम में जो गाथाएं प्राप्त हैं वे सब उत्तर केरल के कुछ इने गने धरानों से संबन्धित हैं । बेलड्स ओफ नार्थ मलबार के नाम से जिन गाथाओं का संकलन हुआ है, उनमें पुत्तूरम पाट्टु एवं तच्चोलिप्पाट्टु प्रमुख है । पुत्तूरम्पाट्टु में आरोमल चेकवर, उण्णियार्चा, आरोमुण्णि आदि वीर साहसिकों के जीवन की गाथाएं गायी हैं । इस अध्याय में उन गाथाओं का अध्ययन हुआ है । उसके बाद तच्चोलिओतेनन की कथा पर आधारित गाथा है । ओतेनन का विवाह, पोन्नापुरम कोट्टा,

नामक गढ में उनका युद्ध, ओतेनन और उसके सखा चाप्पन की वीरता का वर्णन, ओतेनन की वीरमृत्यु, ओतेनन का चरित्र चित्रण, ओतेनन की ऐतिहासिकता, आदि पर भी इस अध्याय में चर्चा की गयी है । तच्चोलिप्पन्नु, पालाट्टु कोमप्पन, पुतुमाटन चन्तु केलु, आदियों की गाथाओं का परिचय भी, यहाँ दिया गया है । वटक्कन्पाट्टु की ऐतिहासिकता पर भी शोधपरक अध्ययन इस अध्याय में हुआ है । दक्षिण मलाबार के कन्टर मेनोन पाट्टु मुर्येक्तेर्य, मामांकिळ्थप्पाट्टु आदियों का उल्लेख भी इस अध्याय में है । इस के बाद मध्यकेरल के वीर साहसिकों के जीवन पर आधारित कुछ गाथाओं का अध्ययन भी इस खण्ड में हुआ है, जो इटनाटन पाट्टु नाम से प्रसिद्ध है । इस इटनाटन पाट्टु विधा में एक गाथा ईटनाटन नामक वीर योद्धा के नाम रची गयी है । उस गाथा के साथ पेड्डन्नूर आति, अतियार पिल्ला आदि कई वीर योद्धाओं के नाम गाये जानेवाली गाथाएं भी प्राप्त हैं । उन गाथाओं का परिचय दे देने के साथ साथ उनके ऐतिहासिक महत्व का विवेचन हुआ है । उसके बाद केरल के दक्षिणी आंचल में प्राप्त लोक गाथाओं पर प्रकाश डाला गया है जो तेक्कन्पाट्टु नाम से जाना जाता है । तेक्कन पाट्टु विधा की गाथाओं में ऐतिहासिक गाथाएं प्रमुख हैं । इरविक्कुट्टिपिल्लेपाट्टु, उलक्कुटे पेरुमाल पाट्टु, अंचु तंपुरान पाट्टु, तंपुरान पाट्टु, वलियसपि, कुंचुतंपि, पठाणिक्कथप्पाट्टु आदि इस विभाग में प्रमुख हैं । उन सब का शोध परक अध्ययन इस खण्ड मे प्रस्तुत किया गया है । तेक्कन पाट्टु की श्रेणी में ऐतिह्याधिष्ठित कथागीत एवं अतिमानुषिक कथागीत भी प्राप्त हैं । इन गाथाओं में कन्निडियन पोर और नीलिकथाप्पाट्टु, मुख्य हैं । उन गाथाओं का अध्ययन और समस्त तेक्कन पाट्टु विधा का निरीक्षण भी इस अध्याय में किया गया है ।

सातवाँ अध्याय इस प्रबन्ध के प्रधान अध्यायों में एक है । इसमें हिन्दी और मलयालम लोक गीतों का तुलनात्मक अध्ययन है ।

इसमें सांस्कृतिक प्रथाओं की तुलना और उस के अनुकूल दोनों भाषाओं में प्राप्त गीतों की तुलना दी गयी है । पुत्रजन्म, नामकरण, चूडाकर्म, गर्भाधान, दोहद, मुंडन, विवाह विवाह संबन्धी विविध क्रियाएं, शृंगार, मेंहदी, उसका महत्व आदि हिन्दी की विविध बोलियों में किस स्वभाव से आते हैं, ऐसे गीतों की तुलना समान स्वभाव के मलयालम गीतों से की है । मलयालम की मैलांचिप्पाट्टु, विदा की उत्तर के मेंहदी लेपन क्रियाओं से संबन्ध गीतों से किस प्रकार जोडा जा सकता है । यह भी ध्यान देने योग्य बात है । दोनों समाजों में प्राप्त देवपूजन विदा के गीतों और बेमेल विवाह से उत्पन्न प्रश्नों की ओर ध्यान देने की चेष्टा भी की गयी है । ख्रिस्तीय एवं इस्लामिक गीतों का भी इस प्रसंग में उपयोग किया है । मृत्युगीतों की तुलना भी सांस्कृतिक गीतों में आयी है । दोनों प्रदेशों के ऋतु संबन्धी गीतों की तुलना में दोनों देशों की जलवायु और उसके अनुकूल क्रिया कलापों की तुलना भी की है । हिन्दी और मलयालम प्रदेशों के तीज त्योहारों का अध्ययन एवं उसकी विशिष्टता की समानता पर भी विचार किया गया है । विविध जातियों के गीतों के अंतर्गत हिन्दी और मलयालम में प्राप्त जाति वाद, जातिगत भिन्नताएं, विचारणीय विषय बनाएं गये हैं । इन के आधार पर दोनों भाषाओं में जो जो गीत प्राप्त हैं उन सब का तुलना कर के अध्ययन वैज्ञानिक तौर पर किया गया है । श्रम गीतों की तुलना में यह भी स्पष्ट किया है कि मानव समाज की उन्नति में काम - काज का कौन सा स्थान है और उपकरणों के उपयोगों के साथ साथ बौद्धिक विकास कैसे हुआ आदि [वर्क्स लॉ एण्ड इन्स्ट्रुमेन्टल लॉ] कृषि संबन्धी गीत, विविध पेशों के अन्य गीत आदि की तुलना भी यहाँ प्राप्त है । अन्य विविध गीतों की श्रेणी में, ऐतिहासिक गीत, राजनैतिक गीत, आधुनिक राजनैतिक गीत, और उस से संबन्ध रखनेवाले व्यक्तियों पर आधारित गीत, आदि आते हैं । अन्य विविध गीतों की श्रेणी में हास परिहास के गीत, पारिवारिक संबन्धों के गीत, ननद भावज संबन्ध नारीत्व का महत्व आदि की तुलना की गयी है । विविध पारिवारिक परिवेश आदर्श सतीत्व के गीत, सांस्कृतिक पक्ष के गीत, सामाजिक कुरीतियों के वर्णन, दहेज प्रथा, नीति संबन्धी गीत, शिशुगीत, हास के बालगीत, आदियों की तुलना भी इस अध्याय में प्राप्त है ।

आठवें अध्याय भी इस प्रबन्ध के सबसे प्रधान अध्यायों में से है क्यों कि हिन्दी और मलयालम की मुख्य लोक-गाथाओं की तुलना इस अध्याय में आती है। पहले दोनों भाषाओं में प्राप्त गाथाओं की पृष्ठ भूमि पर विचार किया गया है। फिर हिन्दी और मलयालम लोक-गाथाओं की विषय वस्तु की तुलना की गयी है। हिन्दी और मलयालम में प्राप्त समान स्वभाव की गाथाओं की तुलना भी इस अध्याय में प्राप्त है। हिन्दी लोक-गाथा नामकिइए की और मलयालम लोक गाथा आरोमुण्णी की गाथा समान आदर्श और विषय वस्तु की हैं। हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ लोक गाथा आल्हा और मलयालम लोक गाथा तच्चोलि ओतेनन पाट्टु, हिन्दी की मुख्य लोक गाथा लोरिकायन और मलयालम का इरवीकुट्टि पिळ्ळ पाट्टु, हिन्दी का विजयमल और मलयालम का चेरुकुन्नूर आति, आदि गाथाओं की तुलना भी इस अध्याय में है। हिन्दी लोक गाथाओं में जमुनि की गाथा एवं मलयालम वटक्कनपाट्टु गाथा विधा में आनेवाली तुंबोलार्चा की गाथा, विषयवस्तु एवं भाव में समान हैं। इसी कोटि का आरोमल चेकवर, एवं सलहेस की कथा पर आधारित गाथाएं भी समान हैं। हिन्दी की और एक लोक गाथा दीना-भद्री दो साहसी भाइयों की कथा पर आधारित गाथा है, जिस की तुलना में मलयालम वटक्कन पाट्टु के पुत्तुनाटम चन्तु, और उस के भाई केलु का कथागीत स्वीकृत किया है। स्त्री कथापात्रों पर आधारित कई श्रेष्ठ लोक-गाथाएं हिन्दी में भी प्राप्त हैं। उनमें सोरठी की कथा पर आधारित लोक गाथा एवं सती बहुला की गाथा अधिक मशहूर हैं। मलयालम में भी इन लोक गाथाओं की बराबरी वीर नायिका प्रधान लोक गाथाएं हैं, कन्नियन्काट्टु नीली का कथागीत एवं वटक्कन पाट्टु में प्राप्त पूमातु का कथा गीत। दोनों में आदर्श सतीत्व का महत्व प्राप्त है। मलयालम की उण्णियार्चा की बराबरी हिन्दी की कोई भी लोक गाथा की नायिका कर नहीं सकती। तो भी वीर वनिताओं की संख्या हिन्दी लोक गाथाओं में भी कम नहीं। हिन्दी की बेलासती और मलयालम की पुतुमा देवी की गाथा वीर नारियों की स्मृति कराती हैं।

हिन्दी की जलेच्छी और मलयालम की 'कल्याण्डी' का कथा गीत भी समान स्वभाव के हैं । हिन्दी का प्रसिद्ध ऐतिहासिक गीत बाबू कुंवर सिंह और मलयालम तेक्कनपाट्टु विधा की सर्वश्रेष्ठ लोक गाथा इरविक्कुट्टिप्पिळ्ळप्पाट्टु भारतीय संस्कृति के समान आदर्श के उज्ज्वल उदाहरण हैं । संक्षेप में इसी प्रकार हिन्दी और मलयालम में प्राप्त समस्त मुख्य लोक-गाथाओं का विशद विवरण और दोनों की तुलना भी इस अध्याय में प्राप्त है । इस के अलावा मलयालम लोक-गाथाओं में भाव साम्य, हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं में सांस्कृतिक महत्व की समानता हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं में मानवेतर तत्व आदि की तुलना भी हुई है । हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं के कलापक्ष की तुलना भी इस अध्याय में हुई है । भाव, छन्द और अलंकारों में तुलना, गीत विधा, ताल विधा, संगीत विधा एवं संगीत सामग्रियों पर आधारित तुलना, आदि भी इस अध्याय में हुई है । लोक-संस्कृति की अभिव्यक्ति विषयक तुलना हिन्दी और मलयालम में समान रूप से हुई है जिसका निदर्शन लोक-गाथाओं में प्राप्त है । जीवोत्पत्ति विषयक लोक-विश्वासों की तुलना, शकुन संबन्धी लोक-विश्वासों की तुलना, विवाह विषयक लोक विश्वासों की तुलना, नदी झील, पहाड आदियों से संबन्धित लोक विश्वासों की तुलना, मंत्रीगण, तप, मृतक को जीवित रखने का विश्वास आदियों के दोनों भाषाओं की लोक गाथाओं में स्थान समान स्रोत आदि का भी निष्कर्ष हुआ है ।

नवाँ अध्याय उपसंहार है । इस अध्याय में तत्व निरीक्षण हुआ है । लोक काव्यों में दर्शन तत्व, मनोवैज्ञानिक भावों का निरूपण नारी मनोविज्ञान संबन्धी बातें, सामाजिक भावों का स्वरूप, प्रेमभावना, वसुधैव कुटुंबकं वाले भारतीय आदर्श का समर्थन, सामाजिक जीवन से तीज त्योहारों का संबन्ध, पक्षी, पशु, वृक्ष आदि का महत्व, आदिविषयों पर तुलनात्मक अध्ययन भी इस अध्याय में हुआ है । लोक-गीतों में संगीत तत्व, ताल क्रम और स्वरविधान,

संगीतोपकरणों में भेदाभेद, नृत्य और लोक-काव्य का अटूट संबन्ध, लोक काव्यों के कुछ समान ध्येय और आदर्श, भारतीय लोक काव्य शिक्षा का महत्व, सामान्य तथ्य का निरूपण और निष्कर्ष, इस प्रकार पूर्ण निरीक्षण और निरूपण हुआ है ।

संक्षेप में इस प्रबन्ध में उत्तर और दक्षिण के जन जीवन का अध्ययन लोक-काव्यों के ज़रिये हुआ है । पीढ़ियों और युगों की सीमा रेखाओं को पार कर जो लोक जीवन सार्वलौकिक तत्व भूमि पर चढ़ा है, उसका समग्र निरीक्षण वाङ्मयों के द्वारा ही हुआ है । स्पष्ट रूप में इस अध्ययन ने यह बताया है कि मानव हृदय सर्वत्र समान होता है ।

मेरा यह शोध कार्य श्रद्धेय डॉ॰ एन॰ई॰ विश्वनाथ अय्यर जी [आचार्य और अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय] के सुयोग्य निर्देशन एवं प्रोत्साहन के आलोक में संपन्न हुआ है । उनके विद्वत्ता पूर्ण निर्देशन तथा वात्सल्यपूर्ण उपदेश मुझे समय समय पर मिलते रहे हैं । लोक साहित्य विषयक शोध कार्य की ओर उन्होंने मेरा ध्यान आकृष्ट किया था । इस प्रबन्ध की सामग्री के चयन से लेकर उसके विभिन्न अध्यायों की रचना की दीर्घ कालावधि के बीच समय समय पर मेरे मन में उठी कई शंकाओं के निवारण में उनसे यथोचित सहायता प्राप्त होती रही है । अपनी शोध साधना की सफल परिसमाप्ति पर मैं उन के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

प्रोत्साहन साहित्य विद्यार्थी के हृदय की खुराक है । मुझे इस प्रबन्ध रचना में इस विभाग के अन्य विद्वान प्राध्यापकों और शोध छात्रों से भी प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है । मलयालम और हिन्दी के कई वरिष्ठ साहित्यकारों और विद्वानों का प्रोत्साहन भी मुझे समय समय पर उपलब्ध हुआ है । उन सब का मैं आभारी हूँ ।

इस प्रबन्ध की सामग्री के संकलन में कोचिन विश्व विद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय और हिन्दी विभाग के पुस्तकालय के अतिरिक्त केरल और कालिकट विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों से भी मैं ने यथा संभव लाभ उठाया है । हिन्दी प्रदेश के कई पुस्तकालयों से भी, मुझे पर्याप्त सहायता मिली है । केरल साहित्य अकादमी और केरल की कई लोक साहित्य संस्थाओं से भी मैं लाभान्वित हुआ हूँ । उत्तर भारत की कई लोक साहित्य संस्थाओं से भी मुझे मदद मिली है । उपर्युक्त सभी संस्थाओं के कार्यकर्ताओं के प्रति मैं कृतज्ञता प्रकट करता हूँ । मेरे इस शोध-कार्य की सफलतापूर्ण समाप्ति केलिए जिन जिन सहृदयों से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहायता प्राप्त हुई है उन सब के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए मैं यह शोध प्रबन्ध समर्पित करता हूँ ।

कोचिन - 22
01·08·1979

के॰ करुणाकरन

प्रथम अध्याय

लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य

विषय प्रवेश - "लोक" शब्द

"लोक" शब्द के कई अर्थ हैं[1]। [1] "स्थान विशेष" जिसका बोध प्राणी को हो। [2] संसार [3] "जन" या "लोग" [4] "समाज" [5] "प्रदेश" [6] "प्राणी" [7] "यश" आदि। परन्तु लोक के दो अर्थ विशेष रूप से प्रचलित हैं। [अ] स्थान विशेष [आ] जन सामान्य।

[अ] स्थान विशेष

उपनिषदों में दो "लोक" माने गये हैं। "इहलोक" और "परलोक"। "निरुक्त" में तीन लोकों का उल्लेख है - "पृथ्वी", "अन्तरिक्ष", "द्युलोक"।

---

1. [अ] संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर - सं॰ रामचन्द्र वर्मा - पृ॰77
   [आ] हिन्दी साहित्य कोश - प्रथम भाग - पृ॰920 - सं॰2020

पौराणिक काल में सात लोकों की चर्चा हुई है । "भूलोक", "भुवर्लोक", "स्वर्लोक", "महर्लोक", "जनलोक", "तपलोक" और "सत्यलोक" । "सत्यलोक" को ब्रह्मलोक भी कहा गया । पीछे जाकर सात लोकों के बदले चौदह लोक माने गये - अतल, वितल, नितल, पाताल, गर्भस्तिमान, तल, सुतल भी मिलाये गये । इन सातों चौदहों लोकों के अर्थ में आज भी "मालोक" "महालोक" शब्द का प्रयोग भी पाया जाता है । "लोक" शब्द का दूसरा अर्थ "जनसामान्य" का है । इसी के हिन्दी रूप "लोग" बन गया । इसी अर्थ को प्रकट करनेवाला "लोक" शब्द लोक वार्ता, लोक संस्कृति, लोक साहित्य, लोककला आदि में "विशेषण" के अर्थ में प्रयुक्त होता है ।

"लोक" शब्द की व्युत्पत्ति

"लोक" शब्द अत्यन्त प्राचीन है । वेदों में इसका प्रयोग पाया जाता है ।

ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में "लोक" का अर्थ "जीव" तथा "स्थान" के रूप में किया गया ।

नाभ्या आसीदंतरिक्षं शीर्ष्णों द्यौः समवर्तत ।
पदभ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्त था लोकाँ अकल्पयन् ।। [1]

---

1. ऋग्वेद - 10 / 90 / 14 /
[भगवान की नाभि से अंतरिक्ष की सृष्टि हुई । उनके मस्तक से स्वर्ग उत्पन्न हुआ । उनके चरणों से भूमि की सृष्टि हुई । उनके कान से दिशाएं उत्पन्न हुईं । उनके साथ साथ समस्त लोकों का निर्माण हुआ । यहाँ समस्त लोक-जनसाधारण के अर्थ में हुआ है ।

ऋग्वेद में कहीं कहीं "जन" का प्रयोग भी पाया जाता है । यहाँ इस शब्द का साधारण जनता अर्थ है ।

य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्र मतुष्टवं ।
विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनं ।।[1]

उपनिषदों में भी लोक शब्द पाया जाता है । जैमनीय उपनिषद ब्राह्मण में -

बहु व्याहितो वा अयं बहुशो लोकः ।
क एतद् अस्य पुनरी हतो अयाद्[2] ।।

यह लोक अनेक प्रकार से फैला हुआ है । प्रत्येक वस्तु में यह प्रभुत या व्याप्त है । कोई प्रयत्न करके भी इसे पूरी तरह से जान सकता है ? - ऐसा एक उद्धरण है ।

सिद्धान्त कौमुदी के अनुसार 'लोक' शब्द की उत्पत्ति इस प्रकार संभव है - "लोक" शब्द संस्कृत के "लोकृदर्शने" धातु से बना है । इसमें "घञ" प्रत्यय लगाने से ही "लोक" शब्द निष्पन्न हुआ है । इस धातु का अर्थ है - देखना । इसका लट् - लकार में अन्य पुरुष एक वचन का रूप "लोक" में है । अतः लोक शब्द का मूल अर्थ हुआ देखनेवाला । "वह समस्त जनसमुदाय जो इस कार्य को करता है "लोक" कहलाएगा"[3] । पाणिनी ने भी "लोक", "सर्वलोक" दोनों शब्दों का प्रयोग किया है[4] ।

---

1. ऋग्वेद - 3 / 53 / 12
2. जै॰ उ॰ ब्रा॰ 3 / 28
3. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास [भाग-6] पृ॰सं॰।
4. लोक सर्वलोकःठञ् पाणिनी [अष्टाध्यायी]

पुराणों इतिहासों में भी लोक शब्द प्राप्त हैं । अशोक के शिला स्थंभों में समस्त प्रजा के अर्थ में "लोक" शब्द देखा जाता है[1] ।
भगवद्गीता में -

"अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तम"[2]

के रूप में लोक शास्त्रतथा लौकिक नियमों का महत्व स्थापित हो गया ।

भरत के नाट्य शास्त्र में लोक धर्मी प्रवृत्तियों का उल्लेख है[3] । महाभारत में लोकयात्रा का उल्लेख है । व्यास मुनि ने अपने ग्रंथ की विशेषता इस प्रकार प्रकट किया है ।

अज्ञान तिमिरान्धस्य लोकस्य तु विचेष्टतः
ज्ञानं जनशलाकाभिर्नेत्रोन्मीलनकारकम्[4] ।।

[यह ग्रंथ - महाभारत - अज्ञान के अंधकार से अधीत था दुःखी लोक [साधारण जनता] के नेत्रों को ज्ञान रूपी अंजन की सलाई लगाकर खोल देता है]

---

1. कर्तव्य मतेहि मे सर्वलोक हित:
   अशोक की धर्मलिपियाँ प्रधान शिलालेख - खण्ड - 62
2. [अ] यस्मात्क्षरमतीतोऽहम क्षरादपि चोत्तमः
   अतोऽस्मि लोके वेदेच प्रथित पुरुषोत्तमः - गीता 15 / 18
   [आ] लोकेऽस्मिन्द्विधानिष्ठा पुरा प्रोक्तामयानघा
   ज्ञान योगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्
   [यहाँ भी लोक शब्द का [लोक में] प्रयोग हुआ है]
   भगवद्गीता अध्याय 3 / 3
3. नाट्यशास्त्रं - भरतमुनि - पृ॰14॰69
4. महाभारतं, आ॰ प॰ 1 / 24

हिन्दी के प्रसिद्ध महाकवि तुलसीदास ने "लोक" तथा वेद के मूल्यों को प्रेम के आधार पर समान मानते हुए लिखा है -

लोकहुँ वेद सुसाहिब रीती ।
विनय सुनत पहिचानत प्रीती ।।[1]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी अपने निबन्ध संग्रह "चिन्तामणि" में "लोक सामान्य", "लोक व्यवहार", "लोकधर्म" आदि शब्दों का प्रयोग स्थान स्थान पर किया है[2] । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी, इस शब्द का प्रयोग समाज तथा संस्कृति को ध्यान में रखकर किया है । परन्तु आज "लोक" शब्द ने अपना पारिभाषिक रूप ले लिया है ।

लोक शब्द की परिभाषा

हम ने पहले ही कहा है कि "लोक" शब्द संस्कृत के "लोकृदर्शने" धातु से "घञ्" प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है । उसके आधार पर "लोक" शब्द का अर्थ "देखनेवाला" है । अतः वह समस्त जन समुदाय जो इस कार्य को करता है "लोक" कहलाएगा[3] । सिद्धान्तकौमुदि कार के इस मत के रहते हुए भी, "लोक" शब्द पर विचार करते हुए डॉ॰ वासुदेव शरण अग्रवाल ने लिखा है -

---

1. रामचरित मानस बालकाण्ड - पृ॰59 - गीता प्रेस, गोरखपुर
2. "चिन्तामणि" - पहला भाग - पृ॰113,169,167,172 आदि
3. सिद्धान्त कौमुदी : वेंकटेश्वर प्रस,बंबई : 1969
   द्रष्टव्य - हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास
   प्रस्तावना - पृ॰2, डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय ।

"लोक हमारे जीवन का महा समुद्र है, उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक राष्ट्र का अमर स्वरूप है, लोक कृत्स्न ज्ञान और संपूर्ण अध्ययन में सब शास्त्रों का पर्यवसान है। अर्वाचीन मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। लोक, लोक की धात्री सर्वभूत माता पृथिवी और लोक का व्यक्त रूप मानव, यही हमारे नये जीवन का अध्यात्म शास्त्र है। इसका कल्याण हमारी मुक्ति का द्वार और निर्माण का नवीन रूप है। लोक-पृथिवी - मानव इसी त्रिलोक में जीवन का कल्याणतम रूप है[1]। इसके अलावा डॉ॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी ने "लोक" शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है -

लोक शब्द का अर्थ जानपद या ग्राम्य नहीं है, बल्कि नगरों और ग्रामों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं, ये लोग नगर में परिष्कृत, रुचिसम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जानेवाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचिवाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं[2]।

डॉ॰ कुंजबिहारीदास ने लोक गीत की परिभाषा देते हुए - "लोक" शब्द पर प्रकाश डाला है। उनका कथन है -

लोकगीत उन लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बाहर रहकर कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में निवास करते हैं[3]। इसका मतलब है वे लोग जो सुसंस्कृत एवं

---

1. सम्मेलन पत्रिका [लोक-संस्कृति, विशेषांक] सं॰2020 - पृ॰65
2. जनपद [अक्तूबर 1952] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ॰65
3. "दि पीपुल देटलिव इन मोर और लेस प्रिमिटीव कंडीशन अउट सेड दि स्पियर आफ सोफिस्टिकेटेड इंफ्लुएंसेस"
   - डॉ॰ कुंजबिहारीदास : ए स्टडी आफ ओरीसन फोकलोर

परिष्कृत रुचिवाले लोगों के प्रभाव से अलग रहकर आदिम स्थिति में जिन्दा रहते हैं लोक शब्द से विभूषित किये जाते हैं ।

श्याम परमार ने भी "लोक" शब्द पर विचार करते हुए लिखा है - "लोक" साधारण जन समाज है, जिसमें भूभाग पर फैले हुए समस्त प्रकार के मानव सम्मिलित हैं । यह शब्द वर्ग भेद रहित व्यापक एवं प्राचीन परंपराओं की श्रेष्ठ राशिसहित, अर्वाचीन सभ्यता संस्कृति के कल्याणमय विवेचन का द्योतक है । भारतीय समाज में नागरिक एवं ग्रामीण दो भिन्न संस्कृतियों का प्रायः उल्लेख किया जाता है, किन्तु लोक दोनों संस्कृतियों में विद्यमान है । वही समाज का गतिशील अंग है"[1] ।

लोक साहित्य के मर्मज्ञ एवं राजाधिराज, मनीषी डॉ॰ सत्येन्द्र ने लोक साहित्य विज्ञान नामक ग्रंथ में "लोक" के बारे में अपनी परिभाषा दी है -

"लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता पाण्डित्य चेतना और पांडित्य के अहंकार से शून्य है और जो एक परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है । ऐसे लोक की अभिव्यक्ति में जो तत्व मिलते हैं वे "लोक तत्व" कहलाते हैं[2] ।

डॉ॰ सत्येन्द्र की उपर्युक्त परिभाषा अधिक वैज्ञानिक और सार्वभौमिक होती है । वास्तव में "लोक" में एक तत्व प्रधान है । "लोक" एक ऐसा समुदाय है, जो आधुनिक सभ्यता एवं शिक्षा से वंचित होते हुए प्राचीन विश्वासों तथा अनुष्ठानों को सुरक्षित रखे हुए हैं ।

---

1. भारतीय लोकसाहित्य - श्याम परमार - पृ॰10
2. लोक साहित्य विज्ञान - डॉ॰ सत्येन्द्र - पृ॰30, प्रथम अध्याय

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनों से हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि -

"लोक, शास्त्रीयता एवं पोथीगत संस्कार से भिन्न, शिक्षा हीन एक ऐसा समुदाय है या जनसाधारण है, जो आदिम प्रवृत्तियों तथा परंपराओं की धारा में आज भी अकृत्रिम जीवन बिताते हैं। आधुनिक जनसमुदाय में भी यही मूल्य धारा एवं मौलिक प्रकृति की है। आज की राजनैतिक, सामाजिक व्यवस्था में भी यह "लोक" "जन" शब्द में अन्तर्निहित होकर अपनी अस्मिता को खोये बिना जीवित है। उच्च वर्ग एवं निचली वर्ग की संज्ञा देकर पूंजीवादी समाज ने आज भी "जन" का वर्गीकरण किया है।

<u>लोक संस्कृति एवं शिष्ट संस्कृति</u>

"लोक" की अभिव्यक्ति जिन तत्वों के माध्यम से होती जा रही है, वे ही "लोक तत्व या "लोकसंस्कृति" कहला सकते हैं।[1] वैदिककाल के पहले से ही हमारे यहाँ लोक सत्ता कायम थी। लेकिन आर्य जाति के आगमन के उपरान्त "आर्य" एवं "अर्यातर" जातियों की पृथकता साबित होने लगी। आर्य संस्कृति एवं आर्यातर संस्कृति, "वेद" और "वेदेतर" संस्कृति के रूप में स्थापित हुई। उस समय "लोक" शब्द का प्रयोग "वेदेतर" अर्थ से अधिक

1•[अ] हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास - प्रस्तावना - डॉ•कृष्णदेव उपाध्या पृ•23

[आ] Folk-lore is a mine in which layers of many hued cultures are lying burried in a terribly compressed condition . - An outline of Indian Folk-lore. p.5

[इ] Folk-lore is an echo of the past, but at the same time it is also the vigarous voice of the present. Russian Folk-lore. p.15

[ई] बौद्धों, लोकायतनों आदि को एक हद तक वेद विरोधी विचार धारा के मार्ग में गिना सकते हैं।

"वेदविरोधी" के अर्थ में होने लगा । कालान्तर में इस वेदविरोधी विचार धारा की संकुचित सीमा को तोड़कर "लोक" ऊपर उठ गया । क्रमशः यह "लोक" वेद के तुल्य या समकक्ष अपने स्वतंत्र अस्तित्व का अधिकारी बन गया । इस प्रकार वैदिक काल से ही हमारे देश में संस्कृति की दो पृथक् धाराएं प्रवाहित होने लगीं । वैशिष्ट संस्कृति एवं लोक संस्कृति कहलाने लगीं । बौद्धिक विकास के उच्चतम शिखर पर पहुँची हुई अभिजात वर्ग की संस्कृति शिष्ट संस्कृति कहलाने लगी । यह अभिजातवर्ग समाज की अग्रणी और पथप्रदर्शक होने लगा । उनका सांस्कृतिक स्त्रोत "वेद" एवं "शास्त्र" था[1] । लोक संस्कृति जन साधारण की संस्कृति साबित हुई । वे अपनी प्रेरणा "जन साधारण" से प्राप्त करती थीं । ये लोग बौद्धिक विकास के निम्नतल पर स्थित होते हुए भी, व्यावहारिक ज्ञान में अग्रणी थे । प्रो॰ बलदेव उपाध्याय के मतानुसार - "लोक संस्कृति शिष्ट संस्कृति की सहायक होती है । किसी देश के धार्मिक विश्वासों अनुष्ठानों तथा क्रिया कलापों के पूर्ण परिचय केलिए दोनों संस्कृतियों में परस्पर सहयोग अपेक्षित रहता है[2] । उनके मतानुसार चारों वेदों के अध्ययन से यह मालूम हो जायगा कि "ऋग्वेद" और "अथर्ववेद" में दिखाई देनेवाला पार्थक्य इस प्रस्ताव को बल देने में समर्थ हो जायगा । वे दोनों संहिताएं दो विभिन्न संस्कृतियों के स्वरूप की परिचायिकाएं है अथर्ववेद लोक संस्कृति का परिचायक है, पर ऋग्वेद शिष्ट संस्कृति का । अथर्व वेद के विचारों का धरातल सामान्य जन जीवन है तो ऋग्वेद के विचारों का धरातल विशिष्ट जन-जीवन है ।

---

1. [अ] हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - प्रस्तावना-डॉ॰कृष्णदेवउपाध्याय पृ॰23

[आ] Culture has two main streams one flows among the educated in the form of Vedas upanishads and different branches of higher literature and the other among the unsophisticated mass of people in the form of folk-lore.
A study of fik lore - p.23

2. बृहद युगों में लोक संस्कृति - प्रो॰ बलदेव उपाध्याय

ऋग्वेद में यज्ञ, याग, आदि का विधान है, जहाँ अथर्व वेद में अंधविश्वास टोना-टोट, जादू, मंत्र-तंत्र आदि का विधान है[1] ।

गृह्य सूत्रों में जन जीवन का चित्रण काफी मात्रा में है । मध्यकालीन जीवन में भी, इन दोनों संस्कृतियों का प्रभाव पाया जाता है । जातक कथाओं में लोक संस्कृति का सजीव चित्रण पाया जाता है[2] । रामायण के काल में शिष्ट जन तथा साधारण जन की भाषा में भी अंतर था । वाल्मीकि रामायण का यह पद्य -

यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम् ।
रावणं मन्य माना मां सीता भीता भविष्यति[3] ।।

[हनुमान जब लंका में अशोक वाटिका स्थित, सीताजी से मिलने गये तब वे सोचने लगे कि यदि मैं - संस्कृतवाक्य-शिष्ट लोगों की भाषा में बातें करूँगा तो सीताजी मुझे रावण समझकर डर जायेंगी]

इस उल्लेख से स्पष्ट है कि विद्वान लोग - जैसे ब्राह्मण - संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते थे और साधारण लोगों की अपनी भाषा अलग थी जो लोक भाषा बतायी जा सकती है ।

महाभारत काल में धर्मपुत्र का जुआ खेलना, द्रौपदी का बहुपतित्व आदि जो बातें हैं उनमें लोकसंस्कृति का निदर्शन पाया जाता है[4] ।

---

1. हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास - पृ.23
2. पानीजातक, वावेरु जातक, नंदजातक
3. वाल्मीकि रामायण : सुन्दरकाण्डम् ।
4. महाभारत - द्यूतपर्व

स्वयं भगवान् कृष्ण भी वेद से पृथक लोक की सत्ता को स्वीकार करते है । द्रष्टव्य है -

"अतोऽस्मि लोके वेदे च"[1]
प्रथित: पुरुषोत्तम: ।

मैं वेद और लोक दोनों में पुरुषोत्तम नाम से प्रसिद्ध हूं । कालिदास की रचनाओं में भी, शिष्ट संस्कृति एवं लोक संस्कृति का उल्लेख पाया जाता है ।

इक्षुच्छायानिषादिन्य:तस्यगोप्तुर्गुणोदयं
आकुमार कथोद्घातं शालिगोप्यो जगुर्यश:[2] ।

शूद्रक-रचित "मृच्छकटिक" नाटक में भी साधारण जनता की संस्कृति का वर्णन पाया जाता है । इसी प्रकार निरंतर यह संस्कृति आज के जमाने तक शिष्ट और लोक की पृथकता से चली आयी है । सर्वत्र इसका चित्रण पाया जाता है ।

1• भगवद्गीता - 25 / 18
2• रघुवंश - सर्ग - 4

लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य[1]

लोक संस्कृति के समान लोक-साहित्य भी अत्यन्त प्राचीन समझा जा सकता है। वेदों में खासकर ऋग्वेद में कई गाथाएं उपलब्ध हैं जो लोक साहित्य के गेय रूपों का प्रथम निदर्शन है। ब्राह्मणों में भी गाथाएं प्राप्त हैं। वास्तव में हमारा शिष्ट कहा जानेवाला संपूर्ण साहित्य लोक मानस के धरातल से उत्पन्न तथा विकसित है। प्राचीन कालीन सभी नाट्यरूप लोक-मंच को भी सम्यक मात्रा में प्रतिनिधान करते थे। उपरूपकों का अस्तित्व लोक नाट्य के रूप में होता था, इसलिए जनमानसों में ही उनका जीवित रहना संभव था। कालिदासादि के आगमन के समय से, लोकनाटक आम जनता का होकर रंगमंच से अलग होकर गली गलीचे की चीज़ होती थी। आज की रामलीला एवं रास ने उस प्राचीन विधा से चोला बदलकर आज का रूप धारण कर लिया है। डॉ॰ हज़ारी प्रसाद का अनुमान भी इसी कोटि का है[2]।

1• [अ] साहित्य - सहित + यत् = साहित्य - साहित्य का अर्थ है, शब्द और अर्थ का यथावत् सहभाव अर्थात् साथ होना। इस प्रकार सार्थक शब्द का मात्र नाम साहित्य है। यह मनुष्य के भावों और विचारों की समष्टि है। प्राचीन प्रयोगों से यह मालूम पड़ता है - साहित्य शब्द मूलरूप में शास्त्र के अर्थ में प्रयुक्त होता था। बाद में काव्य केलिए प्रयुक्त होने लगा।

- हिन्दी साहित्य कोश - प्रथम भाग - पृ॰920, द्वितीय संस्करण: सं॰ 2020

[आ] साहित्य मानव के अनुकूल मनोवेगों से पूर्ण होता है।

[इ] साहित्य अभिव्यक्ति का एक अनुपम रूप है।

2• डॉ॰ हज़ारी प्रसाद द्विवेदी समाज [वर्ष 1] / पृ॰67

गुणाढ्य की बृहद् कथा एवं सोमदेव का कथा सरित्सागर उस समय की लोककथाओं का संकलन मात्र था । कथासरित्सागर की प्रस्तावना में बताया गया है कि इन कथाओं का मूल वक्ता कोई अभिशप्त गन्धर्व था । वह शापवश विन्ध्याचल में आ बसा था । इस प्रस्ताव से हम अनुमान कर सकते हैं कि गुणाढ्य पंडित ने मूलरूप में इन कथाओं को नगर से दूर रहनेवाले ग्रामीण या वन्य लोगों से सुना होगा । प्रायः सभी मध्यकालीन रचनाओं का कथानक लोक कथाओं से स्वीकृत मालूम पड़ता है ।

उपर्युक्त विवरण से यह सिद्ध होता है कि लोकसंस्कृति तथा लोकसाहित्य का मूल अत्यन्त प्राचीन है । शिष्ट संस्कृति के साथ ही साथ लोक संस्कृति तथा शिष्ट साहित्य के बराबर लोक-साहित्य इस देश में पुरातन काल से प्रवाहित रहा था, आज भी वह स्रोत बहता ही जा रहा है ।

<u>लोक-संस्कृति [फोकलोर]</u>

सर्वसाधारण जनता के रीतिरिवाज, रहनसहन, अंधविश्वास, प्रथा परंपरा, धर्म आदि विषयों को लोक-संस्कृति बता सकते हैं । इस विषय की ओर अनुसंधानात्मक दृष्टि पहले-पहल पाश्चात्य विद्वानों ने ही डाली[1] । इस क्षेत्र में "जोन आब्रो" का नाम पहले लिया जा सकता है । इन्होंने अधोगति में पड़े हुए अधो वर्ग के लोगों की संस्कृति का अध्ययन प्रारंभ किया ।

---

1. [अ] जोन आब्रो, [आ] जे॰ बेरड [इ] विलियं जोन थामस [ई] मैरिया लीच [उ] डॉ॰ फ्रेजर [ऊ] ई॰बी॰ टैयलर [ऋ] विलियं ग्रिम [ए] जेकब ग्रिम - आदि पाश्चात्य विद्वानों का नाम उल्लेखनीय हैं ।

क्रमशः यह अध्ययन शास्त्र का रूप धारण करने लगा । जे० ब्रेंड ने अपनी प्रसिद्ध रचना "अब्जरवेशन" आन पोपुलर ऐंटिक्विटीस" सन् [1877] में प्रकाशित की । उस समय से उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक - जन जीवन का अनुशीलन शास्त्र नहीं बन गया था । जबसे यह एक शास्त्र बन गया उस समय भी पोपुलर ऐंटिक्वटीस उस शास्त्र का नाम रहा । इंग्लैंड के प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता, विलियं जोण थामस ने इस शास्त्र के अनुकूल एक नाम की सृष्टि कर दी - "फोक लोर" । डिक्शनरि आफ फोकलोर में "मैरियालीच" ने यह बात स्पष्ट की है । सन् 1846 में यह बात हुई थी । धीरे-धीरे यह "फोकलोर" शब्द लोक-प्रिय हो गया । आज समस्त पाश्चात्य भाषाओं ने "फोकलोर" शब्द को स्वीकार किया है

1• [अ] डिक्शनरी ओफ फोकलोर : भाग-1, पृ•403

फोक लोर शब्द "फोक + लोर" शब्दों के संयोग से बना है । विलियं जोण थोमस ने इस शब्द का प्रयोग सभ्य देशों की साधारण जनताओं में प्रचलित प्रथाओं, रीति रिवाजों, तथा अंधविश्वासों के अध्ययन को लक्षित करके किया था ।

यह शब्द मूलतः जर्मनी के Volk अर्थात् "लोक" [People] शब्द से व्युत्पन्न है । संसार की प्रायः सभी प्रमुख भाषाओं में किंचित उच्चारण अंतर के साथ लोक संस्कृति या लोक वार्ता के अर्थ में फोकलोर शब्द प्रचलित है ।

जैसे :-	फ्रांसीसी	- ले फोक लोर	Le folk-lore
	इटालियन	- इल फोक लोर	il folk-lore
	स्पेनीश	- एल फोक लोर	el folk-lore

द्रष्टव्य है - Y.M. SOKOLOVA - Russian Folk-lore - p.3
Translated by Catherine Ruth - Smith, New York, 1950.

[आ] The term was suggested by William John Thomas in 1846 to designate the study of treaditions, custums and superstitions current among the common people in civilized countries.

- Chambers Encyclopaedia, London, Vol.V. p.762

डॉ० फ्रेजर का गोल्डन बो नामक श्रेष्ठ ग्रंथ जो अठारह भागों में लिखा था, इस विषय का समर्थक है । आदिम सभ्यता के उद्भव तथा विकास पर रचा गया, ई०बी० टेयलर का ग्रंथ प्रिमिटीव कलचर, इस क्षेत्र में प्रचुर प्रकाश डालता है । ग्रिम बन्धुओं[1] ने भी इस क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है । इंग्लैंड की फोकलोर सोसाइटी ने भी इस दिशा में शोधपरक कार्य किया है ।

फोकलोर - शब्द दो शब्दों के मेल से उत्पन्न है । प्रथम शब्द है - फोक दूसरा शब्द है लोर । फोक शब्द जर्मन भाषा के वोल्क से निष्पन्न है । इस शब्द का अर्थ है असंस्कृत लोग । "लोर" आग्लोसेक्सन शब्द से निकला है जिसका अर्थ है सीखा गया । अर्थात् "ज्ञान" । इस प्रकार "फोकलोर" शब्द का अर्थ निकला - असंस्कृत लोगों का ज्ञान माने "लोक संस्कृति"[2]। फोक लोर की हिन्दी परिभाषा या पर्यायवाची शब्द है - लोकवार्ता[3]। लोकवार्ता से अधिक जनप्रिय शब्द लोक संस्कृति ही माना गया है । हो सकता है - लोकवार्ता का भी अपना महत्व मिल गया है[4]।

1. जर्मन विद्वान, विल्यम ग्रिम तथा जेकब ग्रिम ।
2. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - षोडश भाग - पृ०8 - 9
3. सुनीतिकुमार चेटरजी - फोकलोर = लोकयान
4. [अ] लोकवार्ता संबन्धी संप्रदाय - इस प्रकार निर्धारित किया गया है :-

   [1] इंग्लिश स्कूल

   [2] एन्थ्रोपोलोजिकल स्कूल

   [3] एरियाथामकल - स्कूल

   - इस प्रकार तीन नाम दिये गये हैं । देखिए -

   स्टान्डेर्ड डिक्शनरी आफ फोक्स मिथोलोजी एण्ड लेजेन्ड,
   संपा० मारिया लीच

   इस संबंध में अमेरिका में आयोजित फोक-लोर कांग्रेस के अध्यक्ष प्रो०विलिस जोर्डन ।

   [आ] सदर्न फोक-लोर क्वार्टर्ली - आव् आउटलाइन आफ इन्डियन फोक लोर - दुर्गा भागवत् - पृ०6 - बंबई ।

By the word 'Folk'. I shall always mean an unsophisticated, homogeneous group, living in a politically bounded advanced culture, but is isolated from it by such factors as topography, geography, religion, dialect, economies, and race.

John Green way : Literature among the primitive
(Pennysylvania - 1969)
introduction. p.XII

D. By Folk-lore, one should understand the oral creations of broad masses of people.

Russian Folk-lore. p.4

तो भी भाषा-जगत ने लोक संस्कृति पर ज़ोर दिया है । वास्तव में यह फोकलोर का समानार्थवाची शब्द है । सोफिया बर्न ने फोकलोर के बारे में ऐसा लिखा है कि यह एक जाति बोधक शब्द के समान प्रतिष्ठित हो गया है । इस शब्द का क्षेत्र भी उन्होंने इस प्रकार निर्धारित किया है -

प्रकृति के चेतन तथा अचेतन [जड़] जगत के संबन्ध में भूत-प्रेतों की दुनियां तथा उनके साथ मनुष्य के संबन्धों के विषय में, जादू-टोना, सम्मोहन, वशीकरण, ताबीज, भाग्य, शकुन, रोग तथा मृत्यु के संबन्ध में आदिम तथा असभ्य विश्वास इस के क्षेत्र में आते हैं । इसके अतिरिक्त इसमें विवाह, उत्तराधिकार, बाल्यकाल तथा प्रौढ जीवन में रीतिरिवाज तथा अनुष्ठान आते हैं । कथागाथाएं, अवदान [मिथ], कहावतें, गीत, किंवदंतियां, पहेलियां और लोरियां भी इसके विषय हैं । संक्षेप में, लोक की मानसिक संपन्नता के अन्तर्गत जो भी वस्तुएं आ सकती है वे सभी इसके क्षेत्र में हैं । सोफिया बर्न की बातों में ही देखिए - यह किसान के हल की आकृति नहीं है जो लोक संस्कृति के विद्वान को अपनी ओर आकर्षित करती है - प्रत्युत वे उपचार तथा अनुष्ठान हैं जिन्हें किसान हलको भूमि जोतने के काम में लाने के साथ करता है । जाल तथा बंसी की बनावट नहीं बल्कि वे टोना टोटके हैं जिन्हें मछुआ समुद्र के किनारे करता है, पुल अथवा किसी मकान का निर्माण नहीं है प्रत्युत वह बलि है जो उसके निर्माण के समय दी जाती है[1] । लोक संस्कृति वस्तुतः आदिम मानव के

1. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - पृ.20

तालिका - 1

फोक-लोर

मिथ	1
फोक आर्ट्स एण्ड कल्चर	2
बिलीफ्स	3
चार्म्स	4
लैजेन्ड्स	5
फोक साइन्स	6
सुपरस्टिशन्स	7
विच क्राफ्ट्स	8
फोक मैडिसिन्	9
फेस्टिवल्स	10
गेम्स एण्ड प्लेज	11
फूड रेसीप्स	12
फोक टेल्स	13
सोंग्स	14
राइम्स	15
बालड्स	16
ड्रामास	17
प्रोवर्ब्स	18
रिडल्स	19
जोक्स	20
जेस्टॅस	21

तालिका - 2

फोक लिटरेचर

लैजेन्ड्स	1
फोक टेल्स	2
सोंग्स	3
ड्रामास	4
प्रोवर्ब्स	5
राइम्स	6
रिडल्स	7
बैलेड्स	८

तालिका - 3

फोक पोयट्री

(1) फोक सोंग्स

(2) बैलड्स

मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति है,[1] वह चाहे दर्शन, धर्म, विज्ञान तथा औषधि के क्षेत्र में हुई हो अथवा सामाजिक संगठन तथा अनुष्ठानों में अथवा विशेषत: इतिहास काव्य और साहित्य के अपेक्षाकृत सीमित प्रदेश में संपन्न हुई हो । फोकलोर के विषय को सोफिया बर्न ने तीन श्रेणियों में विभक्त किया है[2] । (1) लोक विश्वास और अंध परंपराएं (2) रीतिरिवाज तथा प्रथाएं (3) लोकसाहित्य ।

इस प्रबन्ध में लोक साहित्य के कुछ अंगों को ही (लोक-काव्य) प्रधानता दी गयी है । इसलिए उस विषय पर आगे विचार किया जायगा ।

1. A. In the content and form of folk lore it is impossible to diney the presense of servivals of the old cultures there is no aspect of bhe life and activity of human society did not reflect, in one degree or other the experiences of past stages in human culture.

   Russian Folk lore - p.14

   B. The aristo crats of folk lose are tae types of Folk - literature, tales, legends, epics, dramas, ballads, songs. But like the apex of pyramids they are based on the other kinds, none could exist without linguistics, witnout belief, they would be hollows and value less and songs and especially plays could not exist without action also.

   Ibid p.13

2. Folk-lore may be devided into four branches tnose having to do with action, science, lingustics and literature :-

   ie. (1) with action (लोक चेष्टा)

   (2) Science (लोक विज्ञान)

   (3) Linguistics (लोक भाषा)

   (4) Literature (लोक साहित्य)

   J.R. Rever and G.W.Boswel - Fundamentals of Folk literature (Oosterhout, 1962)

क्षेत्र

लोक साहित्य का क्षेत्रगत अनुसंधान

लोक-साहित्य लोक संस्कृति का एक अंग है । लोक-संस्कृति की व्यापकता जन जीवन के समस्त व्यापारों में उपलब्ध होती है, परन्तु लोक साहित्य जनता के गीतों, कथाओं, गाथाओं - मुहावरों तथा कहावतों तक ही सीमित है । एक का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है तो दूसरे का क्षेत्र सीमित तथा संकुचित । लोकसाहित्य अंग है तो लोक संस्कृति अंगी है । लोक संस्कृति में लोकसाहित्य का अंतर्भाव होता है, परन्तु लोकसाहित्य में लोकसंस्कृति का समावेश होना संभव नहीं है ।

साधारण जनता जो गाती है, रोती है, हंसती है, खेलती है, जो वाङ्मय का रूप बन जाता है, उन सब को इसके अन्तर्गत रखा जा सकता है । जन्म से लेकर मृत्यु तक जिन सोलह संस्कारों का विधान हमारे प्राचीन ऋषियों ने किया है उन सभी संस्कारों के पुलो से लोक साहित्य जुड़ा है[1] । इसलिए हम कह सकते हैं कि लोक-साहित्य की व्यापकता मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक समस्त संस्कारों में है । यह स्त्री पुरुष, बच्चे जवान तथा बूढे सभी लोगों की सम्मिलित संपत्ति है ।

लोक साहित्य सामान्य दृष्टि से

संसार की समस्त जनता एक ज़माने में प्राकृत जीवन व्यतीत करती थी । उस समय उस का आचार-विचार, रहन-सहन, सरल, सहज तथा स्वाभाविक था ।

1. जन्म से पहले याने गर्भावस्था से, लेकर मृत्यु के बाद की क्रियाओं से भी लोक साहित्य जुड़ा हुआ है ।

उसके समस्त क्रिया कलाप, स्वाभाविकता में पगे रहते थे । चित्त के आह्लाद और मन के अनुरंजन के लिए उस समय भी, साहित्य की रचना हुई थी[1] । उस युग का साहित्य, स्वाभाविक, स्वच्छन्द एवं सरल था । वह गंगा की पवित्र धारा के समान मुग्ध एवं स्वतंत्र था । उस समय के साहित्य का जो अंश आज भी अशेष के रूप में सुरक्षित है वही तो लोकसाहित्य के रूप में आज भी उपलब्ध होता है ।

लोक साहित्य की परिभाषा

सभ्यता के प्रभाव से दूर अपनी सहजावस्था में वर्तमान जो निरक्षर जनता है उसकी आशा निराशा, हर्ष, विषाद, जीवन-मरण, लाभ-हानि, सुख-दुःख आदि की अभिव्यंजना जिस साहित्य में प्राप्त होती है - वह लोक साहित्य है । इसे हम जनता का वह साहित्य कहा सकते है जो जनता द्वारा जनता केलिए बनाया गया है[2] ।

लोक साहित्य की विशेषताएं एवं महत्व

लोक साहित्य सामान्य जीवन के सर्वांगीण सत्य का उद्घाटन करता है । यही उसका महत्व है । उसके महत्व का निम्नांकित रूप में वर्गीकरण किया जा सकता है ।

1. लोक-साहित्य वाणीगत अभिव्यक्ति मात्र है ।
   हिन्दी और काश्मीरी लोक गीतों का तुलनात्मक अध्ययन, 1970, पृ॰ 12
   - डॉ॰ जवाहरलाल हाण्डू

2. Folk literature essentially of the people by the people and for the people.

   T.H. Gaster - Standard Dictionary of folk lore Mythology Legend Vol.I, p.399

ऐतिहासिक महत्व

युग, समाज, व्यक्ति और इतिहास को सजीवता प्रदान करने योग्य
[illegible]यों का प्रचुर संचय लोकसाहित्य में रहता है । समय के आघात से
[illegible] एवं विस्मृत घटनाएं लोकानुश्रुति द्वारा लोक साहित्य में पुष्ट पाती हैं ।
के इतिहासकारों को लोक साहित्य के माध्यम से अतीत सम्बन्धी अमूल्य
[illegible] प्राप्त होती है जो उनके ज्ञान को और भी पुष्ट करती है ।

भौगोलिक महत्व

लोकसाहित्य के अन्तर्गत विभिन्न भौगोलिक स्थानों, नदियों, पर्वतों,
आदि का उल्लेख प्राप्त होता है । विभिन्न प्रकार के व्यापार तथा
[illegible]र के साधनों, आवागमन के साधनों, विभिन्न ऋतुओं तथा देशानुकूल
[illegible]यु, वातावरण आदि का वर्णन भी उपलब्ध होता है । लोकसाहित्य में
[illegible]ी युगानुगत परिस्थितियों तथा भौगोलिक स्थितियों का भी वर्णन रहता है ।

[illegible]जिक महत्व

लोकसाहित्य सामाजिक अभिव्यक्ति है । अतः इसमें समाज के समस्त
[illegible]ों का सुख दुःख, राग-विराग, आशा-निराशा, ईर्ष्या द्वेष आदि मनोभावों
[illegible]वं रीतिरिवाज़, आचार-विचार, रहन-सहन, विश्वास और परंपराओं का
[illegible] चित्रण प्राप्त होता है । समाज में व्याप्त समस्त संबन्धों का भावनात्मक
[illegible]ण तथा विभिन्न जातियों का पारस्परिक अनुबन्ध इसमें प्राप्त होता है ।

किसी समाज का सर्वाधिक सच्चा और स्पष्ट रूप देखना हो तो उसके लोक साहित्य में देखना चाहिए ।

धार्मिक महत्व

धर्म समाज का अविछेद्य अंग है । लोक साहित्य में समाज और धर्म का यह अटूट संबन्ध सर्वत्र प्राप्त होता है । विभिन्न देवी-देवताओं की उपासना नदियों, पर्वतों, सांपों, वृक्षों आदि की पूजा, विभिन्न प्रकार के व्रत, तप, यज्ञ, दान आदि का आयोजन भी लोक साहित्य में वर्णित है । किसी विशिष्ट समाज के अनेकानेक नैतिक एवं धार्मिक पक्षों का वास्तविक स्वरूप लोक साहित्य द्वारा ही संभव है ।

आर्थिक महत्व

प्रत्येक युग के जन जीवन की आर्थिक स्थिति का चित्रण लोकसाहित्य में अंकित होता है । जहाँ लोकसाहित्य में धन-धान्य पूर्ण संपन्न समाज में सोने की थाली में छप्पन प्रकार के पकवान परोसने का वर्णन होता है, वहीं दरिद्रता ग्रस्त [निरोगरीव] परिवारों को भूखे दिन काटने की करुणापूर्ण स्थिति का भी उल्लेख प्राप्त है ।

सांस्कृतिक महत्व

देश और समाज में व्याप्त सांस्कृतिक अनुष्ठानों का वर्णन भी लोकसाहित्य का अंग है । लोकमानस की सांस्कृतिक उन्नति एवं अवनति का प्रामाणिक मानचित्र लोकसाहित्य में ही प्राप्त होता है ।

नैतिक महत्व

~~लोकसाहित्य~~ जीवन का नैतिक स्तर लोक साहित्य में अत्यन्त सजीवता से निरूपित होता है। सदाचार और पवित्र निष्ठाओं में पगे हुए पावन चरित्र लोकसाहित्य के अध्येता को भावविभोर बनाये बिना नहीं रहते। आदर्श सती नारी का दिव्य रूप, पिता का त्याग, पुत्र का अनुराग, भाई-बहन का मिलन विछोह आदि भावोत्कर्ष के अनुपम उदाहरण प्राप्त होते हैं। इसके विपरीत कहीं कहीं नैतिक अपकर्ष का भी चित्रण रहता है।

भाषाशास्त्रीय महत्व

लोक भाषा में वर्णित होने के कारण लोक साहित्य का भाषावैज्ञानिक महत्व भी है। भाषा विकास के क्रम में बोलियों का असाधारण योग है। शब्दों के प्रामाणिक निरुक्त ज्ञान के हेतु भी, हम बोलियों का अध्ययन करते हैं। लोक बोलियों के प्राकृतिक शब्द-रूप लोकसाहित्य में ही प्राप्त होते हैं।

साहित्यिक महत्व

यद्यपि साहित्य की भाँति लोकसाहित्य भी मानव हृदय की भावात्मक अभिव्यंजना है तथापि दोनों का अन्तर भी विचारणीय है। रसात्मक वाक्य अन्तछवि लोकसाहित्य में साहित्य से किसी भी प्रकार हीन नहीं है।

लोकसाहित्य और शिष्ट साहित्य में भेद

आचार्यों ने साहित्य की परिभाषाएं भिन्न रूप में दी हैं । सबका आन्तरिक तत्व एक है कि मानव के मन से उद्भूत रागानुरागमयी भावनाओं की अभिव्यंजना ही साहित्य है । लोकसाहित्य की आधार भूमि भी, मनुष्य की हृत्तन्त्री से झंकृत उल्लास और अवसादयुक्त है । सुख-दुख, आशा-निराशा, हास, रुदन के कठिन घात-प्रतिघात से व्याकुल होकर मनुष्य स्पंदनशील हो उठता है । हृदय की संवेदना ही, जब मानव की वाणी में निःसृत हो उठती है, तो हम कह सकते हैं साहित्य की सृष्टि होती है । साहित्य सदैव लोकसापेक्ष भावराशी है । लोक से मुक्त उसका कोई अस्तित्व नहीं हो सकता । लोक एक ऐसी चेतनाशील सत्ता है जो जीवन का प्रतीक एवं जन का पर्याय है । पहले इसका अर्थ ग्राम या साधारण जनता तक सीमित था[1] । यह ठीक नहीं । समस्त चराचर मात्र में लोक की सत्ता व्याप्त है । भारतीय साहित्य इसी व्यापक लोक सत्ता से अनुप्राणित है । मनुष्य का सांस्कृतिक उत्थान साहित्य में व्याप्त होता है । भारतीय साहित्य में जिस जिस भारतीय संस्कृति का समन्वय है, वह लोकजीवन से परिपुष्ट है । समष्टि में व्यष्टि तत्व के सदृश भारतीय संस्कृति में लोकजीवन की व्याप्ति है । साहित्य में इसी लोकजीवन के सर्वांगीण तत्वों का दिग्दर्शन होता है[2] ।

साहित्य और लोकसाहित्य यद्यपि दोनों ही लोकानुबन्धी हैं, तथापि दोनों में कुछ अन्तर है । लोकजीवन से सारभूत जीवनी शक्तियों का ग्रहण करके साहित्य उसके धरातल से ऊपर उठकर अपने अस्तित्व का निर्माण करता है,

---

1. लोकस्तुभुवने जने - अमर कोश
2. सम्मेलन पत्रिका लोक संस्कृति - अंक, पृ.65

किन्तु लोकसाहित्य इस धरातल को कभी छोड़ नहीं पाता । लोकजीवन के सांस्कृतिक तत्व साहित्य में ग्रहीत होते हैं । लोकसाहित्य लोक संस्कृति का पोषक है । वह उसका निर्वाहकर्ता एवं निर्माता भी है । लोक साहित्य नित्य जीवन का अमूल्य प्रतिबिंब है ।

साहित्य, यानी शिष्ट साहित्य में वैयक्तिकता का प्राधान्य होता है । समाज-व्याप्त सत्यानुभूतियों की वैयक्तिक अभिव्यक्ति साहित्य में होती है । व्यक्ति का आत्मतत्व विकसित होकर समाज से रागात्मक संबन्ध स्थापित करता है । इसके पूर्व वह समाजभिन्न एक सीमित संकुचित मनस्थिति मात्र है । अतः व्यक्ति के माध्यम से होनेवाली सामाजिक अभिव्यक्ति साहित्य है । लोकसाहित्य उससे कोसों भिन्न है, क्योंकि वह समाज की ही अभिव्यक्ति है । विशिष्ट व्यक्तित्व का वहाँ स्थान नहीं है । उसका पूर्णतः लोप होता है । साहित्य प्रायः देशकाल की सीमाओं से प्रभावित होता है, परन्तु लोकसाहित्य पर इसका प्रभाव स्पष्ट रूप में नहीं पड़ता । सामाजिक रूप से विकसित होने के कारण, जब तक कोई समाज ग्राही प्रभाव नहीं उत्पन्न होता, तब तक लोक साहित्य उससे उन्मुक्त रहता है।।

साहित्य की अभिव्यक्ति परिनिष्ठित भाषा के माध्यम से होती है । परिष्कृत और परिमार्जित शब्द रूपों का विन्यास वहाँ होता है । इसके विपरीत लोक साहित्य का आधार लोक-भाषा या बोली है । सहज एवं स्वाभाविक शब्दों का नियमहीन उन्मुक्त प्रयोग इसमें रहता है । साहित्य का संपूर्ण स्वरूप नियम-बद्ध होता है । भाषा शैली [अलंकृत] रस, छन्द, अलंकार तथा भाव आदि समस्त तत्वों का निर्धारित नियमों के अनुकूल साहित्य में प्रवेश होता है ।

1. हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास [भूमिका]

सं. - राहुल सांकृत्यायन

लोकसाहित्य में मानवानुभूतियाँ सर्वत्र एवं सर्वथा नियममुक्त होकर विचरण करती है। साहित्य लिखित या छपे हुए रूप में सुरक्षित रहता है । लोकसाहित्य मौखिक रूप से जीवित रहनेवाली परंपराशील सत्ता है । साहित्य, समाज के सुशिक्षित व्यक्तियों की सृष्टि है - लोक-साहित्य अशिक्षित समाज की संवेदन युक्त उपलब्धि है ।

<u>लोकसाहित्य और नया युग</u>

आधुनिक युग लोकसाहित्य का विकास काल है । हर कहीं लोकसाहित्य का आकलन और संशोधन होता जा रहा है । विभिन्न रूपों का लिखित संकलन और छपा प्रकाशन उत्पन्न हो रहे हैं । वास्तव में उसके महत्वांकन का प्रयत्न भी हो रहा है । इस कारण से पण्डितों को मौखिक रूप के संकलन में समय बरबाद करने की आवश्यकता नहीं । युगों से अजीत प्रवाहशालिनी पारस्परिक चेतनामयी लोकसाहित्य की सत्ता का शनै: शनै: कंठ व्यापी मार्ग में बौद्धिक संशोधन करके लिखित रूप में दीर्घ जीवि बनाने का जो प्रयास हो रहा है, वह धन्य बताने योग्य है । लोकभाषाओं में साहित्य सृजन का विकास भी उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त कर रही । इस प्रकार की रचनाएं लोकसाहित्य के अंतर्गत नहीं आ सकती । भले ही उनपर बाह्यावरण लोकसाहित्य के समान हो ।

रसास्वादन की दृष्टि से भी साहित्य के अध्येता और लोकसाहित्य के श्रोता में अन्तर है । साहित्यिक रसानुभूति के लिए व्यक्ति को हार्दिक संवेदनशीलता के अतिरिक्त कतिपय बौद्धिक अर्हताओं का अर्जन करना आवश्यक है ।

---

1. लोकसाहित्य की भूमिका - श्यामपरमार

परन्तु लोकसाहित्य की आनन्दानुभूति के लिए मन की कोमल रागवृत्तियों की मात्रा अपेक्षित है । साहित्य और लोकसाहित्य में रागात्मक साम्य के होने पर भी रूप सत्तात्मक अन्तर है । वर्ण्य विषय दोनों में समान हो सकते हैं । किन्तु वर्णन पद्धति में भेद होता है । साहित्य में यदि वह काव्य है तो अलंकार, रस, छन्द का नियमित उपयोग किया जाता है ।

1. सिद्ध कवियों की कविता का आनन्द वही उठा सकता है जिसने छन्द व्याकरण और अलंकार शास्त्र का अच्छी तरह अध्ययन किया है । ऐसी कविता को हम स्वाभाविक कविता नहीं कह सकते । यह तो माली निर्मित उस क्यारि की तरह है जिसके पौधे कैंची से कतरकर ठीक किये रहते हैं और जो खास तरह की रुचि से विभक्त होकर सजाई जाती है । ग्राम-गीत तो प्रकृति का वह उद्यान है, जो जंगलों में, पहाड़ों पर नदी तटों पर, स्वतंत्र रूप से विकसित हुआ है । वह अकृत्रिम है । सिद्ध कवियों की कविता किसी बगीचे का वह फूल है जिसका सर्वस्व माली है, पर ग्रामगीत वह फूल है, जसे जिसको पानी पिलाते हैं, मेघ जिसे नहलाते हैं, सूर्य जिसकी आँखें खोलता है, मन्द मन्द समीर जिसे झूले में झुलाते हैं, चन्द्रमा जिसका मुँह चूमता है, और ओस जिसपर गुलाब जल छिड़काता है । उसकी समता बगीचे का कैदी फूल नहीं कर सकता ।

रामनरेश त्रिपाठी - ग्राम साहित्य
पहला भाग - पृ.55 (पहला संस्करण)

इसी प्रकार यदि कहीं कोई अन्य विधा हो तो संबन्धित विधा के निर्धारित लक्षणों की रक्षा उसके लिए अनिवार्य है । परन्तु निर्धारित नियम रहित होने पर लोकसाहित्य की कोई व्यापक सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती । अंत्यानुप्रास के नाद सौन्दर्य के बिना भी लोकगीत अपना पूरा प्रभाव श्रोता पर अवश्य ही डालता है । इसलिए लोकगीतों का आनंद मनुष्य के लिए सहज और नैसर्गिक होता है[1] ।

साहित्य में संस्कार का अधिक योग है । लोक साहित्य संस्कार की अतिनियमितता से मुक्त होने के कारण ही अधिक नैसर्गिक एवं स्वाभाविक है । साहित्य अपनी रसात्मकता की रक्षा करते हुए भी, मानव जीवन के कल्याण में स्थिर दृष्टि रखता है । लोक-गीत जीवन की किसी स्थिति की तीव्र अनुभूति कराकर मौन हो जाता है । उसमें संकेतित सत् के ग्रहण करने का गुरुतर दायित्व श्रोता अथवा पाठक पर होता है । अतः साहित्य कि जिस गन्तव्य को प्राप्त करने के लिए साहित्य लंबी यात्रा करती है, लोकसाहित्य थोड़ी दूर चलकर ही उस गन्तव्य की ओर इंगित करके बैठ जाता है । साहित्य पाठक को कुछ देकर प्रभावित करता है जबकि लोक गीतों का प्रदेय संकेतमात्र करके शान्त हो जाता है । यह पाठक की क्षमता पर निर्भर है कि लोक साहित्य में वह अपने प्राप्य की उपलब्धि कर लेता है या नहीं ? उसकी चमक दमक इने गिने लोगों को ही आसानी से अपनी ओर खींच सकती है ।

1. साहित्य की दुनियाँ में लोकजीवन छनछन कर आता है । इसलिए साहित्यिक गीत कभी सुघरे होते हैं ।

लोक साहित्य तथा अन्य विज्ञान

लोकजीवन की समग्रता का बोध लोक शास्त्र से होता है, जबकि लोकानुभूतियों की अभिव्यक्ति का माध्यम होता है लोक-साहित्य । इसीलिए लोक साहित्य में लोक-वार्ता के अनेक तत्वों की अभिव्यक्ति होती है । लोक साहित्य में लोक जीवन के समीपकों की विवृत्ति होती है, इसीलिए लोक साहित्य और विविध समाज विज्ञानों में पारस्परिक संबन्ध देखे जाते हैं ।

इस प्रकार के मानव जीवन के विविध पक्षों का अध्ययन करने वाले शास्त्रों को विविध समाज-विज्ञानों के नाम से जाना जाता है । हम देख चुके हैं कि आदिम युग से चले आ रहे मानवजीवन की आदिम परम्पराओं और उनके अवशेषों को विविध समाज विज्ञानों के नाम से जाना जाता है अतएव अनेक समाज विज्ञानों के अध्ययन केलिए प्रचुर सामग्री लोक साहित्य में प्राप्त हो जाती है। पुरातत्व, समाजशास्त्र, नृविज्ञान, मनोविज्ञान, भाषाविज्ञान, इतिहास, दर्शन - जैसे मानवशास्त्र का अध्ययन करनेवाला कोई भी शास्त्र हो, उन सबों केलिए कुछ सामग्री, लोक साहित्य में मिल पायगी ।

1. लोक साहित्य और अन्य विज्ञान

अ.	पुरातत्व	(Archaeology)
आ.	इतिहास	(History)
इ.	समाजशास्त्र	(Sociology)
ई.	नृविज्ञान	(Anthropology)
उ.	मनोविज्ञान	(Psychology)
ऊ.	भाषा विज्ञान	(Philology)
ऋ.	भूगोल विज्ञान	(Geography)
ए.	अर्थशास्त्र	(Economics)
ऐ.	पाठ-विज्ञान	(Syllebus)
ओ.	धर्म-विज्ञान	(Religious teachings)
औ.	चिकित्सा विज्ञान	(Medical Science)
अं.	साहित्य	(Literature)

लोक-साहित्य से अन्य सभी समाज विज्ञान, एक न एक प्रकार में संबद्ध रहा करता है ।

|1| पुरातत्व

पुरातत्व शास्त्र, किसी मानव समाज के आदिम से आदिम मानव जीवन का पता लगाने की दिशा में अध्ययन करता है । पुरातत्व के विषयों में, किस युग में किस प्रकार का, मानव-जीवन, उसका रहन-सहन, आवास, भोजन, दैनिक उपयोग के उपकरण, प्रथाएं, रीति-रिवाज़, विश्वास, त्योहार, मेले, पूजा, देवी-देवताओं के स्वरूप, मन्दिर, वास्तुकला, पच्ची कारी, विविध कलाओं की सर्जना का स्वरूप आदि ही हैं । सही रूप में इन विषयों का अध्ययन ही, पुरातत्व-विज्ञा बना सकता है ।

हिन्दी में डॉ॰ वासुदेव शरण अग्रवाल ने पुरातत्व और लोक साहित्य को मिलाकर अध्ययन करने की प्रथा को अग्रसर कर दिया । उन्होंने यही बताया कि लोकसाहित्य एवं लोकवार्ता के माध्यम से पुरातत्व विदों केलिए, प्रेरणा एवं पुरातत्व की विलुप्त कड़ियों को जोड़ने के मार्ग को प्रशस्त किया था । ऊपर उक्त हर विषयों पर पुरातत्व केे लोकसाहित्य के ज़रिये अध्ययन कर सकते । ऐतिहासिक महत्व इस दृष्टि से अधिक रहा करता है ।

इतिहास

लोक साहित्य में इतिहास के अनेक तथ्य छिपे रहते हैं । पुरातत्व विज्ञान जितना इतिहास केलिए सहायक है, उतना ही सहायक है लोक साहित्य । अनेक बार जब पुरातत्व के पृष्ठ अनलिखा रहते हैं । किसी जनपद में प्राप्त लोक गाथाएं, लोक-गीत, लोक-कथाएं, किंवदंतियां आदि उस जनपद के इतिहास के

विषय में कुछ तथ्य संजोये रहते हैं और जबतक पुरातत्व विद् द्वारा कुछ खोज न की जाय, तब तक इतिहास की कड़ियाँ जोड़ने का कार्य लोक-साहित्य से ही लिया जाता है। इतिहासकार लोक-जीवन से, अनेक ऐतिहासिक तथ्यों का कुछ ग्रहण करता है और लोकसाहित्य में विपुल लोक-जीवन का परिचय प्राप्त करने केलिए अनेक तथ्य प्राप्त करता है। लोक साहित्य की कहानियों में ऐतिहासिक मूल्य छिपा रहा है। किसी प्रदेश के सांस्कृतिक इतिहास को समझने केलिए वहाँ के लोक-साहित्य को ही शरण में लेना काफी उपयोगी होगा क्योंकि अनेक प्रकार के सत्य एवं महत्व पूर्ण तथ्य उसमें अंतर्भूत रहा करता है। "विश्व और मानव की रहस्यमय, पहेली को सुलझाने केलिए उसके प्राचीनतम रूपों की खोज केलिए और उसके यथार्थ स्वरूप को जानने केलिए जहाँ इतिहास के पृष्ठ मूक हैं, शिलालेख और ताम्र पत्र मलीन हो गये हैं, वहाँ उस तमसाच्छन्न स्थिति में लोक-साहित्य ही दिशा-निर्देश करता है"[1]। लोक साहित्य केलिए इतिहास की उपादेयता भी एक हद तक इस विषय से संबद्ध है। वास्तव में यहाँ परस्पर निर्भरता का अध्याय खुल जाता है। लोक साहित्य के अध्ययन केलिए पुरातत्व एवं इतिहास का अध्ययन और सहायक भी रहता है।

"लोक संस्कृति के अध्ययन केलिए भी पुरातत्व और इतिहास बड़े सहायक हैं। लोक-वार्ता में अनेकों नाम और अनेकों घटनाएं होती हैं, अनेकों तथ्य तथा अनेकों सूचनाएं होती हैं। उनमें अनेकों निर्माण स्तर होती हैं। इन सबका उद्घाटन पुरातत्व और इतिहास के द्वारा ही हो सकता है[2]।

1. हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य - डॉ. शंकरलाल यादव - पृ.43

2. लोक-साहित्य विज्ञान - डॉ. सत्येन्द्र - पृ.71।

समाजशास्त्र

समाज में रहनेवाली विभिन्न जातियों, उपजातियों, समुदायों की सामाजिक प्रथाओं रीतिरिवाजों पर आज का समाज-विज्ञान-शास्त्र सीमा बांध कर जीता रहता है । लोक साहित्य में मानव जीवन की यथातथ्य अभिव्यक्ति होती है, इसलिए लोक साहित्य में ऐसी प्रचुर सामग्री मिल जाती है जिसे समाज शास्त्री, अपने अध्ययन का आधार बनाता है या बना सकता है । अनेक जंगली, पर्वतीय, या आदिम जातियों के साहित्य का अध्ययन करके उनके जीवन के विभिन्न पक्षों का परिचय प्राप्त किया जा सकता है । लोक-साहित्य की समाजशास्त्रीय अध्ययन केलिए उपादेयता की विषय में डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय का कथन देखिए - "लोक साहित्य में जन जीवन का जितना सच्चा और स्वाभाविक वर्णन उपलब्ध होता है, उतना अन्य नहीं । सच तो यह है कि यदि किसी समाज का वास्तविक चित्र देखना अभीष्ट हो तो उस के लोक साहित्य का अध्ययन करना चाहिए । .... इन लोक गीतों, गाथाओं और कथाओं में मनुष्यों के रहन-सहन, आचार-विचार, खान-पान, और रीति-रिवाज़ का सच्चा चित्र देखने को मिलता है[1] ।

इस कथन से हम बता सकते हैं कि लोक साहित्य के अध्ययन केलिए, समाज विज्ञान का सामंजस्य सहायक है । समाज विज्ञान के अध्ययन में लोक साहित्य का स्थान भी देता है ।

नृ-विज्ञान (मानवशास्त्र)

मानव ने जिस प्रकार उत्तरोत्तर विकास किया, उसकी परिस्थितियाँ और कारण रूप में कार्य, करने वाले जैसे जैसे भी तत्व हो सकते हैं, उनका विवरण

1. लोक-साहित्य की भूमिका - (तृतीय संस्करण) पृ॰ 323

और शास्त्र है नृ-विज्ञान । यह बात केवल मानव मात्र में सीमित है यही विशेषता है । इस प्रकार के अध्ययन केलिए बहुत सी चीज़ें लोक साहित्य में प्राप्त हो सकते हैं । शारीरिक एवं सांस्कृतिक दोनों मानव-विज्ञान की शाखाएं, लोक साहित्य के अध्ययन से अनेक नये अध्यायों का आरंभ करती है । कर सकती भी हैं । इस कारण से मानव-विज्ञान केलिए लोक साहित्य का अध्ययन अधिक उपयोगी उतरता है । जाति विज्ञान की स्थिति यही है । जातियों और उपजातियों में प्राप्त उच्च नीचत्व, मान्यताएं, विशेष प्रवृत्तियां आदि लोक साहित्य के अध्ययन से जानी जा सकती है । लोक साहित्य जाति विज्ञान को भी, सहायक रहेगा । दोनों का पारस्परिक योग एवं आवश्यकता के सम्बन्ध में - डॉ॰ सत्येन्द्र ने ऐसा भी बताया है - "नृविज्ञान-शरीर और रक्त की परम्परा का अध्ययन है तो लोक-वार्ता उस शरीर की वाणी है । लोक-वार्ता में लोक-तत्वों के मर्मों को समझने और उनके ऐतिहासिक कालक्रम केलिए एन्थ्रोपोलोजी या नृविज्ञान के बिना काम नहीं चल सकता । लोक तत्वों में जातीय लोक-मानस व्याप्त रहता है"[1] ।

मनोविज्ञान

किसी भी वर्ग, समूह या व्यक्ति की विभिन्न, परिस्थितियों में उत्पन्न होनेवाली मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन मनोविज्ञान है । लोक साहित्य में भी, लोक और व्यक्ति (रचयिता) की वैयक्तिक मनोदशाओं या मनो वांछाओं, आशा आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति रहती है । इसलिए मनो-विज्ञान केलिए लोक साहित्य में प्रचुर सामग्री मिल जाती है जिस का अध्ययन अनुसंधान कर के नये नये निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं या पुराने निष्कर्षों की पुष्टि की जा सकती है । इस के अतिरिक्त मनोविज्ञान की कुछ ऐसी शाखाएं भी है जो किसी समूह या जाति की मानसिक प्रवृत्तियों का अध्ययन करती है,

---

1. लोक साहित्य विज्ञान - पृ॰76

लोकानुभूतियों की व्याख्या करती हैं और मानव की आदिम प्रवृत्तियों का विवेचन करती हैं जिन्हें जाति मनोविज्ञान, लोक-मनोविज्ञान और आदिम मनोविज्ञान से अभिहित किया जाता है ऐसी शाखाओं के अध्ययन केलिए लोक साहित्य में अभिव्यक्त, लोक रुचि एवं विश्वासपरक सामग्री आधार शिला का कार्य करती है । लोक साहित्य के अध्ययन की अनेक गुत्थियों को सुलझाने में मनोविज्ञान से सहायता ली जाती है या ली जा सकती है । दोनों शास्त्रों की आदान प्रदानता का यही कारण है, यही उपादेयता माना जा सकता है ।

भाषा विज्ञान

भाषा विज्ञान भाषा की शास्त्रीयता का अध्ययन है जिस में किसी शब्द, ध्वनि, और वाक्य के साथ साथ पदों के अर्थ का भी अध्ययन होता है । लोक साहित्य में भी उसकी अपनी शास्त्रीयता कायम की हुई है । इस प्रकार के विकास में अर्थ, ध्वनि, और शब्द-रूप के विकार, उत्कर्ष, आदि का अध्ययन करने केलिए भाषा विज्ञान को प्रचुर सामग्री लोक-साहित्य से प्राप्त हो सकती है । लोक-साहित्य के महत्व का अध्ययन, उसकी लोक बोली के अध्ययन पर भी आधारित है, यही लोक - बोली, भाषा-विज्ञान का एक भिन्न रूप है । लोक-बोली में प्रयुक्त अनेक शब्दों की निरुक्ति का पता लगाने पर भाषा शास्त्र विषयक अनेक समस्याओं का हल खोजा जा सकता है । सार्थक अभिव्यक्तियों, क्रियाओं, पारिभाषिक शब्दों, कहावतों, मुहावरों, आदि से भाषा का भण्डार समृद्ध किया जा सकता है । यही नहीं भाषा की अतीत कालीन कड़ियों तक जाने केलिए भी लोक-बोलियों में प्रचुर सामग्री मिल जाती है । "जनपद कल्याणी योजना" के संस्थापक वासुदेव शरण अग्रवाल ने इस संबन्ध में अपने विचार - "मेरा तो विश्वास है कि हिन्दी बिना जनपदों की बोलियों को साथ लिए उन्नति कर ही नहीं सकती । भाषा की दृष्टि से जनपदों में, गांवों में वे हिसाब मसाला भरा पड़ा है" । - इसी प्रकार पृथ्वी पुत्र में [पृ.150] -

प्रकट किया है । लोक साहित्य केलिए भाषा - विज्ञान का अध्ययन अ
उपयोगी ज्ञान भी पड़ता है । पदों और उस के प्रयोग संबन्धी कार्यों
में लोकसाहित्य भाषा विज्ञान की ओर भाषा विज्ञान की उपादेयता लो
साहित्य को भी लागू रहेगा जिसका मतलब है आपसी आदान-प्रदान का

भूगोल

किसी जनपद के लोक साहित्य में भूगोल संबन्धी कई चीज़ें प्रा
अनेक, नदियों, नगरों, प्रदेशों, राजधानियों, व्यावसायिक केन्द्रों आ
वर्णन लोक साहित्य में मिलता है यही नहीं अनेक जनपदों के प्राचीन ना
और उनकी सीमा-रेखाओं का वृत्त भी लोक साहित्य में मिल जाता
रूप में लोक-साहित्य में प्राप्त सामग्री के आधार पर भूगोल का अध्येता
दिशाओं में शोध कार्य करके भूगोल विषयक ज्ञान के नये द्वार खोल सकता
अनेक गाथाओं में अनेक ऐसे नदियों नागों तथा, या नगरों तथा उपनगरों
उल्लेख मिलता है, जिन का आज लोप हो चुका है । इसका शोधानु
भूगोल के अध्ययन में नये अध्यायों का सूत्रपात किया जा सकता है ।
भूगोल के अध्ययन केलिए लोक-साहित्य की उपादेयता का पता चलता
दूसरा पक्ष यह भी है कि भूगोल के अध्ययन केलिए लोक साहित्य की
[illegible] से लोक साहित्य में प्राप्त अनेक स्थानों नगरों, न
का पूर्ण परिचय प्राप्त करने में सहायता मिलती है । यही इन दोनों
विभागों का पारस्परिक संबन्ध है ।

अर्थशास्त्र

अर्थशास्त्र के वैज्ञानिक अध्ययन और उसके सैद्धान्तिक पक्ष केलि
साहित्य से सहायता ली जा सकती है । इस के अतिरिक्त आर्थिक
वाणिज्य, व्यवसायों आदि का परिचय लोक साहित्य से सहायता

इसके अतिरिक्त आर्थिक, कृषि, वाणिज्य, व्यवसायों आदि का परिचय लोक साहित्य से प्राप्त हो जाता है । इसी प्रकार अतीत कालीन अर्थ व्यवस्था से संबन्धित कुछ उल्लेखों को समझने के लिए अर्थ शास्त्र का अध्ययन भी सहायक हो सकता है । इस रूप में लोक साहित्य और अर्थशास्त्र - दोनों एक दूसरे के पूरक समाज विज्ञान हैं ।

पाठ विज्ञान

किसी प्राचीन ग्रन्थ का पाठालोचन करने के लिए अनेक शब्दों, अन्तर कथाओं में आये नामों, प्रवृत्तियों, आदि का परिचय आवश्यक होता है । किसी शब्द के प्राचीन रूप के विषय में जानकारी करने के लिए, यदि कहीं कोई आश्रय है तो लोक साहित्य ही, क्योंकि अप्रचलन के गर्भ में समाजाने वाले अनेक शब्दों को लोक साहित्य ही अक्षुण्ण रखता है । इस रूप में पाठानुसंधान के लिए लोक साहित्य उपादेय भूमिका का निर्वाह करता है । इसी प्रकार लोक-साहित्य में प्रयुक्त अनेक शब्दों पदों आदि का सम्यक ज्ञान प्राप्त करने में पाठालोचन के सिद्धान्तों से सहायता भी जा सकती है ।

धर्मशास्त्र

लोक-विश्वास धर्म का मूलाधार माना जा सकता है । यह लोक-विश्वास लोक साहित्य की अमूल्य निधि में सुरक्षित सा प्राप्त होता है । इसलिए धर्मगाथा, पुराणगाथा, [माइथालोजी] के लिए लोक साहित्य के अध्ययन से पर्याप्त सहायता मिल जाती है । इसी प्रकार पुराणगाथा, या धर्मगाथाओं आदि के अध्ययन से लोकसाहित्य की अनेक गुत्थियां भी, सुलझाई जा सकती है । इस रूप में ये एक दूसरे के लिए सहायक बन सकती है ।

चिकित्सा विज्ञान

मनुष्य और पशुओं के रोगों को दूर करने की अनेक ऐसी चिकित्सा पद्धतियों का, उल्लेख लोक साहित्य में मिलता है । जिन में आदिम अवस्थाओं और कभी कभी वर्तमान युगों में भी असभ्य या अर्धसभ्य जन समुदायों में लोकोपचार किया जाता है । कीलना, झाड़-फूंक, गंगा की मिट्टी की आन, टोनाटोटका आदि के साथ छट थाली, रामायन, लोक-गाथाओं की गायकी आदि से मनुष्य और पशुओं के रोगों की चिकित्सा* पद्धति का रूप चिकित्सा विज्ञान, के आदिम रूप का परिचायक होता है । इस रूप में चिकित्सा विज्ञान के प्राचीन रूपों का परिचय लोक-साहित्य के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है ।

साहित्य

पहले कह चुका है कि किसी भाषा का साहित्य एवं उसकी परंपराएं, लोक साहित्य के प्रभाव से अछूते नहीं रह सकते । इस रूप में लोक-साहित्य का अध्ययन शिष्ट साहित्य के परिचय एवं आलोचन विवेचन केलिए एक नये अध्याय का सूत्रपात करता है । लोक-कथाएं, लोक-गीत, लोक-गाथा, आदि क्रमशः शिष्ट साहित्यिक कथासाहित्य काव्य एवं महाकाव्य की सर्जना के कारणभूत एवं प्रेरक तत्व के रूप में कार्य करते हैं ऐसा, आज सिद्ध हो चुका है । यद्यपि लोक साहित्य की सर्जना सायास नहीं होती, परन्तु फिर भी, लोक साहित्य की प्रवृत्तियों एवं विशेषताओं के संदर्भ में शिष्ट साहित्य की अनेक सशक्त, मार्मिक, प्रभावी उक्तियों एवं अभिव्यंजना पद्धतियों से शिष्ट साहित्य का भण्डार समृद्ध किया, जा सकता है । किसी भाषा साहित्य में आंचलिक तत्व की व्याप्ति के पीछे यही सत्य कार्य करता है ।

* होती है । इस

इस प्रकार हम कह सकते है कि लोक-साहित्य का अनेक समाज विज्ञानों या शास्त्रों से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध सिद्ध होता है । आज समाज विज्ञानों के अध्ययन की जितनी उपयोगिता है, उस से कहीं अधिक लोक साहित्य के अध्ययन की आवश्यकता है ।

लोकसाहित्य का वर्गीकरण

लोक साहित्य को हम लोकमानस की भावधारा का प्रत्यक्षीकरण अथवा प्रत्ययरूप कहा सकते हैं । इसे सुरक्षित रखने का श्रेय ग्रामीण समाज को है ।[1] व्यक्तिगत चेतना को छोड़कर यह सामाजिक चेतना का आश्रय ले लेता है और काल की सीमा का उल्लंघन करके अक्षुण्ण रूप से सुरक्षित रहता है । लोकसाहित्य का विकास केन्द्र ग्राम है । इस कारण से इसे ग्राम साहित्य नाम भी दिया गया है । अपनी स्वाभाविक अनुभूतियों के कारण लोकसाहित्य प्रत्येक शिक्षित और अशिक्षित भावुक जन साधारण की अपनी वस्तु बन कर विकास को प्राप्त होता रहता है । इसमें जनता की अनुभूतियों का सहज प्रकाशन होता है जो भिन्न शैलियों द्वारा संभव है । विषय की विशदता के कारण लोकसाहित्य का सम्यक् वर्गीकरण यद्यपि कठिन है तथापि अध्ययन की सुविधा के लिए इसका विभाजन निम्नांकित रूप में हो सकता है ।

(1) अगेय विभाग (गद्य)
(2) गेय विभाग (पद्य)

अगेय विभाग में - लोक कथा, लोक नाटक, पहेलिका, मुहावरे, लोकोक्ति, ढकोसले आदि का समावेश है ।

---

1. लोक साहित्य का अध्ययन - पृ० 14

गेय विभाग में समस्त पद्यरूप आ जाता है। उसको "लोक-काव्य" संज्ञा दी गयी है। लोकगीत और लोकगाथा इस विभाग में आ जाते हैं। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का विषय लोक साहित्य का समस्त गेय विभाग है। इसलिए उसका नाम "लोक काव्य" निर्धारित किया है। लेकिन गेय विभाग के अध्ययन के पहले अगेय विभाग की भिन्न भिन्न विधाओं पर विचार करना आवश्यक एवं उचित प्रतीत होता है।

अगेय विभाग

इसे गद्य विभाग नाम भी दिया जा सकता है। लोक-कथा, लोक-नाट्य, पहेलियाँ लोकोक्ति, मुहावरे, ढकोसले आदि इस विभाग में आते हैं।

---

1. लोककाव्य नाम इसलिए सार्थक माना गया है कि समस्त पद्य रूप को, इस एकमात्र संज्ञा के अन्दर ही समेटकर रखना संभव है। लोकगीत कहने पर एक विधा मात्र उसमें निर्दिष्ट हो सकता है, लोकगाथा कहने पर और एक विधा। दोनों को मिलाकर स्वीकृत करने की एकमात्र संज्ञा - लोककाव्य है।

गेय विभाग – यानि लोककाव्य

लोकगीत, लोकगाथा दोनों गेय विभाग में आते हैं । गेय विभाग को पद्य विभाग भी कहा जा सकता है । हमने यहाँ लोक साहित्य के समस्त पद्य विभाग को "लोक काव्य" [Folk Poetry] संज्ञा दी है । [1]

लोक-काव्य लोक साहित्य का वह समस्त पद्य विभाग है, जिसको अंग्रेज़ी में फोक-पोयट्री" कहा जाता है । लोकगीतों की समस्त विधाओं के साथ साथ लोकगाथाएं भी इस विधा के अंतर्गत आ जाती हैं । अंग्रेज़ी में जिस पद्य विधा को पोपुलर पोयट्री एवं क्लासिकल पोयट्री नाम दिये गये हैं, उन सब अलंकृत विधाओं को इस प्रबन्ध में स्थान नहीं दिया गया है । लोकगीत, लोक-गाथा एवं प्रबन्ध गीत भी इस लोककाव्य संज्ञा में अंतर भुक्त रहे हैं ।

1. लोकसाहित्य के आचार्यों ने पद्य विभाग का वर्गीकरण "लोकगीत" एवं "लोकगाथा" ही किया है । उन दोनों को मिलाकर "लोक-काव्य" संज्ञा और कहीं नहीं दी है । इस प्रबन्ध में जिस चीज़ को लोककाव्य संज्ञा दी गयी है, वह समस्त लोक पद्य या लोककविता को है । अंग्रेज़ी में इस का नाम "फोक पोयट्री है । पोपुलर पोयट्री, क्लासिकल पोयट्री आदि अन्य पद्य विभाग है जिनका इस प्रबन्ध में स्थान नहीं दिया गया है ।

तालिका

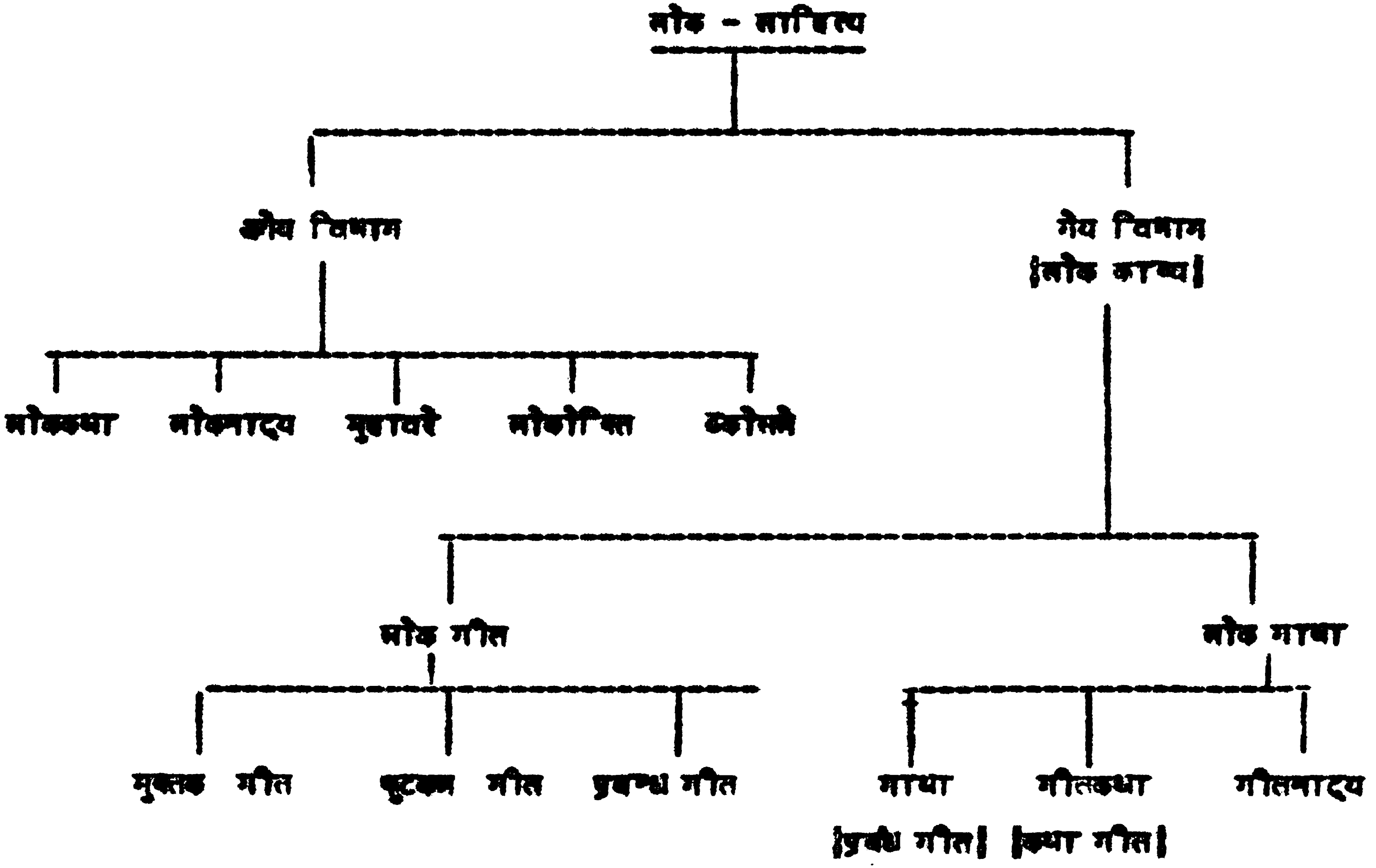
लोक - साहित्य
अगेय विभाग
गेय विभाग
(लोक काव्य)
लोककथा
लोकनाट्य
मुहावरे
लोकोक्ति
ढकोसले
लोक गीत
लोक गाथा
मुक्तक गीत
फुटकल गीत
प्रबन्ध गीत
गाथा
(प्रबंध गीत)
गीतकथा
(कथा गीत)
गीतनाट्य

अध्ययन विभाग पर पृथक्‌तः विचार किया जायगा ।

1· लोककथा

लोक-साहित्य के अन्तर्गत लोक कथाओं का विशेष महत्त्व है । भारत में लोक-कथा का क्षेत्र सर्वाधिक प्राचीन माना जाता है । विश्व का संपूर्ण कथा साहित्य भारतीय कथाओं से अनुप्राणित है । लोक-कथाओं का बीज सर्वप्रथम वेदों में प्राप्त होता है ।

{1} ऋग्वेद में ऋषि शुनःशेप का प्रसिद्ध आख्यान ।
{2} च्यवन सुकन्या की कथा ।
{3} शतपथ ब्राह्मण में पुरूरवा उर्वशी की कथा ।
{4} ऐतरेय ब्राह्मण में शुनःशेप की कथा ।
{5} शाट्यायन ब्राह्मण में महर्षि च्यवन का आख्यान ।

उपनिषदों में भी अनेक लोक-कथाएं हैं ।

{1} कठोपनिषद में नचिकेता की कथा ।
{2} केनोपनिषद में अग्नि एवं यक्ष की कथा ।

संस्कृत साहित्य में भी लोक-कथाओं का सर्वाधिक प्राचीन तथा विशाल संग्रह गुणाढ्य की बृहत् कथा है । मूल रूप से यह ग्रंथ पैशाची भाषा में लिखा गया था । अब इसके संस्कृत अनुवाद प्राप्त हैं । इसके तीन संस्कृत अनुवाद प्राप्त हैं।

1· ऋग्वेद - 1 / 14 / 30 4· शतपथ ब्राह्मण 11/5/2
2· " - 8 / 9 / 4 5· ऐतरेय ब्राह्मण 7/3/2
3· " - 2 / 39 / 4 6· शतपथ ब्राह्मण 2/5/2।

(1) परिकथा
(2) सकल कथा
(3) खंड कथा

परिकथा

इसमें इतिवृत्तात्मक वर्णन रहता है ।

सकल कथा

इसमें बीज से फल प्राप्ति तक संपूर्ण कथा का समावेश रहता है ।

बंगला लोक साहित्य विद्वान डॉ॰ दिनेशचन्द्र सेन ने लोककथाओं का विभाजन इस प्रकार किया है[1] ।

(1) रूप कथा
(2) हास्य कथा
(3) व्रत कथा
(4) गीत कथा

1. रूप कथा में अमानवीय एवं अप्राकृतिक तत्वों का वर्णन रहता है ।
2. हास्य कथा में मनोरंजक विषय वर्णित होता है[2] ।

---

1. हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास - षोडश भाग - पृ.113
2. फोक लिटरेचर आफ बंगाल - डॉ॰ दिनेश चन्द्रसेन - पृ. 46

व्रत कथा, किसी त्योहार या व्रत से संबन्धित होती है। गीत कथा बच्चों को पालने में सुलाते समय कही जाती है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने कथ्य विषय के आधार पर लोककथाओं का निम्नलिखित वर्गीकरण किया है।

(1) नीति कथा
(2) व्रत कथा
(3) प्रेम कथा
(4) मनोरंजक कथा
(5) दंतकथा
(6) पौराणिक कथा।

पाश्चात्य विद्वानों ने लोककथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :-

(1) कल्पित कथा (फेबुल)
(2) परियों की कथा (फेयरी टेल्स)
(3) दंत कथा (लीजेंड)
(4) पौराणिक कथा (मिथ)

कल्पित कथाओं के अन्तर्गत पशु पक्षियों द्वारा नैतिक उपदेश का निरूपण किया जाता है[1]। परियों की कथाओं में, परी-अप्सराओं एवं लौकिक व्यक्ति की कथा रहती है। दन्त कथाओं में ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित कथा आती है। ये साधारणतः मौखिक परंपरा के क्रम में अनेक तथ्यों से युक्त हो जाती है। पौराणिक कथाओं के अंतर्गत देवी देवता सम्बन्धी कथाओं का समावेश रहता है। लोककथाओं में आनेवाले मुख्य तत्व निम्नांकित हो सकते

---

1. लोक साहित्य की भूमिका - डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
2. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास

(1) प्रेम का माधुर्य एवं श्रृंगार का वर्णन
(2) सहज भावनाओं का सम्बन्ध
(3) लोक - कल्याण की भावना
(4) सुखान्त जीवन-लीला
(5) अलौकिक की प्रधानता
(6) औत्सुक्य
(7) वर्णन की सहजता ।

लोक कथा और अन्य कथाओं में स्वरूपगत एवं विषयगत अन्तर विद्यमान है। लोक-कथाओं की रचना-पद्धति सरल होती है । आधुनिक कहानी का रचना-शिल्प जटिल है । कथातत्वों के निर्वाह का कार्य लोक कथाओं में उतना नहीं चाहिए जितना आधुनिक कहानियों में होता है । तात्विक नियम का अभाव भी, लोक कथाओं में होता है उसका विषय सीधा और सरल है । मानव की मूल प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति लोक-कथा का आधार रही है । आधुनिक कहानियों की नींव में विभिन्न सामाजिक आर्थिक राजनैतिक एवं श्रृंगारिक संघर्ष रहते हैं । आधुनिक कहानियाँ विषमताओं की जटिलता के कारण अधिकतर दुःखान्त रहती है जहाँलोककथा लोकी सदी सुखान्त है । सुख एवं समृद्धि के संसार में प्रवृत्त होती हैं ।

लोकनाट्य

गीत, नृत्य और संगीत से युक्त मनोरंजक कथावस्तुओं का लोक-भाषा में अभिनीत होना लोक-नाट्य है । यह परंपरा अधिक प्राचीन है । वेदों में

नाटकीय तत्वों के बीज ढूंढ सकते हैं।[1] ऋग्वेद की संवादात्मक ऋचाएं नाटकीय संवाद का मूलरूप हैं। गीत, नृत्य और अभिनय के तत्व भी वेदों में प्राप्त है। वास्तव में नाटकों का जन्म उन तत्वों के योग से हुआ है। नाट्य वेद की उत्पत्ति की कथा यहाँ स्मरणीय है।[2] ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में भूतपूर्व सरगुजा रियासत की पहाड़ी में "सीताबेंगा" और जोगीमारा गुफाओं में स्थित प्रेक्षा - गृह प्राप्त होता है। ये तत्कालीन नाट्य विकास का परिचायक हैं। पाणिनी की अष्टाध्यायी में नटों [अभिनेता] का उल्लेख प्राप्त है। पतंजलि के महाभाष्य में कंसवध एवं बलिबंध नाटकों के अभिनीत होने का वर्णन है। पाली ग्रंथों में बुद्धभिक्षुओं के लिए नाटक देखना निषिद्ध माना गया है। कोटिगिरी की रंगशाला में नृत्य देखने के अपराध में दो भिक्षुओं को दण्ड देने का भी उल्लेख है। संस्कृत साहित्य में नाटकों का पूर्णरूपेण विकास हुआ है। भास, अश्वघोष और कालिदास के नाटक प्रख्यात हैं। इसके पश्चात् नाटकों का विकासक्रम अनवरुद्ध गति से चलता रहा। मुगल शासनकाल में संस्कृत साहित्य की नाट्य परंपरा का विकास मन्द हो गया।[3] क्रमशः हिन्दू नवजागरण का भक्ति आन्दोलन प्रबुद्ध हुआ। उसके साथ साथ कृष्ण और राम के जीवन-चरित प्रकाश में आये। सगुण ब्रह्म के उपासकों ने अपने इष्ट देव राम एवं कृष्ण के स्वरूप प्रसार के उद्देश्य से कृष्णलीला, रामलीला जैसे नाटकों का आविष्कार किया। उसका समाज में खूब प्रचार एवं स्वागत हुआ। लोक धर्मी आधुनिक नाट्य परंपरा की नींव इस भक्ति आन्दोलन में है। धार्मिक भावना से प्रेरित होकर अनेक स्थानों पर लोक नाटकों का आविष्कार हुआ। भागवत भक्ति से अनुप्राणित होकर ये लोक धर्मी नाटक मजेदार और सर्वादरणीय होने लगे। लोक नाटकों में विकास एवं गति इस प्रकार समाज में

---

1. जग्राह-पाठ्यं ऋग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।
   यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि॥ नाट्यशास्त्र - 1/17/27।
2. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - भाग 16 - पृ.123
3. लोकसाहित्य का सांस्कृतिक विज्ञान - डॉ. विद्याचौहान - पृ.17

आती थीं । लोक नाटकों के अनेक प्रकार उपलब्ध है[1] ।

[1] रास
[2] स्वांग
[3] मंडलीला - भगत
[4] ख्याल या नौटंकी
[5] संगीत स्वांग
[6] ढोल्या
[7] शारीरिक या कायिक ।

इन विभागों में कुछ प्रबन्धात्मक है[2] । और कुछ नृत्य-नाट्य प्रधान है । प्रथम में किसी कथा या घटना को अभिनय का विषय बनाया जाता है । दूसरे में अभिनय के साथ साथ संगीत तथा नृत्य होता है । लोक नाट्यों की कतिपय विशेषताएं होती है जिनमें लोकमानस की प्रवृत्तियां निहित हैं[3] ।

1. सामूहिक अभिनय
2. आडंबर हीन रंगमंच
3. कथाओं का विकृत रूप - आदि ।

1. लोक-साहित्य विज्ञान - डॉ॰ सत्येन्द्र - पृ॰257
2. कुछ प्रसिद्ध लोकनाट्य :- [1] रामलीला [2] रासलीला [3] माच [4] मालवा [5] ख्याल [राजस्थान] [6] भवाई [गुजरात] [7] जात्रा [बंगाल] [8] तमाशा [महाराष्ट्र] [9] ललित [गोवा] यक्षगान [कन्नड] [दक्षिण] आदि ...... काकारिशा [केरल] ।
3. लोक साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन - डॉ॰ विद्या चौहान - पृ॰20

इन लोक - नाट्यों में व्यक्ति विशेष का महत्व नगण्य है । इनमें संपूर्ण नाटक मंडलों के संयुक्त अभिनय द्वारा ही ग्रामीण समाज की भावनाएं भ व्यक्त होती हैं । ये नाटक प्रायः खुले रंगमंच पर होते हैं । चबूतरे, तख्त आ का प्रदर्शन होता है । रंगीन पर्दा या मंच का अभाव साधारण है । रंगपरि का बोध साधारणतः कथन या गीत से स्पष्ट होता है । दीवाल या पेड़ के आड़ में भी ये नाटक खेले जाते हैं ।

साधारणतः नाटक का विषय जगत प्रसिद्ध कथाओं से चुना जाता है, जो पौराणिक, धार्मिक, ऐतिहासिक एवं सामाजिक होते हैं । लोक-नाट्य भी उन्हीं विषयों पर रहता है, लेकिन मज़ाक और हास्यानुकरण के कारण कच्चा रह जाता है । पात्रों का विस्तीकरण [ऐक्टय], चरित्र, रूप-योजना, संवाद आदि में नीचे स्तर का प्रयोग-विधान अंकित होता है । एक तरह की बनावटी, नकली एवं प्राकृत स्वभाव की प्रदर्शनी सा जाता है । यद्यपि ये ऐबूतों से भरे पड़े हैं तो भी ये लोक नाट्य लोक-संस्कृति की महत्वपूर्ण विधा बन गये हैं[1] । लोकोक्ति टोनाटोटका, मुहावरे, पहेली आदि लोक साहित्य विधा की "फुटकल" रचनाएं हैं । आम जनता की वाणी व्यापार में इनका अपना महत्वपूर्ण स्थान है । इनका हमने फुटकल नाम इसलिए दिया कि इन्हें पूर्णतया गद्य या पद्य नहीं व्यवहृत कर सकते । पहेली और लोकोक्तियों में गेय तत्व की कमी होते हुए भी, उनमें काव्यत्व, सरलता एवं कोमलता रही है । इस कारण से इन्हें गद्य-पद्य सम्मिश्र स्वभाव का या "फुटकल" नाम सार्थक है ।

लोकोक्ति -

यह कहना सामान्यतः सार्थक है कि लोकोक्तियां अनुभव सिद्ध ज्ञान का वृहद् कोश है[2] । जन-सामान्य में लोकोक्तियों का प्रचलन अधिक मात्रा में हुआ है

---

1. लोक साहित्य विज्ञान - डॉ. सत्येन्द्र - पृ.9
2. गोल्डन बौ - डॉ. फ्रेज़र

इस कारण लोकोक्ति को मानवीज्ञान का आधार सूत्र कहा सकते हैं। मनुष्य अपने जीवन में जिस तथ्य का साक्षात्कार करते हैं उसका समस्त सार लोकोक्तियों में प्राप्त होता है। इनमें गागर में सागर भरने की शक्ति निहित है। समाज एवं जाति के व्यापक नियम, नीति, शिक्षा, अध्यात्म-चेतना, राष्ट्रमीमांसा आदि इनमें प्राप्त हैं। सिद्धान्त एवं आचार-विचारों का समावेश भी इनमें पाया जाता है। एक छोटी सी लोकोक्ति में एक विशाल राष्ट्र का स्वरूप प्रतिबिम्बित हो सकता है।

ये उक्तियाँ व्यक्तिपरक न होकर सामूहिक होती हैं। व्यक्ति की एक सहज उक्ति ही लोक से स्वीकृत हो जाने पर लोकोक्ति बन जाती है। जब वैयक्तिक अनुभव की किसी उक्ति समस्त मानव जातियों के मन और मस्तिष्क का मंथन करके प्रभाव डालता है और सर्व ग्राह्य बन जाता है तब वह लोकोक्ति कहलायेगा। वेदों उपनिषदों जातक कथाओं में भी लोकोक्तियों का प्रचार प्राप्त है। संस्कृत में सुभाषितम् एवं सूक्ति जिसे कहा जाता है वही लोकोक्ति नाम से साधारण जीवन में प्रचलित हैं[1]। सुभाषित का अर्थ यह है कि "सुन्दर रीति से कहा गया कथन"[2]। इस प्रकार लोकोक्ति वह सुन्दर रीति से कहा गया कथन है जो लोक व्यापि प्रभाव से पूर्ण हो। हिन्दी में लोकोक्तियों का प्रसार बड़े व्यापक रूप से प्राप्त हुआ है। प्राचीन लोकोक्तियों का उत्तरा हिन्दी में भी, यथावत् चला आया है। प्राचीन तथ्यों को धारण करने के अति लोकोक्तियों में समयुगीन अनुभव एवं व्यवहार सिद्धान्त भी जुड़ा रहता है। कल्पना की अवास्तव छाया इनमें नहीं होती। यथार्थ जीवन के धरातल पर उत्पन्न तथ्यों से इनका निर्माण होता है। एक विद्वान् के मतानुसार लोकोि वे संक्षिप्त सुभाषित है जिनमें नैतिक विचारों तथा लौकिक ज्ञान का वर्णन नहीं ह बल्कि इसके अतिरिक्त वे संस्कृति के तत्व पौराणिक कथाओं के स्वरूप तथा

---

1. हिन्दी का बृहत् इतिहास षोडश भाग - प्रस्तावना - पृ.

2. "सुष्टुभाषितं सुभाषितम्:

ऐतिहासिक घटनाओं पर भी प्रकाश डालती है । मुहावरे की उत्पत्ति
इतिहास भाषा के जन्म से जुटा हुआ है[1] । जार्जिया की लोकोक्तियों प
विचार करते हुए ही उन्होंने अपना यह बहुमूल्य विचार प्रकट किये हैं ।

लोकोक्तियों का विभाजन

लोकोक्तियों को अध्ययन की दृष्टि से हम निम्न लिखित वर्गों
विभक्त कर सकते हैं ।

(1) स्थान संबन्धी लोकोक्तियाँ
(2) जाति संबन्धी लोकोक्तियाँ
(3) प्रकृति संबन्धी लोकोक्तियाँ
(4) पशुपक्षि संबन्धी लोकोक्तियाँ
(5) प्रकीर्ण विषय की लोकोक्तियाँ[2] ।

लोकोक्तियों के द्वारा जीवन के अनमोल अनुभवों के आधार पर
प्रेरणा मिलती है, वह अन्यत्र दुर्लभ है । नीतिविषयक लोकोक्तियों में
ज्ञान भंडार छिपा रहा है । व्यंग्य के द्वारा तथ्य प्रकाशन की परंपरा
रही है । दूसरे लोगों की त्रुटियों को देखकर उसके प्रति चुटीला व्यंग्य
पारस्परिक मनोरंजन की सामग्री का संकलन करना जन साधारण की प्रवृ
पायी जाती है । इस कारण व्यंग्य प्रधान लोकोक्तियाँ अधिक पायी

---

1. बोलचाल - पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय - पृ.136-137
2. लोक साहित्य की भूमिका - डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
3. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास सोलह भाग - भूमिका

लोकोक्ति एक संक्षिप्त सूक्ति में आबद्ध बृहद् ज्ञानराशि है । इस संक्षिप्तता के कारण वह ओंठ से ओंठ जीती रही है । भाव-मर्म पर सीधे प्रभाव डालने की जादू भी इसमें निखर उठती है । सरल और सीधे लोगों की निर्मिति होने के कारण इसमें सरलता अधिक पायी जाती है । किसी उक्ति का जनमानस से स्पर्श होकर लोकोक्ति का रूप धारण करने में यह सरलता सहायक होती है । भाषा एवं भाव दोनों में भी यह संभव है । दुरूह न होने की क्षमता ही लोकोक्ति का मुख्य गुण है[1] ।

मुहावरे

"मुहावरा" शब्द अरबी भाषा का है । इसका अर्थ है आपसी बातचीत और सवाल जवाब । अंग्रेज़ी में इसे "इडियम" कहते हैं । संस्कृत भाषा में भी इस विधा का प्रयोग है, जिसे रमणीयार्थ प्रयोग कहा गया है । लेकिन इन शब्दों में मुहावरे शब्द का सम्यक अर्थ खुला नहीं आता है । अरब में इस शब्द के प्रयोग की सीमा बहुत परिनिश्चित है । लेकिन उर्दू और हिन्दी में बहुत व्यापक ढंग से इसका प्रयोग मिलता है । लक्षणा और व्यंजना से सिद्ध व्यापक अर्थ को ही यहाँ मुहावरा बताया गया है । अभिधा और अभिधेय अर्थ से यह पूरा भिन्न है[2] । एक उदाहरण में । "फूटी आँख से देखना" यह तो मुहावरा है । यहाँ इसका अर्थ है "घृणा करना" अभिधेयार्थ से यह कोसों दूर है । प्रायः मुहावरा की भाषा सुडौल होती है । भाषा सौष्ठव की दृष्टि से इसका महत्व अधिक है । इसके प्रयोग से भाषा में प्राणोत्सर्ग सा मालूम पड़ता है । लाक्षणिक प्रयोगों से भाषा सजीव हो जाती है । जिसमें निर्मलता ही मालूम पड़ती है । मुहावरे के अपने में ही लाक्षणिकता से निर्भर होने के कारण भाषा स्वयं सौन्दर्य माधुर्य एवं विलक्षणता से हो जाती है ।

---

1. लोकगीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि - विद्या चौहान ।
2. आयिरत्तोन्नु पषंचोल्लुकल (एक हजार कहावतें)-वेलायुधन पणिक्कश्शेरी भूमिका

अतएव हम कह सकते हैं कि मुहावरा किसी बोली या भाषा में प्रयुक्त होनेवाला ऐसा वाक्य खण्ड है, जिसकी उपस्थिति से कथन की रोचकता और सरलता में वृद्धि हो सकती है[1]।

जीवन का कोई कार्य व्यापार ऐसा नहीं होता जिसमें मुहावरों का प्रयोग न हो[2]। समस्त प्राकृतिक तत्वों शारीरिक अंग-उपांगों, सामाजिक रूढ़ियों, प्रथाओं एवं परम्पराओं का उल्लेख इनमें पाया जाता है। देश की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों के स्पष्ट चित्र इनमें प्रतिबिम्बित होते हैं। अनेक मुहावरों में जनता की आर्थिक व्यवहारों का प्रतिपादन करनेवाला प्रयोग भी होता है।

मुहावरों की विशेषतायें

मुहावरे प्रायः सुन्दर चित्रों के समान हैं। उनका अस्तित्व तभी सार्थक होता है जब वह किसी अन्य वाक्य का अंग बनकर प्रयुक्त होता है। जैसे - "दांत खट्टे करना"। यह मुहावरा अपने अर्थ को तब तक व्यंजित नहीं करता जब तक यह किसी वाक्य में प्रयुक्त होकर नहीं आता।

---

1. Idioms and idioms - W.J. Hardson.

2. मनुष्य के कार्य क्षेत्र विस्तृत हैं। उसके मानसिक भाव भी उन्नत हैं। घटना और कार्य कारण परंपरा से जैसे अभिव्यंजक वाक्यों की उत्पत्ति होती है, उसी प्रकार मुहावरों की भी। अनेक अवसर ऐसे उपस्थित होते हैं, जब मनुष्य अपने मन के भावों के कारण विशेष से संकेत अथवा इंगित किये व्यंग्य द्वारा प्रकट करना चाहते हैं। कभी कभी, एक ऐसे भाव को थोड़े से शब्दों में निवृत्त करने का उद्योग करता है जिससे अधिक लंबे चौड़े वाक्यों का जाल छिन्न करना उसका अभीष्ट हो जाता है। प्रायः हास परिहास, घृणा, आवेश, उत्साह आदि के अवसर पर उस प्रकृति के अनुकूल वाक्य योजना होती देखी जाती है। सामयिक अवस्था और परिस्थिति का भी वाक्य विन्यास पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है। और इसी प्रकार के साधनों से मुहावरों का आविर्भाव होता है। - पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय - पृ०236-237

पिछले चुनाव में जनता दल ने कांग्रेस के दांत खट्टे कर दिये । इस वाक्य में उक्त मुहावरे का अर्थ "परास्त करना" [अपमान स्वरूप पराजय करना स्पष्ट हो जाता है । "पराजित किया" वाले शब्द का प्रयोग करें तो भी, वह शक्ति - जिसमें "दांत खट्टे करना" मुहावरा अपनी देती है - नहीं मिल सकता । राम रावण युद्ध में वानर सेना ने राक्षसों के दांत खट्टे कर दिये - कहने से भी, राक्षसों के पूर्ण दमन का बोध होता है[1] ।

अपरिवर्तनशीलता

मुहावरे का प्रयोग उसके मूल रूप में होना चाहिए । रूप-परिवर्तन हो जाने पर मुहावरा नष्ट हो जाता है । यथा "सात - दो", के बदले पांच-चार का प्रयोग - नौ केलिए होता है । सात दो से भी नौ हो जा सकता । पांच चार से भी "नौ" हो सकता है । लेकिन मुहावरे में सात दो ही अनिवार्य ही होता है । इससे हम समझ सकते हैं कि अपरिवर्तन-शीलता मुहावरों केलिए अनिवार्य विशेषताओं में एक है[2] ।

लक्ष्यार्थ की प्रधानता

शाब्दिक अर्थ से भिन्न किसी विशिष्ट अर्थ का बोध करना मुहावरे का प्रथम उद्देश्य है । जैसे "गड़े मुर्दे को उठाना" । इस मुहावरे से "बीती बातों के पुनःस्मरण का बोध होता है । "मुर्दे" का यहाँ शाब्दिक प्रातिनिध्य

---

1. पंडित रामचन्द्र शर्मा - मुहावरों का अध्ययन: लेख [समीक्षा]
2. डॉ॰ गोवर्मा - पञ्चीकृतम् शैलियम् [लेख] साहित्य परिषद् पत्रिका 1940

नहीं आता । इसी प्रकार लोक-भाषा में मुहावरों का अनिवार्य स्थान एवं प्रत्येक मुहावरे का प्रत्येक भाग नाचित किया जाता है[1] ।

पहेलियाँ

मुहावरों और पहेलियों में बड़ा अंतर है । पहेली वाणी का वह गूढ़ व्यापार है, जिसमें मनुष्य की गोपनीयता की प्रवृत्ति औत्सुक्य रहती है । डॉ० फ्रेजर के अनुसार पहेलियों की उत्पत्ति उस समय हुई होगी जब कुछ कारणों से वक्ता को स्पष्ट शब्दों में किसी बात को कहने में किसी प्रकार की अड़चन पड़ती होगी[2] । दुर्बोध कथन पद्धति को हम "पहेली" कह सकते हैं । प्रारंभ में पहेली का आविर्भाव भी मनुष्य की इसी स्वाभाविक गोपनीयता की आवश्यकता के अधीन में जन्म होगा । धीरे धीरे वह एक बौद्धिक व्यायाम हो गयी । पहेलियों की परंपरा अत्यंत प्राचीन है । वैदिक ग्रंथों में पहेलियाँ प्राप्त हैं । "ब्रह्मोद्य" नाम से यह वेदों में विद्यमान है । अश्व मेध यज्ञ के अवसर पर एक अनुष्ठान के रूप में पहेलियों का प्रयोग होता है । अश्व के बलिदान करने से पूर्व "होतृ" एवं ब्राह्मण में पहेली पूछोत्र होता था । इसी को ब्रह्मोद्य कहा गया । वेदों के उपरान्त यही परंपरा लौकिक क्षेत्रों में भी प्रचलित हो गयी होगी । कहीं यह प्रथा लोक में भी साथ साथ चली आयी होगी[3] । डॉ० सत्येन्द्र जी ने भी यही मत प्रकट किया है ।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम् - प्रथम भाग - उल्लूर एस० परमेश्वरय्यर पृ०44
2. Dr. Freger - Golden Bough, Vol.9, p.121
3. लोक साहित्य विज्ञान - डॉ० सत्येन्द्र - पृ०432

रहस्यात्मक भाषा का प्रयोग उपनिषदों में भी प्राप्त है । नाचिकेता और यम के बीच होनेवाला वार्तालाप किसी रहस्यमय तत्व के आधार पर है जो पहेली के रूप में है[1] । श्रीमद्भगवद्गीता में भी भगवान कृष्ण ने संसार की तुलना एक पीपल के पेड़ से इस प्रकार की है जिसमें पहेली का तत्व प्राप्त है[2] । श्रीमहाभारत में यक्ष के द्वारा पाण्डवों से किया जानेवाला प्रश्न पहेली के समान है जिसका उत्तर केवल युधिष्ठिर कर सके हैं[3] ।

संस्कृत साहित्य में "पहेली" को प्रहेलिका कहा गया है । पहेली शब्द प्रहेलिका का तद्भव माना जा सकता है । हिन्दी में पहेलियों की परंपरा अधिक विकसित है । सामान्य लोक जीवन में पहेलियों की विशाल संख्या प्राप्त होती है । पहेलियाँ प्रायः बुद्धि व्यवहार का माध्यम बनता है । बुद्धि परीक्षा के अनुपम साधन के रूप में साधारण लोग भी पहेलियों का प्रयोग करते हैं । पहेलियों से भावना का संबन्ध कम है ।

<u>पहेलियों का वर्गीकरण</u>

सुविधा के लिए पहेलियों को इस प्रकार विभक्त कर सकते हैं[4] -

(1) खेती से सम्बन्धित पहेलियाँ
(2) भोज्य सम्बन्धी पहेलियाँ
(3) घरेलु पहेलियाँ
(4) प्राणि संबन्धी पहेलियाँ
(5) प्रकृति संबन्धी पहेलियाँ
(6) स्त्री पुरुष संबन्धी पहेलियाँ
(7) अन्य फुटकल तरीके की पहेलियाँ

---

1. कठोपनिषद्
2. भगवद्गीता - 67 - पृ.101
3. श्रीमहाभारत - आरण्य काण्डम : 467 / पृ.230
4. लोक साहित्य की भूमिका - डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय - पृ. 47

ढकोसला

ढकोसले स्वरूप से प्राय: पहेलियों जैसे होते हैं। लेकिन विषय वस्तु में दोनों भिन्न हैं। पहेलियां सार्थक होती है जबकि ढकोसले निरर्थक है। असंबद्ध बातों का उनमें समावेश रहता है। बेतुकी और उटपटांग के होते है। इनके प्रयोग का उद्देश्य ही केवल मनोरंजन है। बौद्धिक कौशलों की निरपेक्षता इसका स्वभाव है। इन्हें सुनते ही बेवकूफ और बुद्धिमान दोनों हंस पड़ते हैं।[1] संस्कृत साहित्य में ढकोसलों का प्रयोग बहुत मिलता है। प्राय: नाटकों के विदूषक प्रेक्षकों को हंसाने के लिए निरर्थक प्रकार के वाक्यों और ढकोसलों का बीच बीच में प्रयोग करते हैं। मृच्छकटिक में शकार का कथन देखो -

'चाणक्येन यथा सीतामारिता भारतेयुगे
एवंत्वां "मोटयिष्यामी" जटायुरिव द्रौपदि" ।।

अर्थ है - मैं तुम्हें उसी प्रकार मार डालूंगा जैसे चाणक्य ने महाभारत में सीता को और जटायु ने द्रौपदी को मार डाला। यह दोनों असंबन्ध है। लेकिन दर्शक सुनते ही ठट्ठरा, ठठा, हंसे। इसी प्रकार हिन्दी में भी, कई ढकोसले प्राप्त हैं। जैसे -

ऊंट पमारे बहिकला में जाम्यो पिय मोर
हाथ नाह पिय ढूंढ न मिला ढकोसी का बेटा।

भोजपुरी प्रदेशों में प्रचलित एक ढकोसला -

हाथी चढ़ल पहाड़ पर बिन बिन महुआ खाई
चींटी रपटिल ताहीके उलुटा पैर उठाई ।।

---

1. अवध का लोक साहित्य : डॉ० सरोजनी रोहतगी

मलयालम में भी कई ढकोसले प्राप्त हैं, जो कूत्तु और कुटियाट्टम के समय अधिक सार्वप्रिय हो गये है । महाकवि तोलन [ठोलन][1] के नाम से मिलाकर कितने ही ढकोसलों का प्रचार आज भी है, उनकी गिनती भी असंभव है । चाक्यार लोग आज भी इस कला में निपुण हैं । मलयालम के कुछ नये कवि,[2] कुञ्ञुण्णी, डॉ॰ अय्यप्पपणिक्कर आदि इस समय भी अपनी कविताओं में नये ढकोसलों का प्रयोग करते हैं । लोक साहित्य एक महान वनस्थली के समान है उसका निकट निरीक्षण इति मानवी लोगों से मात्र हो सकता है[3] । इस प्रबन्ध में हमारा लक्ष्य केवल पद्य-विभाग का अध्ययन है, यह पहले कह चुका है । यद्यपि गद्य विभाग के निरीक्षण के बिना पद्य भाग की ओर मुड़ना समीचीन भी नहीं लगा । समुद्र को हनुमान ने पार किया तो भी उसकी गहराई का पता वह जान भी नहीं सका । केवल मंदर पहाड़ ही वह समझ सकता है जो पाताल तक डूब कर रह सकता है । उसी प्रकार हम मंदरों को यह कार्य छोड़कर, अपना अन्वेषण जारी रखना संगत मानते हैं । इसलिए आगे अध्याय में लोक साहित्य के गेय विभाग पर, सम्यक विवेचना प्रस्तुत करने का प्रयत्न है । लोक साहित्य के गद्य विभाग के सामान्य विधाओं पर यहाँ विचार कर दिया है ।

1• तोलन – मलयालम में प्रचलित यह शब्द "ठोलन" का तद्भव हो सकता है । [लेखक]

इल्लोत्त चोक्की
कुडियलोत्त वाणी
तेनोत्त वाक्की
तिलमोत्त मूक्की — आदि प्रयोग तोलन का माना जाता है ।

2• डॉ॰ अय्यप्पपणिक्कर, कुञ्ञुण्णी आदि नये कवि आज भी ढकोसलों का प्रयोग अपनी कविता में करते हैं ।

3• आधुनिक अनुसंधान ने लोक साहित्य के सशक्त उपकरणों द्वारा मानव सभ्यता एवं संस्कृति के कितने ही मोहनजोदाड़ो और हड़प्पा खोद निकाले हैं । और बहुतेरी संस्कृति की न जाने कितनी संचित परतें प्रकाश में लाये हैं ।

हिन्दी और काश्मीरी लोक गीतों का तुलनात्मक अध्ययन – पृ॰20
जवाहरलाल हाण्डू

दूसरा अध्याय

लोक-काव्य [फोक पोयट्री]

सैद्धान्तिक विवेचन और परंपरा का परिचय

लोक-काव्य क्या है ?

लोक-काव्य लोक साहित्य का वह अंग है, जिसे अनादिकाल से अब तक सामान्य जनता आत्मगौरव के साथ गाती है । यह वह स्रोतस्विनी है। जिसने समाज रूपी मैदान से बहकर जन जीवन से अटूट संबन्ध स्थापित किया है । जहाँ चावल [अनाज] के पौधे लगानेवाले स्त्री-पुरुष अपनी थकान को भुलाते हुए गाते हैं, और जिस खलिहान में देहाती किसान फसल काट लाकर त्योहार मनाते गाते हैं, तथा जिन मन्दिरों के देवी-देवताओं के सामने वे अपने को भूल कर भजन गाते हैं, और जिस युद्ध भूमि में अपनी वीरता की मुहर लगाते हुए मर मिटकर वीर इतिहास बनाते हैं, उनका गीत है -

लोक-काव्य[1]।

लोक-काव्य संबन्धी मान्यताएं : विभिन्न मत

लोक-काव्य की उत्पत्ति के संबन्ध में विभिन्न मत प्रचलित हैं। ग्रिम, श्लेगल, स्टेन्थल, किटरेज, गम्मी, बाइल्ड आदि विभिन्न पण्डितों ने अपना अपना मत भिन्न वादों के रूपों में प्रकट किया है।

[1] ग्रिम का सिद्धान्त - समुदायवाद

जर्मनी के जेकब ग्रिम का यह सिद्धान्त भाषा वैज्ञानिक है। इसे ग्रिमनियम [ग्रिम ला] कहा जाता है। यह समुदायवाद नाम से प्रसिद्ध है।

1.[अ] Folk-poetry is the river of the plains, the stream that flowed closest to the habitations of the masses. Pasts the fields where men and women planted the green seedlings of paddy, the medows where the village communities celebrated their harvest festivels, the temples where they offered worship and the battle fields where heroes died to create history. - A History of Malayalam Literature, Chapter II (Krishna Chaithanya) p.18

[आ] लोक-काव्य

[1] सीधी सादी छन्दों में कही गयी सीधी सादी बात।
[2] एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका]
डब्ल्यु.पी. कर - फार्म एण्ड स्टाइल आफ पोयट्री

[इ] बेलड - वह कथात्मक गेय काव्य है, जो या तो लोक-कंठ में विकसित होता है, या लोक गाथा के सामान्य रूप विधान को लेकर किसी विशेष कवि द्वारा रचा जाता है, जिस में गीतात्मकता और कथात्मकता दोनों होती हैं, जिसका प्रचार जन साधारण में एक पीढी से दूसरी पीढी में मौखिक रूप से होता रहता है।
-लोक गीतों का वर्गीकरण [समस्या और समाधान]

ग्रिम ला के अनुसार लोक-काव्य का निर्माण आप से आप होता है[1]। इसके हाथ नहीं होता[2]। समस्त जनता के द्वारा लोक-काव्य [फोक पोयट्री] की उत्पत्ति होती है[3]। इसका निष्पादन स्वतः संभूत होता है। किसी लोक-काव्य की रचना के विषय में सोचना भी असंगत है क्योंकि इस का निर्माण स्वतः होता है। ये किसी कवि के द्वारा लिखी जानेवाली कविता नहीं हैं।

ग्रिम के अनुसार लोक-काव्यों के निर्माण का श्रेय किसी व्यक्ति विशेष की काव्य प्रतिभा से भिन्न एक समुदाय [कम्यूनिटि] को है। किसी व्यक्ति विशेष के मन में हर्ष-विषाद का जाग्रत होना स्वाभाविक है। किसी समुदाय के मन में भी इन्हीं भावनाओं का उत्पन्न होना, प्रत्येक युगों पर स्वाभाविक है। उत्सवों-मेलों में हम यह आज भी देख सकते हैं। किसी धार्मिक पर्व पर लोगों का समुदाय एकत्र होता है। हर्ष और प्रसन्नता के जोश में समुदाय के लोगों ने एक साथ मिलकर नृत्य किया होगा, गीत गाया होगा। गीत का निर्माण और गायन- दोनों एक ही समय पर एक ही जगह में उस समाज में ही हुए थे। यद्यपि इस गीत या गाथा के निर्माण में उस भीड़ के सभी व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त है, तो भी

---

1. He maintaned, the poetry of the people, 'sings it self' has no individual poet behined it and folk poetry is the product of the folk.
   Gumor, O.F., Bow (Forward) p.43-50

2. Spontaneous generation of the folk-poetry is inconsistent.

3. A. It is in consistent he says to think of composing an epic for every epic must compose itself must make itself and can be written by no poet. Ibid p.50
   B. The metre is rough and ready but the language itself is musical, and expressive. It is alanguage which calls a spadea spade in the sense that there is one word for each material object each action or each sentiment, described, and that word is the right one, which is to, say that is folk-poetry, and folk-poetry at its best. The songs are natural and dramatic and abound in pathos and humour in romance and tragedy. A gain and again in reading them, one is struck by resemblances to the folk-petry of other countries.

* पीछे किसी विशिष्ट कवि या रचयिता का

किसी व्यक्ति का अपना बना या नहीं जा सकता । वह समुदाय की कृति मानी जाएगी न कि किसी विशेष कवि या गायक की ।

कजली [मलयालम की कुत्तुमोपि][1] गाने वाले लोग आज भी दो दलों में बँट जाते हैं । प्रत्येक दल में आठ या दस लोग होते हैं । पहले एक दल का नायक [सरदार - आशान] कजली की कोई कड़ी तत्काल बनाकर गाता है । दूसरे दल का नायक भी उस के उत्तर में दूसरी कड़ी वहीं बनाकर तुरंत गाता है । प्रथम दल तीसरी कड़ी बनाता है तो दूसरा दल चौथी कड़ी बनाते है । कभी कभी यह रीति दिन-रात बनी रहती है । आज भी कई गीत इस प्रकार बनाये जाते हैं[2] । ग्रिम के मतानुसार जिस प्रकार इतिहास का निर्माण नहीं हो सकता उसी प्रकार महाकाव्यों का [एपिक पोयट्री] भी निर्माण नहीं किया जा सकता है[3] ।

गुमर ने एक जगह ऐसा भी लिखा है कि महाकाव्य विशिष्ट व्यक्ति या प्रसिद्ध कवि के द्वारा नहीं बनाया जाता । उसका प्रादुर्भाव स्वतः होता है, और जनता में उसका प्रचार आप में आप होता जाता है[4]

---

1. "कुत्तुमोपि" - प्रश्नोत्तर के रूप में गीत बनाकर गाने को मलय में कुत्तुमोपि नाम है । केरल में कई गीतों का निर्माण इस प्रक हुआ है । हिन्दी की कजली इस तरीके का गीत है ।

2. Folk-songs comprise the poetry and music of the whose literature is perpetuated not by writing and but through oral tradition. - Standard Dictionary Folk-lore Mythology and Legent, Vol.II,p.1032

3. Epic poetry he declares, can no more be made than history can be made. It is the folk that pours i bloom of poetry over far off events and so brings the epics - p.51 (Beginning of poetry)

4. Epic poetry is not produced by particular and rec poets but rather springs up and spreads a long ti among the people them-selves in the mouth of the Cambridge History of English Literature - F.B.Gum Beginning of poetry Chapter in Ballads.

ग्रिम मत का सिद्धान्त वाक्य यह है " Das volk dischtets"
जनता लोक-काव्य की रचना करती है । जनता द्वारा जनता के द्वारा बनायी गयी जनता का काव्य ही, वास्तव में लोक-काव्य [फोक पोयट्री] हो सकता है ।

ग्रिम के मत का खण्डन भी हुआ है । इस के सिद्धान्त में सत्य की मात्रा कम है । सभी लोक-काव्यों के बारे में समुदाय वाद का आरोप समीचीन नहीं लगता है । इस विरोध का प्रकट रूप है श्लेगल जैसे अन्य विद्वान लोगों का मत ।

<u>श्लेगल का सिद्धान्त - व्यक्तिवाद</u>

ए. डब्ल्यु. श्लेगल ने ग्रिम का खण्डन किया है । उनके मतानुसार लोक-गीत, लोक-गाथा आदि लोक-काव्यों के उत्पत्ति संबन्धी सिद्धान्तों में व्यक्ति वाद ही लागू है । इस कारण श्लेगल के मत को "व्यक्तिवाद" संज्ञा दी गयी है । व्यक्तिवाद का तत्व [तथ्य] यह है कि "किसी व्यक्ति विशेष के बिना किसी गीत या काव्य का निर्माण संभव नहीं है[1] । जैसे हजारों कामगारों के काम में लगने पर भी, जैसे, ताज महल, चीना का किला, किसी अंबर चुंबी अट्टालिका या किसी अन्य विश्व-मोहक कला वस्तुओं के निर्माण के पीछे किसी श्रेष्ठ कलाकार या व्यक्ति की भावनाएं

---

1. The germ of Folk melody is produced by an individual and altered in transmission into a group fashioned expression.

Columbia Encyclopaedia Third Edition, p.737

वहाँ परिश्रम का होना संभव है । पाषाण [शिला] पर उत्कीर्ण किसी महान व्यक्ति की मूर्ति के पीछे किसी मूर्तिकला-विशेषज्ञ कलाकार के व्यक्तित्व की अपेक्षा निश्चित रूप में होती ही है । वैसे ही लोक-कविता के निर्माण के पीछे भी विशिष्ट कवि की, भावना रहती है । शायद ऐसे अनेकों व्यक्तियों का हाथ एक साथ रहा होगा । परन्तु उन सब की अपनी अपनी हैसियत भी है । अतिप्राचीन प्रारंभिक कविता का भी कोई उद्देश्य होता है, उस में भी कोई, योजना अवश्य होती थी । उन कविताओं का संबन्ध किसी विशिष्ट व्यक्ति से होता है । इस कारण से लोक-कविताओं की उत्पत्ति के जड़ में व्यक्तिवाद का लागू होना संभव है । यद्यपि रसेल अपना तत्त्व ऐसा साबित करते हैं तो भी, आगे की पीढ़ियों के स्टेथम जैसे महान अन्वेषकों का मत इस सिद्धान्त का भी खण्डन करता है ।

1.A. A poem implies always a poet, a work of art as every poem must be whether, good or bad implies an artist and for poems of any reach or grace we must assume an artist of the Highest class. Legend epic, and song might well be long to the people as their property but the making of the poetry ~~and~~ verse, as never a communal process. A stately tower or any building of beauty means, it is true that a host of workmen have carried stones from the quarry and need the walls, but behind them is that shaping thought of the architect. All poetry rests upon a union of nature and art. Even the earliest poetry has a purpose and a plan and therefore belongs to an artists. - Gumor, OE.Bow

B. The folk song (poetry) is of individual authority in the sence that it was first composed by one individual, sometimes a man of the people, whose name has remained obscure. It is composition, may be but is not necessarily due to improvisation. The folk song is communal in the sence that its text is never quite fixed and that alterations modifications and additions can be practised ~~xxxx~~ freely. It is communal also in the sence that a given song specially the cummulative song may infact have a dozen or more authers each being responsible for a stanza or two.

The Science of folk lore - p.170

स्टेथल का सिद्धान्त [जातिवाद]

लोक-गीत, लोक-गाथा जैसे लोक-काव्यों की उत्पत्ति के संबन्ध में स्टेथल का मत "जातिवाद" है। ये ग्रिम के मतों का खण्डन करते हैं तो भी उनसे बहुत निकट हैं। उन के मतानुसार "जाति" व्यक्तियों का समूह है। आदिम जातियों में व्यक्ति के स्थान में समष्टि की प्रधानता रहती है। जातियों में भी सभ्य एवं असभ्य की सीमा होती है। असभ्य जातियों में भावना के साथ साथ मूलप्रवृत्तियों का समावेश है। व्यक्ति का अनुभव समष्टि का भी होता रहता है। इस परिस्थिति में साम्य सृजनात्मक भावना के द्वारा भाषा और कविता का निर्माण होता है। इस प्रकार बनने वाली लोक-कविता या लोक-गीत तो व्यक्ति विशेष का न रह कर समस्त जाति की धरोहर हो जाती है[1]।

लोक-काव्यों का निर्माण उन्हीं सूक्ष्म विधियों से निष्पन्न होता है, जिन से भाषा, कानून, और समाज के नियमों की रचना होती है।

कहीं असभ्य और अर्द्ध-सभ्य जातियों के समस्त सदस्यों का आपस में मिलना एवं उत्सव मनाना साधारण बात है। ऐसे अवसर पर उनको एकत्र होकर मनोरंजन करना स्वाभाविक है। उस समय वे स्वयं गीत बनाकर गाते हैं।

---

1. Ltenathal tried to set forth, the doctrine that a whole race can make poems. The individual he maintained is the out come of culture and lang ages of development whole premiture races show simply of an aggregate of men. Sensation impulse and sentiment he quite uniform in the uncivilised community. what one feels, all feel, a common creative sentiment throw out the song and awake poetry. No one owns a word, a law, a storg, a custom nor owns a song.

Gumor, G.E. Bow -

Chapter XXXVI-VII

इस प्रकार समस्त जाति के द्वारा, गीतों का निर्माण होता है[1]।

स्टेथल के मतों का निरीक्षण करने से ऐसा लगता है, यह किसी ऐसी छोटी जाति को एक हद तक लागू हो सकती है जिस की संख्या बहुत कम हो। उन जीवन के प्रारंभ कालों में जब लोग कबीलों में रहते थे यह बात हो सकती थी। किसी बड़े देश के संबन्ध में यह मत लागू हो ही नहीं सकता। इस मत में भी सत्य का अंश बहुत कम है। इस कारण से यह पूर्णतया स्वीकार नहीं हो सकता है। जिस प्रकार शासन की प्रक्रियाएं कुछ चुने हुए व्यक्तियों से चलती हैं, उसी प्रकार लोक-गीत या गाथाओं का निर्माण भी कुछ चुने हुए व्यक्ति, या लोक-कवि करते हैं। बिशप पर्सी जैसे विद्वान इस मत का भी खण्डन करते हैं।

बिशप परसी का सिद्धान्त : चारणवाद

बिशप परसी अंग्रेज़ी के गीत संग्रह-कारों में मशहूर है। उनसे संग्रहीत गाथाएं अधिक मशहूर हैं। बिशप के अनुसार ये लोक-कविताएं भाटों या चारणों से निर्मित हैं। इंग्लैंड की मिन्स्ट्रल [चारण-गाथा] गाथाओं का निर्माण ऐसा होता है। इस में सन्देह नहीं कि अधिकांश लोक-काव्यों का निर्माण चारणों के द्वारा ही हुआ है। परसी और रितसन दोनों का यही मत है। सर वाल्टेर स्कोट का मत भी बिशप परसी के मतों में

---

1. This unity this spirit of the race manifests, itself first in speach, then in myth, then in custom, after long tradition custum gives birth to law. In other words poetry of the people is made by any given race through the same mysterious process which froms speech, cult, myth, custom or law.

Gumor, G.S. Dow

p.XXVI

मिलाने वाला है[1]। चारण लोग कविता और संगीत दोनों की जानकारी का दावा रखते थे। प्रोफेसर पोल का मत है कि मौखिक परंपरा के काल में चारण गीतों की रचना करते थे। उदरपूर्ति के लिए उन्हें गांवों में गाया करते थे।

इन गायकों ने स्वयं [चारण] कुछ लोक कविताओं का निर्माण अवश्य किया है। लेकिन सारी गाथाओं और कविताओं के निर्माण का उत्तरदायित्व उनके कंधों पर मढ़ा देना युक्ति संगत प्रतीत नहीं होता। लोक-गीतों और लोक-गाथाओं के निर्माण में चारणों ने ही, काम किया यह या समस्त, गीतों का उन्होंने गा गाकर बनाया यह धारणा मूर्खता है

प्रो॰ चाइल्ड का सिद्धान्त - व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद

लोक-साहित्य के ज्ञाता एवं अधिकारी विद्वानों में प्रोफेसर चाइल्ड का महत्वपूर्ण स्थान है। उन के द्वारा संपादित "इंग्लीश एण्ड स्कोटीश पोपुलर बेलेड्स" उन का निदर्शन है। लोक-गीत, लोक गाथा, जैसे लोक-काव्यों के निर्माण के बारे में प्रोफेसर चाइल्ड का मत यह है कि "जिस प्रकार किसी काव्य का लेखक होता है, उसी प्रकार इन गाथाओं औ[र] गीतों की रचना भी, किसी व्यक्ति विशेष के द्वारा ही हुई हैं।

---

1. Sir walter scott says, the ministrel was quite suf[ficient] to account for ministrely, whethor of the border, [or] else where. Ballads he remarks many be originally [the] work of ministrels professing the joint arts of po[etry] and music or they may be occational effusions of s[ome] self taught bard.

परन्तु उन के व्यक्तित्व का विशेष महत्व नहीं है । व्यक्ति विशेष की कृति होने पर भी, भिन्न व्यक्तियों के गाये जाने के कारण इन गीतों में परिवर्तन तथा, परिवर्द्धन होता रहा है । अतः लोक-काव्यों के मूल निर्माता का व्यक्तित्व तिरोहित हो जाता है और ये कृतियाँ जनसाधारण या समाज की संपत्ति बन जाती हैं।[1] साथ ही साथ ये वैसा ही गाया भी जाते हैं । "गोष्ठ" गीतों के संबन्ध में भी यही बात कही जा सकती है ।

आदिम जातियों में [प्रिमिटीव ट्रैब्स] यह प्रथा थी कि उस जाति के सभी व्यक्ति एक स्थान पर एकत्र होकर अपना मनोरंजन किया करते है । कोई गीत की एक कड़ी बनाता या तो कोई दूसरी कड़ी । तीसरा व्यक्ति तीसरी कड़ी जोड़ता है तो चौथा चौथी।[2] इस प्रकार एक पूरा गीत तैयार होता है । इस विधि से निर्मित गीतों में किसी विशेष कवि या गायक का महत्व नहीं है । पूरी जाति का सहयोग इस गीत के निर्माण और प्रचारण में होता है । इस कारण से यह गीत उस समस्त जाति का है । वास्तव में यह सारी जनता की संपत्ति है।[3]

---

1. Child says :- Though the ballads do not write themselves as William Grimm has said, though a man and not a people has composed them still the author counts for nothing, and it is not by mere accident but with the best reason that they have comedown to as anonians.

2. केरल के मन्दिरों में आज भी ऐसी एक प्रथा चलती है कि गायक दो दलों में बाँट कर गीत में प्रश्न करते और उसका उत्तर वहीं गीत में ही बना देते ।

3. There have never been works which could have been composed by no one or by the whole people.

   - Russian Folk lore - p.8

चारणों के द्वारा लोक-काव्यों का निर्माण साधारण है । जगनिक और चन्द्र बरदाई की रचनाएं इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं । राजस्थान, में चारणों के द्वारा काव्य रचने की परंपरा ही चल पड़ी है । अपने आश्रय दाता राजाओं की प्रशंसा में काव्यों की रचना करने की रीति बहुत पहले ही चली आती थी । चारणों का कार्य यही था । इंग्लैंड में राजाओं अमीरों और प्रभुओं के बारे में भी कविताएं बनाई गई हैं । राजा अमीर उमरा के दरबार में चारणों की भीड़ लगी रहती थी । ये चारण केवल अपनी पेट-पूजा के लिए ही अपने स्वामी का गुणगान करते थे ।

अधिकांश लोक-काव्यों के रचयिता अज्ञातनामा हैं । अतः उनकी रचनाओं में उनके व्यक्तित्व का अभाव स्वाभाविक है । इस विवेचन के द्वारा हम समझ सकते हैं कि लोक-काव्यों की उत्पत्ति के संबन्ध में पूर्वोक्त सभी [पाँचों] सिद्धान्तों का संबन्ध अपेक्षित है । सभी पाँचों सिद्धान्त मिलकर इन काव्यों की उत्पत्ति के कारण बने हैं, न कि पृथक् पृथक् । अतः लोक-काव्यों की उत्पत्ति के संबन्ध में उपाध्याय का सिद्धान्त समन्वयवाद - अधिक समीचीन ज्ञात होता है ।

1. जगनिक और चन्द बरदाई चारण थे ।

लोक-काव्य : दो भेद - लोक गीत और लोक गाथा

लोक-काव्य की परंपरा बहुत विस्तृत है । इस अत्यन्त विशाल साहित्यिक संपदा के मोटे तौर पर रूप की दृष्टि से दो भेद मान सकते हैं - लोक-गीत और लोकगाथा । अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से भी यह विभाजन संगत प्रतीत होता है । अतः आगे हम दोनों भेदों की परिभाषाओं, वर्गीकरण की विभिन्न पद्धतियों तथा विशेषताओं का अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा ।

लोक-गीत : परिभाषा और व्याख्या

लोक गीत, हमारे सामाजिक, पारिवारिक, विकास का इतिहास प्रकट करते हैं । ये किसी भी देश की अमूल्य निधि कहे जा सकते हैं[1] । लोक-गीत का जन्म स्वाभाविक ही कहा जाएगा[2] । इसके जन्म की तिथि या काल के विषय में कल्पना से ही काम लेना पड़ेगा । यह कहा जा सकता है, कि आदि मानव के कण्ठ से जो विकृत भाव किसी अवसर पर प्रस्फुटित हुए होंगे, वही धीरे धीरे गीत का रूप ले बैठे ।

---

1. लोकगीतों के स्वरूप एवं परिभाषा पर विचार करते हुए भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने अपने भिन्न भिन्न मत प्रकट किये हैं । इन में कुछ के प्रमुख एवं महत्व पूर्ण मत यहाँ उद्धृत किये हैं :-
   1. लोकगीत उस जन समूह की संगीत मयी काव्य रचना है जिसका साहित्य लेखनी अथवा छपाई से नहीं वरन् मौखिक परम्परा से अविरत रहता है ।
      [स्टैन्डर्ड डिक्शनरी आफ फोकलोर मिथोलजी एण्ड लिजेण्ड]
      भाग-2, पृ॰1032
   2. आदि कालीन स्वतः स्फूर्त संगीत को लोकगीत कहा गया है ।
      [एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका] पृ॰447

3. अज्ञात कलाकार द्वारा रचित एवं मौखिक परंपरा से संप्रेषित संगीत ही लोक गीत है ।
{कोलंबिया एन्साइक्लोपीडिया} पृ.737

4. लोक गीत वह संपूर्ण गेय गीत है जिसकी रचना प्राचीन अपठ जन में अज्ञात रूप से हुई और जो यथेष्ठ समय अतः शताब्दियों तक प्रचलन में रहा । {ए.एच.क्रेपी} दि सयन्स आफ फोकलोर
पृ.135

5. ग्राम गीत प्रकृति के उद्गार हैं इन में अलंकार नहीं केवल रस है छन्द नहीं केवल लय है । लालित्य नहीं केवल माधुर्य है ।
राम नरेश त्रिपाठी - कविता कौमुदी : ग्रामगीत, भाग-1
{प्रयाग, संवत 1946} पृ.250,51

6. आदिम मनुष्य के गानों का नाम लोकगीत है । मानव जीवन की, उसके उल्लास की उसकी उमंगों की उसकी करुणा की उसके समस्त सुख दुःख की कहानी इनमें चित्रित है ।
सूर्यकरण पारीक - राजस्थान के लोक गीत {राजस्थान 1956}
प्रस्तावना ।

7. लोकगीतों के निर्माता प्रायः अपना नाम अज्ञात अव्यक्त रखते हैं, वे लोक भावना में अपने भाव मिला देते हैं । लोक गीतों में होता तो निजीपन ही है, किन्तु उसमें साधारणीकरण एवं इसकी संभावनाएं सामान्यता कुछ अधिक रहती है ।
बाबू गुलाब राय - काव्य के रूप {प्रयाग} पृ.123

लोक गीत विद्यादेवी के बौद्धिक उद्यान के कृत्रिम फूल नहीं वे मानों अकृत्रिम निःसर्ग के श्वास प्रश्वास है । सहजानन्द से सच्चिदानन्द में विलीन हो जाने वाली आनंद मयी गुम्फाएं है ।

सम्मेलन पत्रिका : लोक संस्कृति अंक {प्रयाग संवत् 2020}
पृ.250-251

सैकड़ों हजारों वर्षों की धारा की भांति ये गीत जन जीवन में प्रवाहित होते रहे। इन गीतों में क्रमशः हेर-फेर हुए इनमें नये नये विचार आये और वे पुराणों से मिलते चले आये किन्तु इन की गति में व्यतिक्रम नहीं पड़ा। स्त्री पुरुषों की समय समय पर आनेवाली मनःस्थितियों ने, इन में अपने प्रभाव के पुट दिये हैं"। ऋतुओं की हरियाली कोयल की कूक, पपीहा की पुकार और वासंती सुषमा ने इन में थिरकन, सिहरन और तड़पन भरी है। इनकी लय में बालक सोये और जागे हैं इन की तान पर यौवन, गदराया और मस्ताया है। इनकी टेक पर स्त्रियां नाच उठी इनकी गति पर पथिक के पांव आगे बढ़े हैं इसकी गूंज पर विरही युवक का मन, कसक उठा है, इनके प्रवाह में भोली, अल्हड़, नवयौवना का मन बह गया है, इनकी स्वर लहरी पर, विरहिणियां मन मसोस कर रह गयी हैं, इनके शब्दों से बूढ़ों ने मन बहलाये हैं, इनकी तानों वैरागी में वैराग्य उत्पन्न हुआ है, इनके तालों पर मजदूरों के पांवड़े और किसानों के हल चले हैं, ये वायु के उन्मुक्त झोंके हैं, ये समुद्र के शक्ति शाली ज्वार हैं, ये नदी के वेगयुक्त प्रवाह हैं, ये चांद की शीतलता सूर्य की तेजस्वी और तारों की स्वप्निल छांह लिये हुए हैं।

क्रमशः

9. लोक गीत किसी संस्कृति के मुंह-बोलते चिह्न है।
देवेन्द्र सत्यार्थी - आज कल [दिल्ली, नवम्बर 1956] पृ.7

10. लोकगीत मानव हृदय की प्रकृत भावनाओं की तन्मयता की तीव्रतम अवस्था की गति है जो स्वर और ताल के प्रधानता नहीं कर लय या धुन प्रधान होते हैं।
[शान्ति अवस्थी] ने सम्मेलन पत्रिका - पृ.37

11. वे गीत जो लोक मानस की अभिव्यक्ति है। अथवा जिन में लोक मानाभास भी हो, लोकगीत के अंतर्गत आयेगा।
डा.सत्येन्द्र - लोक साहित्य विज्ञान - पृ.360

2. ऊपर उक्त पांचों तत्वों के आधार पर हम लोक गीतों की उत्पत्ति की स्वाभाविक - विधि का निर्धारण कर सकते हैं।

---

* Encyclopaedia Britanica - p.307-314

लोक गीत न तो नया है, और पुराना है । वह तो जंगल के उस वृक्ष की भांति है, जिसकी जड़ें अतीत काल में गड़ी हुई हैं, किन्तु जिस में अविराम गति से नई टहनियाँ नये पत्तियाँ और नये फलों की उत्पत्ति होती है ।[1]

यही कारण है कि विभिन्न देशों जातियों और वर्गों में गाए जाने वाले गीत अपने भावों में समन्वय सा किये हुए हैं । लोक गीत प्रकृति के उदगार होते हैं, इन में सरसता, सरलता, मधुरता और लय स्वाभाविक गुण है । इनमें करुणा हास्य, श्रृंगार और वीरता का समावेश रहता है । ये बने हैं, बिगड़े मिटे हैं, किन्तु फिर से उत्पन्न हुए हैं । जन्म से लेकर मृत्यु तक गाये जानेवाले लोक गीत, सर्वत्र बिखरे पड़े हैं ।

डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी जी के शब्दों में - ग्रामगीत इस सभ्यता का वेद [श्रुति] है । वेद भी तो अपने आरंभिक युग में, श्रुति कहलाते थे । वेद आर्य जाति के गीत थे, और ग्राम गीतों की भांति, सुन सुनाकर याद किये जाते थे । सौभाग्यवश वेद ने बाद में श्रुति से उतर कर लिपि का रूप धारण कर लियापर हमारे ग्राम गीत अब भी, श्रुति-मात्र हैं । जिस प्रकार वेदों द्वारा आर्य सभ्यता का ज्ञान हो सकता है । ईंट पत्थर के प्रेमी विद्वान यदि धृष्टता न समझें तो जोर देकर कहा जा सकता है कि ग्रामजीवन का महत्व मोहेन जो-दोड़ो, से कहीं अधिक है । मोहनज-दाड़ो सरीखे भग्न स्तूप ग्राम ग्राम जीवों के भाष्य का काम दे सकते हैं ।

1. A folk song is neither new, nor old. It is like a forest tree, with its, roots deeply buried in the past, which continuely puts, forth new branches, new leaves and new fruits.

Encyclopaedia Britanica - p.448

लालाजयतराय जी ने ऐसे एक प्रसंग पर कहा है - देश का सच्चा इतिहास और उसका नैतिक और सामाजिक दर्शन इन गीतों में ऐसा सुरक्षित है कि इनका नाश हमेशा दुर्भाग्य की बात होगी[1]।

लोक-गीत के बारे में डॉ॰ सदाशिव फडके का कथन भी देखिए, जो, मराठी के प्रमुख लेखक है - शास्त्रीय विषयों की विशेष परवाह न करके सामान्य लोग व्यवहार के उपयोग में लाने केलिए मानव अपनी आनंद तरंग में, जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्गत करता है, वही लोकगीत है[2]।

श्री॰देवेन्द्र सत्यार्थी ने "मीटमाय पीपिल" में लिखा है, लोक गीत का बीज सामूहिक गायन में रहता है[3]।

श्री॰ कुंज बिहारी दास ने भी ऐसा लिखा है, लोक गीत उन लोगों के जीवन की स्वत: स्फूर्त अभिव्यक्ति है, जो अधिकतर आदिम अवस्था में रहते हैं[4]।

डॉ॰ यदुनाथ सर्कार ने भी लोक गीत की विशेषताएं प्रकट करते हुए लिखा है - रैपिडिटी ओव दि मूवमेन्ट, सिम्पलीसिटी, ओफ डिक्शन, प्रेमरी एमोशन्स ओफ यूनिवेरसल अपील, एब्सन्स राइदरदान साकिंग अनानिमिकल ब्रेड स्टाइकिंग एण्ड दि स्वेरेस्ट यूज [और रादर कम्पलीट एलायडेन्स] ओफ लिटरेरी आरटिफेक्ट - दीज आर दि एसेनशियल रिक्यु रिजटस ओफ दि ट्र बैलेड]

1• लालालजपतराय - [उद्धरण] लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन - पृ॰44

2• सम्मेलन पत्रिका [उद्धरण]

3. It's seed lies in community singing.

4. A folk song is a spontanous out flow of life of the people who live in more or less premitive condition.

- A study of oresson folk lore - Dr.Kunhabihari Das

कुछ विद्वानों के अनुसार लोकगीतों का लक्षण निम्न लिखित हैं -

1. अन्त्यानुप्रास के बदले ध्वनिसाम्य ।
2. पुनरुक्ति
3. तीन, पांच, सात आदि संख्याओं का बार बार प्रयोग
4. दैनिक प्रयोग की साधारण सी वस्तुओं को सोने चान्दी का कहना आदि ।

भारत के लोक गीतों के उपर्युक्त लक्षणों के अतिरिक्त और भी उदाहरण प्राप्त हैं - जैसे -

(1) <u>नाम जोड़ना</u>

गहनों के नाम, कुटुम्बियों के नाम, मिठाइयों के नाम, कपड़ों के नाम, नगरों के नाम, देवी देवताओं के नाम,

(2) <u>प्रतीक्षा</u>

यह परंपरा बड़ी पुरानी है कि किसी ऊँची अटारी, वृक्ष, टीले, आदि पर चढ़कर, अपने आनेवाले, किसी प्रिय की, बाट जोहना, लोक-गीतों में एक साधारण सी बात है ।

(3) <u>प्रश्नोत्तर का प्रयोग</u>

सीधे सादे प्रश्नों और उत्तरों को गीतों में जोड़कर वस्तुस्थिति का स्पष्टीकरण ।

(4) <u>संख्या</u>

एक से लेकर दस, सौ, हज़ार तक की संख्याओं में एक ही बात को दुहराना, टेक पदों का आवर्तन आदि । इसी प्रकार लोकगीत संगीतात्मक होती हैं । उसमें, लोक मानस की सहज एवं अकृत्रिम अभिव्यक्ति रहती है,

मौखिक परंपरा में अविरत रहते हैं, रचयिता प्राय: अज्ञात होते हैं, लोक गीतों में प्राय: लय का प्राधान्य रहता है, प्राचीन मानव सभ्यता एवं संस्कृति के चित्र अंकित रहते हैं ।

लोकगीतों की उपर्युक्त विशेषताओं पर ध्यान रखते हुए, आगे हम हिन्दी की विभिन्न बोलियों में प्राप्त होनेवाले लोकगीतों का विशेष अध्ययन करेंगे ।

<u>लोक गीतों की वर्गीकरण-पद्धति</u>

लोक-काव्य के अन्तर्गत लोकगीतों का प्रमुख स्थान है । जन-जीवन से अपनी प्रचुरता तथा व्यापकता के कारण गीतों की प्रधानता स्वाभाविक है इन का वर्गीकरण प्रधानतया निम्नलिखित रूप में है[1] ।

1. संस्कारों की दृष्टि से
2. रसानुभूति की प्रणाली से
3. ऋतुओं और व्रतों के क्रम से
4. विभिन्न जातियों के क्रम से
5. क्रिया कलापों की दृष्टि से

(1) <u>संस्कारों की दृष्टि से</u>

भारतीय जन-जीवन में धर्म का प्रमुख स्थान है । भारतीयों को धर्मावलंबी कहना सामान्य दृष्टि से गलत नहीं है । वास्तव में वह धर्म प्राणी है । जन्म से पहले से मृत्यु के बाद तक हमारे देश के लोगों का जीवन संस्कारों से संबद्ध है । हमारे पूर्वजों के आधार पर सोलह संस्कारों का विधान है

---

1. लोक-गीतों के वर्गीकरण का कई प्रकार आज स्वीकृत है । उन सबका विवरण आगे मिलेगा ।

जिसमें गर्भाधान पुंसवन, पुत्रजन्म, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह और मृत्यु प्रधान है । इनमें भी प्रथम दो संस्कारों के अवसर पर स्त्रियाँ अपने कोमल कण्ठ से गीत गा गाकर जन मन का अनुरंजन किया करती है । मृत्यु के अवसर के गीत बड़े ही कारुणिक होते हैं । किसी प्रिय व्यक्ति के मरने पर उसकी स्त्रियाँ माता आदि उस मृतात्मा के गुणों का वर्णन करती हुई रोती और विलाप करती हैं । ऐसे गीतों की संख्या अधिक नहीं है ।

§2§ रसानुभूति की दृष्टि से[1]

लोक-गीतों में अनेकों रसों की अभिव्यक्ति बड़ी ही सुन्दर रीति से हुई है । इन गीतों में विभिन्न रसों की जो अविरल धारा प्रवाहित होती है, उसका स्रोता कदापि नहीं सूख सकता । यों तो इन गीतों में सभी रसों की उपलब्धि होती है । परन्तु निम्नांकित पांच रसों की ही प्रधानता पायी जाती है ।

1. शृंगार
2. करुण रस
3. वीर रस
4. हास्य रस
5. शान्त रस

§1§ शृंगार रस

शृंगार रस के अंतर्गत विशेषकर पुत्रजन्म §सोहर§ जनेऊ, विवाह, वैवाहिक परिहास, कजली तथा झूमर के गीत आते हैं । सोहर के गीतों में गर्भिणी स्त्री की

---

1. The chief object of scrutiny is the finer poetic elements brilliance, buty of composition grace fullness, elegance, melodiness, tastefulness and charming qualites in general folk literature, if it is claimed a product of art.

An outline of Indian Folk lore - p.58

शारीरिक अवस्था, दुबलापन, पीलापन, पयोधरों की स्थूलता आदि का वर्णन पाया जाता है। यदि इस समय उसका पति विदेश गया होता है तो उसके वियोग में वह स्त्री अत्यन्त दुःखी दिखाई पड़ती है। उसका एक एक क्षण एक युग के समान बीतता है। संयोग तथा विप्रलंभ दोनों प्रकार के गीत, यहाँ प्राप्त होते हैं।

करुणरस

करुण रस के गीतों में गवना, झूमर, निर्गुन, पूरबी, रोपनी, तथा सोहनी के गीतों की गणना की जा सकती है। इन गीतों में करुण रस छलक पड़ता है। गवना के गीतों में करुणरस बरसाती नदी की भाँति उमड़ता हुआ दिखाई पड़ता है। लड़की के विदाई के समय जो गीत गाये जाते हैं, वे बड़े ही हृदय-ग्राही होते हैं। गवना के ये गीत करुण रस के फौवारे है जो पाठकों को रससिक्त कर देते हैं। इसी प्रकार झूमर, निर्गुन, पूरबी और सोहनी के गीतों को समझना चाहिए।

आल्हा, विजयमल, लोरकी, सोरठी, नयकवा बनजारा, गोपीचन्द, भरथरी, और ढोला मारु के गीत, प्रबन्धात्मक होते हुए भी करुण रस से ओत प्रोत हैं और इसी श्रेणी में आते हैं। पंजाब में राजा रसालु का गीत प्रसिद्ध है। आल्हा वीर रस का लोक-काव्य है। सोरठी में रहस्य और रोमांच का वर्णन बड़ी सुन्दर रीति से किया गया है। विजयमल में कुंवर विजयी नामक किसी वीर की कथा वर्णित है। राजा रसालु के विषय में भी यही बात समझनी चाहिए। मृत्युगीतों में करुणरस अधिक भरा है।

---

1. प्रत्येक लोक गाथा में करुणरस का समावेश हुआ है। योग कथात्मक लोक गाथाओं में विशेष कर उसका प्रभाव है।

2. The funiral lements were are an in varible part of the funiral cerniny - Russian Folk lore - p.225

लोक-गीतों में हास्य रस की मात्रा अपेक्षाकृत कम पायी जाती है। वैवाहिक परिहास के गीतों में हास्य रस की मधुर व्यंजना हुई[1]। झूमर की व्यंजना, उन्में झूम झूम कर गाने से हुई है। इस में हास्य का पुट उपलब्ध होता है। इन में कहीं तो अपने प्रियतम पर कोई फब्ती कसी जाती है। तो कहीं देवर से हँसी मजाक का अवसर उपस्थित किया जाता है।

भजन, निर्गुन, तुलसीमाता और गंगा मइया के गीतों में शान्त रस के गीत पाये जाते हैं। संध्या समय या रात्रि के पिछले प्रहर में स्त्रियाँ भजन गाती है जिन्हें क्रमशः सांझ और पराती कहते हैं। इन गीतों में भगवान की स्तुति होती है। प्रातःकाल गंगास्नान, के लिए कुंड में जाती हुई स्त्रियाँ गंगाजी के गीत गाती है जिनमें संसार की झंझटों से मन को हटाकर भगवान में उसे लगाने का वर्णन रहता है[2]। इन गीतों को सुनकर मन में भक्ति का उद्रेक होता है।

(3) ऋतुओं और व्रतों के क्रम से

लोक गीतों की मीमांसा करने पर पता चलता है कि इन में से अधिकांश किसी न किसी ऋतु या त्योहार से संबन्ध रखते हैं। वर्षा वसन्त आदि ऋतुओं के आने पर जन जीवन में जो नवीन उल्लास उत्पन्न होता है, उसी की अभिव्यक्ति लोक गीतों में पायी जाती है। यदि (वर्षा) आषाढ के दिनों में किसान आल्हा गा गाकर अपना मनोरंजन करता है तो सावन में कजली गा कर अपने दिलके दर्द को दूर करता है। यदि फागुन के गीतों के

---

1. वैवाहिक परिहास के रूप में रसीले गीत गाने की प्रथा हर प्रान्तों में आज भी चल रहा है। आज के सिनेमा गीतों में उसकी छवी और भी देख सकते हैं।

द्वारा वह अपने हृदय गत उल्लास को प्रकट करता है तो खेत में बैठा चैतों गा गाकर वह आत्म विभोर हो जाता है ।

विभिन्न व्रतों के अवसर पर विभिन्न गीत गाये जाते हैं । श्रावण शुक्लापंचमी, नाग-पंचमी, आदि अवसरों पर नाग देवता संबन्धी गीत गाते हैं । भाद्र मास के कृष्णपक्ष की चतुर्थी को बहुरा [बहुला] का व्रत और कार्तिक शुक्ल द्वितीया को गोधान की पूजा की जाती है । इन अवसरों पर स्त्रियाँ गीत गाकर अपने अपने इष्ट देवता से अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति प्रार्थना करती है ।

[4] विभिन्न जातियों के प्रकार से

गीतों में कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें कुछ विशिष्ट जातियाँ ही गाती हैं । उदाहरण केलिए "बिरहा" को लिया जा सकता है । अहीर जातियों का अपना गीत है बिरहा । अहीर लोग जिस भाव भंगी तथा सुन्दरता के साथ इसे गाते हैं उस प्रकार से दूसरा नहीं गा सकता है । जो अहीर बिरहा गाने में जितना ही प्रवीण हो जाता है, वह उतना ही योग्य समझा जाता है । इस जाति के लोगों में विवाह के अवसर पर वर की योग्यता उसके बिरहागाने पर ही आश्रित रहती है ।

"पचरा" नामक गीत दुःसाध नामक जाति के लोग प्रायः गाया करते हैं । जब कोई इस समाज में बीमार पड जाता है तब दुःसाध के कोई बूढा बुलाया जाता है । वह बूढा आकर रोगी के पास बैठकर पचरा गा गाकर देवी का आवाहन करता है । इस प्रकार कई दिनों तक इस प्रक्रिया के करने से रोगी का रोग दूर हो जाता है । आज भी लोगों में ऐसा विश्वास रहा है।

वर्षा ऋतु में एक विशेष जाति के लोग नट, ढोल को गले में बांध कर आल्हा गाते फिरते हैं । इस प्रकार भिक्षा मांगने का आयोजन करना उनका व्यवसाय हो गया है । साईं लोग सारंगी बजाकर गोपीचन्द और भरथरी के गीत गाते फिरतेहैं । यह कार्य उनकी उदर पूर्ति का साधन है । माली लोग मता के गीत भी गाते हैं ।

क्रियाओं के आधार पर

कुछ ऐसे गीत भी पाये जाते हैं जो किसी विशेष कार्य को करते समय गाये जाते हैं । धान को रोपते समय स्त्रियां जो गीत गाती हैं उन्हें रोपनी के गीत कहते हैं । उसी प्रकार खेत को निराते या सोहते समय जो गीत गाते हैं उसे निरवाही या सोहनी कहते हैं । जँतसार उन गीतों को कहा जाता है जिन्हें जाँत पीसते समय स्त्रियां गाती हैं । तेली तेल को पेरते समय अपने हृदय के भावों का मंथन करता है और ऐसा करता हुआ जो गीत गाता है उन्हें कोल्हू के गीत की संज्ञा दी गयी है । चूंकि ये गीत एक विशेष कार्य करते समय गाये जाते हैं इसलिए इन्हें क्रिया गीतों की श्रेणी में रखा है । इन गीतों को गाने से काम करने से उत्पन्न थकावट दूर होती जाती है और साथ ही साथ उस काम के करने में मन भी लगा रहता है ।

उपर्युक्त वर्गीकरण को इस प्रकार तालिका में स्पष्ट कर सकते हैं ।

तालिका

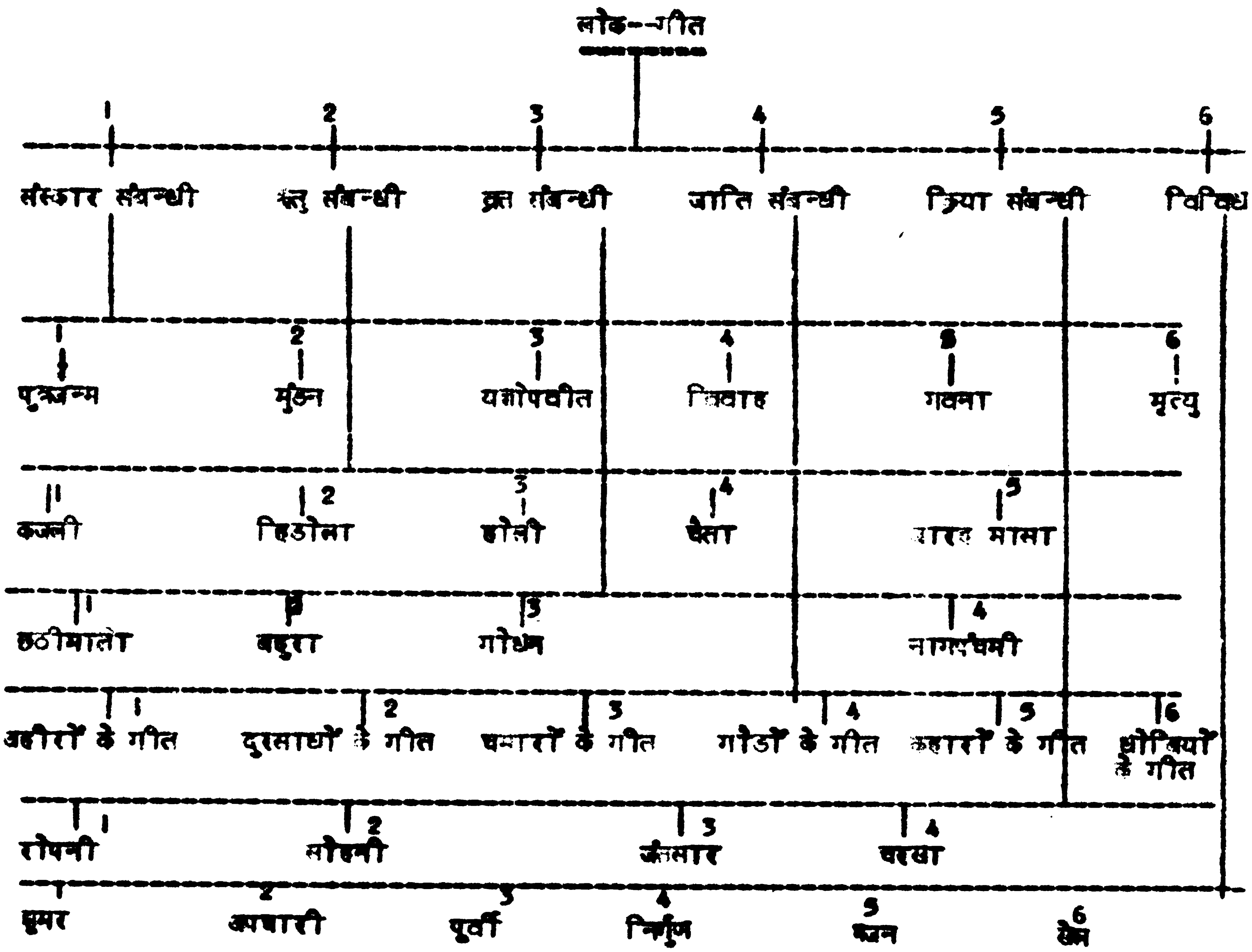

विभाजन का अपना अपना मार्ग बता या गया है । भिन्न विभाजन मार्ग मिलेगा ।

रामनरेश त्रिपाठी का वर्गीकरण

1. संस्कार संबन्धी गीत
2. चक्की और चरखे के गीत
3. धर्म गीत
4. ऋतु संबन्धी गीत
5. खेती के गीत
6. भीख मांगी के गीत
7. मेले के गीत
8. जाति गीत
9. वीरगाथा
10. गीत कथा
11. अनुभव के वचन[1]

त्रिपाठी जी का यह वर्गीकरण अन्य कई लोक-साहित्य पण्डितों के मतानुसार वैज्ञानिक प्रतीत नहीं होता[2]। चक्की और चरखे के गीत क्रिया संबन्धी गीतों के अंतर्गत आजाते हैं। खेती के गीत, भीखमांगी के गीत और मेले केगीतों को भिन्न वर्गों में देखने की आवश्यकता नहीं है। वीरगाथा, कथागीत, लोकगाथा आदि एक ही विभाग के हैं। अनुभव के वचनों को सूक्तियां नाम देना है, वे गीत नहीं हैं। इसी प्रकार ग्यारह विधाओं में बांटने की अवश्यकता यहां सिद्ध नहीं होती।

---

1. राम नरेश त्रिपाठी - कविता कौमुदी - भाग- 5, पृ.43
2. श्याम परमार, सत्येन्द्र, कृष्णदेव उपाध्याय आदियों ने त्रिपाठी के मत की आलोचना की है।

पारीक का वर्गीकरण

राजस्थानी लोक-साहित्य के विद्वान पारखी, प॰सूर्यकरण पारीक ने अपनी पुस्तक में राजस्थानी गीतों का क्षेत्र विस्तार दिखलाते समय इन्हें निम्नांकित उन्तीस {29} भागों में विभक्त किया है।[1]

1• देवी देवताओं और पितरों के गीत
2• ऋतुओं के गीत
3• तीर्थों के गीत
4• संस्कारों के गीत
5• व्रत उपवास और त्योहारों के गीत
6• विवाह के गीत
7• भाई बहन के प्रेम के गीत
8• साली-सालेल्यां {सरहज} रा गीत
9• पति-पत्नी के प्रेम के गीत
10• पणिहारियों के गीत
11• प्रेम के गीत
12• चक्की पीसते समय के गीत
13• बालिकाओं के गीत
14• चरखे के गीत
15• प्रभाती गीत
16• हरजस राधाकृष्ण के प्रेम के गीत
17• धमालें - होली के अवसर पुरुषों द्वारा गेय गीत
18• देश-प्रेम के गीत
19• राजकीय गीत
20• राजदरबार, मजलिस, शिकार, दारू के गीत

1• राजस्थानी लोकगीत {सूर्यकरण पारीक} पृ॰22-25

21. जच्चे के गीत
22. सिद्ध पुरुषों के गीत
23. (क) वीरों के गीत
    (ख) ऐतिहासिक गीत
24. (क) ग्वालों के गीत
    (ख) हास्य रस के गीत
25. पशु - पक्षी संबन्धी गीत
26. शान्त रस के गीत
27. गाँवों के गीत
28. नाटक गीत
29. विविध गीत

इस श्रेणी विभाजन के संबन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि इसमें कोई क्रम नहीं दिखाई पड़ता । पारीक जी ने हास्य, श्रृंगार और वीर रस के गीतों को तीन श्रेणियों में रखा है । ये तीनों एक ही वर्ग के गीत हैं । भाई - बहन, पति - पत्नी के गीत भी इसी प्रकार संस्कार संबन्धी एवं ऋतु गीतों में ही आते हैं ।

भारतीय लोक साहित्य के अनुसार, भास्कर रामचन्द्र, भालेराव आदि का वर्गीकरण और एक दिशा का है ।

<u>भालेराव का वर्गीकरण</u>

1. संस्कार विषयक गीत
2. मारवाड़ी गीत
3. सामाजिक ऐतिहासिक गीत
4. विविध गीत

ये भी, अशास्त्रीय प्रथम दृष्टि से मालूम पड़ते हैं कि वैज्ञानिक स्वरूप के कई वर्गीकरण अन्य लोगों के प्राप्त है ।

श्याम परमार का वर्गीकरण भी, ऊपर उद्धृत वर्गीकरणों के अन्दर ही आता है । मौलिक, या नयी उद्भावनों से संबद्ध एक भी, वर्गीकरण इस श्रेणी में प्राप्त नहीं है, जिसका डॉ॰ सत्येन्द्र जी का वर्गीकरण सबसे वैज्ञानिक प्रमाणित है ।

डॉ॰ सत्येन्द्र का वर्गीकरण

ब्रज लोक साहित्य के महान अध्येता और लोक-साहित्य विज्ञान के रचयिता डॉ॰ सत्येन्द्र* भी विचार करना आवश्य है । उन्होंने लोक-गीतों का रूप विभाजन इस प्रकार किया है ।

पुरुषों के गीत

1. साधारण गीत
2. अनुष्ठानों के गीत
3. मांगने वालों के गीत
4. खेल के गीत

साधारण गीत

1. ग्रामीण गीत
2. नागरिक गीत
3. जातियों के गीत

---

1. लोक-साहित्य विज्ञान - डॉ॰ सत्येन्द्र - पृ॰406

* के द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण का

अनुष्ठानों के गीत

1. व्यक्ति द्वारा गाये जाने वाले गीत [जाहर वीर जैसी]
2. सम्मिलित [देवी की भेंट] [व्याहुले] [ज्वालाजी का फूल]

मांगनेवालों के गीत

पेशेवरों के सरमन, बिलगोई, मेरो, भोजों के गीत ।
बच्चों के गीत : टेस्नू के गीत । चट्टा के गीत ।

ग्रामीण गीत

प्रबन्ध गीत, मुक्तक गीत समूह गीत ।

प्रबन्ध गीत

1. व्यक्ति द्वारा गाये जाना वाला गीत
2. समूह द्वारा गाये जानेवाला गीत

व्यक्ति द्वारा :-

आल्हा, ढोला, हीरा रांझा,भरनी का भात ।

समूह द्वारा :-

जकड़ी, पंवारे, साके

मुक्तक गीत

सोरठ, समाजवादी भजन, रजपूती बोली, सताके, रागिनी
रसिया ख्याल आदि

---

1. डॉ॰ सत्येन्द्र - लोक साहित्य विज्ञान - पृ॰406

स्त्रियों के गीत

1. संस्कार विषयक
2. तिथि वासरक
3. अन्य गीत

संस्कार विषयक गीत

1. जन्म गीत
2. विवाह के गीत
3. मृत्यु समय के गीत

तिथि वासरक

सामान्य ऋतु वासरक गीत
त्योहार व्रतों के गीत
देवी देवताओं के गीत

सावन, साँझी, मांगलिक, आनुष्ठानिक, जागरण के ।

जन्म गीत

जन्मित के गीत
छठी के गीत
अनमोहन कुआरी गीत
लगाँ-गीत

जन्म के गीत

सोमर, बधाएं, चक्र, सातिए ।

छठी के गीत

छठी की रात का गीत	-	मो तो गीत
छठी के दिन का गीत	-	जच्चा गीत

सोहले

कठोषति, ममसी, वेलन, हिरनी, मार, तिलडी ।
नरीफल, पालना, झुंझुना, कोमरी, मौठ, दामोदरिया,
काजल, कामना, पीडा, पुरुष नेगजच्चा के, मखरे, आनंद, बधेर,
अभिलाषा, दार्शनिक ।

नेगपच्चा

विविध मन्त्र

संस्कार

तिथिवारक

सामान्य ऋतु, मासवारक, सामन के गीत

मासवारक

वैवाहिक वयस्काओं के गीत बालिकाओं के गीत

वैवाहिक वयस्काओं के

प्रबन्ध, मक्तमुक्त, दीर्घमुक्त ।

बालिकाओं के गीत

मुक्तक

ऋतुशोभा, झूला, भावनात्मक ।

भावनात्मक

पति संबन्धी, भाई संबन्धी ।

अन्य गीतों का वर्गीकरण

गीत :- बालकों का गीत - अवसरोपयोगी

बालकों का गीत

साधारण गीत, खेल के गीत, लोरियाँ के गीत
टेसू के गीत, झांझी के गीत, घट्टा के गीत

अवसरोपयोगी गीत

तीर्थयात्रा के गीत, होली के गीत, किसानों के गीत

तीर्थयात्रा के गीत

साधारण गीत, ब्रज के विशेष स्थान की यात्रा ।
होली के रसिया के, ब्रज की होली के, रजपूती होली के ।

साधारण

मधुकथानक के, ज्ञान उपदेश के, रसिकता के ।

किसान के गीत

पूरलेने के, सिया बीनने के ।

---

1. डा॰सत्येन्द्र : लोक साहित्य विज्ञान - पृ॰406
2. वही पृ॰413

श्याम परमार का वर्गीकरण

मालवी लोक साहित्य के विद्वान, श्याम परमार ने लोक गीतों को पांच विभागों में विभक्त किया है ।

1. जातियों की दृष्टि से
2. धार्मिक विश्वासों की दृष्टि से
3. संस्कारों और प्रथाओं की दृष्टि से
4. कार्य के संबन्ध की दृष्टि से
5. रस सृष्टि की दृष्टि से[1] ।

डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय का वर्गीकरण

लोक साहित्य के उच्च पंडित डॉ० कृष्ण देव उपाध्याय ने भी लोक साहित्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :-

1. संस्कारों की दृष्टि से
2. रसानुभूति की प्रणाली से
3. ऋतुओं और व्रतों के क्रम से
4. विभिन्न जातियों के प्रकार से
5. क्रियागीत की दृष्टि से[2]

उपर्युक्त वर्गीकरण में कई त्रुटियाँ प्राप्त होती हैं । डॉ० सत्येन्द्र ने

---

1. श्याम परमार - भारतीय लोक साहित्य - पृ०64
2. डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय - लोक साहित्य की भूमिका - पृ०58

उन त्रुटियों का निर्देश करते हुए कहा है कि किसी भी, वैज्ञानिक वर्गीकरण का एक ही आधार होना चाहिए । संस्कार गीत और जातीय गीतों का वर्ग भेद समुचित नहीं है क्योंकि उन विशेष जातियों में भी, संस्कार प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार क्रिया गीत और संस्कार गीत को पृथक रखना भी, त्रुटि पूर्ण है । संस्कार के बारे में यह कहा सकते है कि वे भी एक प्रकार की क्रिया ही मानी जा सकती है, ऋतुओं और व्रतों का भी, एक वर्ग अपेक्षित है[1] ।

डॉ॰ सत्येन्द्र ने उपयोगिता के आधार पर गीतों के मूलत: दो प्रकारों का उल्लेख किया है[2] ।

§1§ किसी आधार व्यापार से संबन्धित इन गीतों को दो रूपों में और भी बाँटा जा सकता है ।

§क§ अनुष्ठानिक

§ख§ उद्योग संबंधित, अथवा उद्योगाचारिक यहाँ पर गीतों के एक अन्य प्रकार पर विचार करते हुए उन्होंने तीसरे विभाग भी उल्लेख किया है ।

वह तीसरा विभाग है -

मनोमोदक या मनारोचक

समस्त धार्मिक अभियोगों एवं जादू टोना आदि अनुष्ठान से संबन्धित गीत पहले वर्ग में आएंगी । द्वितीय वर्ग में समस्त क्रिया गीत आएंगी । तृतीय वर्ग में उन गीतों का समावेश है जो न अनुष्ठानिक होते हैं न उद्योग चारिक अपितु मन की उमंग में व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप से गाये जाते हैं । ~~इन गाथाएं~~ इन गीतों के अन्तर्गत गाथा, गीत, ढोला मारू, आल्हा, हीरा रांझा मोटकी आदि आते हैं ।

1• डॉ॰ सत्येन्द्र लोक साहित्य विज्ञान - पृ॰813

2• वही पृ॰144

तिथि वाचक - ये गीत किसी ऋतु, मास, तिथि और पर्व से संबन्धित होते हैं ।

अध्ययन की सुविधा का ध्यान रखते हुए लोक-प्रचलित गीतों का निम्नांकित विभाजन किया जा सकता है ।

§1§ <u>संस्कार गीत</u>

§क§ जन्म संस्कार संबन्धी
§ख§ यज्ञोपवीत संस्कार संबन्धी
§ग§ विवाह संस्कार संबन्धी
§घ§ मृत्यु संस्कार संबन्धी

§2§ ऋतु संस्कार संबन्धी
§3§ व्रत पर्व उपासना संबन्धी
§4§ जाति संबन्धी
§5§ विविध गीत ।

डॉ॰ विद्या चौहान ने[1] लोक गीतों का वर्गीकरण उपर्युक्त रूप में किया है । इस विभाजन का आधार भी, डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय एवं अन्य ऊपर बताये गये महाशयों का विभाजन ही है ।

इसी प्रकार भारतीय लोक साहित्य के विद्वानों की हर पीढ़ी का तमाम वर्गीकरण देखते हुए भी इतना बताना ठीक मालूम पड़ता है कि ये सब तो सार्थक तो ही हैं, तो भी, लोक काव्यों के रूप परक, और वस्तु परक वर्गीकरण का समन्वय रूप सबसे सार्थक रहेगा । हम इस प्रबन्ध में उन सब का समन्वय

---

1. डॉ॰ विद्याचौहान - लोक गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि - पृ॰105

रूप स्वीकार कर सकते हैं । इन वर्गीकरण प्रणालियों से बढ़कर और कुछ नयी वर्गीकरण पद्धति कायम करना हमारा काम नहीं । इन वर्गीकरण में सबसे अधिक और वैज्ञानिक वर्गीकरण डॉ॰ सत्येन्द्र का है । हम उसको अधिक महत्व देकर स्वीकार करते है । डॉ॰ सत्येन्द्र ने पुरुष और स्त्री के गीत अलग अलग रखे हैं । उस वर्गीकरण पद्धति से सहमत होते हुए भी, यह जोड़ देना उचित है कि स्त्री पुरुषों के सम्मिलित कुछ गीत भी हर प्रान्त में प्राप्त होते हैं ।

मलयालम में जाति संबन्धी गीतों की यही विशेषता है कि स्त्री पुरुष के सम्मिलित गीत अधिक प्राप्त हैं[1] । पाणन्पाट्ट, वेलन पाट्ट आदि इस विभाग के भी हैं । भजन और विरह के गीतों में भी यह विधा प्राप्त है । कुछ विवाह संबन्धी गीत भी इस तरीके के हैं, जिन में मापिलपाट्टु की विधाएं अधिक मुख्य है ।

लोक गीतों का विषय वस्तु के अनुसार का वर्गीकरण अत्यन्त कठिन है । मनुष्य का संपूर्ण जीवन ही विषय की सीमा के अन्तर्गत समाविष्ट है । अतः ऊपर दी गयी सूचियां सब की सब, सूक्ष्मता की दृष्टि से देखने से अपूर्ण प्रतीत होती हैं । लेकिन वैज्ञानिकता के आधार पर सत्येन्द्र का वर्गीकरण अधिक सूक्ष्म और सर्वग्राही सिद्ध मालूम पड़ता है ।

1• आचार्य उल्लूर : केरल साहित्य चरित्रम - प्रथम भाग - पृ•70-74
2• मम्मुडे नाडन पाट्टुकल : ए•डी• हरिशर्मा - पृ•30

लोक-गाथा

लोक-गाथा की परिभाषा

विभिन्न विद्वानों ने लोकगाथा की परिभाषा अपने अपने ढंग से की है। किन्तु उनमें कुछ सामान्य तत्व भिन्न शब्दावलियों में स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। इन सामान्य तत्वों के निर्धारण केलिए यहाँ कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषाओं का उद्धरण और विवेचन आवश्यक है।

श्री० जी०एल० किटरेज के अनुसार लोक गाथा कथात्मक गीत अथवा गीत कथा है।[1] इस मत में लोक गाथा के दो तत्वों - गीत और कथा - अथवा दो लक्षणों, गीतात्मकता एवं कथात्मकता, का स्पष्ट निर्देश है।

श्री, फ्रैंक सिजविक ने लोक गाथा को, वह सरल, वर्णनात्मक, गीत माना है, जो लोक मात्र की संपत्ति होती है और जिसका प्रसार मौखिक रूप से होता है।[2] सिजविक के मत में लोक गाथाओं की सरल निरलंकारिता, कथात्मकता, गीतात्मकता, व्यक्ति भावना का अभाव और मौखिकता की ओर निर्देश किया गया है। वस्तुतः ये लोक गाथाओं की अनिवार्य विशेषताएं हैं, जिनपर आगे विचार किया जाएगा।

प्रोफसर एल०डी० गूमर का कथन है कि लोकगाथा गाने केलिए रची गयी एक ऐसी कविता है, जो सामग्री दृष्टि से सामुदायिक मूल्यों से संबद्ध है, किन्तु जिसमें मौखिक परंपरा प्रधान होती है।

---

1. जी०एल०किटरज, एल०जे०चाइल्ड कृत : इंगलीश एंड स्काटीश पोपुलर बैलेड्स - भूमिका - पृ०11
2. फैंक सिजविक - ओल्ड बैल्डस - भूमिका - पृ०3
3. प्रो० एल०डी० गूमर - ए हैन्डबुक ओफ लिटरेचर : बैल्डस, पृ०37

इस परिभाषा के प्रमुख तत्व सिजविक के मत में निहित हैं । इस में लोक गाथाओं की उत्पत्ति और उसके ऐतिहासिक विकास के विषय में भी एक तथ्य निहित है । प्रारंभ में नृत्य की अनिवार्य महत्ता रहती है और तदनंतर मौखिक परंपरा का जन्म होता है ।

डॉ॰ मारे के अनुसार लोक-गाथा छोटे पदों में रचित एक ऐसी प्राणमयी सरल कविता है जिसमें कोई लोकप्रिय कथा बहुत ही विशद रीति से कही गयी है[1] ।

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में लोक गाथा को ऐसी पद्यशैली बताया गया है जिसका रचयिता अज्ञात हो, जिस में साधारण आख्यान का वर्णन हो और जो सरल मौखिक परंपरा केलिए उपयुक्त तथा ललित कला की सूक्ष्मता से रहित हो[2] ।

इसी प्रकार अन्य अनेकों विद्वानों ने लोक-गाथा की परिभाषाएं प्रस्तुत की हैं । सभी विद्वानों ने उपर्युक्त परिभाषाओं को अपनी भाषा और ढंग में दुहराया है । सर हेमलिंट ने लोक-गाथा को गीत कथा नाम दिया है । सिजविक ने पुनः इसे एक अमूर्त पदार्थ कहा है । हेन्डसन मारटेलो ने उपर्युक्त मतों का समर्थन किया है । लूसीपाउंड ने भी यही मत प्रकट किया ।

उन सब के मतों के अनुसार हम लोक गाथा की परिभाषा इस प्रकार कर सकते -

---

1. डॉ॰ मारे - राबर्ट ग्रेव्स कृत : दि इंगलीश बेलड्स - भूमिका-पृ॰8
2. इंसिक्लोपीडिया ब्रिटानिका - बेलेड - पृ॰993

लोक गाथायें प्रबन्धात्मक गीत है जिस में गेयता का महत्व अधिक रहा है और एक घटनात्मक कथा निहित रहती है। गेयता के साथ साथ कथानक की प्रधानता इतनी अधिक रहती है कि गायक और श्रोता दोनों घटनाओं का अनुभव सा करते हैं।

अन्य विद्वानों की परिभाषाओं पर विचार करने से ऐसा लगता है कि सभी विद्वानों ने एक ही तथ्य को अपनी अपनी भावना के अनुसार अनेक ढंगों में हमारे सामने रखा है। किसी ने भी एक दूसरे के मत का खण्डन स्पष्ट रूप से नहीं किया है। मतभेद प्रकट करने योग्य तत्व का निषेध किसी की भी परिभाषा में प्राप्त नहीं है। अतएव हम भी यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि लोक गाथाओं में गेयता एवं कथानक का रहना अनिवार्य है। और एक कार्य लोक-गाथा के रचयिता, प्राय:अज्ञात होते हैं[1]। इसे व्यक्तित्वहीन, व्यक्तिवादी तत्व के अन्दर भी रखा जा सकता है। ये गाथाएं संपूर्ण समाज की धरोहर होती है, तथा इनका प्रचार जन साधारण के ओंठ और कंठ से होता है। लोक गाथाएं लोक गीतों की एक विशिष्ट विधा हैं, इन्हें भी लोक-काव्यों के अन्तर्गत रखा जा सकता है। अलंकृत काव्यों की तुलना में इनमें काव्य-गुणों का सर्वत्र अभाव रहता है। ओजस्विता एवं सौन्दर्य में यह लोक काव्य विधा संपूर्ण एवं स्वच्छ प्रधान है[2]।

1. The names of the authors of many songs will never be revealed because when they composed the songs, they did not write them down, but disseminated them by word of mouth only. Russian Folk lore. p.11

2. इंसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना - वाल्यूम-3, बैलड्स - पृ.94

लोक-गाथा और बैलेड

अंग्रेज़ी में लोक गाथा के लिए बैलेड शब्द का प्रयोग किया जाता है। बैलेड शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के { Ballare } धातु से मानी जाती है। इस धातु का अर्थ है, नाचना। रार्बट ग्रेव्स ने लिखा है कि बैलेड का संबन्ध "बैले" { Ballete } से है, जिस में संगीत और नृत्य की प्रधानता रहती है।[1] इस उक्ति से हम समझ सकते हैं कि नाचने का अर्थ - "नृत्यानुसारी गीत" है जो सामूहिक नृत्य मात्र है। नृत्य और गीत इसके दो अभिन्न तत्त्व हैं।

बैलेड शब्द का मूल अर्थ या अभिप्राय उस प्रबन्धात्मक गीत से था, जो नृत्य के समय साथ साथ गाया जाता था, परन्तु कुछ समय पश्चात् इसका प्रयोग किसी भी ऐसे गीत के लिए किया जाने लगा जिसे सामान्य जनता का एक दल सामूहिक रूप से गाता है।

प्रो॰ कीट्रीज का मत भी यहाँ लाने योग्य है कि वे कहते हैं :- बेल्ड वह गीत है जो कोई कथा कहता है। अथवा दूसरी दृष्टि से विचार करने पर बेलड वह कथा है, जो गीतों में कही गयी हो।[2] फ्रैंक सिजविक ने बेल्ड की परिभाषा बतलाने में कठिनता का अनुभव करते हुए - अमूर्त पद - अर्थ के गुणों से युक्त बतलाया है। उनके विचार से यह कोई ठोस या स्थायी वस्तु नहीं है। इसका स्वरूप रसात्मक होने के कारण द्रवरूप है।[3]

---

1. It is connected with the word 'Ballate' originaly ment a song or refren intended accompany ment to dancing but later cover dany song in which a group of people society join. Robert Grave : The English Ballads. (Introduction)
2. Ballad is a song that tells a story or to take the other point of view, a story told in song. E.Sa.Popular Ballads. Introduction p.1
3. फ्रैंक सिजविक : दि बेल्ड - पृ॰8

प्रसिद्ध अमेरिकन विद्वान मेक एडवेर्ड लीच ने भी प्रबन्धात्मक या आख्यानात्मक लोक काव्य का एक प्रकार कहा है[1] ।

संसार की समस्त भाषाओं में बेलड के अर्थ में प्रतिपादित लोक काव्य विधा का स्वरूप पाया जाता है, जिसे हिन्दी में हम लोकगाथा की संज्ञा देते हैं । अंग्रेज़ी में जिस चीज को बेलड निर्धारित किया है वह हिन्दी की लोक गाथा है ।

बेलड के लिए लोक गाथा शब्द का प्रयोग पहले पहल डॉ॰कृष्णदेव उपाध्याय ने ही किया है । अपने शोध प्रबन्ध में उन्होंने सन्निकर्ष और विश्लेषण के साथ यह शब्द स्पष्ट किया है[2] ।उस समय तक गीत कथों का प्रयोग होता था । आगे चलकर अन्य विद्वान भी इस प्रयोग को अपनाने लगे । संस्कृत ग्रन्थों में "गाथा" के प्रयोग का सामान्य अर्थ एवं पाली जातकों में प्रयुक्त गाथा शब्द के अर्थ में भी, कथाश्रित गीत का बोध प्राप्त है । इसलिए ऐसे प्रबन्धात्मक गीतों के लिए जिन में कथानक की प्रधानता के साथ ही गेयता भी उपलब्ध होती हो लोक गाथा शब्द का ही प्रयोग समीचीन है[3] ।

---

1. A form of narrative folk-poetry or song.
   Dictionary of folk lore - Vol. 1. p.106
2. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - भूमिका - पृ॰ 76
3. The word 'Gatha' which means a song or a ballad is of pre vedic origin and very significant in Avestan literature as well in India, the word is used even today. The gathas are said to be devine as well as human................ they are also called the Narasamsi, viz. the praise song of man, ... Gathas are found in pali, and in jain literature and also in prakrit poetry.

   An out line of Indian Folk lore - p.14

लोक-गाथाओं की विशेषताएं

लोक-गाथाओं की विशेषता को निम्नांकित दस भागों में विभक्त किया जा सकता है ।

1. रचयिता का अज्ञात होना
2. प्रमाणिक मूल पाठ का अभाव
3. संगीत और नृत्य का अभिन्न साहचर्य
4. स्थानीयता का प्रचुर पुट
5. मौखिक परंपरा
6. उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव
7. अलंकृत शैली की अविद्यमानता
8. कवि के व्यक्तित्व की अप्राप्यता
9. लंबे कथानक की मख्यता
10. टेक पदों की पुनरावृत्ति

{1} रचयिता का अज्ञात होना

लोक-गाथा की सबसे बड़ी विशेषता है उसके रचयिता का अज्ञात होना । हिन्दी में प्रचलित हर लोक-गाथा के भी रचयिता का अभाव सुविदित है "हीर-रांझा" ढोला-मारू, सोरठी, लोरिकायन, गोपी चंद, भरथरी, आदि अनेक गाथाएं हिन्दी में प्राप्त हैं । मलयालम में भी पुत्तुरंपाट्टु, तच्चोलिप्पाट्टु, वीरप्पन अरयन, इरविक्कुट्टिप्पिल्ला, नीलिकथा, कर्नाटकथा हजमाऊन कथा आदि लोक गाथाएं प्राप्त हैं । इनमें किसी के भी रचयिता का पता नहीं है । हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ लोक-काव्य आल्हा के बारे में जगनिक का नाम बताया जाता है । परन्तु जगनिक को आल्हा का रचयिता साबित करने का

एक भी प्रमाण अब तक पाया नहीं गया है । हिन्दी साहित्य के प्रमुख इतिहासकारों ने भी, प्रामाणिक रूप में यह असन्दिग्ध सिद्ध नहीं किया है । लोक कवि अपनी रचनाओं में अपना नाम पिरोए देना कई कारणों से उचित नहीं समझे[1] । डॉ॰ ग्रियर्सन का मत तो यह है कि यह तो उनकी असावधानी के कारण हुआ है । सामाजिक कामों में व्यक्ति का अपना दावा रखना साधारण कार्य नहीं है । टोली के समस्त व्यक्तियों के सहयोग से ऐसी रचनाएं बन जाती हैं, इसलिए लोक काव्यों का रचनाकार अज्ञात होता है ।

डॉ॰ ग्रियेरसन का मत एक हद तक ठीक रहेगा तो भी, पूर्णतया यही कारण नहीं बताया जा सकता । इसका यह भी कारण हो सकता है कि उस समय जीवन का लक्ष्य तो "ईच फोर आल आण्ड आल फोर ईच" के नारे पर अधिष्ठित था । इसलिए किसी को अपना नाम या महत्व दिखाने की इच्छा नहीं थी[2] ।

<u>प्रामाणिक मूल पाठ का अभाव</u>

लोक-गाथाओं का कोई मूल पाठ नहीं होता । चूंकि लोक गाथाएं समाज की सम्मिलित रचनाएं होती हैं, इसलिए इसके मूलपाठ (Original Text) का पता लगाना बड़ा कठिन कार्य है । विभिन्न प्रांतों या राज्यों में प्रचलित होने के कारण, पाठ भिन्नता स्वाभाविक है । आकार में वृद्धि एवं प्रक्षिप्तता का आगमन लोक गाथाओं में स्वाभाविक मात्र है ।

---

1. Anoninity in the present structor of society usually implies that the auther is ashamed of his authership or affraid of the consiqunces, of the reveels himself but in a primitive society it is due just to careleasness of the authers name. [The English Ballads.]

2. Man in the early days lived each for all and all for ea author. p.22

काव्य के अलायक आदामों से युक्त व्यक्तिकृत काव्य अलंकृत काव्य माना जाता है। लोक-काव्य इससे हमेशा भिन्न होता है। विभिन्न कवियों के योगदान से निर्मित संकृद काव्य भी हैं। ऐसी रचनाएं कालान्तर में प्रथम रूप से बढ़कर अधिक स्थूल हो जाती हैं। ये संकृद काव्य हैं[1]। व्यासमुनि विरचित महा काव्य "जय" नाम से जाना जाता था। कालान्तर में अनेकों कवियों के उपाख्यानों के जोड़ने पर वही काव्य संकृद काव्य बनकर महाभारतम हो गयी है[2]। प्रचार की अधिकता के कारण परिवर्तन अधिक मात्रा में होती रहेंगी। इस दृष्टि से काव्य और लोक काव्य दोनों में परिवर्तन और परिवर्धन का होना स्वाभाविक है। लेकिन काव्य का एक मूलपाठ हमेशा होता है। लोक काव्य के प्रामाणिक मूलपाठ का अभाव ही लीत है। एक उदाहरण से यह स्पष्ट किया जा सकता है।

जिस प्रकार नदी उद्भव स्थान में पतली एवं स्वच्छ दिखाई देती है, और निम्न स्थान में मोटी एवं अपवित्र है उसी प्रकार किसी लोक प्रिय, लोक-काव्य की स्थिति भी होती है। जिस प्रकार उस नदी की मूल स्वरूपिता को पहचानना कठिन है उसी प्रकार ऐसे लोक काव्यों का मूल स्वरूप पहचानना भी कठिन है। नदी का मूल ढूंढा जा सकता है, लेकिन लोक-काव्य का प्रमाणिक मूलपाठ देखा ही नहीं जा सकता।

आल्हा नामक लोक-प्रिय लोक-काव्य की ओर देखें। उसकी रचना बुंदेली में पहले हुई थी। लेकिन इस के अनेकों पाठ आज प्रचलित हैं। इन उन पाठों में कनोजी और भोजपुरी पाठ ही आज अधिक प्रसिद्ध है। बुंदेली पाठ से यह रात दिन का अन्तर दिखाता है।

---

1. महाभारत जैसे काव्य संकृद काव्यों में आते हैं। उनकी रचना एक कवि ने कदापि नहीं की है।

2. चतुर विंशति साहस्त्रीं चक्रे भारत संहिताम्
   उपाख्यानैर्विना तावद् भारतम प्रोच्यते बुधै।

संगीत तथा नृत्य का अभिन्न सहयोग

संगीत और नृत्य में अभिन्न साहचर्य है। प्रारंभकाल में वेल्ड से अभिप्राय उस गीत से था, जो नाचके साथ गाया जाता था। इसे जन समुदाय सहवेत स्वर में [कोरस] गाता था। इस गीत में संगीत अवश्य था कि यही गीत की आस्था है। इंग्लैंड में चारण [मिंस्ट्रेल] सितार बजा बजाकर लोक गाथाएं गाते थे। ये गीत विशेष अवसरों पर गाये जाते थे। मध्य युग में मृत्यु के अवसर पर गीत गाकर नृत्य करने की प्रथा थी।[1] ये गीत स्वभावानुसार धीरे धीरे गाने के थे। यहां भी आल्हा गाते समय ढोल बजाया करते हैं, बेला गाते समय ताल बजाने की रीति भी है। डालु कुटिया बेला का कहना भी है संथाली नगाडे की आकृति का बाजा बजाकर नाचके साथ गाते हैं। इस प्रकार लोक-गीत, लोक-गाथा जैसे लोक-काव्यों का, लोक संगीत तथा लोक-नृत्य से अविछिन्न संबन्ध साबित हो जाता है।

स्थानीयता का प्रचुर प्रभाव

लोक-काव्यों में स्थानीयता का पुट विशेष रूप से पाया जाता है जिस प्रदेश में जिस प्रकार का गीत प्रचलित है, उनमें वहां के लोगों की रहन सहन, रीतिरिवाज, खान पान और आचार-व्यवहार का सजीव चित्रण रहता ढोला मारुरा दूहा में मौरवणीडं ऊंट की सवारी करती हुई दिखाई पड़ती है मलयालम के कई गीतों और गाथाओं में, भी इस आंचलिकता का पुट स्पष्ट दिखायी देती हैं। उण्णियार्चाकी की गाथा में, अल्लिमलर कावु के उत्सव का परामर्श उसका उज्वल उदाहरण है।[2]

---

1. Dancing were common at medieval funaral naturaly to a law phyas.

2. Ballads of north Malabar, Dr. Chelanat Achutha menon.

अलंकृत शैली का अभाव

मौखिक प्रवृत्ति-गाथाओं में अलंकृत शैली का सर्वथा अभाव है । कथा का वर्णन सरल रीति से करना ही उसका ध्येय है । भाषा [illegible] भाव सरल होता है

रचयिता [illegible] से हर कहीं मौखिक परंपरा से चली आ रही है जोगीचरण आदि के गीत आज भी मौखिक मात्र पाये जाते हैं । उत्तर मलबार

अलंकृत काव्य में उसके लेखक का व्यक्तित्व प्रतिबिंबित होता है ।

के आदिवासियों के बीच प्रचलित कई गाथायें मौखिक रूप मात्र में प्राप्त हैं । उनका वावाटु पाटु[1] - वल्लियूर काव लिपिबद्ध करते ही उसकी गति और प्रगति रुक जाती है । प्रोफेसर गूमर ने मौखिक परंपरा को लोक काव्य की सच्ची कसौटी बतायी है[2] ।

उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव

लोक गाथाओं में उपदेशात्मक प्रवृत्ति का प्रायः अभाव पाया जाता है इसकी प्रवृत्ति कथानक को गति देना है नकि उपदेश कथन की । तो भी थोड़ा कहीं लोक काव्यों में भी प्राप्त है ।

अलंकृत शैली का अभाव

लोक-गाथाओं में अलंकृत शैली का सर्वथा अभाव है । कथा का वर्णन सरल रीति से करना ही उसका ध्येय है । भाषा ललित और भाव सरल होता है ।

रचयिता के व्यक्तित्व का अभाव

अलंकृत काव्य में उसके लेखक का व्यक्तित्व प्रतिबिंबित होता है । शैली एवं व्यक्तित्व आपस में संबन्ध रखते हैं । लोक-काव्य मौखिक काव्य है । इस कारण से रचयिता का व्यक्तित्व उसमें पाया नहीं जाता । इतना ही नहीं,

---

1. वल्लियूरकावु - कर्नाटका का एक आदिवासी मन्दिर है - जहाँ पणिया जाती के लोग आराधना के लिए वार्षिक दिन में इकट्ठा होते हैं ।
2. वे.एम.शोकोलोव - रूस के लोक प्रसिद्ध लोक-साहित्य विद्वान का रशियन फोक लोर

गाथाओं के रचयिता या गायक न तो कोई निजी विचार प्रकट करता है, और न किसी वस्तु की आलोचना ही करता दिखाई पड़ता है । सिजिविक का कहना है कि किसी भी भाषा का सर्व प्रथम तथा सर्व श्रेष्ठ गुण उसका व्यक्तित्व नहीं - व्यक्तित्व हीनता है । हिन्दी, राजस्थानी पंजाबी, गुजराती, मराठी तथा बंगला की भाषाओं में अनेक लोक-गाथाएं, प्रचलित हैं, उनके अध्ययन से स्पष्ट पता चलता है कि उनमें उनके रचयिताओं के व्यक्तित्व की, छाप का अभाव है । लोक गाथा में कथा की प्रधानता होती है, जिसके द्रुत प्रभाव में रचयिता का व्यक्तित्व विलीन हो जाता है ।

लंबी कथानक की मुख्यता -

लोक-गाथाओं की एक अन्य विशेषता है कि उनकी कथा वस्तु की लंबाई इस कार्य में ये महाकाव्यों से भी लंबी हो जाती है । उत्तर भारत के प्रसिद्ध लोक-काव्यों का यह गुण प्राप्त हो । अंग्रेज़ी, हिन्दी और मलयालम में छोटी छोटी गाथाओं के साथ साथ कई लंबी गाथाएं प्राप्त हैं । संपूर्ण जीवन और जीवन की घटनाएं, मिलकर बहुत लंबी गाथाएं बन जाती हैं । समय की गति के साथ ही लोक गाथाओं में परिवर्तन और परिवर्धन होता रहता है । अतएव जो गाथा जितनी ही प्राचीन होगी, उसका आकार उतना ही बड़ा हो जाएगा ।

टेक पदों की पुनरावृत्ति

लोक गाथाओं की सर्वप्रथम विशेषता टेक पदों की पुनरावृत्ति है । गाते समय गीतों की जितनी ही अधिक बार आवृत्ति की जाय उसका आनंद उतना ही अधिक बढ़ता जाता है । सिजिविक के मतानुसार टेक पद लोक गा की वह विशेषता है, जिससे पता चलता, ये गीत सामूहिक रूप में गाए जाते

1. Derivation of the coral song is another, importance of Ballads.

Sigivi.C - The Ballad - p.83

प्रधान गवैया जब एक कड़ी गाता है तब उस समुदाय के दूसरे लोग एक साथ, मिलकर टेक पदों की आवृत्ति करते हैं। वर्तमान काल में समवेत स्वरों में गीत गाने की प्रवृत्ति, इसी परंपरा को सूचित करती है। फेरडिनेन्ड वल्फ के मतानुसार टेक पद उतना ही पुरातन है, जितना की जनता की कविता।[1] श्रेष्ठ कवियों ने अपनी कविता में इस परंपरा का अनुकरण किया है। लोक गीत और गाथा [लोक काव्य] की सब से बड़ी विशेषता यही है। टेक पद गीत को नया जीवन प्रदान करता है। आज कल भी, यह पद्धति देखी जाती है।

लोकगाथाओं का वर्गीकरण

लोक-गाथाओं का वर्गीकरण दो दृष्टियों से हो सकता है।

1. आकार की दृष्टि से
2. विषय की दृष्टि से

आकार की दृष्टि से

1. लघु गाथाएं
2. वृहत गाथाएं

विषय गत दृष्टि से

1. प्रेम कथात्मक गाथाएं
2. वीरकथात्मक
3. रोमांच कथात्मक
4. विविध गाथाएं

---

1. The coral form in the folk poetry shows the oldest form of the poetry.

   Ferdined wolf

   Origin of poetry - Folk poetry, p-60

कई विद्वानों ने अपने अपने मतानुसार लोक गाथाओं को भिन्न विषय में बाँटा है । कहीं कहीं प्रदेश भिन्नताके आधार पर भी विभाजन कायम है ।

मलयालम की कई लोक गाथाएं प्रादेशिक नाम से, और कथा की विशेषताओं के आधार पर विभाजित हैं ।

§1§ आकार संबन्धी वर्गीकरण

लघुगाथाएं

जिन गाथाओं को लघु गाथा नाम दिया गया है, वे आकार में छोटे और किसी छोटी कथानक पर आधारित होती हैं । कुसुमादेवी, मावली देवी, एलशियट मरीमर, नीलिकथा आदि लघुगाथाएं हैं ।

बृहतगाथाएं

बृहत गाथाएं आकार में बड़ी होती हैं, ये प्रायः प्रबन्धात्मक होती हैं ये वस्तु और रूप दोनों में काव्य जैसे §प्रबन्ध काव्य जैसे§ होते हैं । इन्हें मौखिक रूप में आलापन करने को कई दिवस लगते हैं । लिपि-बद्ध करने पर हज़ारों पृष्ठ लगते हैं । किसी व्यक्ति के जीवन की सारी घटनाएं कथाएं उपकथाएं इनमें आबद्ध रहती हैं । आल्हा, ढोला-मारुरा दूहा, लोरिकिन, सोरठी, ओडीसी §अंग्रेज़ी§ वरिकुट्टिपिल्लेप्पोर, करुणाम्बिकथा आदि बृहत लोक गाथाओं में आती हैं ।

1. आदं आर्थिव, ज़िवेमनेट, ओडीसी, आदि अंग्रेज़ी बाण्डस अधिक प्रसिद्ध हैं ।

लोक-गाथाओं का वास्तविक वर्गीकरण - विषय गत होना चाहिए । विषय गत वर्गीकरण और व्याख्या इस क्षेत्र में अधिक हुआ भी है । इन में कई विद्वानों का विभाजन समुचित एवं युक्तिसंगत है । लेकिन उन सबकी अपनी अपनी कमियां भी हैं ।

‡।‡ डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय का वर्गीकरण

डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकगाथाओं का निम्न लिखित वर्गीकरण किया है ।

प्रेम कथात्मक लोक-गाथाएं ‡लो बैलेड्स‡

प्रेम मानव जीवन का प्राण है । लौकिक जीवन की आत्मा है.। अत: प्रेम गाथाओं में प्रेम संबन्धी घटनाओं का उल्लेख होना स्वाभाविक है । कुसुमादेवी की गाथा प्रेम गाथा है । भगवती देवी की गाथा भी प्रेम गाथा है बहुला प्रेम प्रधान लोक गाथा है, जो प्रबन्ध गीतों में आता है । शोभानयका भी प्रेम प्रधान लोक काव्य है । इन में पति-पत्नी-प्रेम के दोनों पक्ष ‡संयोग एवं वियोग‡ गाये हैं । इस कारण से इन्हें श्रृंगारिक लोककाव्य भी कहा जा सकता है । इन काव्यों में संयोग श्रृंगार एवं वियोग श्रृंगार दोनों का वर्णन बड़ा ही रोचक तथा मार्मिक पाया जाता है । राजस्थानी प्रेम-परक लोक काव्य ढोलामरू, प्रेम का वह अजस्र स्रोत है, जिसमें अवगाहन कर पाठक अतिशय आनंद प्राप्त करता है । इस गाथा में "मारवणी का प्रेम अनन्य और अलौकिक पंजाबी लोक-काव्य हीरारांझन और एक प्रेम काव्य है, जो पंजाबी काव्य होते हुए भी समस्त हिन्दी जगत में लोक प्रिय इसके नायक और नायिका प्रेम की धधकती ज्वाला में अपने प्राणों की आहुति दे देता हैं ।

[2] वीरकथात्मक गाथाएं [हीरोइक बेलेडस]

वीरकथात्मक गाथाओं में किसी वीर के साहसपूर्ण और शौर्य सम्पन्न कार्य का वर्णन होता है । अलौकिक वीरता का वर्णन करना ही इन गाथाओं का परम लक्ष्य है । कहीं पर किसी युवती का पाणिग्रहण करने केलिए भीषण संग्राम, का वर्णन उपलब्ध होता है, तो कहीं मातृभूमि के उद्धार केलिए शत्रुओं से लड़ने का वर्णन पाया जाता है ।

वीरगाथाओं में आल्हा का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । इन दोनों वीर भाइयों आल्हा और ऊदल ने किस प्रकार अपनी मातृभूमि की रक्षा केलिए महा प्रतापी सम्राट पृथ्वीराज से भीषण युद्ध किया - यह घटना इतिहास प्रसिद्ध है । लोरिका और एक वीर काव्य है - जो लोक गाथाओं में अद्वितीय स्थान रखता है । कुंवरसिंह, भोजपुरी का अपना लोक-काव्य है तो भी सारी हिन्दी भाषी जनता इसे अपना मानती है । लड़ाई के मैदान में कुंवर सिंह की वीरता देखकर कौन मुग्ध नहीं होता ?

गुजराती, राणक देवी, जूनागढ की रानी थी । अनहिल वाड के राजा सिद्धराज जयसिंह ने जूनागढ पर आक्रमण किया । जूनागढ के राजा को पराजित करके उस परमसुन्दरी रानी राणक-देवी को छीन लिया । उसकी पति भक्ति एवं वियोग दुःख का चित्र इसे वीर काव्य में पायाजाता है । राजस्थान की पाबूजी नामक गाथा भी वीरता का मुग्धोपहार है?

मलयालम में भी, कई वीरगाथाएं प्राप्त हैं, जिनका विवरण आगे किया जाएगा ।

रोमांच कथात्मक गाथाएं [रोमैंटिक बैलड्स]

रोमांच कथात्मक गाथाओं में "रोमांस" या अलौकिकता, पायी जाती है। सोरठी नामक प्रसिद्ध लोक-काव्य इस श्रेणी में आता है। सोरठी एक साधारण मल्लाह के घर की लड़की थी, जो विवाह के पहले ही माता-पिता से परित्यक्ता थी। माता ने उसे पालने में सुलाकर वेगवती नदी में प्रवाहित किया। एक मल्लाह ने उसे वेगवती नदी में बहती हुई देख कर नदी की धारा में से निकाल लिया और अपने घर ले आकर पाला पोसा। धीरे धीरे वह युवती होगयी। उसका विवाह भी हो गया। सोरिका के जीवन में अमानुषिकता के रूप में कई घटनाएं घटीं इसलिए यह अलौकिक कथाओं में आती है। इस कारण इसे रोमांचकथात्मक गाथाओं में स्थान दिया गया है।

प्रोफेसर कीट्रिज का वर्गीकरण

अंग्रेजी लोक साहित्य के प्रकाण्ड पण्डित विद्वान तथा यशस्वी संपादक प्रो॰कीट्रिज ने लोक-गाथाओं को दो विभागों में विभक्त किया है।

[क] चारण गाथाएं [मिन्स्ट्रेल बैलेड्स]

[ख] परंपरागत गाथाएं [ट्रेडीशनल बैलेड्स]

मध्य कालीन युरोप में चारण लोग राज दरबारों में लोक-गाथाएं गाया करते थे। ये लोग अपनी जीविका चलाने का मार्ग भी यही स्वीकार करते थे वे लोग स्वयं गाथाएं बनाते गाते थे। इसीप्रकार चारणों द्वारा बनाए तथा गाये जाने के कारण इन गाथाओं का चारणगाथाएं नाम पड़ा।

परंपरागत गाथाओं से कीट्रिज का अभिप्राय उन गाथाओं से है जो चिरकाल से चली आ रही है और जिनका प्रचार और प्रभाव आज भी अक्षुण्ण बना हुआ है। 17वीं शताब्दी में इन प्रकाशित गाथाओं की अधिक मांग थी

अंग्रेज़ी, हिन्दी और मलयालम के कई लोक-काव्य इस श्रेणी में आते हैं, उन पर आगे विचार किया जाएगा ।

प्रो॰ गुमर का वर्गीकरण

लोक साहित्य के प्रामाणिक विद्वान प्रो॰ गुमर ने लोक गाथाओं का वर्गीकरण निम्नांकित छः प्रकारों में किया है ।

1. प्राचीनतम गाथाएं [ओल्डस्ट बेलड्स]
2. कौटुंबिक गाथाएं [बेलेड्स ओफ किनशिप]
3. शोकपूर्ण एवं अलौकिक गाथाएं [कोरोनेच एंड सुपरनेचुरल बेलेड्स]
4. मिलिटरीगाथाएं [मिलेटरी बेलड्स]
5. सीमांत गाथाएं [बोर्डर बेलेड्स]
6. आरण्यक गाथाएं [ग्रीन उड बेलेड्स]

[1] प्राचीनतम गाथाएं

समस्यामूलक [रिडिल बेलड्स] प्राचीनतम गाथाओं में आती हैं । ये अनादि काल से चली आती हैं । आकाश, पृथ्वी और पशुओं से ये गाथाएं संबंध रखती हैं । दूसरे प्रकार की गाथाएं घरेलू जीवन से संबद्ध हैं जिन में किसी प्रेयसी का हरण, महत्व पूर्ण स्थान रखता है । इन में रोमांस का प्रचुरपुट होता है ।

[2] कौटुंबिक गाथाएं

अंग्रेज़ी का निर्दय भाई [क्रुअल ब्रदर] जैसी गाथाएं [मलयालम के पुत्तूरं पाट्टु] आदि कौटुंबिक गाथाएं हैं । शासकीय कानूनों को भंग करनेवाले रोबिन हुड, ग्रीनउड आदि गाथाएं आरण्यक गाथाएं हैं । मलयालम की "पूमाता" उस

वर्ग की गाथा है । रोबिन हुड के समान तम्बोली ओतेमन भी एक राष्ट्रीय वीर या सामाजिक महत्व रखता था । लेकिन रोबिन हुड मात्र मल हीरो था, तो वेलुतंपिदलवा, इरविकुट्टिपिल्ले आदि ऐतिहासिक वीर थे । उनके नाम की गाथाएं वीर गाथाएं थीं । उत्तर प्रदेश का सुल्ताना नामक डाकू और कायम कुलम कोच्चुण्णी नामक, डाकू भी, धनी मानी लोगों को मात्र लूटते थे । मानसिंह के बारे में भी गाथाएं बनी हैं । मानसिंह की वीरता पर सारे उत्तर भारत में गीत मिलते हैं । इसी शताब्दी में राजस्थान में जोर सिंह या जोरावर सिंह नाम का एक प्रसिद्ध डकैत हो गया है । जिस की वीरता के अनेक गीत उस प्रदेश में प्रचलित हैं । जोर सिंह को उसके साथियों ने धोखा देकर मार डाला था । जिस दिन उसकी हत्या की गयी थी, उसकी पहली रात को उसकी स्त्री ने बुरा सपना देखा था । उसने अपने पति को पहले ही मना किया था कि वे बाहर न जाएं । परन्तु जोर सिंह कब मानने वाला था ? वह निडर, बहादुर एवं अपने साथियों पर विश्वास रखनेवाला था । किन्तु उसे उस विश्वास का उन्हें फल मिला था कि उन विश्वास घातियों ने घोर षड्यंत्र कर उस वीर को मार डाला । मरते समय अपनी पत्नी की सीख उसे याद आयी । यहाँ तक का वृत्त एक गाथा है । आगे जाकर जोर सिंह के वीर पुत्र ने किस प्रकार अपने पिता के खून का बदला उस के शत्रुओं से लिया इस घटना का वर्णन दूसरी गाथा में किया गया है ।

काठियावाड के लुटेरों का बड़ा ही रोचक वर्णन भी गीतों में प्रस्तुत है समाज ने इन गीतों को बड़े प्यार से स्वीकार किया । सौराष्ट्र में ऐसी अनेकों गाथाएं आज भी प्राप्त हैं । ये गाथाएं चारण गाथाओं की श्रेणी में आ जाती है ।

<u>लोकगाथा और लोकगीत में अन्तर</u>

लोक-गीत और लोक गाथा में प्रधानतया दो प्रकार का भेद है :-

§1§ स्वरूप गत भेद §2§ विषयगत भेद । स्वरूप गत भेद के संबन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि लोकगीत आकार में छोटे होते हैं । लोक-गाथा का आकार अधिक विस्तृत होता है । झूमर या सोहर लोक गीत है, जो आठ या दस पंक्तियों से प्रायः अधिक नहीं होते । लोकगाथा का विस्तार हज़ारों पंक्तियों में भी हो सकता है । आल्हा खंड जो आज कल पुस्तक व्यापारियों के पास मिलता है, वह पांच सौ पृष्ठों से अधिक है । ढोला-मारू, राजा-रसालू, मलयालम में प्राप्त हरिश्चंद्रन पिल्ले, वीरप्पन अय्यन, वडक्कनपाट्टु आदि अनेकों पृष्ठों की बड़ी गाथाएं हैं । कहा जाता है लोरिकायन नामक लोक गाथा, रामायण से भी अधिक बृहत माना गया है । मिथिला में यह कथन भी है, बारह खण्ड रामायण तो चौदह खण्ड लोरिकायन । अंग्रेज़ी का दि जेस्ट ऑफ दि रोबिन हुड - हज़ारों पंक्तियों में समाप्त होती है ।

विषय गत भिन्नता

लोक गीतों में विभिन्न संस्कारों, ऋतुओं और व्रतों पर गाने के गीत सम्मिलित हैं । इन गीतों में घर के संकुचित क्षेत्र में जीवन की जिन अनुभूतियों का साक्षात्कार मनुष्य करता है उन्हीं की झांकी हमें देखने को मिलती है । परन्तु लोक गाथाओं का वर्ण्य विषय, लोकगीतों से भिन्न है । इस में सन्देह नहीं कि इन गाथाओं में भी प्रेम का पुट गहरा रहता है । यह प्रेम जीवन संग्राम में अनेक संघर्षों का सामना करता हुआ अंतमें सफली भूत होता हुआ दिखलाया जाता है । आल्हा खण्ड में माडो गढ की लड़ाई का वर्णन वीरता का और सोरठी का साहस प्रधान है ।

लोक तत्व की परंपरा अन्य काव्यों में

(1) भारतीय परंपरा

संपूर्ण संसार में मानव के आविर्भाव काल से ही लोक काव्यों का उद्भव माना जाता है । ये प्रथम लोकगीत के रूप में ही हुए हैं । लोक गाथाओं का भी उद्भव साथ साथ हुआ । यद्यपि लोक काव्यों के जन्म की कोई निर्धारित काल रेखा नहीं है परन्तु मौखिक परंपरा के अविच्छिन्न प्रवाह के रूप में ये निरन्तर असीम के गर्भ में छिपे उद्गम स्रोत की ओर इशारा करते हैं । लोक गीतों की अनंत प्रवाहमयी प्राचीनता के संबन्ध में पं० रामनरेश त्रिपाठी ने कहा है[1] ।

जब से पृथ्वी पर मनुष्य है तब से गीत भी हैं । जब तक मनुष्य रहेंगे तब तक गीत भी रहेंगे । मनुष्यों की तरह गीतों का भी, जीवन मरण साथ चलता रहता है । कितने ही गीत तो सदा केलिए मुक्त हो गये हैं कितने ही गीतों ने देश काल के अनुसार भाषा का चोला तो बदल डाला, पर अपने असली स्वरूप को कायम रखा । वे थोडे फेर-फार के साथ समाज में अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं ।

वैदिक ग्रन्थों में

लोक-काव्यों की विकास परंपरा भारत वर्ष में अत्यंत प्राचीन है । इस विधा का प्रथम दर्शन चिह्न, वैदिक ग्रन्थों में उपलब्ध है । पुत्र जन्म, यज्ञोपवीत, तथा विवाह आदि उत्सवों पर सरस गीत गाये जाने का उल्लेख, उनमें मिलता है ।

1. पं० रामनरेश त्रिपाठी : कविता कौमुदी परिवर्तन संस्करण - तीसरा भाग (ग्राम गीत) पृ०78

इन गीतों केलिए वेदों में "गाथा" शब्द का प्रयोग हुआ है । गीतों को गाने वाले के अर्थ में गाथिन शब्द भी पाया जाता है । विवाहादि अवसरों पर गाये जानेवाले गीत, रैमी, नाराशंसी, तथा गाथा, तीनों संज्ञाओं से अभिहित किये जाते थे, परन्तु गाथा शब्द विशिष्ट अर्थ रैमी और नाराशंसी से पृथक निर्दिष्ट किया गया है ।

ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थों में भी, गाथाओं का उल्लेख प्राप्त होता है[1] । ब्राह्मण ग्रन्थों में ऋक तथा गाथा शब्द का अन्तर निर्दिष्ट किया गया है । ऋक दैवी होती थी, गाथा मानुषी । गाथाओं का प्रयोग मन्त्र के रूप में नहीं किया जाता था, और वे ऋक यजु तथा साम से पृथक होती थीं । प्राचीन काल में किसी राजा के उदात्त एवं महान चरित्र को अंकित करके जो गीत समाज में प्रचलित हो जाते थे, और जन समुदाय द्वारा गाये जाते थे, वही गाथा शब्द के द्वारा अभिहित किये गये थे । यास्क के निरुक्त की व्याख्या करते हुए दुर्गाचार्य ने बताया है कि वैदिक सूक्तों में कहीं जो इतिहास उपलब्ध होता है, वह कहीं ऋचाओं के द्वारा और कहीं गाथाओं में निबद्ध है[2] । वैदिक गाथाओं का उदाहरण शतपथ ब्राह्मण में उपलब्ध है । ऐतरेय ब्राह्मण में यह उदाहरण कहीं कहीं प्राप्त हो जाता है । इस में अश्वमेध यज्ञ, करनेवाले श्रेष्ठ राजाओं का चरित्र वर्णित है । ऐतरेय ब्राह्मण में इन गाथाओं को कहीं श्लोक कहीं यज्ञगाथा और कहीं केवल गाथा मात्र भी कहा गया है[3] ।

<u>पुराणेतिहासों में</u>

ऐतिहासिक गाथाओं की यह परंपरा महाभारत काल में भी पूर्णरूप से प्रचलित थी, दुष्यन्त पुत्र भरत के संबन्ध में अनेक गाथाएं महाभारत में उपलब्ध होती

---

1. शतपथ ब्राह्मण - कांड 13/अध्याय 2/ब्राह्मण
   ऋग्वेद 10/25/6/ निरुक्त =2/2/6
2. ऐतरेय ब्राह्मण - कांड 8 पा॰स॰पु॰ काण्ड/1/खण्ड का/7
3. वही 39/7

गाथाओं का गायन विशेष रूप से राजसूय, यज्ञ के अवसर पर ही होता था। परन्तु मैत्रायिणी संहिता में विवाह के शुभ अवसर पर गाथाओं के गायन का प्रमाण प्राप्त होता है।[1] पारस्कर गृह्य सूत्र में भी विवाह गाथाएं उपलब्ध होती हैं। गृह्यसूत्र में सीमंतोन्नयन के अवसर पर गाथा गाने का वर्णन प्राप्त होता है[2]। इस प्रकार लोक-काव्यों के विकास की परंपरा में उसका सर्वप्रथम रूप, गीत, एवं गाथाएं गाने की प्रथा भारतीय साहित्य के आदि रूपों में हम प्राप्त कर सकते हैं। वैदिक काल में गाथाओं के मुख्य दो रूप वर्णित हैं। (1) ऐतिहासिक (2) देवविषयक।

ऐतिहासिक - राजसूय यज्ञ आदि के अवसर पर गायी जानेवाली गाथाएं थीं। देव विषयक गाथाएं विभिन्न संस्कारों के अवसर पर मंगल हेतु गाये जाने वाली गाथाएं थीं।

<u>बौद्धजातकों में</u>

वैदिक, पुराणैतिहासिक कालों के पीछे हम बौद्धकालीन साहित्य में भी लोक काव्यों का उल्लेख प्राप्त कर सकते हैं[3]।

पाली भाषा में उपलब्ध जातकों से उपर्युक्त प्रस्ताव की पुष्टि और भी हो जाती है। पाली जातकों में निबद्ध गाथाएं अधिक प्राचीन हैं। तत्कालीन लौकिक कहानियों एवं घटनाओं का संक्षिप्त उल्लेख किया गया है। भगवान बुद्ध के जीवन से संबन्धित कथाएं गाथाओं के माध्यम से ही अभिव्यक्त हुई हैं। पाली के प्रसिद्ध सिंह चर्म जातक में सिंह की खाल ओढ़कर धान खानेवाले गधों की कथा है। बोधि सत्व इस गधों का रहस्य जान लेता है - यह गाथा अत्यंत महत्व पूर्ण है। वणिक की कथा की गाथा और एक है

---

1. मैत्रायिणी संहिता - 3/7/3.
2. पा. ग.सू. काण्ड / 1 / कंडिका / 7
3. पाली जातकथाएं - पृ.437

इस से हम समझ सकते हैं कि बौद्ध काल में भी लोक काव्यों का खूब प्रचार होता था

हाल की गाथा सप्त शती में संगृहीत सात सौ गाथाएं और एक उदाहरण है । इसी प्रकार आगे आगे हम हिन्दी में भी लोक काव्य विधाएं प्राप्त कर सकें ।

हिन्दी में लोक-काव्य की परंपरा

§1§ पूर्ववर्ती परंपरा : हिन्दी में

हिन्दी की पूर्ववर्ती परंपरा अपभ्रंश और प्राकृत भाषाओं में प्राप्त है । उसी का विकसित रूप, हिन्दी लोक-काव्य परंपरा का प्रथम रूप माना जा सकता है[1] । इस काल में रासो, मुकरियां जैनचरित काव्यों, नाथपंथी रचनाओं संतों की अटपटी वाणियां आदि प्राप्त हैं । कहीं कहीं थोड़ी से मुक्तक पदों का भी, प्रचार प्राप्त हो जाता है[2] । नाथपंथी साहित्य में विशेष रूप से गोरख नाथ की, वाणी में उलटबांसियां, तथा दूसरी ओर साधारण जनता की बोली में पंडितों का पाखण्ड ढोंगी, रूढिवादिता, आदि के प्रति तीखा व्यंग्य प्राप्त है । ये साहित्य की कोटि में गिने नहीं जाते[3] । उनका पक्ष लोक-मानस लोक-मत एवं लोक जीवन से ही है, जिससे लोक-मानस का प्रतिपादन हो रहा था।

प्रारंभिक युग

हिन्दी साहित्य का प्रारंभिक युग एक ओर मैथिली से और दूसरी ओर राजस्थानी से संबद्ध है । रासो नाम से की गयी रचनाएं संवाद रूप में

1• सिद्ध साहित्य : धर्मवीर भारती - पृ•238

2• महायान का क्रमिक विकास - पृ• 76

3• गोरखवाणी - पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल

प्रचलित कविप्रिया एवं शुक शुकी के रूप में प्रचलित रहे हैं । विद्यापति की रचनाओं का प्रचार स्पष्टतः लोक-गीतों के रूप में ही होने लगा था । उन्होंने अपनी रचना कीर्तिलता में - शुक, शुकीसंवाद रखा है । ये संवाद चरित नायक के व्यक्तिगत जीवन को प्रस्तुत करते हैं, साथ ही लोक जीवन के पक्ष का समर्थन भी करते हैं[1] । विद्यापति की भाषा वस्तुतः जन साधारण की भाषा है । इसी कारण मिथिला में लोक गीतों का प्रचार अधिक हुआ ।

आदिकालीन वीर काव्य रासो को भी लेंगे सब तत्कालीन लोक जीवन की यथातथा व्याख्यानों के रूप में प्रस्तुत करते हैं । आल्हा-उदल के नाम से विविध बोलियों में प्रचलित लोक काव्य ही परमाल रासो नामक काव्य है । अन्य रासो काव्यों की स्थिति भी भिन्न नहीं है । सारे के सारे युद्ध काव्य [वार-पोवाड़ी] लोक काव्य हैं[2] । इन्हें वीर-काव्यों में चाहे स्थान दिया भी जाय तो भी उनके जन पक्ष या लोकपक्ष कोई अस्वीकार नहीं कर सकते ।

उपासकों और साधकों को मन्दिरों में भजन गानेकेलिए पश्चिमी आहट में जो काव्य या गीत रचे गये, चर्चरी फाग और रास के नाम से प्रसिद्ध है, वे उस युग संध्या की लोक-रंगीन विभूतियाँ हैं । यहीं से, राजस्थानी, मैथिली, हिन्दी गुजराती, लोक-काव्य धारा की परंपरा जारी रही है ।

राजस्थानी साहित्य का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर तो हिन्दी का प्रमुख लोक-साहित्य उसे, माना जा सकता है[3] । यद्यपि प्रांतीय जीवन के नाटकीयतायुक्त आख्यान प्रांतीय भाषाओंमें प्रथम मिलता है तो भी हिन्दी में भी उसको उतना महत्व प्राप्त हो गया है । उनके जीवन की सरलता जीवनपथ की जटिलताओं से उद्भूत, होती रही है । मात्रिक छन्दों का प्रयोग लोक गीतों की गेयता केलिए प्रमुख रूप से उपयोगी होता है । ढोला-मारूरादूहा, इस विषय का प्रमुख उदाहरण है ।

---

1. नागरी प्रचारणी पत्रिका वर्ष 46 - अंक:3, विरगाथाकालीन जैनसाहित्य
2. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास
3. ग्राम साहित्य : रामनरेश त्रिपाठी

हिन्दी के प्रारंभिक युग में अमीरखुसरो {14वीं शताब्दी} की कई रचनाएं प्राप्त हैं, जो दोहों, तुकबन्दियों, मुकरियों, पहेलियों और ढकोसलों के रूप में प्राप्त होती हैं । इनको हिन्दी लोक-साहित्य की पूर्व परंपराओं को निश्चित करने में सहायक सामग्री के रूप में स्वीकार कर सकते । अमीर खुसरो के कुछ ढकोसले और गीत आज भी गांवों में ऐसी प्रचलन पा रहे हैं कि उनका नाश कदापि असंभव है ।

कबीर की रचनाएं

पन्द्रहवीं सदी में प्राप्त कबीर की रचनाओं में भी, लोक-धर्मी, काव्यों का {लोक-काव्यों का} सामान्य स्वरूप खोजा जा सकता है । उनमें प्राक्तन लोक-जीवन का समूर्त रूप कई स्थानों में विद्यमान है[1] । सारा सन्त साहित्य, कबीर पंथ की प्रेरणा के फलस्वरूप ही स्थापित माना जा सकता है । उन सबों में वस्तुत: लोक जीवन की अभिव्यक्ति ही प्राप्त होती है । उनका अधिकांश भाग मौखिक रूप में प्राप्त होता है । लोक-काव्य के रूप में वह आज भी समस्त भारत में प्राप्त है । उत्तर से दक्षिण पूरब से पश्चिम तक वह आज भी, समाज के कंठ और ओंठ में विद्यमान है । संत कवियों की सहज वाणी, उनकी वस्तुवादी और रहस्यवादी उक्तियों के द्वारा लोक-जीवन पर जितना प्रभाव पड़ा है, कि लोक-कवि ~~भी अज्ञातवश~~ उनके नामों की छाप दे देकर अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति उनकी जैसे गीतों में करने लगे ।

सूर की रचनाएं

ब्रज समाज में सूर सागर एवं अन्य भक्ति साहित्य का महत्व साधारण नहीं है । सूरदास ने भी लोक-तत्वों का अधिक प्रयोग किया था जिससे उनकी कविता एवं गीत-सार्वजनिक क्षेत्र में प्रचार पा सकी और लोक-मान्य बन गयी ।

---

1. ~~[illegible]~~ हिन्दी साहित्य की भूमिका:
हज़ारी प्रसाद द्विवेदी - पृ॰43

वह भी लोक साहित्य परंपरा में एक नयी कड़ी का उद्घाटन कर रहा है ।

सूरसागर की रचना के मूल स्रोत ये लोक गीत तथा लोक गाथाएं रही होंगी जो राधा और कृष्ण की प्रेम लीला के संबन्ध में ब्रज मण्डल में गाई जाती रही होंगी

इसी ढांचे कवियों ने सर्वसाधारण की ही भाषा में तथा उनमें प्रचलित मुहावरों व दृष्टान्तों द्वारा अपने भावों को गागाकर जन समाज तक पहुंचाया । इन सन्तों का एक बड़ा संप्रदाय अवध, काशी, मगध और बंगाल में फैल गया था । संतों की मूल मूल भावना अपने युग की परिस्थिति विशेष से आविर्भूत हुई थी । कबीर के समान दादू, नानक, रैदास, मलूकदास और दरिया ने भी लोक भाषा में अपने गीत गाये हैं । कबीर की साधना अपने आसपास के संपूर्ण जीवन को समेटकर चली थी । उन्होंने समाज की संपूर्ण, विकलताओं रूढ़ियों, परंपराओं कर्मकाण्डों और बाह्याचारों को ललकारा है । पारिवारिक जीवन की बड़ी स्वाभाविक झांकी इनके पदों में पाई जाती है । यथा -

दुलहिनियां गावहु मंगल चार
हमघरि आये हो राजा राम भरतार ।
हिंडोलना को कबीर ने आध्यात्मिक रूप में इस प्रकार रखा है -

हिंडोलना तहां झूले आतमराम,
प्रेम भगति हिंडोलना सब संतन को विश्राम ।

बात को अटपटे ढंग से कहने की लोक-सामान्य प्रवृत्ति के भी, कुछ पद हमें उनकी रचनाओं में मिलते हैं । यथा

एक अचंभा देखो रे भाई ठाढ़ा, सिंह चरावे गई ।

यह सिंहमन है ।

---

1. हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास - भाग - 1

कुछ लोकोक्तियाँ भी प्राप्त हैं जैसे -

एक लकुल सवा लख नाती ।
ताराकर घर दिया न बाती ।

लोक में प्राप्त पतिव्रत भावना एवं शृंगार प्रियता दोनों का एक सुन्दर चित्रण, निम्न लिखित पद में देखिए -

कावुरा पायल झनकाएँ
कहा भया बिछुआ ठमकाये,
का काजल सेंदुर के, दीये
सोलह रस्योंगार कहा भयां कोयें ।।

अन्य सन्त कवियों में दरिया साहब बिहार वाले की भाषा में शब्दावृत्तियों तथा वाक्य विन्यास तुलसी के मानस के समान ही हुआ है । दरिया की कविता में अवधी प्रधान भाषा के रूप में प्रयुक्त हुई है तथा इस में अन्यबोलियों का भी मिश्रण मिलता है । एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

रहे निरंजन हमरे पास सदा प्रेम सेवक भिखु दास
सर्वप्रथम नरपतिनाल्ह के बीसलदेवरासो में,

बारह माहे का वर्णन किया गया है ।

जायसी में

जायसी के पद्मावत में लोक काव्यों की एक विधा - बारहमासा में, नागमती का विरह वर्णन अतिशय रूप में स्वाभाविक बन पड़ा है । यह प्रसिद्ध है कि जायसी अपने शिष्यों के साथ पद्मावत के कई अंशों को गाते फिरते थे । कहा जाता है कि एक चेला, अमेठी [अवध] में जाकर नागमती का बारह मासा गाकर भीख माँगा करता था । एक दिन अमेठी के राजा ने गीत सुना और जायसी को बुलाया । वहीं जायसी ने पद्मावत की रचना समाप्त की ।

1• डा•प्रकाशचन्द्र दुबे - जायसी की काव्य कला एक अध्ययन - पृ•41-47-1।

नागमति के विरह वर्णन में स्वकीया के पवित्र प्रेम की भावना का दिगदर्शन होता है । रानी नागमति विरह में अपना रानीपन भूलकर साधारण पतिव्रता नारी के रूप में स्वयं को देखती है । इसी से चौमासे में वह पति विरह के कारण अपने को अभागिन समझने लगती है ।

बरसे मेह, चुवहि नैनाहा
छपट छाट होई रहि बिनु नाहा ।
कोरौ कहाँ, ठाटनम साजा
तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा ।।

यही अनुभूति अवधी की लोक कविताओं में भी हर कहीं हम प्राप्त कर सकते हैं । जायसी के काव्य में संयोग शृंगार के उद्दीपन की दृष्टि से षट ऋतु वर्णन भी कथानक रूढ़ि के अनुसार की गयी है । कथा को गति एवं घुमाव देने की इच्छा से कुछ विशिष्ट प्रतीकों पर जोर देते हैं । इस कारण दीर्घ काल से प्रचलित कुछ काव्य शैलियाँ एवं प्रयोग कथानक रूढ़ी के रूप में बदल जाते है । ये सारी बातें लोक-सुलभ एवं लोकमानस की आस्थाओं का सामंजस्य है । इस कारण से पद्मावत की लोक प्रियता लोक तत्वों पर आधारित रहती है । पद्मावत में काव्य रूढ़ि बनने वाले तत्व है ।[1]

1. कहानी कहनेवाला सुग्गा
2. स्वप्न में प्रिय दर्शन पाकर आसक्त होना ।
3. किसी का चित्र मात्र देख कर मोहित होकर प्रेम करने लगना ।
4. किसी भिक्षुक या बन्दी के वर्णन मात्र से मोहित होकर प्रेम मग्न होना
5. ऋतु-परिवर्तन के साथ और बारह मासे के माध्यम से विरह वेदना का अनुभव ।
6. पक्षियों, के द्वारा जैसे हंस, कपोत, आदि के द्वारा सन्देश भेजना ये रूढ़ियाँ पद्मावत और उस समय के अन्य काव्यों में भी प्राप्त है । ये तत्व लोक-काव्य के है ।

---

1. सूफी सन्त काव्य - सरलासिंह - पृ.179

शुक, सारिका, तोता, मैना, कोयल आदि लोक-काव्यों में कथापात्र भी बनते हैं।

कथा कहनेवाले, समझनेवाले, और सन्देश वाहक - इन तीनों रूपों में ये आती हैं। कथागति को भी कहीं कहीं इनके सहयोग से स्फूर्ति मिलती है। कहीं कथा की चरम बिंदु पर रहस्यों को खोलने की क्रिया का भी ये निरपराधप्राणी अपना दायित्व बाँटता है। शकुन संबन्धी कार्यों को भी, लोक-काव्य ने महज नाम-प्रतिष्ठापन को बाध्य रखा है - जैसे जायसी ने अपने समय के प्रचलित हर शकुन प्रथाको अपने काव्य में स्थान दिया है - यथा -

यात्री के दर्शन में दही या मछली का दाहिनी ओर से आना,

जल भरा कलस लेकर तरुणी का सामने से आना दही को ऊपर ग्वालिन का आवाज लगाना।

मालिन का गूँथा हुआ मौर लेकर आना

खंजन का मर्ग के मस्तक पर बैठा हुआ देखना

दाहिनी ओर से हिरण का दौड़ते हुए आना

बायीं ओर से तोता और गधे का बोलना

दाहिनी ओर से सांवले सांडका दहकना

बायी ओर से गाम्दु जमा बैठे रहना

लोमड़ी को दर्शन होना,

चीलका सिर के ऊपर से उड़ना,

कुररी और डोंधपकी के शब्द सुनना, आदि शुभशकुन माना जाता है।

ऐ इसी प्रकार दुःशकुन का भी निर्देश किया गया है।

ये दोनों लोक - मानस का प्रभाव मात्र बताये जा सकते हैं। लोक मानस सदा से इन शुभाशुभ शकुनों की आस्था में विश्वास करता चला आ रहा है। ये मान्यतायें उसके जीवन का एक सहारा हैं।

1• सूफी सन्त काव्य - लक्ष्मण सिंह - पृ•179

2• जायसी का पद्मावत - पृ•417, 509, 566 आदि

शकुन मानों जीवन का सहारा देता है । मानव को उसके कार्य की सफलता केलिए एक प्रेरणा इन्हीं से प्राप्त होती है ।

जायसी ने पद्मावत में वैवाहिक रस्म-रिवाजों का भी लोक परंपरा के अनुसार वर्णन किया है[1] ।

भोज का वर्णन और भी कहीं आया है । एक बादशाह के भोज का वर्णन है । एक शाकाहारी और एक मांसाहारी । दोनों में उस समय के राजकीय भोजनालय पाक शाला आदि का वर्णन प्राप्त है ।

केरल के महाकवियों की रचनाओंमें भी यह भोज वर्णन कई प्रसंगों में प्राप्त है जो लोक सुलभ, हसी खुशियों से युक्त है[2] ।

तुलसी में

लोक-काव्य की परंपरा के प्रसंग पर हम महाकवि तुलसीदास की काव्य कला में प्राप्त लोक-सुलभ प्रसंगों का भी, तिरस्कार कर नहीं सकते । तुलसी की रचनाएं अवधी बोली की है । उन में रामचरितमानस बाबे रामायण, रामलला नहछु, जानकी मंगल रामाज्ञाप्रश्न आदि को ही लें । इन सारी की सारी रचनाओं में लोक जीवन के पारिवारिक रूपों का स्वरूप पाया जाता है । यह और भी ध्यान देने योग्य बात है कि रामाज्ञाप्रश्न का निर्माण, शकुनविचार के लिए ही हुआ है[3] । रामललानहछु, अवधी में सोहर छन्द में रचा मनोहर काव्य है । यह सोहर छन्द, लोक गीतों का छन्द हैं । इस काव्य की लोक प्रियता का एक मुख्य कारण इस सार्वजनिक छन्द का उपयोग है[4] ।

1. पद्मावत काव्य
2. महाकवि कुंचन नंपियार की रचनाएं
3. रामाज्ञा प्रश्नविचार और लोक-विश्वास : लेख: लोक साहित्य विशेषांक
4. मलयालम के महाकवि, एषुत्तच्छन की क्लासिक रचनाओं की भी यही विजय रहस्य है कि लोक-गीत प्रचलित छन्दों को अपना ही उन्होंने क्लासिकों की भी रचना की है ।

वैसवाडी में नहछु काव्य को मायुर भी कहते हैं । अवध में सोहरपुत्रजन्म से लेकर यज्ञोपवीत तक सारी घटनाओं पर गाते हैं । आज भी अगर हम अवध जाए तो, छठी, कनछेदन, मुंडन, नहछु, यज्ञोपवीत आदि अवसरों पर लोक-गीत सोहर के रूप में तुलसी कृतियों का गाना सुनकर आनंद पुलकित हो सकते है । सोहर हमेशा सुअवसरों का गीत है । नहछु में दुल्हा-दुलहिन का प्रयोग कहीं कहीं राम सीता के अर्थ में भी हुआ है । अवध में आज भी, यज्ञोपवीत एवं विवाह के अवसरों में नहछु नहाछन की प्रथा होती है । लोक-मानस और लोक-मनोविज्ञान दोनों का समन्वय, रूढी गत परंपरा का यह उदाहरण है । सारे उत्तर भारत में और पूर्वी प्रांतों में भी, बरात के पहले चौक बैठने के समय नाइन के द्वारा नहछु कराने की रीति प्रचलित है । बारात के पहले वर को माँ नहला धुलाकर गोद में लेकर बैठ रहती है नाइन पैर के नखों में महावर लगाती है इसी रीति को नहछु कहलाता है ।

> गोद लेहि कौसल्या बैठी रामहिं वर को
> सोभित लह राम सीस पर आँचर तो[1]

नहछु गाने के पहले, सरस्वती, गणेश और पार्वती की वंदना करना सूर्य-चन्द्र आदि देवताओं को अर्ध्य देना, मातृपूजन [गृहमातृका] मैंट की चीजें लेकर रिश्तेदार और बन्धु गण स्त्रियों का आना, उन्हें उपहार देना आदि कई परिपाटियों का पता चलता है । लोहारिनि, अहीरिनि, तंबोलिन, दर्जिनि, मोइचिनि, मलिनिया, नउनिया, अहिरनिया, सभी यहाँ पर आयी है । तुलसी कृत रामकाव्य में, शादी वर्णन की यह रीति लोक-रीति से भिन्न और कुछ नहीं है ।

1. रामलला नहछु [तुलसीदास]

लोक गीतों में नउनिया विशेष देखा गया है । प्रत्येक लोकाचार के समय, वह उपस्थित रहती है । उसे घर की बहू बेटी, बूढ़े-युवा, सब से हँसी मज़ाक करने का अवसर है । अधिकार है । उसी का उदाहरण है -

नैनतिशाल नैनियाँ भी, चमकावईहों
देह गारी रनिवास कि प्रमुदित गाईं हो"

पार्वती मंगल महादेव और श्री पार्वती के विवाह से संबन्धित ठेठ अवधी काव्य है । इस में पार्वती की अद्वितीय तप और अलौकिक प्रेम का वर्णन है । शिव-पार्वती विवाह का विषय, भारतीय प्रेम गाथाओं का एक पुरानी कथावस्तु है । और भी अनेक कथाओं का वर्णन इस में पाया जाता है । इस देव-कथा को अपने काव्य में प्रतिपादन करते हुए लोक-तत्वों का प्रसार करने का प्रयत्न तुलसी ने किया है । इस कारण इस काव्य को भी अधिक सुन्दर बनाने का श्रेय तुलसी को मिला । कवि लोक-मानस के ज्ञाता होने के कारण यह काव्य इतना सुन्दर हो गया है । पार्वती मंगल में लोक भावना का व्यापक प्रसार हम पा सकते हैं । पार्वती मंगल शीर्षक से ही विवाह के समय गाये जानेवाले गीत का भाव स्पष्ट होता है । विवाह गीत को मंगल गीत कहना स्वाभाविक है।

कहेउ हरिषि हिमवान बिताव बनावन ।
हरषित लगीं सुवासिनी मंगल गावन ।।

किसी भी कार्य को प्रारंभ करने के पहले अपने कुलदेवता व अन्य देवी देवताओं का स्मरण, करना बहुत प्राचीन काल से एक लोक निष्ठा है । लोक विश्वासों में एक को तुलसी ने भी इसी प्रकार अपनाना स्वाभाविक माना है ।

---

1. महाकवि कालिदास कृत कुमार संभव काव्य में भी, लोक सुलभ वैवाहिक प्रक्रियाओं का विवरण पाया जाता है - उसका आधार भी शिवपार्वती प्रणय कहानी है ।

देवी देवताओं के अनुग्रह से ही सारा कार्य शुभ पर्यवसानी होगा यह विश्वास लोक-विश्वास के अवशेष के रूप में आज की काव्य पद्धति में भी, पाया जाता है। देवी देवताओं की शक्ति पर अटल विश्वास लोक काव्य और कथाओं का एक अंग है।[1] लोक-रस्म रीतियों का पता लोक काव्यों से मिलता है। तुलसी के काव्यों में भी ये कई रिस्म प्राप्त है जैसे सुलामथा [समधियों का मिलाप] या समधौरा [दोनों पक्षों के पिताओं का सम्मिलन] पिता की अनुपस्थिति में कोई ज्येष्ठ पुरुष भी इस क्रिया में भाग ले सकता है। उरती सजाकर परिछन करना। परिछन भी विवाह का एक रिस्म है।[2] बारात के आने पर रूप में अक्षत रोली लेकर वरकाटके का लगाया जाता है, उसकी आरती भी की जाती है। बरात के स्वागत करने का एक रिस्म है यह। इस के पश्चात बरात को अन्दर लाकर आसन बिठाया जाता है। उसके साथ जेवनार होती है। रामचरितमानस में पुरीबारात, बारात की जेवनार का वर्णन होता है। इस के पश्चात विवाह का अन्य कार्य क्रम शुरु होता है। अयोध्यावासी लोगों के बीच प्रचलित लोक-व्यवहार और लोकाचार से ये सब संबन्धित हैं। कनपुर जैसे प्रदेशों में आज भी केवल मिर्च खाने ले जाने की प्रथा है। वहाँ घर में लाकर भोजन कराने की रीति साधारण नहीं है।[3]

पूजे कुल गुरुदेव, कलसु मिथ्याधिकारी
        लावा होम विधान बहुरियाँ धरि परि
बंदन बंदी, ग्रन्थि विधिकरि ध्रुव देखेउ
        भाविवाहसव कहिजनम फलपरेखउ
बहुरि बराती मुदित चलेउन वासहि
        दुलह-दुलहिन गेलव हास अवासहि।

वास अवासहि कोहबर-यहाँ कुलदेव स्थापित है। यहाँ भी, सास्री समहज दुल्हे के प्रयोग से लोक-सुलभ हास्य विनोद करने का भी तुलसी अपनी लोक भावना का प्रदर्शन करते हैं। लह-कौटी, दोनों में दही चीनी का

1. पार्वती मंगल - पद : 96, 40, 15, 90

2. तुलसी के चार दल - दूसरी पुस्तक - पृ.145

भोजन कराने की रीति का स्पष्टीकरण है । गारि देही, ये गालियाँ व्याज स्तुति मयी उक्तियाँ होती हैं । पहिरावनि प्रयोग से बरातियों को वस्त्रादि दिये जाने की सूचना है ।

बेटी की बिदाई की घड़ी सबसे कारुणिक है । अपनी प्यारी बेटी से बिछुटने वाली माँ फिर यही कहने के लिए बाध्य होती है -
नारिजन्म जाजायु - नारी का जन्म व्यर्थ है ।

जानकी मंगल की तुलसी ने सोहर में रचना की है । वैवाहिक रीति ही इस में अधिक लोक-विशेष प्रथा के रूप में प्राप्त है । गणपति, गौरी, आदियों की पूजा का वर्ड चिह्न इसमें प्राप्त हुए हैं । गणपति गौरी का पूजन सुहागिनी का मंगलगान, कन्यादान विधान, सिंदूर बंदन, होम, लावा, भांवरी, सिलपोहनी, कोहबर, गारी, महकेरी, मांडवछाना, बधावन, बजना, हरदि, तेलकराना, कुलरीति करना, कलशथापना तेल चढाना, चौकपूरना, बंदनवार वितान पताका से घर ही नहीं पूरा सडक व शहर सजाना दधि, दूब, अक्षत, रोचना, मांगलिक वस्तुएँ एकत्र करना, स्थापित करना आदि रीतियाँ हैं । अवध के प्रत्येक परिवार में यही रीतियाँ आज भी मनायी जाती हैं । लोक गीतों में हम उन्हीं भावों का स्पष्टीकरण प्राप्त कर सकते हैं । कहते है कि बरवैरामायण गोस्वामी जी ने अपने स्नेही मित्र, अब्दुल रहीम खानखाना के कहने पर उनके बरवे नायिका भेद को देख कर बनाया था । रहीं संस्कृत अरबी, फारसी और हिन्दी के ज्ञाता थे । उनकी रचनाओं में ब्रज, अवधी समान रूप से पायी जाती है । तुलसी के वचनों के समान, रहीं के वचन भी हिन्दी भाषी भूभाग में सर्व साधारण के मुँह पर रहते हैं । क्योंकि उन्हें जीवन की सभी परिस्थितियों का मार्मिक अनुभव था । बरवे नायिका भेद के पदों में भारतीय प्रेम जीवन की झलक पायी जाती है । तथा यह अवधि भाषा की सुन्दर रचना है उनकी रचनाओं में लोक-जीवन की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई है ।

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - रामचन्द्रशुक्ल - पृ.125

एक छन्द द्रष्टव्य

मोरहि बोधि कोई किया, बटवस्तिताप

....

पीतम इक सुमरिम्नियाँ, मोहि देहजाहु

जेहिजमि तोर बिरहवा करिबनिबाहु ।

उपर्युक्त विवेचन का संबन्ध साहित्यिक अवधि से है । आगे ठीक अवधि में लोक साहित्य की परंपरा का परिचय प्रस्तुत है -
हिन्दी का लोक साहित्य घाघ से अधिक ऋणी है । घाघ ने अपने जीवन से प्राप्त अनुभवों द्वारा लोकोक्तियों का अपूर्व भंडार एकत्रित किया है ।

कृषि, बैल, खेत, स्वास्थ्य, नीति, खानपान, आदि से संबन्धित कितने ही लोक-व्यावहारिक तत्व घाघ के लोकोक्तियों में प्राप्त हैं । किसान का जीवन प्रकृति के व्यापारों पर ही अवलम्बित रहता है । इसी से उसे नक्षत्र चांद, सूरज, वर्षा, राशि, आदि का इतना ध्यान रखना पड़ता है । कब वर्षा होगी, किस हवा का रुख किधर होगा, अर्थात् नक्षत्र आदि से वर्षा और वायु का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । यही घाघ की कहावतें आज गांव गांव में प्रचलित हैं और सारे भारत में यही किसान के लोक जीवन की पुस्तकें हैं । साधारण जन अपने मनोरंजन के लिए सीधी मज़ाक और बुद्धि का चमत्कार देखने दिखाने में किया करता है । गांव की पहेलियों के विषयों को देखते ही लोक-जीवन के परिचित विषयों से वे बने हैं ऐसा ज्ञात होता है ।

सूर्य-चन्द्र, वर्ष-मास, दिन-समय, नदी कुआं, गाय, भैंस, बैल, गेहूं, धान, मक्का, तुलसी, हल्दी, प्याज, मिर्च, नीम, बबूल, आम, दीपक, लाठी, सांकल, मूसल, चक्की, तवा, कढ़ाही, लोटा, कुम्हार, हथौड़ा, रहट, कोल्हू,

कहार, डोली, कंघी, हुक्का, चिलम, झूला, चरखा, रुपया, पैसा - आदि जीवन से सही सम्बंधी हर बात और चीज़ों से ये संबन्ध रखते हैं ।

भड्डरी की कहावतों को भी सारे भारत में आज, लोक-कवि, अपनाते हैं इन कहावतों और पहेलियों के स्वरूप और उनमें निहित जीवन के गूढ़ तत्वों को देखकर यह अनुमान लगाना कठिन है कि हिन्दी में इसका प्रचार और प्रादुर्भाव कबसे और किस रूप में हुआ । मूलरूप में यह लोकोक्तियाँ, पहेलियाँ, बुझौवल और ढकोसले, आदिम सभ्यता के प्रतीक हैं, कालान्तर में प्राप्त हो गया होगा । हिन्दी के प्रारंभिक युग में जिन प्रवृत्तियों का आभास होता है, उनमें लोक जीवन और लोक साहित्य के अनेक तत्वों का समावेश हो जाता है । लोक-साहित्य का यह विकास आगे चलकर हिन्दी की प्रत्येक बोलियों में लोक-काव्य - में मुखरित हुआ है । उनकी ओर अग्रसर करने को यह अध्याय सहायक है ।

इस सन्दर्भ में, हिन्दी प्रदेश की प्रत्येक बोलियों में इस विषय पर हो गयी और होनेवाली खोज, व अध्ययन का एक छोटा विवरण करना सहायक होगा । इस उद्देश्य से, बोलिगत क्षेत्रों में हुई बातों की एक रूप रेखा यहाँ प्रस्तुत करना चाहता है । इस से भी अधिक प्रयास इस विषय में हुआ होगा, लेकिन जो रचनाएं प्राप्त हैं उनके आधार पर यह विचार प्रस्तुत करता है ।

<u>हिन्दी के लोक काव्यों का इतिहास</u>

हिन्दी प्रदेश के अन्तर्गत आनेवाले विभिन्न जनपदीय बोलियाँ, राजस्थानी, ब्रज, अवधी, मैथिली, मगही, बुन्देली, छत्तीसगढ़ी, कौरवी, भोजपुरी कनौजी आदि इन बोलियों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है[1] ।

---

1. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास-सोलह भाग - पृ.31 से 46 तक

राजस्थानी

स्थानीय प्रवर्तकों के प्रयत्न से राजस्थानी के लोक साहित्य संग्रह का जो प्रयत्न हुआ, वह छुट पुट कार्य ही कहा जा सकता है। देशीय स्तर पर राजस्थान के लोक गीतों व कविताओं का संग्रह करके प्रकाशित करने का श्रेय, श्री सूर्य करण पारीक जी का है। राजस्थान के पृथक पृथक जनपदों में भी इस ओर थोडा प्रयत्न हुआ है। मालवा, भीलवाडा, मारवाड, मेवाड, हाडौत नागौड आदि जनपदों के लोक गीतों के छोटे संग्रह प्रकाशित हुए हैं। परन्तु राजस्थान के समग्र स्वरूप को उभार कर सामने लानेवाले लोगों में श्री कन्हैयालाल सहल का नाम प्रमुख है। उन्होंने राजस्थानी कहावतों पर सर्वप्रथम, शोध प्रबन्ध लिखा। अन्य विधाओं पर भी आपका ध्यान पूर्णतया लगा गया है। श्री नरोत्तम दास स्वामी, श्रीरामसिंह आदियों ने भी राजस्थानी लोक साहित्य पर अपना महत्व पूर्ण कार्य किया है। सूर्य करण परीक का "राजस्थानी लोक गीत" अलग - प्रकाशित हुआ है। राजस्थान के ग्राम गीत दूसरा एक ग्रन्थ पारीक स्मारिका के रूप में प्रकाशित हुआ। श्री ताराचन्द ओझा का संपादित मारवाडी स्त्री गीत संग्रह भी इस क्षेत्र में ध्यान देने योग्य कार्यों में आता है।

लोक-कलामण्डल नामक एक संस्था राजस्थान में है - जिसका संचालक श्री देवीलाल सामर है - जिसने लोक साहित्य के प्रश्रय करने में महत्व पूर्ण कार्य किया है। इन्होंने लोक-साहित्य के विभिन्न विधाओं में आलोचनात्मक एवं परिचयात्मक पुस्तकें प्रकाशित करायी हैं। इस का मुख पत्र संग्रहालय लोक नाट्य के प्रदर्शन आदि आकर्षक कार्यक्रम हैं।

---

1. लोक साहित्य - सिद्धान्त और प्रयोग - डॉ॰ श्रीराम शास्त्री पृ॰44

श्री॰ महेन्द्र भानावत, महेन्द्र भानावत आदि शोध कर्ताओं ने भी इस दिशा में महत्व पूर्ण कार्य किया है । इसी प्रकार राजस्थानी लोक-साहित्य क्षेत्र में सराहनीय कार्य हो रहा है ।

ब्रज भाषा में

ब्रज लोक-जीवन की मधुराधिका है । राधाकृष्ण की प्रेम लीलाओं तथा गोपियों के साथ रासलीला करने की रंगस्थली है यह । इस कारण से यहाँ लोक-गीतों की प्रचुरता को स्वाभाविकता है । ब्रज के लोक साहित्य प्रवर्तकों में डॉ॰ सत्येन्द्र का नाम मुख्य है । उनकी ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन वाली रचना एक प्रामाणिक ग्रन्थ है । डॉ॰ वासुदेव शरण अग्रवाल का नाम इस क्षेत्र में अधिक स्मरणीय है कि उन्होंने पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन कराके उस में ब्रज के लोक साहित्य कला, संस्कृति आदि का विस्तृत विवरण उपलब्ध करने का अवसर दिया । ब्रजमधुधारा के प्रकाशक कृष्णदत्त वाजपेयी का नाम भी इस सन्दर्भ में स्मरणीय है । उन्होंने ब्रज-लोक साहित्य पर अच्छा काम किया है । ब्रज-भारती शोध पत्रिका में अनेकों मौलिक लेख आया था । डॉ॰ चन्द्रभान रावत ने भी ब्रज के लोक साहित्य एवं ब्रज बोली पर पर्याप्त मात्रा में प्रकाश डाला । आदर्श कुमारी यशपाल के द्वारा ब्रज की लोक कथाएं नामक पुस्तक प्रकाशित करायी गयी । श्री॰ प्रभुदयाल मीतल ने ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास लिखकर ब्रज की लोक वार्ता पर प्रचुर मात्रा में प्रामाणिक सामग्री दी है । ब्रज के लोक गीतों के विकासात्मक रूप का अध्ययन करनेवाले, डॉ॰ कुलदीप ने अपने शोध प्रबन्ध के द्वारा एक नयी दिशा का उद्घाटन किया । लोक गीतों के रूपात्मक अध्ययन की दिशा में यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है । कितगंधी मथुरा वाली रचना ब्रजभाषा की अमूल्य निधि है । डा॰शरण बिहारी गोस्वामी, डॉ॰ विजयेन्द्र स्नातक, डा॰अंबाप्रसाद सुमन आदि विद्वानों ने भी इस लोक साहित्य का यथेष्ट, प्रचार किया । डॉ॰ अंबाप्रसाद "सुमन" ने ब्रज के लोक साहित्य एवं संस्कृति के क्षेत्र में सच्चे पृथ्वी पुत्र के रूप में काम किया ।

लोक गीतों की सामान्य प्रवृत्तियाँ, रूढ़ियाँ, गायन पद्धतियाँ एवं उनके इतिहास आदि की खोज के विशेष संदर्भ पर भी थोड़ा थोड़ा कार्य हुआ है । हिन्दी विद्यापीठ आग्रा से श्रीमती आशा शर्मा ने ब्रज क्षेत्र के व्रतानुष्ठान की कहानियों पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया है ।

इस प्रकार ब्रज क्षेत्र के लोक साहित्य पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा है। किन्तु लोक संस्कृति को शिष्ट संस्कृति की आधारशिला मान लेने का प्रयत्न कहीं भी नहीं हुआ पाया है । अगली पीढ़ी का प्रयत्न इसओर आशा की ज्वाल जगेगी ।

अवधी

अवधी का क्षेत्र शिष्ट साहित्य की दृष्टि से अधिक महत्व पूर्ण होते हुए भी लोक साहित्य में उतना महत्व पूर्ण कार्य नहीं हुआ है । डॉ॰ बाबूराम सक्सेना ने अवधी की लोक बोली का अध्ययन प्रस्तुत किया था । श्री इन्दु प्रकाश पाण्डेय ने अवधी लोक गीतों का संग्रह किया । गीतों की ऐतिहासिक परंपरा का भी उन्होंने अध्ययन किया । श्री सत्यव्रत अवस्थी ने भी इसी प्रकार कुछ अवधि लोक गीतों का संकलन किया था, जो सिहाग रागिनी शीर्षक से प्रकाशित हुआ । इसके अतिरिक्त डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय द्वारा प्रकाशित अवधी लोक गीतों का एक संग्रह भी प्रकाश में आया । डॉ॰ त्रिलोकी नारायण दीक्षित, ने भी अवधी के समग्र लोक साहित्य एवं उसकी विविध विधाओं के संग्रह संकलन के अतिरिक्त अवधी के लोक साहित्य एवं उसकी विवेचनात्मक अध्ययन अवधी और उसका लोक साहित्य शीर्षक ग्रन्थ में लिया । हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास में सत्यव्रत अवस्थी ने जो विवरण अवधी लोक साहित्य पर किया है वह भी, ध्यान देने योग्य कार्य है । लोक काव्य के क्षेत्र में लोक गाथा और लोकगीत - दोनों काव्य रूपों का विस्तृत व्याख्या एवं अध्ययन आपने किया है[1] ।

1· लोक साहित्य - सिद्धान्त और प्रयोग - डॉ॰ श्रीरामशर्मा
हिन्दी के लोक साहित्य का इतिहास - पृ॰138

इसमें प्रत्येक लोक-गीतों का परिचय एवं उदाहरण दिया है । श्री॰अवस्थी ने अवधी के जनकवियों का जीवन वृत्त भी प्रस्तुत किया है । अभी हाल ही में नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली से डा॰ सरोजनी रोहतगी का "अवधी का लोक साहित्य शीर्षक शोध प्रबन्ध प्रकाशित हुआ है । इस शोध प्रबन्ध में अवधी के लोक साहित्य की सभी, विधाओं का अत्यन्त विस्तृत एवं वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । अवधी लोक साहित्य के क्षेत्र में भी नया नया प्ररोह फूटता आ रहा है । खोज अध्ययन की सीमा भी बढ़ती जा रही है ।

बुन्देल खण्डी

समस्त हिन्दी प्रदेशों की तुलना में बुन्देली लोक साहित्य का अपना महत्व पूर्ण स्थान है । इस क्षेत्र में कई विद्वानों का खोजपरक परिश्रम हुआहै । श्री॰ कृष्णानन्द गुप्त ने इस क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है । उन्होंने यहाँ लोक वार्ता परिषद की स्थापना करके लोकवार्ता नामक पत्रिका चलायी । इस पत्रिका में बुन्देली लोक साहित्य से संबन्धित कई निबन्ध प्रकाशित हुए । ईसुरी की फागें नामक फाग गीतों का पुस्तक भी प्रकाशित हुआ । श्री॰शीपुत गुप्त ने अन्य पत्र पत्रिकाओं में कई लेख प्रस्तुत किये । श्री॰ बनारसी दास चतुर्वेदी ने अपनी "मधुकर" नामक पत्रिका में बुन्देली लोक साहित्य के प्रचरण का अच्छा प्रयत्न किया । श्री॰ शिवसहाय चतुर्वेदी ने बुन्देली लोक गीतों के साथ साथ बुन्देली लोक कथाओं का भी प्रकाशन किया । गौने की विदा, पाषाणनगरी, बुन्देल खण्ड के लोकगीत, आदि आपकी ही संपादित गीत हैं । श्री॰ श्रीचन्द्र जैन की छोटी छोटी लोक साहित्य रचनाएं भी प्रकाशित हुए हैं । बुन्देली का फाग साहित्य नामक और एक पुस्तक श्री श्यामसुन्दर बादल का प्रकाशित प्राप्त है । स्व॰ डा॰वासुदेव शरण अग्रवाल की जनपद कल्याणी योजना भी इस ओर प्रकाश डालने वाली पत्रिका थी । बुन्देल खण्ड की संस्कृति और साहित्य नामक पुस्तक में भी इस प्रदेश के जनसाहित्य का थोड़ा संपादन प्राप्त ।

इस कृति में लोक साहित्य के अध्ययन की शास्त्रीयता का आरंभ प्राप्त हुआ है । अभी अभी डॉ॰ शालिग्राम गुप्त जी ने ब्रज और बुन्देली लोक गीतों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इन में प्राप्त कृष्ण कथा के मूल स्रोतों का अध्ययन किया है । बुन्देली लोक काव्यों का प्रबन्धात्मक रूप इस ग्रन्थ के माध्यम से सामने आया है ।

छत्तीसगढी

छत्तीसगढी लोक साहित्य के संग्रह कार्यकर्ताओं में श्री श्यामा चरण दुबे का नाम प्रथम गणनीय है । उन्होंने छत्तीस गढी लोक गीतों का परिचय[1] नामक ग्रन्थ लिख कर इस प्रदेश के लोक गीतों को प्रकाश में लाने का स्तुत्य प्रयास किया है । फील्ड साँग्स ऑव छत्तीस गढी[2] नामक अंग्रेज़ी पुस्तक भी आप की है । डॉ॰ वेरियर एलविन नामक पाश्चात्य मानव विज्ञान शास्त्री के द्वारा - फोक साँग्स ऑव छत्तीस गढी नामक पुस्तक प्रकाशित किया गया । डॉ॰ एलविन का यह ग्रन्थ, प्रामाणिक है । इस में गीतों का अंग्रेजी अनुवाद भी प्रस्तुत किया गया है । डॉ॰ एलविन ने फोक टेल्स ऑव महाकोशल" नामक कथा संग्रह भी प्रस्तुत किया । श्री चन्द्रकुमार ने छत्तीसगढ की लोक कथाओं का संकलन बच्चों केलिए किया है[3] । हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास चौथा भाग के अन्तर्गत छत्तीसगढी लोक साहित्य का परिचय प्रस्तुत करनेवाले विद्वान दयाशंकर शुक्ल का नाम भी इस सन्दर्भ में स्मरणीय है । सन् 1955 ई॰ में रायपुर में छत्तीसगढी शोध संस्थान नामक संस्था की स्थापना हुई है जहाँ से, छत्तीसगढी पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ है । रायपुर और जबलपुर विश्व-विद्यालयों से हाल में कई शोध प्रबन्ध भी छत्तीस गढी लोक साहित्य पर लिखे हैं[4] ।

1• छत्तीसगढी लोक गीतों का परिचय - ई॰1940

2• Field songs of gohathis.

3• आत्माराम आण्ड सन्स, नई दिल्ली

4• कोई भी शोध प्रबन्ध प्रकाशित रूपमें अब भी प्राप्त नहीं है ।

उन्होंने भी छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का विस्तृत परिचय हिन्दी जगत के समक्ष प्रस्तुत किया है ।

मालवी

मालवी लोक साहित्य क्षेत्र में खोजपरक प्रयत्न जारी रहा है । डॉ॰ श्याम परमार ने मालवी लोक गीत का संपादन कर एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति की है । आपने लोक-नाट्य लोक कथा आदि अन्य क्षेत्रों में भी अपनी अथक परिश्रम से ज्योति जलायी है । डॉ॰ चिंतामणी उपाध्याय ने भी मालवी लोक साहित्य का अध्ययन नामक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके महान कार्य किया है । इस प्रबन्ध में उन्होंने मालवी लोक साहित्य का सांगोपांग विवेचन, प्रामाणिक रूप में किया है । श्री॰ रत्नलाल मेहता ने मालवी कहावतों का संकलन किया है । मालव लोक साहित्य परिषद नामक संस्था[1] ने जो उज्जयिनी में है - मालवी लोक साहित्य के संकलन, संग्रहन, अध्ययन आदि कार्यों में, यथावत् प्रेरणा दी थी, लेकिन, श्यामपरमार जैसे व्यक्तियों के अकेले के परिश्रम की समकक्षता में उनका प्रयत्न सराहनीय नहीं ।

कौरवी

कुरु जनपद खड़ी बोली का जन्म क्षेत्र माना जाता है । इस प्रदेश की बोली को कौरवी एवं खड़ी बोली दोनों नाम प्राप्त है । कौरवी लोक साहित्य के प्रवर्तकों में प्रथम नाम पं॰राहुल सांकृत्यायन का है, जिन्होंने कुरुदेशों के लोक गीतों का संग्रह न आदि हिन्दी के गीत और कहानियाँ नाम से प्रकाशित किया राहुल जी ने इन गीतों को एक बुढ़िया के मुँह से सुनकर लिपिबद्ध किया था । इस क्षेत्र के लोक साहित्य के संग्रह संकलन की दिशा में अन्य मुख्य नाम, दो महिलाओं सीतादेवी, दमयंती देवी - का है, जिन्होंने कुछ कुलरित्त मणियाँ" शीर्षक पुस्तक में इस प्रदेश के लोकगीतों का प्रकाशन किया ।

1. इस संस्था के प्रवर्तकों ने लोक साहित्य का क्षेत्र विस्तृत किया है ।

श्री० कृष्णचन्द्र शर्मा ने हिन्दी साहित्य के बृहद् इतिहास में कौरवी लोक साहित्य का परिचय देकर अपना नाम अमर बनाया है । कुछल पद के लोक कवियों के जीवन वृत्त का परिचय भी उन्होंने ही दिया है । अभी के०एम० मुन्शी विद्यापीठ, आगरा से श्रीमती के०सी० त्यागी ने वर्गीय तुलनात्मक अध्ययन के रूप में बुलन्द शहर के संस्कार गीतों पर काम किया है । इस क्षेत्र के लोक साहित्य पर मेरठ विश्वविद्यालय में कई शोध प्रबन्ध भी प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

मगही

मगही का लोक-साहित्य का संकलन कार्य अधिक मात्रा में नहीं हुआ है । बिहार मगही मंडल [पटना] के द्वारा थोड़ा प्रयत्न हुआ है । बिहान नामक मासिक पत्रिका मगही बोली में प्रकाशित हुआ था । हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास में पं० श्रीकान्त शास्त्री एवं संपत्ति आर्याणी का नाम - इस विषय से जुटे प्राप्त हैं । राष्ट्रभाषा परिषद् बिहार ने भी मगही के हजारों लोक गीतों का संग्रह कार्य किया है । इन्होंने लोक कथाओं का संकलन भी किया है । बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् ने मगही के संस्कार गीतों नामक पुस्तक का प्रकाशन किया । श्री० श्रीराम प्रसाद सिंह पुंडरिक ने पुंडरीक रत्न मालिका का प्रकाशन अपनी ओर से किया[1] । मगही नामक एक मासिक पत्रिका सन् 1955 में प्रकाशित किया गया । इसी प्रकार मगही क्षेत्र में लोक साहित्य की ओर जो झुकाव हो रहा है वह वांछनीय है ।

मैथिली

मैथिली लोक साहित्य के संग्राहकों में श्री राम इकबाल सिंह का नाम प्रातस्मरणीय है । हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास सोलह भाग में से भी आपका नाम छूटा गया है ।

1. पुंडरीक - रत्न - मालिका - सन् 1952

डॉ॰ जयकान्त मिश्र ने अपने डीफिल ग्रन्थ मैथिली साहित्य का इतिहास में मैथिली लोक साहित्य का परिचय दिया है । मैथिली साहित्य परिषद, [प्रयाग] का भी इस ओर थोड़ा सराहनीय काम हुआ है । उस संस्था का प्रथम उद्देश्य मैथिली लोक साहित्य की परिरक्षा थी । राष्ट्रभाषा परिषद बिहार ने भी इस ओर प्रयत्न किया । डॉ॰ उदय नारायण तिवारी ने अपने साहित्येतिहास में मैथिली लोक - साहित्य का वैज्ञानिक तथा प्रामाणिक विवेचन प्रस्तुत किया है । कुछ नये विद्वानों ने भी शोध परक दृष्टि से मैथिली लोक साहित्य का अध्ययन प्रस्तुत किया है । मैथिली लोक गीतों का अध्ययन नामक शोध प्रबन्ध नागपुर विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत है । डॉ॰ तेजनारायण लाल, शास्त्री का यह शोध प्रबन्ध 1962 में विनोद पुस्तक मन्दिर ने प्रकाशित किया। और भी, कुछ शोधार्थी इस क्षेत्र में काम कर पाये हैं । उनकी भी इस क्षेत्र की देन, महत्वपूर्ण है ।

भोजपुरी

भोजपुरी के लोक साहित्यकारों में श्री संकटा प्रसाद का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने भोजपुरी ग्राम्यगीत नामक पुस्तक प्रकाशित की । उसके बाद इस क्षेत्र में सर्वादरणीय नाम डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय का है । हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास सोलहवाँ भाग भूमिका के लेखक के अतिरिक्त, भोजपुरी लोक गीतों के संग्रहकार के रूप में भी आप का नाम जुटा हुआ है । डॉ॰ उदय नारायण तिवारी, दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह, आदियों का नाम भी इस समय उल्लेखनीय हैं । डॉ॰ उपाध्याय की लोक साहित्य की भूमिका लोक साहित्य की सैद्धान्तिक विवेचन करनेवाली पुस्तक है । आपकी कृति का एक दोष यही बता सकता है कि

---

1. Misra Jaya kanth - Introduction to the Folk literature of Mythili, Part I & 2 Allahabad University, 1950-51

2. Sir Grierson - An Introduction to Mithili language of North Bihar.

आपने जहाँ भी उदाहरण दिये है सब भोजपुरी लोक गीतों से ही चुने हैं। ऐसा उदाहरण अन्य बोलियों के संबन्ध में लागू नहीं होता। लोक साहित्य की भूमिका में डॉ॰ उपाध्याय ने लोक साहित्य के स्वरूप तथा सिद्धान्त का गंभीर विवेचन किया है। भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन नामक रचना उन्होंने बडे अध्यवसाय लगन एवं परिश्रम से की है। इस में भोजपुरी जन जीवन से संबन्ध रखने वाले समस्त विषयों का विवेचन बडी सतर्कता से किया है। इस बृहद् ग्रन्थ में -

भोजपुरी जनता के आचार विचार

रहन सहन,

रीति रिवाज,

अंधविश्वास, टोना टोटका, भूत-प्रेत, ताबीज गंडा, डाइन भूतिन, देवी देवता, धर्म कर्म - आदि विषयों की सांगोपांग मीमांसा प्रस्तुत की गयी है। इसे भोजपुरी जन जीवन का विश्वान कोश - समझना चाहिए।

भोजपुरी लोक संगीत पर भी, डॉ॰ उपाध्याय ने एक पुस्तक लिखी है। भोजपुरी लोक-गाथा नामक ग्रन्थ पर डॉ॰ सत्यव्रत सिन्हा ने शोध परक अधिकारिक ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ में अनेकों लोक गाथाओं का वर्गीकरण और अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

डॉ॰ उदयनारायण तिवारी का भोजपुरी भाषाऔर साहित्य, राहगीर का संपादित भोजपुरी गीत और गीतकार भी ध्यान देने योग्य कार्य है।

कनोजी

कनौजी लोक साहित्य के संग्राहक और अध्येताओं में भी संत राम अनिल का नाम छाया हुआ है। बृहत् इतिहास में अनिल ने ही कनौजी लोक

साहित्य का परिचय प्रस्तुत किया है । कनौजी लोक गीत नामक और एक पुस्तक भी उन्होंने ही प्रकाशित किया । इस पुस्तक में कनौज का संक्षिप्त इतिहास, भौगोलिक परिचय, कनौजी भाषा और उपभाषाओं का विवेचन भी किया है । कनौजी लोक गीतों में अभिव्यक्त कनौजी लोक संस्कृति का विस्तृत अध्ययन भी उसमें किया गया है । विद्वान लेखक ने इस जनपद के लोक गीतों का साहित्यिक मूल्यांकन भी प्रस्तुत किया । इस विवेचन से हम देख सकते हैं कि हिन्दी-जनपद की विभिन्न बोलियों के लोक साहित्य के संग्रह संकलन का कार्य जिस गति से हुआ है, उससे कहीं अधिक क्षिप्र गति से इन जनपदीय बोलियों के लोक साहित्य का अनुसंधानात्मक अध्ययन किया जा रहा है इस शोध कार्य की दिशा में डॉ॰ वासुदेव शरण अग्रवाल, धीरेन्द्र वर्मा, उदय नारायण तिवारी, डॉ॰ सत्येन्द्र, डा॰कृष्ण देव उपाध्याय डा॰ श्याम परमार आदि भारतीय विद्वानों का नाम प्रथम गणनीय हैं । इन महाशयों ने अनेकों अनुसंधित्सुओं को प्रेरणाएं देकर शोध कार्यों में प्रवृत्त भी किया है । इसी का सुपरिणाम है कि हिन्दी प्रदेश की विभिन्न बोलियों के लोक साहित्य और यहां तक कि इसकी विभिन्न विधाओं पर शोध कार्य हुए है और आज भी हो रहे है ।

यद्यपि हम यह नहीं कह सकते हैं कि हिन्दी के लोक साहित्य के क्षेत्र में अत्यंत प्रशंसनीय कार्य हुआ है । एक महत्व पूर्ण कार्य यह है कि हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास सोलहवाँ भाग है ।

हम इस नींव पर खड़े रह कर इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि इस क्षेत्र में लोक साहित्य अध्ययन का भविष्य उज्ज्वल और उत्तरोत्तर उज्ज्वलतम होगा ।

लोक साहित्य के संग्रह संकलन एवं वैज्ञानिक वर्गीकरण प्रथम कार्य है। अध्ययन का स्तर भी वैज्ञानिक होना चाहिए। ऐसे निष्कर्ष भी निकाले जाने चाहिए कि हमारे साहित्य की जड़ें लोक साहित्य पर जमी हैं। कहने का तात्पर्य ही यह है कि शिष्ट साहित्य का जन्म लोक साहित्य से माना जा सकता है।

इस अध्याय में हमने लोक साहित्य विधा के समस्त गेय रूपों के सिद्धांतों पर विचार विमर्श किया है। लोक साहित्य की परंपरा और हिन्दी की समस्त बोलियों में प्राप्त लोक साहित्य संबन्धी प्रयत्नों का परिचय भी पाया है लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य की भिन्न विधाओं के इस अध्ययन के बाद हम भिन्न बोलियों में प्राप्त लोक गीतों पर विचार कर सकते हैं

तीसरा अध्याय

हिन्दी की विभिन्न बोलियों का लोक गीत-संक्षिप्त सर्वेक्षण

"लोक काव्य की परंपरा समय की सीमा के परे होती है, यद्यपि युगीन प्रवृत्तियों का आभास अंशतः उसमें रहा करता है"।[1] आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के इस विचार को मन में रखकर हिन्दी लोक काव्यों की परंपरा और उसके भेद प्रभेदों का अध्ययन करने का प्रयास आगे किया जायगा हिन्दी प्रदेश के अन्तर्गत आनेवाले विभिन्न जनपदों की बोलियों में प्राप्त लोक काव्यों का इतिहास जानने के साथ साथ उसके स्वरूप का परिचय प्राप्त करना भी अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से सभी बोलियों का परिचयात्मक अध्ययन विद्वानों ने किया है। उसके आधार पर प्रस्तुत प्रयास यह रहा कि एक तो विभिन्न बोलियों के लोककाव्य पर कार्य करनेवाले विद्वानों के विचारों का उसमें समावेश हो जाय और दूसरे लोक काव्य का साधारण अध्येता भी एक ही स्थान पर उस बोली के लोकाव्य का परिचय अर्जित कर सके। हिन्दी प्रदेश की लोक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि एक सी ही है

---

1. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी - स्वस्ति कथन [भूमिका]
महाराष्ट्र का हिन्दी लोककाव्य - पृ. 1

हिन्दी के लोककाव्य कई बोलियों में फैले हुए हैं । इसलिए प्रत्येक बोली में प्राप्त लोक काव्यों का निरीक्षण अत्यंत आवश्यक है । महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास {सोलह भाग जो लोकसाहित्य खंड है} में तीस बोलियों में प्राप्त लोक साहित्य पर विचार किया है । उन्होंने हिन्दी की बोलियों को सात समुदायों में बाँटा है[1] । वे हैं मागधी समुदाय, अवधी समुदाय, ब्रज समुदाय, राजस्थानी समुदाय, पंजाबी समुदाय, पहाडी समुदाय और कौरवी समुदाय । प्रत्येक समुदाय तथा प्रत्येक बोलियों में उपलब्ध लोककाव्यों का विशेष अध्ययन भी हुआ है । राहुल जी ने हिन्दी भाषी प्रदेशों की विभिन्न बोलियों को चार समुदायों में यों वर्गीकृत किया है :-

{1} मागधी समुदाय[2]

{अ} मैथिली {आ} मगही {इ} भोजपुरी ।

{2} अवधी समुदाय

{अ} अवधी {आ} बघेली {इ} छत्तीसगढ़ी ।

{3} ब्रज समुदाय

{अ} बुंदेली {आ} ब्रज {इ} कन्नौजी ।

{4} राजस्थानी समुदाय

{अ} राजस्थानी {आ} मालवी

---

1. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास सोलह भाग भूमिका - पृ.26
2. वही

कौरवी, पंजाबी और पहाड़ी समुदाय भी बीओ भाग में आते हैं ।
तोभी यहाँ हिन्दी प्रान्तों की बोलियों पर ही विचार किया जायगा । यही कौरवी तक स्वीकृत है । पंजाबी और पहाड़ी पर सूचना मात्र दिया है ।
भारतीय संविधान में पहले चौदह भाषाओं को प्रधानता दी गयी है - संस्कृत, उर्दू, असमी, बंगला, उड़िया, मराठी, तेलुगु, कन्नड़, तमिल, मलयालम, गुजराती, पंजाबी, काश्मीरी तथा हिन्दी ।

हिन्दी भाषा से तात्पर्य देवनागरी लिपि में लिखी जानेवाली साहित्यिक खड़ीबोली है जो बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश तथा हरियाना प्रदेश की राजभाषा है । इसका विस्तार उत्तर में शिमला से लेकर दक्षिण में रामपुर तक और पश्चिम में जैसलमेर से लेकर पूर्व में भागलपुर तक है । इस विशाल हिन्दी प्रदेश के अन्तर्गत ये बोलियाँ आ जाती हैं यथा (1) मैथिली (2) मगही (3) भोजपुरी (4) अवधी (5) बघेली (6) छत्तीसगढ़ी (7) ब्रज (8) कनौजी (9) बुंदेली (10) खड़ीबोली (या कौरवी) । हरियाणा, जयपुरी, हाड़ौती, मेवाती, मारवाड़ी, मेवाड़ी, गढ़वाली, कमायूँ और शिमला की बोलियाँ भी है, जिनको इस प्रबन्ध में स्थान नहीं दिया गया है ।

डॉ॰ ग्रियर्सन के भाषा संबन्धी वर्गीकरण में इन्हीं बोलियों को क्रमशः बिहारी, पूर्वी हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी और पहाड़ी भाषाओं में विभक्तकिया गया है । हिन्दी प्रदेश को वहाँ सीमित क्षेत्र केवल पूर्वी और पश्चिमी हिन्दी में बद रखा गया है । बिहारी बोलियाँ ग्रियर्सन के अनुसार हिन्दी क्षेत्र से बाहर की है ।

---

1. चौदह भाषाओं को ही पहले विधान में स्थान दिया था । अब बाईस प्रान्तीय भाषाओं को प्रधानता देते हुए प्रान्त पुर्नगठन हुआ है । इनमें हिन्दी भाषी प्रान्तों की संख्या अधिक है ।

डॉ॰ धीरेन्द्रवर्मा ने ग्रियर्सन के मत को अवैज्ञानिक तथा अस्वाभाविक बताते हुए भारतीय विधान के अन्तर्गत स्वीकृत हिन्दी प्रदेश को अधिक उचित माना है । इस दृष्टिकोण के आधार पर स्थानीय बोलियों में परस्पर एकता एवं दृढ़ता की भावना बढ़ेगी ।

ग्रियर्सन और सुनीति कुमार चाटर्जी दोनों के मत को पढ़ कर ही राहुल सांकृत्यायन ने अपने इतिहास की रचना की है । तोभी देवनागरी में लिखे जानेवाले सारी बोलियों में महत्वपूर्ण स्थान जिस किसी को दिया जा सकता है उसे भी प्रधानता देते हुए इस प्रबंध में इन बोलियों को चुन लिया है । अन्य सब को मिला के इस में स्थान दिया है ।

भारतीय संस्कृति की मूल भूत एकता के आधार पर इस अध्ययन के उपरान्त यह निष्कर्ष निकालना कठिन न होगा कि सभी जनपदों के लोक काव्यों की मूल प्रेरणा धारा एक सी है । जिसका उत्स है - भारतीय लोक संस्कृति । हिन्दी प्रदेश के अन्तर्गत जिन जनपदीय बोलियों के क्षेत्र आते है उनके लोक काव्यों का संक्षिप्त परिचय पूर्व से पश्चिम की ओर, इस क्रम से व्यवस्थित रूप में आगे बताया जायगा ।

पहले ही हमने इस प्रबन्ध में लोक साहित्य को स्थूल रूप में दो भाग में बाँट दिया था श्रव्य और गेय । गेय भाग को ही लोक काव्य नाम दिया गया है। इस लोक काव्य को भी मुक्तक और प्रबंध [गीत और गाथा] में बाँट दिया है । प्रत्येक बोलियों के लोककाव्यों को इस रूप परक विभाजन के क्रम से आगे प्रस्तुत किया जायगा । पहले गीत विधा का परिचय दिया है ।

मैथिली लोक गीत

मैथिली मिथिला प्रदेश की भाषा है । मिथला बिहार प्रान्त का वह भाग है जो गंगा नदी के उत्तर तथा भोजपुरी क्षेत्र के पूर्व है । प्राचीन काल में यह एक स्वतंत्र राज्य था[1] । इसका दूसरा नाम विदेह था । यहाँ के प्राचीन राजवंश का नाम भी यही था । सुप्रसिद्ध राजा जनक यहीं का राजा था[2] । [illegible] पुण्यश्लोका जानकी इसी मिथिला प्रदेश की पुत्री थी । इनका नाम भी मैथिली था । विदेह नाम का उल्लेख वेदों में भी पाया जाता है ।

पहले यह कह गया है कि मैथिली मिथिला निवासियों की भाषा है । डॉ॰ काल ब्रुक ने इस भाषा का उल्लेख अपनी पुस्तक में विस्तार से किया है[1] । इस भाषा का दूसरा नाम "तिरहुतिया (तिरहुति) है । यह देवनागरी लिपि में लिखी जाती है । श्रीराम इकबाल सिंह मैथिली लोक-साहित्य के मुख्य प्रवर्तक है । उनके अनुसार और डॉ॰ तेजनारायणलाल के अनुसार मैथिली लोकगीतों को संस्कार गीत, धार्मिक गीत, पेशों के गीत ऋतु गीत, नाच के गीत, सामाजिक गीत इस प्रकार विभक्त कर सकते है[2] ।

संस्कारगीत

सोहर - यह जन्म संस्कार का गीत है । दूसरा नाम सोहिया, सोहिल आदि है" । किसी घर में पुत्रजन्म के समय स्त्रियाँ एकत्रित होकर सोहर गीत गाती हैं । सोहर में श्रृंगार, हास्य और करुण रस के गीत आते है । पुत्रजन्म के अतिरिक्त मुंडन, उपनयन ऐसे अवसरों पर भी ऐसे गीत गाते हैं ।

---

1. भाषा विज्ञान - पृ॰310 फाइलेन, केलाग, ग्रियेर्सन आदि भाषा वैज्ञानिकों ने भी इस भाषा का विवरण दिया है । लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इन्डिया ।

2. डॉ॰ तेजनारायण लाल - मैथिली लोक गीतों का अध्ययन

एक सोहर गीत उदाहरण में नीचे दिया गया है ।

"अरे अरे प्रेम पिअरवा मरोखा चढि बोलल रे
ललना पिया मोरा गेलबिदसे बिदेसे गल्हा ओल रे ।

<u>विवाह के गीत</u>

मिथिला में विवाह गीत अधिक महत्व का है । सगायी के गीत से लेकर कंगन छुटने की क्रिया तक के गीत भिन्न शैली और ताल के हैं । विवाह संस्कार की ऋतु आने पर विवाह की बात पक्की करने की क्रिया पहले होती है । फिर तिलक लगाना, मंडप निर्माण आदि होते हैं । विवाह के बाद की क्रियाओं के भी अपना अपना गीत है । चतुर्थी, चुमौन, कबरी खोलना, पिअर बनाना आदि के भी गीत होते हैं । विवाह के बाद का समय [मधु-विधु] भी मधुर गीतों से बिताया जाता है । वर-कन्या के कार्य कलापों से सम्बन्धित कई गीत प्राप्त है । तिरहुति, जोग आदि इस विभाग में आते हैं ।

जोग का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है -

"हमरा क ऊंओ तेजब गुना होकब
जोग देब समधान अधिन कय राखब
एको पलक ऊंओ तेजब गुनहक ब
मुहन जोग मोर तेज सेज नहीं छाडब" ।

तिरहुति[1] विद्यापति से पूर्व भी मिथिला में तिरहुति गीत प्रचलित थे[2] । तिरहुति लोक गीतों में श्रृंगार रस का प्रभाव अधिक है ।

---

1. तीर भुक्ति का अपभ्रंश है तिरहुति ।
2. विद्यापति से पूर्व ज्योतिरीश्वर ठाकुर के वर्णरत्नाकर में तिरहुति गीतों का उल्लेख प्राप्त है - सुनीति कुमार चाटर्जी संपादित "तिरहुति गीत" पृ.23.63

जैसे :-

पिया अति बालक मैं तरुणि
कौन तप चुकलहे भेलहे जनि
पिय लेल गोदी कयचलल बजार
हटि आ क लोग पूछय केई तोहार ।
दे ओर ने मेरा न छोटा भाय
पूर्वलिखल छल स्वामी हमार ।

मैथिल कोकिल विद्यापति के प्रेमगीतों में तिरहुति लोककाव्यों का कुछ प्रभाव पड़ा है ।

बटगमनी[1]

यह त्योहार गीत है । उत्सव मेलों के समय स्त्रियाँ आँखों में काजल आदि सिर पर लहराते हुए बालों की चोटी गूथि हाथों में काँच की चूड़ियाँ पहने, धारेदार साड़ी का आँचल कमर में खोंसे एक नशीले लय में गाती हुई राह पर झुंड झुंड में दिखायी देती है । उनका गीत बटगमनी है हैं । एक गीत :-

"जगमग लोंग दुपत पहिरे सजनियाँ
पर पुरुष लुबधल जाय ।
साजीभरी फूल तोड़ल सजनियाँ
सेजहिं दय छिरि आय ।

इस गीत में अन्तःस्थल की टीस छिपी सी लगती है ।

1. बटगमनी का अर्थ है पथ पर गमन करनेवाली स्त्री । मिथिला में आज भी गली गली में बटगमनी गाती हुई चलनेवाली स्त्रियों का दृश्य सुलभ है ।

मटौती[1] -

यह मृत्युगीत है। दिवंगत आत्मा की स्मृति में गाये जानेवाला लोकगीत इस विभाग में आते हैं। एक मटौती गीत ऐसा है :-

"प्राण परम मोरा हृदय कठोर भेल,
आँखिया बाबर मोरा भेल
आँखिया बांदर मोरा भेल हे गोसइयाँ
जबे जम आयल दुआर" ।

प्राय: किसी प्रिय व्यक्ति के निधन के अवसर पर करुण रस का यह गीत गाया जाता है।

धार्मिक संस्कार के गीत - धर्म से संबन्ध रखने वाले कई गीत मिथिला में प्रचलित है।

छठ के गीत -

वैदिक काल से ये गीत प्रचलित मानते हैं। सूर्य षष्ठीव्रत के अवसर पर यह गीत गाये जाते हैं। षष्ठी व्रत का लोक शब्द है छठी। मिथिला में यह एक सामूहिक त्योहार है। इसमें बड़ी निष्ठा के साथ गीत गाते हैं। एक छठी गीत -

"बेरि बेरि बरजह दीनानाथ हे
बाबा हे सिरिया जनमजनि देहु
बाबा हे सुरति बरुन जनि देह

---

1. केरल के आदिवासी स्त्रियों के मटौती गीत हृदयविदारक है
के॰ पानूर केरलत्तिल आफ्रिका - पृ॰177

पुरुष अमरत्व जय दीहु दीनानाथ हे ।
बाबा हो सोलिन मउत जनि देहु
मउलिन मउतजनि देल दीना नाथ हे" ।

यह बहुत प्राचीन गीत है[1]। इसमें सूर्यदेव की स्तुति होती है ।

भावनी के गीत

यह देवी अंबिका की स्तुति है । हर शुभ अवसर पर यह गीत गा सकते हैं ।

"आनंद आनंद माँ के आनंद मनेवनि है
कहना आसन, कहना बासन
कहना भिज पोपारी है ।
है गंगा आसन गंगा बासन
तिरशुलनिज पोपारी है" ।

घरों में पूजा के समय भी यह गीत गाते हैं ।

महेशवाणी गीत -

यह नचारी विभाग में आता है[2]। ये शिवपूजा के गीत है ।

---

1. अथर्ववेद संहिता में सूर्य और चन्द्र का नाम आया है । दोनों को ब्रह्मा की आँखों के रूपों में माना गया है ।
यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः अथर्ववेद - 7.32/34
2. "नचरी" शिवताण्डव - की स्मृति पैदा करनेवाला नृत्तगीत माना जा सकता है । नचरी, नटरी नटारी - आदि इस गीत का नाम है । तमिल में "नटारी" नटराज - नृत्य से संबन्ध रखनेवाला गीत माना जाता है। इस विषय पर आगे भी थोडा परामर्श आ जाता है ।

विद्यापति के समय से बहुत पहले ही मिथिला में ऐसे गीतों का प्रचलन था । ये गीत प्रायः हर समय गाये जा सकते हैं । गीत ऐसा है -

"टुटली ओ फाटली मरैया देखल माहीकल हे ।
ताहि तर जोगी एक आमेल, गौरा दय ठार भेरी हे ।
मांगि-चांगि, लेला महादेव, तामाकुमि खाम हे ।
बाघ-छाल देलनि सुखाय, बसहा कुजि लायल हे ।

नचारी हर विभाग के लोग समान भाव से गाते जाते हैं ।

माता शीतला के गीत

शीतला चेचक की माता मानी जाती है । उनकी प्रसन्नता से रोग बाधा दूर हो जायगी यह विश्वास आज भी समाज में है । इन गीत को "पचनीया" गीत भी कहते हैं । उदाहरण में एक गीत -

"कोने बन में आगे कोइलि जे कुहुकि गेल,
कोने बन में बाजय मयूर | मैया शीतला
कोने बन में बाजय मयूर |
आमक बन में आगे मइया,
कोइली ने कुहुकि गेल, फ्रिज बन में बाजय मयूर ।
हरिनी माटले मइया, बटेर हबो ने मार ले" ।

---

1. शीतला के गीत के क्रम का "चेचक" गीत या [चेचकी] केरल में भी प्राप्त है । भद्रकालीप्पाट्टु उनकी एक विधा है । "कोडुं-ङल्लूरम्मा" - चेचक की माता मानी जाती है ।

नदी के गीत[1]

आदिम युग से लेकर मानव जीवन के आधुनिक पक्ष तक चली आनेवाली क्रियाकलापों में एक है नदी के गीत । प्रथम मानव ने आत्मरक्षा के लिए प्रकृतिपूजा की थी । उस परंपरा का गीत है नदी पूजा का गीत एक उदाहरण देखिए :-

कमजोरि विनती करइ छी गंगा माइ,
एक बेर दरसन देख ।
दरसन दय मन परसन केलई
अपना सरन राखि लेब ।
गोरीजे लूल नमिह शिव डर हर पर,
शिवजी सुतम कैलास ।

मिथिला के लोग आज भी गंगा माता की पूजा करते हैं । उनके दिल में यह विचार है कि गंगामाता उनका सर्वस्व है ।

सांपपूजा के गीत[2]

सांपपूजा मिथिला में आज भी चलती है । इस विषय पर कई गीत प्राप्त है । ये गीत अति प्राचीन माना जाता है । मिथिला में श्रावण पंचमी को सांप पूजा होती है । इस दिवस को नागपंचमी नाम है । एक सांप गीत देखिए :-

---

1. प्रिमिटीव कल्चर जॉन एक बारम - पृ.277
2. केरल में जो सांप नृत्य होताहै उसके गीत और मिथिला में प्रचलित सांप गीत समान हैं ।

"मोहरा भइया नहि, माहेरा भइआ संसाइ
मंगो मि अइ ।
गहबर बनोमि अइ हे ।
आहे कुम्हरा भइया नहि,
कुहरा भइया मंदीप मंगमि अइ,
सांझो मे देमि अइ हे" ।

एक विशेष जाति की स्त्रियाँ[1] सापपूजा के दिन मिथिला में मनौती रखती हैं । वे घर घर में घूमकर यह गीत गाकर पूजा संपन्न करती हैं ।

बरगमगीत[2]

जब कोई मर जाता है तो उसकी आत्मा किसी अन्य व्यक्ति में प्रवेश करके बजाने गाने लगती है । इसीस क्रिया को बरगम कहते हैं । मिथिला की मामूली जनता में आज भी यह विश्वास होता है । बरहम बनने की क्रिया के समय बरगम की स्तुति में जो गीत गाया जाता है उसका बरगम गीत नाम है ।

"तोरा भरोसे तहे ब्रह्म ।
काली अराधनी
रखि हे सरम्मा के लाज ।
पूरब मनइ हे मनुआँ मुकला ।
उत्तर मनइ हे पाँचों पट्टीनाथ ।
दखिन त मनइ हे ब्रह्म । गंगाजमुनाम,
पछिम मनइइ मीर सुलतान ।"

1· केरल में इस जाति का नाम "पुल्लुवर" है ।

2· मलयालम में उल्लूर ने ऐसे गीतों को बाधा गीत कहा ।

झिझिया के गीत[1]

ये गीत दीपावली के त्योहार के समय ताल और नृत्य के साथ गाये जाते हैं। घड़े की पेंदी में छेद करके उसे सी कर माथे पर रखते हैं। फिर नृत्य और गीत होता है। गीत ऐसा है -

"केकरा कोठिया में दािल चाउर है,
केकरहि कोलुहुआ में तेल ?
बाबा के कोठिया में दालि चाउर है,
तेलि अबाके कोल्हुआँ मे तेल" ।

औरतों को जादू-टोने के मंत्रों से बचाने के लिए और डाइन को भटकाने केलिए ये गीत गाये जातेहैं।

इस विधा में जालका के गीत, काली बन्नी, झरने के गीत आदि भी आते हैं। ये सब अंधविश्वासों से भरे होते हुए भी साल भर पूजा पाठ के क्रम से चलाये जाते हैं। बंगाल और केरल की कालीपूजा से इन गीतों का संबन्ध है।

श्रमगीत

पेशों के आधार पर मिथिला में भी कुछ गीत प्राप्त हैं[2]। चांचर, जाँत के गीत, पमरिया के गीत इत्यादि इस विभाग में आते हैं।

---

1. अंधविश्वास भरे अनेक आचारों के साथ ये गीत भी गाये जाते हैं। इस गीत में जादू टोने के साथ परिवार को बचाने का विश्वास है। केरल के "पोट्टियाट्ट" इस विभाग में आते हैं। जो आषाढ़ संक्रमण के दिन किया करता है।
2. डॉ॰जयकान्त मिश्र : इन्ट्रोडक्शन टु दि फोक लिटरेचर आफ मिथिला पार्ट-1, [पोयट्री] पृ॰4

चाँचर -

परती छोड़ी हुई ज़मीन को मिथिला में "चाँचर" कहते हैं। इस धरती में सावन भादों में खेती किया करते हैं। उस समय खेती के भिन्न कार्यों के साथ कृषक मज़दूर जो गीत गाते हैं वही चाँचर गीत है। मस्ती के साथ हर्षोन्माद भी "चाँचर" गीतों की विशेषता है। धान रोपते और धान काटते समय ये गीत गाते हैं। इन गीतों की टेक और धुन खेती के औज़ारों की झनझनाहट से मिलती जुलती है। चाँचर के गायक दो दलों में बाँटकर प्रश्नोत्तर के रूप में और समवेद स्वर में भी गाते हैं। गाने का सिलसिला बीच बीच में इस जोश-खरोश के साथ चलता है कि आकाश का पर्दा फटने लगता है। मिथिला का चाँचर इस प्रकार का है :-

कौन मासे हरि अर ठूठ पकरा
कौन मासे हरि अर पातर तिरिया
कौन मासे गोन केने जाय।
चइत मासे हरिअर ठूठ पकरा
भादो मासे हरि अर धेनु गाय
आसिन मासे हरि अर पातर तिरिया
फागुन मासे गोन केने जाय। आदि।

जाँत के गीत

इस गीत का दूसरा नाम "जन्तसरी" है। यह जाँत पीसनेवाली स्त्रियों का गीत है। तीन बजे रात से ही ये गीत मिथिला में सुना जा सकता है। जाँत पीसनेवाली स्त्रियाँ इस गीत में प्रियाप्रेम की महिमा का वर्णन करके अपनी मानसिक कुंठा को दूर करती हैं। एक गीत -

गामक पछिम एक ठुठी पकरिया रामा
तांहितर बहे बमास ।
तांहितर पातर पिया पर्भीा ओछौलमी, मा ।
हरि सुत्र फरक सुनु, पातर वलमुआं रामा"।

पमरिया के गीत

मिथिला में एक ऐसी जाति है जो घर घर में पुत्रजन्म के समय जाकर गीत गाती है । ये पमरिया जाति के हैं । इनका गीत पमरिया के गीत कहा जाता है ।

"कहां गेलिकये मैनी, छोटकी ननदिया जाम ।
पुछु गे छोटका भैया गोदनाक कोडिया जाम" ।

इसी प्रकार क्रमगीतों के बीच सामान्य जन जीवन के गुणों के युक्त कई गीत प्राप्त होते हैं । आगे हम ऋतु-गीतों की ओर अग्रसर हो ।

ऋतु गीत

प्रत्येक ऋतु और उसके परिवर्तन से संबन्धित कई गीत मिथिला में पचलित हैं । प्रत्येक गीत का विशिष्ट संस्कार या अनुष्ठान होता है । फाग, मलार, चैतावर, मधुश्रावनी, वट साविती, पावस, बारह मासा, झूमर, रास, आदि इन में प्रमुख हैं ।

---

1. राम इकबाल सिंह - राकेश - मैथिली लोकगीत
पृ॰256

फाग

सारे भारत में जब होली मनाते हैं उस समय मिथिला में "फाग" मनाते हैं। होली के हर कार्य क्रम के साथ फाग मनाने की रीति चलती है। इस समय के गीत को फाग के गीत कहते हैं। यह उल्लास का गीत है[1]।

एक फाग गीत :-

माघ मास सिर पंचमी
रंग होरी ब्रज होरि हो।
कयो महवर सं बहार होवे
रंहोरी हो
जौं कयौं घर सं बहार होए
रंग होरी ब्रज होरी हो।

चैतावर -

यह वसन्तोत्सव का गीत है। इन गीतों में जीवन के मधुरतम भावों का उल्लेख है।

चैत बीतो जय तइ हो रामा
तब पिया की केर अपलाई
अमुआ मोजर गेल....... आदि

1. मैथिली लोक गीतों का अध्ययन - डा॰तेजनारायणलाल - पृ॰320

मधुश्रावणी

नव वधुओं का एक त्योहार है मधु श्रावणी । इनके गीत मन को मुग्ध करनेवाले हैं ।

कुसुमक कानन कुंज बेली
नैनक काजर बोर मली
बरे केकरा सों खेलब रितु बसंत
घर नइ ऐला अमरख कंत
मध सखिसब ललाजी क पास ।

वट-सावित्री

सत्यवान-सावित्री कथा के सावित्री का पातिव्रत्य पर प्रचलित लोक गीत है यह । इसके गाने से सधवाओं को चिरस्थ महत्व रहेगा ऐसा विश्वास है । वट-वृक्ष के तले इस गीत गाकर पूजा की जाती है ।

जेठ मास अमावास सजनिओ
सब धनि मंगल गाउ
भूषन बसन जतन कय सजनिओ
रचि रचि अंग लगाउ -
....

पावस

यह वर्षा काल का गीत है । वियोग व्यथा का मार्मिक वर्णन इस गीत में पाया जाता है ।

लखि पावस के आवोगा
वृन्दावन तरु झूलन लागे,
झूलत कुंज सोहावन नारे
झनन, मन न, मीं कुर झंकारे....।

मलार

आषाढ के आगमन पर लोग मलार गाते हैं । इन गीतों में जीवन के मधुर क्षणों का उल्लेख है -

कारि कारि बदरा / उमडि गगन माझे
लहरि बहे पुर वइया .....

सांझ

संध्या के समय भजन गीत के समान उस विश्वशिल्पी के महान गुणों पर गाये जाने वाले गीत है सांझ । सुहागिनियां दीप जलाकर ये गीत गाती हैं ।

कौने घर सांझ भला गेल
कौने घर दीप जरु है ।
कौने घर उचित सुदिन भेल
कौने दाह अवह बहे ।

बारहमासा

पूरे वर्ष के बारहों मासों का ऋतु वर्णन इन गीतों में पाया जाता है । इन के साथ जीवन का सामंजस्य स्थापित कर जीवन को धन्य बनाने का सन्देश भी इन गीतों में है ।* इस विधा के प्रेमी मालुम पडते हैं ।

* हिन्दी के सारे लोक कवि और अन्य कवि भी

एक बारह मासा गीत इस प्रकार है :-

प्रथम मास मिज कातिक आएल
मोहि तेजि कंत चलल पर देस
कि मैं ना जीबौं आजि रे सुनि
श्याम सुन्दर बिनु... ।
दोसर माह जब आगहन आएल
चलहु सखी, नैहर जा एब...।

इसी प्रकार बारहों मासों का वर्णन पाया जाता है ।

झूमर[1]

यह नाच का गीत है । मस्ती से झूम झूम कर ये गीत गाये जाते हैं । नाच के साथ इन गीतों का महत्व और भी बढ़ता है । लड़कियाँ हिंडोलों में बैठकर भी ये गीत गाती है । भावात्मक झूमर गीतों में रसानुभूति की तीव्रता और अधिक होती है ।
एक झूमर गीत इस प्रकार है ।

सोनरा नहीं गढ़ि देल
कब गहना हमरे...।
करइ छइ रगड़ गेना
एकर कनि देख लिन चतुराई...
पहिनेल सेलकइ गढ़ाइ....।

---

1. झूमना शब्दार्थ है - मस्ती से सिर हिलाकर नाचना ।

2. Dance is the another of all arts.

एक दूसरा झूमर गीत भी देखिए -

पिया हे नइहर में भाई के विवाह •••
देखन हम जायब
सुन हे प्राण देखन हम जायब ।
धनि हे धय देहु सिखा पर हाथ
कतेक दिन रहब••••।

जट-जटनी

लड़कियों का नृत्य गीत है यह । इस में नाच और अभिनय का समावेश है । जट और जटिन पुरुष और स्त्री हैं । उन का प्रेम-व्यवहार ही अधिक गीतों में विषय होता । कई लड़कियां दो दलों में भी ये गीत गाती है । भिन्न जीवन संदर्भो का गीत प्राप्त हैं ।

जेबाई रे बंका, जेबाई रे बंका
करब रे बिआ हे ।
बानु ग प सोन मा के साज
कहाँ पे बह कहाँ रे पेबह
सोनमा का साज ?
मोर जटा रहत ह कुमार•••।
जेबह रे जट्ट, जेबह रे जटिटन
कर बे रे बि आहे ।

1• जट-जटिन - सामूहिक नृत्त एवं समवेत गाना का भी होता है ।

जट-जटिन संवाद भी होते -

जट - नव हीं पठलउ है जटिन
नवहीं पठलउ है
जइसे नवलह धान क बिरवा,
वइसे नव वे है ।

जटिन - नहीं ए नव बउ रे जटवा
नहीं ए नव बउ रे
बाबू क दुलारी बेटी
ऐठिक चलउ रे

जटिन और जट, पति पत्नी बनते हैं तब जटिन जट से आभूषणों की चर्चा करती है ।

जटिन - जटा रे जटिन के मांगवा बिन वाली,
मोटी कवा तुहूं कब लय देरे

जट - जटिन हे सोनरा छउ लोहार बजार
मोटी कवा त पेन्हाय देलउ है । आदि ।

श्यामा-चकेवा[1]

यह बालक-बालिकाओं का नृत्य गीत है । गीत के साथ अभिनय भी है । यह समूह नृत्त और गायन वादन से शुरू होता है । वृन्दावन में होने वाले नृत्य के रूप में यह लक्षित होता है । इस गीत और अभिनय के कई स्तर और पात्र होते हैं । लड़की लड़कों के मनोरंजन का यह बहुत अमूल्य गीत है -

1. श्यामा चकेवा के संबन्ध में स्कन्दपुराण में उल्लेख प्राप्त हुआ है । मेघनाथ झा - व्यवहारिक विज्ञान - पृ.44

जइसन नदिया गंभीर
			तइसन भइया अधार
जइसन केरवा का थंभ
			तइसन भइया का जांघ
जइसन धोबिया का पीठ
			तइसन भइया

<u>रास</u>

मिथिला में रास गीत साधारण से अधिक महत्व का है। भगवान कृष्ण की रास लीला की पुनीत स्मृति इस के पीछे है। गोपिकाओं के साथ भगवान कृष्ण ने जो गीत गाकर नृत्य किया हो उस गीत की परंपरा मान कर यहाँ के लोग आज भी यह गीत गाते हैं। एक रास गीत इस प्रकार है :-

मुरली मैं कि छु केलन्हि श्याम मोर
			गे प्राण धरे हो
श्री वृन्दावन के कुंज गलिन में
			श्याम चरावह गाय
मुरली टेरथि, फिरति जमुनातट
			मोहि गृह रहलो ने जाय
बिरह उठल मुरली सुनि सुनि
			चित मोर चंचल डोल....।

<u>नटुआ के गीत</u>

नृत्य और अभिनय के साथ यह गीत भी गाया जाता है। गायक सखों में ये गीत-प्रवाह वृन्दों के साथ गाते हैं।

अरे छूटा बन्दो भूआ बन्दी
　　　　रोटी बन्दी मक्खा,
अरे गुजर बन्दो, कुमर बन्दी
　　　　आबीर बन्दी अम्बुआ ।।

नचारी

यह शैव नृत्त [नटराज-नाच] की परंपरा का माना जा सकता है। लेकिन उत्तर भारत में उस का प्रचार कैसे हुआ इस पर थोड़ा प्रश्न उठता है। नचारी में शिव पार्वती विषय है तो भी उस में व्यंग्य बाण है। इस कारण समाज की ओर विशेष शक्ति पाया जाता है। तमिल का नाचियार शब्द देव दासी प्रथा से आया है। शिव अनार्यों का और विष्णु आर्यों का देव माना जाता है। उत्तर भारत के लोक जीवन का संबन्ध आर्य संस्कृति से संबन्ध रखता है तो भी इस विषय का खोज इस तथ्य को भी सिद्ध करता है कि द्रविड उत्तर भारत में बहुत पहले ही जम गये थे। उस सभ्यता के अवशेष के रूप में नचारी जैसे गीत आज भी मिथिला में परंपरा रूप में प्राप्त है। एक नचारी गीत -

आज शिव नाचिन गे माई ।
एहन रूप दिगंबर भोला भोरा नाचिन गे माई ।
भाग छोटि, कुंआरी में राखन
　　　　गणपति देखनि है राई ।
जौं मुनि पोता बूढ़ा दिगंबर सुरत
　　　　जेता पकाह गे माई
आज शिव नाचिन गे माई ।
.... ।

इसी प्रकार मिथिला के लोक-गीतों की विधाएं हजारों की तादाद में है । संख्या तो लाखों हैं । इन मुख्य गीत विधाओं के अलावा शिशुगीत, कीर्तन, निर्गुण आदि भी हैं । राष्ट्रीय गीतों की संख्या जो नये है और भी हैं । इन लोकगीतों की संख्या के अनुसार उनमें सारांश भी हैं । तो भी साहित्य का जगत उन्हें नगण्य समझ कर अपनी हंसी खुशी की अन्य चीजें लेने की तलाश में है । लोक-काव्यों का अध्ययन इस पथ में नया मार्ग खोलेगा । इन्हें उचित स्थान देकर उसकी सुरक्षा करेगी[1] ।

मैथिली लोक गाथाओं का अध्ययन अगले अध्याय में विस्तृत रूप में किया जाएगा । आगे हम मगही के लोक काव्य की ओर मुड़ें ।

(2) मगही लोकगीत

मगही का क्षेत्र

बिहार में मगही का क्षेत्र भोजपुरी मैथिली एवं बंगला के बीच है । प्राचीन काल में मगध राज्य था । उस समय मगही मगध की भाषा मात्र मानी जाती थी । आज यह भाषा समस्त "पटना" जिला एवं हजारी बाग, पलामू, मुंगेर तथा भागलपुर तक बोली जाती है । अनुमानतः आधा करोड़ लोग यह भाषा बोलते हैं ।

मगही लोक-काव्य में गीतों की प्रधानता है । कथागीतों की संख्या अपेक्षतः कम है । जो गाथा मगही में गायी जाती है वह समस्त हिन्दी प्रदेश में गायी जाती है । यह हिन्दी की कथागीतों की एक विशेषता है ।

1• इस प्रबन्ध में उद्धृत सारा गीत - राम इकबाल सिंह
हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास - पृ•292-270
तक से हैं ।

मगही की अपनी कहने योग्य लोक-गाथाओं का संकलन अभी तक नहीं हुआ है । पौराणिक कथाओं पर आधारित भक्ति परक कुछ गाथाएं मगही की अपनी शैली में प्राप्त हैं । इनके उपर आगे अध्याय में विचार किया जाएगा ।

मगही के लोकगीत

श्री मति संपत्ति आर्याणी, श्री॰ श्रीकांत मिश्र, श्री॰ रामनंदन आदि ने मगही लोक साहित्य पर अध्ययन किया है[1] । उनके मतानुसार मगही लोक गीतों का वर्गीकरण निम्न लिखित श्रेणी में कर सकते हैं :-

- ‖1‖ संस्कार संबन्धी गीत
- ‖2‖ ऋतु संबन्धी गीत
- ‖3‖ पेशावर गीत
- ‖4‖ धर्म संबन्धी गीत
- ‖5‖ विविध गीत आदि हैं

आधुनिक दृष्टि से इस विभाजन को वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता । तो भी परिचयात्मक व्याख्या की सुविधा को ध्यान में रखकर हम भी यही वर्गीकरण स्वीकृत कर सकते हैं[2] ।

संस्कार गीत

मगही में भी षोडश संस्कारों के गीत प्राप्त है । उन में पुत्र जन्म, कर्णछेदन, जनेऊ, विवाह-मरण आदि के गीत मुख्य हैं ।

1· हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - षोडश भाग-पृ॰39-49

2· यह प्रबन्ध प्रत्येक बोली के लोक काव्य पर आधारित नहीं है । इसलिए नया वर्गीकरण आवश्यक नहीं मानता ।

अन्य बोलियों के संस्कार गीतों की अपेक्षा केवल भाषा और शैली में थोड़ा फरक होते हुए भी विषय वस्तु और भाव समान है ।

सोहर

जैसे मैथिली एवं भोजपुरी में सोहर गीत गाया जाता है, वैसे ही मगही में भी पाया जाता है । पुत्र जन्म जैसे मांगलिक प्रसंगों में ही यह गीत गाते हैं । मगही में पुत्र जन्म सोहर की एक विशेषता यह है कि किसी स्त्री के गार्भिन बन जाने के अवसर से पुत्र जन्म के अवसर के बाद भी ऐसे गीत गाये जाते हैं । माता को प्रसव काल के ज्वर से मुक्त करने को यहाँ पीपर नामक सोहर गाया जाता है । इस समय दूध में दवा घोलकर देते समय माँ, सास, ननद आदि ये गीत गाते हैं[1] । पीपर सोहर, बरही सोहर[2] इस प्रकार भिन्न नामों के सोहर यहाँ प्राप्त हैं ।

एक सोहर गीत -

मेरो घर भयौ कौन भयौ,
सब सुख भर गयौ
पेट मेरे पूत बहुअर से उपजोजी,
मेरे घर रीतो मेरो कोठवा रीतो
मेरे सब सुख रीते मेरी धीय ले गयो जेमया,
मैं तो कभी न जाऊँगी धीय मैं लोभिम गन्नौपूत
मेरो पूत भिल ले आइ सौ बहू री ।

<u>यह एक पुत्र जन्म सोहर है । माँ की मानसिक भावना इस गीत में फूट उठी है ।</u>

1. दवा दारु देने की रीति
2. बरही पूजना एक विशेष कर्म है ।

मुंडन के गीत

प्रथम बार बच्चे के मुंडन के समय का गीत है यह । वास्तव में मुण्डन एक पवित्र संस्कार है । चौबीस संस्कारों में मुण्डन का चौथा स्थान है । बच्चों का मुंडन संस्कार आज भी इस महत्व का है कि कभी गंगा के किनारे, कभी अन्य तीर्थ स्थानों पर कभी यज्ञों के अवसर पर किया जाता है । माँ अपने बच्चे को लेकर बैठ जाती है । एक शुभ मुहूर्त में नाई अपनी कैंची से बच्चे की लट काटता है । कोख में ननद बैठकर अपनी आँचल में बच्चे की लट लेती है । इस क्रिया को लावर लेना कहा जाता है ।[1] उस अवसर पर नाई को दक्षिणा एवं बच्चे को भेंट देने की प्रथा भी है । अन्य प्रदेशों की तुलना में मगही में मुंडन का बड़ा महत्व रखता है । मुंडन की क्रिया के समय गानेवाले कई गीत प्राप्त हैं । मुंडन का एक गीत इस प्रकार है -

मेरे ललना को मुंडन होय, सखी गाओ
ललना की आवे बुआ मम भाई
ललना की मैया हू हर साथ आई
ढोलक धुनक धुन होय, सभी मंगल गाओ ।
मुंडन को मांगे है नेग छटो ले ।
मैयाँ की मैना है गोरकी छवी भी
लुटें सखीमिल माय सखी मंगल गाओं ।

इस गीत में मुंडन के समय बच्चे को देने वाले आशीशों का मधुर स्वर झलक पड़ता है ।

---

1. इस कार्य को "पियरी लोना" कहा जाता है ।

जनेऊ गीत

जनेऊ उच्च वर्गीय हिन्दुओं, खास कर ब्राह्मण लोगों में एक मुख्य संस्कार माना जाता है[1]। इस संस्कार का पूजा-पाठ, तेल-उबटन आदि कार्य होता है। ब्राह्मण लोग-बड़े उत्साह के साथ अपने बच्चों का उपनयन कार्य करते हैं। जनेऊ देने के पहले चूड़ा कर्म भी होता है[2]। एक जनेऊ गीत इस प्रकार है -

> जनेऊ आज हमारे बच्चे को
> पण्डितजी ने वेदी रचाकर मंत्र की आवाज़,
> बोले स्वाहा आहुती छोड़ी है रहे मंगल गाज
> मात पिता औ कुटुम्ब कबीला सबही रहे बिराज
> ओरम सद्गुरु मंत्र देखिये वेदन रीति रिवाज
> करो जनेऊ खुश भये मन में रीति नीति के काज

इस मंगलाचरण का महत्व इस गीत में ताल लयों के साथ स्पष्ट होता है।

विवाह के गीत

भाषी में विवाह संस्कार से संबद्ध कई गीत प्राप्त हैं। कहीं विवाह कार्य केवल संक्षिप्त कार्य क्रम द्वारा ही संपन्न हो जाता है तो कहीं महीनों की तैयारी से होता है। लड़की और लड़के के विवाह के अलग अलग

---

1. एक जमाने में सारे हिन्दू लोग जनेऊ पहनना महत्व का कार्य मानते थे। जाति-प्रथा के आगमन काल से उच्च नीच भाव समाज में लाया गया। तब से यह उच्च जाति की मानी गयी।
2. प्राचीन काल में बालक के चार संस्कार होते थे चूड़ा कर्म, यज्ञोपवीत, वेदारंभ और समावर्तन ! ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य एवं क्षत्रियों का जनेऊ कर्म होता था।

गीत होते है । विवाह के प्रत्येक कार्य क्रम, जैसे पूर्व मिलन, पिता-पुत्री संवाद, वर-वधु संवाद, प्रथम-मिलन, दहेज बराती, विदाई, समर्पण, गवना, आदि विविध क्रियाओं और अवसरों के गीत हैं ।

एक विवाह गीत :

> बाबा के आँगन में आमर झामर,
> झर झर बहलइ बताम
> वाही तरे बैठि के बाबु पलंग बैस[1] बलम
> बाबु कुलमन गिर बैद । ...... ।

बेटी को ससुराल में जिस प्रकार जीना चाहिए उसकी शिक्षा से संश्लिष्ट है यह गीत । मगही के विवाह गीतों में वैवाहिक रीति-रिवाज, बरात, बराती, समधी, सास, ननद, दहेज, आदि के उल्लेख अधिक होते हैं । ज्योनार के अवसरों पर कुछ गालियों का गाना भी होता है । तेल चढ़ाने से लेकर सोहाग रात तक विवाह गीत गाया जाते हैं । दहेज की प्रथा मगह में अधिक ध्यान देने योग्य है । गीतकारों ने इस ओर अधिक ध्यान दिया है । एक दहेज गीत इस प्रकार हैं[2] -

> कउनु दसरथ खेलन सिकार ।
> कउनु जनकजी कंधिया भई कुंआरी
> किनकर अवधवा उरियाल
> कवनु साहि मोहन बाग कावथा" ..... ।

---

1. मलयालम में ऐसा कई गीत प्राप्त है ।
2. दहेज का प्रश्न सारे भारत में समान स्वभाव का है । मगह में उसका महत्त्व और भी है । कुछ आदिवासियों के बीच [केरल में] दहेज प्रथा नहीं है । सभ्य समाज में ही यह मुख्य है ।

धार्मिक गीत

मगही में धार्मिक अनुष्ठानों से युक्त गीतों का अपना महत्व है । देवी देवताओं की पूजा समय समय पर होती है । उनका अपना अपना गीत होता है । उनमें अमानुषिक घटनाओं के गीत अधिक हैं । सगुण और निर्गुण दोनों विभाग के गीत प्राप्त है[1] ।

एक धार्मिक गीत

कौसिला छटोकन सजा दसरथ,
कोरी गइल सोच धाल है ।
कोरी के दाहे बेयाकुल राजा दसरथ
के कई के परमो हंकार हो
आहु आह के कई रानी पलंग चढ़ि बइठहु
हरी लेहु दरद हमार है ।

यह रामायण कथा के आधार पर एवं राजा दशरथ पर गाए जाने वाला है ।

एक निर्गुण गीत देखिए -

रोपली हम आम अमरु दिया हो
एक पेड़ अशोक रोपली है
x x x x x

---

1. मगही में कुदेवों की पूजा बहुत कम मात्रा में होती है । आसुर प्रकृति के देवी-देवताओं की पूजा निम्नजाति के लोग मात्र करते हैं । केरल की तुलनामें यह और भी कम है ।

पेनहली हम बाबु बन बिज उठवा
बाउ मांगटी का पेनहनो है ।
सजली गहनमा सब सुन
बस एक ही सेनुहा बिनु ।

जीवन की क्षण भंगुरता और सुखदुःखों की आंख मिचौनी से समाज निस्सारता का बोध कराने वाला यह गीत नवीन निर्गुण गीतों में आता है । यह गीत चमारों के बीच प्रचलित है । उनके गाते समय सुनने वाला भी इस क्षणिक जीवन की जाल से छुटकारा पाना अधिक अच्छा जान लेगा ।

श्रम गीत

जंतसरी

मगही क्षेत्र में कई प्रकार के श्रमगीत प्रचलित हैं । इन में जांत पीसने वाली स्त्रियों का गीत विशेष महत्व रखती हैं । अन्य विधा के गीत भी प्राप्त हैं । वे अन्य बोलियों में प्राप्त गीतों के समकक्ष के भाव हैं । कौटुम्बिक जीवन के मार्मिक क्षणों का एक जंतसरी गीत :-

उड़ली गवन से परली जंगल में गोविन्द
जीविरदाम मैं
छूते के मरम नहीं जानी [गो•]
भैया जे मरनिन बन मेहरिया [गो•]
छोटकि ननदिया दर हरिया [गो•]
मत मारऽ भइयाजी अपनी मेहरिया [गो•]
तोहर मेहरि सुकुमरिया [गो•]

नव विवाहिता पर पति के मार-पीट के प्रसंग में नव-वधू को मारते पीटते देख कर ननद जाकर भाई से प्रार्थना करती है, मत मारिए, मत मारिए ...... इस विभाग में कई रोचक प्रसंग और भी हैं ।

नृत्य गीत

झूमर, झमुली, जैसी कई नृत्य प्रधान गीत मगही में प्राप्त हैं । विविध पर्वों और उत्सवों के समय नृत्य के साथ ये गीत गाये जाते हैं । लोक गीतों पर आधारित नृत्य मगही के गली-कूचियों में भी घर जमाने में देखा जा सकता है । नटुआ, चमटिया, कहरवा आदि जाति [illegible] नटुआ, चमटिया, जाति विशेष के लोग इस कार्य में लगे हुए हैं । यह नृत्य उनकी जीविका कमाने का मार्ग भी है । एक नृत्य गीत इस प्रकार है -

नेमु तोड़े गाछलो में
ओहि नेमु गाछिया
मोर ननदिया है,
चुनरी अंटके नेमुडार
टोपिया उतारे गेल
लहरा देवर वा
मोर ननदिया है
गमछा अंटकि नेमुडार ।

यह नटुआ विभाग के लोगों के नृत्य का गीत है । इस में पुरुष और स्त्री समान रूप से भाग लेती है । अब हम एक झमुली नाट्य गीत भी देखें ।

बगुली नृत्य गीत

बगुली नृत्य स्त्रियों का नाच है। शारद ऋतु में नीले गगन के तले स्त्रियाँ इकट्ठी होती हैं। यह हर्ष और उल्लास का मौसम है। इस कारण हर्ष और उल्लास का नाच-गीत है यह। इस नृत्य में तोम और सवाल की रीति का संवाद होता है। एक लड़की को बगुली की आकृति बनाकर अन्य स्त्रियाँ उससे संवाद करती है। जैसे :-

महिलाएं - कहवाँ के रूसल कहाँ जाइ हे बगुली ।
बगुला - ससुरा के रूसल नैहरा जाहि हे ही दिया ।।
महिलाएं - कौन करम में नैहरा जाइ हे बगुली ।
बगुली - फुरवा छटके सुदिया छैनियो हे ही दिया ।।
....
....

इसी प्रकार यह संवाद ताल लय युक्त अभिनय एवं गीतों से जारी रहता है। आखिर एक मल्लाह का प्रवेश और मल्लाह का बगुली से प्रेम-मांगने से, और उसका अदेय यौवन देने में उसका इन्कार करने से, गीत समाप्त होता है[1]

ऋतु गीत

यह कृषकों का गीत है। इसे श्रम गीतों में भी स्थान दिया जा सकता है। बरसाती, घोहट, चैता आदि इस विभाग में आते हैं।

---

1. बगुला गीत केवल नर्तन गीत ही नहीं, गान-नाटक भी इसे कह सकता है।

एक बरसाती गीत

दइया इन्द्रिय के करहु बड़ पूज चाहे ना
दइया गांव के ठिकुरवा अन्नदानु मांगी ना
दइया छोड़वा चढ़त निरख बदत है ना
दइया मूसरे के धार पनिआं बरसह देना" ।
....
....

बरसात के समय, मूसरे के धार के समान पानी बरसने का ताल मौन धुन, इन पंक्तियों में प्राप्त है ।

चैता

चैत के महीने में ढोलक बजाकर किसान लोग ये गीत गाते हैं ।

अहो रामा बाबा फुलवड़िया में
फूल लोढे गेली हो रामा ।
गड़ि गेलई कुसुम कन कंटवाहो रामा ।।
रामा केई मेरा कंटवा निकालिए
निकालन हो रामा
केहि मोरा हरलई दरदिया हो रामा ।।

सब "रामा" से शुरू होता है, "रामा" में अंत भी होता । राम लक्ष्मण सीता की कथाओं पर ही गीत अधिक हैं ।

त्योहार गीत

छठ, भैया दूज माता-माइया जैसी अनेकों आराधना एवं पूजाएं होती हैं। तीज त्योहारों में भी इन में भिन्न विधाएं आती है। छठ मिथिला में भी, सूर्य पूजा है। सूर्य को जलाशयों के किनारे अर्घ्य देने की क्रिया और उसका गीत भी इस विभाग में आता है।

मोने सुआजलाँ ए दीना नाथ, घमने लियार।
घनियों में गेली ए दीनानाथ, गंगा असनान
रहिया में मिल लो ए दीना नाथ अन हरा मजुर
आखिया देव दते ए दीनानाथ भेला एते देर।

इसमें सूर्य पूजा का भजन है।

भइयादूज

कार्तिक शुक्लपक्ष द्वितीया, भ्रातृ द्वितीया माना जाता है। इस दिन भाई पूजा होती है। उस अवसर का गीत भइया दूज का गीत है। एक गीत ऐसा है :-

नदिया किनारे दुलरइतो भइया,
खेलय जु आसारी
कन्ने गेल बहिनी दुलरइ तो बहिनी
भइया अधु मेयार।

इस में भाई केलिए मंगल कामना की प्रार्थना है।

माता भइया - गीत

यह चेचक गीत है। इस नाम से जाना जाता है।

मिल एक सातो बहिनियाँ हे भइया
सातो आगर हे भइया सातो आगर हे।
भइया सातो मिल बगिया देखे जाइल हे
भइया का देखु बगिया के रूप हे भइया.....

इस प्रार्थना से चेचक से निवृत्ती पाने का गीत गाती हैं।

झूमर, बिरहा, अलचारी आदि गीत, मिथिला की ही जैसी मगही में भी प्राप्त हैं।

इन सारे गीतों की ओर दृष्टि डालने पर यह मालूम पड़ता है कि मगही में अन्य प्रांतीय गीतों के समान अपनी खासियत के कई गीत प्राप्त जिनमें मगही लोक-जीवन झलकता है। आगे हम भोजपुरी के लोक काव्यों का अध्ययन प्राप्त कर सकते हैं।

(3) भोजपुरी लोक गीत

मैथिली और मगही के समान यह भी हिन्दी की बोलियों में प्रमुख स्थान रखती है। यह बोली बिहारी भाषा में आती है। विस्तार और जनसंख्या के आधार पर मैथिली और मगही से यह बोली, बड़ी है[1]।

---

1. 1971 की जनगणना के अनुसार भोजपुरी बोलने वालों की संख्या एक करोड़ से अधिक है।

इस बोली का नाम भोजपुर गांव के आधार पर पड़ा है । यह एक समय उज्जयिनी की राजधानी थी । आज यह दो गांवों में फैला हुआ है ।

भोजपुरी का लोक-काव्य अधिक विस्तृत पैमाने में पाया जाता है डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय, डॉ॰ सत्यव्रत सिन्हा, श्री॰ दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह आदि विद्वानों ने इस क्षेत्र के लोक साहित्य में अधिक काम किया है । प्रस्तुत प्रबन्ध में इन महाशयों के अतिरिक्त कुछ नये लोक-साहित्य प्रवर्तकों के आकलन से भी सामग्रियाँ, यथावसर ली गयी हैं । आगे भोजपुरी लोक गीतों पर प्रकाश डाला जाएगा । लोक-गाथाओं का अध्ययन अगले अध्याय में पाया जाएगा ।

भोजपुरी में उपलब्ध लोकगीतों का विभाजन डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय ने ऐसा किया है । [1] संस्कार गीत [2] ऋतुगीत [3] त्योहार गीत [4] रसगीत [5] जातियों का गीत [6] श्रमगीत [7] बालगीत । इन्होंने भोजपुरी लोक गीतों का दो अलग संग्रह भी प्रस्तुत किया है । उनके अनुसार भी विभाजन की प्रक्रिया इस प्रकार ही हुआ है । आगे हम इस नमूने के कुछ गीतों पर विचार करें ।

संस्कार गीत

भोजपुरी के अधिकांश गीत इस विभाग में आते हैं । सोलहों संस्कारों का अपना अपना गीत प्राप्त है । इन में स्त्रियों का गीत अधिक है ।

---

1. गीत विभाग में डॉ॰ कृष्ण देव उपाध्याय के संपादित गीत दोभाग ही अधिक प्रमुख हैं ।

सोहर

पुत्र जन्म के अवसर ननद और सास के द्वारा विभिन्न पदार्थों की देन से सन्देश देने का चित्र -

सासु जे, भैजेली, मउनिया, ननदी बरिसिया हरे,
ललनी गोतनी अपने प्रभु जाब
गोतिनिया हमहीं पाइबरे
ललना गोतिनि आवेली गवरत
ननदी बजव हते रे ।
सासुजे आवेली गवइत
ननदी बजव हते रे ।।

वधू को लड़का हुआ है । अतः सास ने मांइन को तथा ननद ने वारिनि को गांव सन्देश भेजने केलिए बुलवाया । उस का चित्र इस गीत में प्राप्त है ।

मुंडन

मगही मुंडन गीतों में प्राप्त सारी क्रियाएं यहां भी चालू है । यहां भी ऐसे सन्दर्भों में गांववासी स्त्रियां गाती हैं । आशीश के गीत ही मुख्य हैं ।

जनेउ के गीत

जनेउ का यहां उपनयन या गुरु के पास ले जाने का ही अर्थ है । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से इसका संबन्ध भी है । यज्ञोपवीत के संबन्ध में शतपथ ब्राह्मण का यह मत है कि ब्राह्मण का यज्ञोपवीत वसंत ॠतु में, क्षत्रिय

का ग्रीष्म ऋतु में तथा वैश्य का शरद ऋतु में करना चाहिए । आज कल चैत्र मास को सब चुन लेते हैं । जनेऊ के विधि विधानों का वर्णन प्राप्त है । जनेऊ में ब्रह्मचारी के लिए पलाश दण्ड खोजने का एक प्रसंग भोजपुरी लोक गीतों में ऐसा है -

ए जाहि बनेंसिकियो ना डोलेला
बअुओ ना गरजे मारे ।
ए ताहि बने चलले कवन बाबा
काटेले परास डांढा खोजेले
मिरिग छाला रे ।
ए हमरा दुलरुआ के जनेव हवे ।
काटिले परास डांढा,
खोजिले मिरिग छाला रे ।।

पलाशदंड एवं मृगछाला अपने बेटे के जनेऊ के समय खोजने वाले पिता का चित्र इस में स्पष्ट है ।

विवाह

विवाह सबसे प्रधान संस्कार है । जीवन में जितना विवाह का महत्व यहाँ भी परम प्रधान है । वर की खोज में निकलना, जन्म कुण्डली, मिलाना, वररखा देना, तिलक चढाना, बरात,

तीन टेढे-टेढे
समधी टेढ, सींगा टेढे, नाल की टेढ । वाला प्रमाण बरात की

प्रतिष्ठा का है । वरपूजा, (द्वारपूजा) जलपान, भोजन, कन्यानिरीक्षण, वस्त्रदान, विवाह,का कर्म, कोहबर जाना, बिदाई (मिलनी) मर्यादा रखना कंगन मोचन चौथारी - ऐसी कई क्रियाएं यहाँ विवाह से संबद्ध होता है । इन प्रत्येक कार्य के कन्यापक्ष और वरपक्ष के अपना अपना गीत हैं । डा॰ कृष्णदेव उपाध्याय ने कन्यापक्ष के 24 (चौबीस) एवं वरपक्ष के 15 (पंद्रह) गीतों का नाम अलग अलग दिया है ।

---

1. कन्यापक्ष-के गीत :- (1) तिलक के गीत (2) मंगा के गीत (3) माँठों के गीत (4) माँठी कोठाई के गीत (5) कलसा धराई के गीत (7) लावा भुजाई के गीत (8) मातृपूजा के गीत (9) द्वारपूजा के गीत (10) गुरहत्थी के गीत (11) पोखर खनाई के गीत (12) विवाह (कर्म) के गीत (13) भांवर के गीत (14) सिंदूर लगाई के गीत (15) द्वार रोकने के गीत (16) कोहबर के गीत (17) परिहास के गीत (18) भात के गीत (19) गाली के गीत (20) वर को उबटन लगाने के गीत (21) माड़ोखोलाई के गीत (22) बारात की बिदाई के गीत (23) कंगन छुटाई के गीत (24) चौथारी के गीत ।

वरपक्ष के गीत :- (1) तिलक के गीत (2) लगुन के गीत (3) कलवानि के गीत (4) माटी कोठाई के गीत (5) लावा भुजाई के गीत (6) इमली घोंटाई के गीत (7) हरदी के गीत (8) मातृपूजा के गीत (9) कुआरण के गीत (10) मउरि के गीत (11) परिछावनि के गीत (12) डोम कछ के गीत (13) गोड भराई के गीत (14) कोहबर के गीत (15) कंगन छुटाई के गीत ।

- हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास षोडश भाग (गीतों के भेद) पृ॰114

विवाह गीतों का वर्ण्यविषय बड़ा विस्तृत है । इन में सर्वत्र उत्साह दृष्टिगोचर होता है । कोहबर के गीतों में संभोग शृंगार का वर्णन अधिक हुआ है जिन में कहीं कहीं अश्लीलता का पुट भी पाया जाता है । विवाह के अवसर पर भात खाते समय समधी जब तक इन गालियों को नहीं सुनता, तब तक वह अपना यथोचित सत्कार नहीं मानता ।

एक विवाह गीत -

> वर खोजु वर खोजु, वर खोजु रे,
> बाबा अब भइलीं बियहन जोग ए ।
> आरे हामारा के बाबा सुनर बर खोजे ले ।
> हसि अभि दु अरवा के लोग ए ।
> पूरब खोज लों बेटी पछिम रे खोज लों
> अवरु ओड इमा आम्नाय ए ।
> आरे तीनों भुवन तुम्हें वर खोज कों
> कतहीं नाहिंमिले सिरि राम ए ।।

यह वर खोजने के संबन्ध का एक गीत है । तीनों लोकों में खोजते भी, अनुरूप (सिरिराम) वर के न मिलने का प्रस्ताव है । गवनागीत संभवत: दु:ख का होता है । उनमें विषाद की गहरी रेखा दिखाई पड़ती है ।

> बेटि चलेलि अपने ससुरवा
> सुगना रोवई छा छा काल रे
> मण्डप बैठे बाबा बढ़इता
> बेटी अरज किहे ठाठरे ।
> सुगना के राख हो बाबा बहुत के दुलारि ।
> खाई के देबहि बेटी दूध भात खोवा
> आंचवइ के ठंढा पानिरे
> होत बिनु सार बेटी नउवा हम भेजबि,
> तोहरा लेवइ बोलाइ रे ।

बेटी की बिदाई है। सब का रोना समान भाव से व्यक्त है। भोजपुरी विवाह गीतों का मात्र अपना एक समाहार बनाया जा सकता है। केरल की भी यह अवस्था है।

मृत्युगीत

यह अवश्य भावी अवसान, शोक का है। वास्तव में यही संस्कारों में अवसान भी है। मृत्यु गीतों में मरे व्यक्ति का गुण गान साधारण है। उसके बाद के कष्ट का भी विवरण है।

आइके मऊ बसिया, गयिल बाम्हिपराई
हमरे सइयाँ के करम, लगइले फूटि।
फूटि गइल करम परल भइल खटिया
हमई रोवेनी सिरहान धइ के पटिया।
कबहुँ ना छुवेले बालम दुविओ के मरिया
कहहू ना भइले हमरो बालम से सँवलिया
हमरे सइयाँ के करम लगइले फूटि,
यहि बीचे आइके जम्म त मिहले लूटि।

अपना सब कुछ यहाँ असहाय मालूम होता है। कहीं इस भाव का झटोली के गीत भी बनते हैं।

ऋतु गीत

कजली, फगुआ [टोली] चैता, बारह मासा - आदि भोजपुरी के ऋतु गीत हैं। सावन के महीने में कजली गाने की प्रथा है। रातों भर ये

गीत गाये जाते है । झूलों में बैठकर भी गाते हैं।1 कजली का नामकरण सावन में घिरने वाले बादलों की कलिमा के कारण पड़ा है । कुछ लोग कजली वन से भी कजली गीत का संबन्ध जोड़ते हैं । कजली में श्रृंगार ही मुख्य कार्य है ।

एक कजली गीत

आरे बाव बहेला पुरवैया
अब पिया मोरे मोवे प हरि ।। टेक
कलियाँ चुनि चुनि सेजिया डसवलीं
सइयाँ सुतेले आधी राति, देवर बड़ा मोरे पहरी ।
सकोरा छिलि छिलि बिरवा लगवली
सइयाँ चाभेले आधी राति, देवर बड़ा मोरे पहरी ।

यह कजली गीत जीवन के मार्मिक विचारों से पूर्ण है ।

फगुआ

होली का गीत है । फागुन मास में गाया जाता है । होलिका दहन की भलाई बुराई पर आधारित गीत भी हैं । रास लीला की मोहक छवी का भी यहाँ याद है ।

होली खेले रघुबीरा अवध में होरी
केकरा हाथे कनक पिचकारी केकरा हाथ अबीरी ।
होरी खेल रघुबीरा अवध में - होरी ।

इसमें होली का उल्लेख है ।

बारहमासा

इसके गाने का कोई समय निश्चित नहीं है परंतु ये अधिकतर पावस ऋतु में ही गाए जाते हैं । इस में विरहिणी स्त्री के वर्ष के बारहों महीने में होने वाले कष्टों का वर्णन होता है । यह नाम इस गीत को इसलिए पड़ा है । इस में विप्रलंभ श्रृंगार का ही महत्व है । विरह दुःख ही झलक पड़ती है ।

> सब सखि खेले राम अपना बलमुआ,
> हमेरा बलमु परदेस है ।
> कलियां में चुनि चुनि मैं जिया उसवलों
> पिया बिनु सेजिया उदास है ।

यही विप्रलंभ श्रृंगार का उदाहरण है ।

त्योहार गीत

नाग पंचमी, बहुरा, गोधन, पिंडिया, छठी, आदि व्रतों और मेलों के गीत यहां भी प्राप्त है ।

नागपंचमी

श्रावण शुक्ला पंचमी को 'नागपंचमी कहते हैं । उस दिन भोजपुरी में नागपूजा होती है । नाग पूजा के कई गीत होते हैं । एक गीत इस प्रकार है जो नाग स्तुति है -

अवन गलिया हम कबहुं ना देखलीं,
उगलिया देखलना हो मोरे नाग दुलरूवा ।
जे मोरा नाग के गेहूं भीखि दीहे,
माने बेटवा खिअइहें, हो मोरे नाग दुलरूवा ।
जे मोरा नाग के कोदो भीखि देहें
करिया करिया मुसरी बिअइए हे हो मोरे नाग दुलरूवा ।

बिहुला

यह भाद्र कृष्ण चतुर्थी को होता है । बिहुला और बिहुला एक ही है । बिहुला मनसा पूजा से संबन्ध रखनेवाली कथा है । यह कथा गीत है । इस पर फिर विचार किया जाएगा ।

गोधन

कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा का शुरू होता है । गोबर से बनी मनुष्य मूर्ति की पूजा इस दिन होती है । इसका थोड़ा अनुष्ठान भी पाया जाता है । इस व्रत का प्रधान उद्देश्य भाई और बहिन में पारस्परिक प्रेम की वृद्धि करना है ।
नीचे का "गोधन" पूजा गीत इस प्रकार है - शिकार करने केलिए जब भाई जाता है तब बहन उस की सकुशल वापसी की प्रार्थना है -

कवन भइया चलले अहेरिया,
कवन बहिनी देली असीस होना ।।
जियसु रे मोर भइया
मोरा भउजी के बाढे सिर सेनुर होना ।।

मोहन भइया जनले अहेरिया
पारवती बहिनी देली असीस होमा ।।

पिँड़िया

पिँड़िया का व्रत कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से लेकर गहन शुक्ल प्रतिपदा तक पूरे एक मास मनाया जाता है। इस में भी गोबर की मूर्ति की पूजा होती है। इस चीज़ से पिँड़िया भी बनाकर उस की भी पूजा करते हैं। इस पूरी प्रक्रिया को "पिँड़िया" कहा जाता है। इसमें भी भाई बहिन प्रेमका निदर्शन पाया जाता है।

एक पिँड़िया गीत

मड़ुआ चिउरवा से हम पूजबि पिँड़ियवा हो
तोहरी कअइया भइया पिँड़िया बरतिया हो ।।
मोरंग देसे तुहु जइह ए राम भइया,
ले अइह ए भइया मोरंगी मड़ुअया हो ।।

छठी गीत

यह कार्तिक शुक्ल षष्ठी को किया जाता है। मिथिला में यह स्त्री और पुरुष दोनों मनाते हैं, जबकि भोजपुर में केवल स्त्रियाँ मनाती है छठी सूर्य पूजा और देवी पूजा भी होती है। छठी देवी पूजा पुत्र प्राप्ति केलिए और पुत्रों के दीर्घायु केलिए भी होती है।

एक छठी गीत इस प्रकार है :-

दुधवा, पिउवा लैके गवालिनि बिटिया बढ़
फालावा, फुलवा लैले मालिनि बिटिया ठाठ
धुपवा, जलवारे लैके बामनवा रे ठाठ
और हाली हाली उगए अदितमल अरघ दिआउ ।।

जाति संबन्धी गीत

कुछ लोक गीत ऐसे हैं जिन्हें विशिष्ट जाति के लोग ही गाते हैं । ऐसे गीतों में बिरहा का विशिष्ट स्थान है । यह अहीर लोगों का जातीय गीत है ।

बिरहा की निष्पत्ति विरह शब्द से हुई है । बिरहा लोक गीतों में सबसे छोटा छन्द होने पर भी अपनी सुगठित पदावली और चुभती शैली के कारण सहृदयों को प्रभावित करता है । बिरहा में परछठिया और कवि कथागीत भी होते हैं । अहीर जब अपनी मस्ती में आता है, तभी बिरहा गाता है ।

नाहीं बिरहा कर खेती भइया,
नाहीं बिरहा फेर डार ।
बिरहा बसेला हिरिदया में ए रामा,
जब उमगे तब गाव ।।

यह बिरहा के संबन्ध में एक बिरहा है । कहावत सा है ।

असली बिरहा का एक उदाहरण नीचे दिया है -

पिया पिया कहत पियर भइल देहिया,
लोगवा कहेला पिंडरोग ।
गँउवा के लोगवा मरमियो ना जानेला
भइले गवनवा ना मोर ।

किसी अभुक्त यौवना नायिका की यह उक्ति कितनी सटीक और मर्म स्पर्शी है ।

<u>पचरागीत</u>

यह दुसाधों का गीत है । दुसाधों में जब कोई बीमार पड़ता तो रोगी को आरोग्य देने केलिए देवी का आवाहन करता हुआ यह गीत गाता है । इन गीतों में देवी स्तुति या प्रधान है ।

कवन देसवा से चलेली भगवती,
पहुँचेली मलिया आवास हो ।
किया मोर सेवका बाजेला देवघरा,
किया जोहे बटिया हमार हो ।

<u>लिउरिया</u>

यह गड़ेरियों का गीत है । ये लोग किसानों के खेतों में भेड़ों को "छिरा" कर [मलयालम में "किडा" कहता है] मस्ती के साथ गीत गाते हैं ।

इसी प्रकार गोंडों का प्रसिद्ध कहारों का "कहरवा" गीत भी है। इन गीतों में हास्य रस की मात्रा अधिक है। ये लोग हुड़का बाजा बजाते गाते हैं। इसी प्रकार तेलियों का कोल्हू गीत, भी है जो श्रृंगारिक है। चमारों के गीत भी मनोरंजक है।

श्रमगीत

यह श्रमिकों का गीत है। जंतसार, रोपनी और चरखा के गीत प्रसिद्ध हैं।

जंतसार

यह चक्की पीसने वाली स्त्रियों का गीत है। यह शब्द यंत्रशाला का अपभ्रंश है। इस में करुण रस की अधिकता दिखाई पड़ती है।

पीउरा, कूटची उरा, कूट संवरोतिरियावा, रे
आरे हम जबवों संवरो मनोहर देवरवा रे,
रोह रोह संवरो, पीउरा रे कूटेली।
आरे हँसि हँसि उमर बन्हावे ले रे।

ये गीत अधिक नहीं रिस्म के भी होते हैं।

रोपनी

धान के खेत को रोपते समय रोपनी के गीत गाये जाते हैं। इन गीतों में कोई विशेष बातों के अलावा विशुद्ध प्रेम का भाव स्पष्ट मिलता है।

मच्छिया बइठलि, तुम सासु हो बइठलितनि ।
कहित त आहो ए सासु पच्छिया के अपनी नुरे की ।
कहले सु आहो ए बहुआ, पच्छिया के जबतु
ओहि रे मारिया सेंदुर भजुआ बाडे नु रे की ।।

सोहनी

खेत में व्यर्थ की घास तथा पौधे उग आते हैं । उन्हें अलग कर देते समय जो गीत गाए जाते हैं वह सोहनी गीत है । इसे निरोनी भी कहते हैं । कहीं इसे निर्वाही का गीत भी कहते हैं ।

आमावा मजुहया के लामी केवडिया,
सोहवा के आंगन अंजोरिया ये बालम
होबहु प्रभुरे बजर के बडिया
ओलिए निओले लागी कोसिया ए बालम ।।

चर्चा गीत भी इस विभाग में आते हैं । ये नये गीत हैं ।

देवी देवताओं के गीत

भोजपुरी प्रदेशों में अनेक देवी देवताओं के गीत गाए जाते हैं । शीतला माई, तुलसीजी और गंगाजी के गीत प्रसिद्ध हैं । कहीं कहीं कालीमइया और हनुमान जी के गीत भी गाए जाते हैं ।

किसी मनो कामना की सिद्धि केलिए काली जी की मनौती मानी जाती है । इन गीतों में भक्ति के उद्गार मनोकामना का प्रकाशन हुआ है ।

कुछ बालगीत और विविध गीतों के अन्तर्गत भी कुछ गीत प्राप्त है, जिनमें, झूमर, अलचारी आदि भिन्न रूप के हैं ।

भोजपुरी के लोक-गीतों पर विचार करने पर यह स्पष्ट होता है, कि अन्य बिहारी लोक गीतों से बढ़कर इस का कोई महत्व नहीं है । लेकिन एक बात अधिक ध्यान देने योग्य है कि भोजपुरी में लोक साहित्य की पढ़ाई, अधिक वैज्ञानिक तरीके से हुई है ।

डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय जैसे महान लोक-साहित्य विद्वानों के प्रयत्न से इस कार्य में महत्व पूर्ण देन दी है ।

यहाँ हम मागधी समुदाय के लोक गीतों का अध्ययन कर चुके हैं । ये तीनों बोलियाँ समान स्वरूप और विषय वैविध्य के साबित हो सकते हैं । यहाँ का लोक जीवन भी समान रूपसे बहती जा रही है । मिथिला, मगह एवं भोजपुरी में, एक ही भाव भंगिमा से जन जीवन अपना धार बनाते जा रहा है ।

आगे हम, अवधी समुदाय की बोलियों के लोक-गीतों की ओर बढ़ेंगे ।

[4] अवधी लोक गीत

रामायण-प्रसिद्ध कोसल की भाषा है अवधी । यह मर्यादा पुरुषोत्तम राम की जन्म भूमि है । अवध जनपद ग्यारह जिलों में व्याप्त है - हरदोई, इलाहाबाद, फतहपुर, कानपुर [अकबर पुर एवं डेरापुर तहसीलों को छोड़कर] मिर्जापुर, जौनपुर बस्ती, आदि में फैला हुआ है । साढे पैंतीस हजार वर्ग मीलों के क्षेत्र में ढाई करोड़ अवधी भाषा भाषी निवास करते हैं ।

इस जनपद की भौगोलिक सीमाएं इस प्रकार बताई जा सकती हैं - पूर्व में भोजपुरी, दक्षिण में बघेली, दक्षिण-पश्चिम में बुन्देली पश्चिम में कन्नौजी एवं ब्रज और उत्तर में नेपाली बोलियों के क्षेत्र फैले हैं।

अवध जनपद के लोक साहित्य को प्रकाश में लाने-वाले विद्वानों में डा॰ सत्यव्रत अवस्थी का नाम सर्व प्रथम उल्लेखनीय है। आप की विरहा रागिनी[1] नामक पुस्तक के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास [सोलहवा भाग] की योजना के अंतर्गत अवधी के लोक साहित्य वाला अंश भी आपने ही लिखा है। डॉ॰ त्रिलोकी नारायण दीक्षित का अवधी और उसका साहित्य[2] शोध की दिशा में अभिनव प्रयास है। डॉ॰ इन्दु प्रकाश पाण्डेय का अवधी लोक गीत और परम्परा भी इस दिशा में एक महत्व पूर्ण कदम है। इसी परम्परा में डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय ने लोक गीतों का एक संग्रह भी प्रकाशित किया है[3]। डॉ॰ सरोजनी रोहतगी का विक्रम विश्वविद्यालय की पी-एच॰ डी॰ उपाधी केलिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध अवधी का लोक साहित्य शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। इस शोध प्रबन्ध में पृष्ठभूमि के रूप में प्राचीन हिन्दी में प्राप्त लोक साहित्य की परम्परा पर प्रकाश डाला गया है जिसमें अवधी लोक-जीवन एवं संस्कृति का दर्शन किया गया है। इन सामग्रियों से हम अवधी लोक काव्यों का परिचय पा सकते हैं। लोक गाथाओं का अध्ययन अगले अध्याय में किया जाएगा।

अवधी का लोक-गीत

डॉ॰ सत्यव्रत अवस्थी ने अवधी लोक गीतों का परिचय निम्न शीर्षकों में विभाजित करके दिया है - [1] ऋतु गीत, [2] श्रम गीत

---

1. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-6
2. राम नारायण लाल - प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता, इलाहाबाद
3. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-6, प्रथम संस्करण 1971

[3] मेलेकेगीत, [4] संस्कार गीत [5] धार्मिक गीत [6] बालगीत [7] विविध गीत ।

ऋतु गीत

अवधी के जनपद में ऋतु गीतों के अन्तर्गत, श्रावण मासीय गीतों में कजली और सावन नामक लोक गीत गाये जाते है । होली या रेखता नामक लोक गीत होली के अवसर पर गाये जाते हैं । इसी प्रकार बारह मासी, छमासा, और चमासा नामक लोक गीत भी ऋतु गीतों के अंतर्गत आते हैं । इन सभी प्रकार के लोक गीतों का एक एक उदाहरण नीचे प्रस्तुत किया जाता है :- कजली -

बन में बाजि रही बाँसुरिया
छुटि गये शंकर जी का ध्यान
काहु ढाँप शिव शंकर बाबा
काहुँ ढाँप भगवान ।
.... [बन में बाजी.....]
मांगि धतूरा शंकर खाये
लछुमन भाँग रहे भगवान [.. बन में बाजी...]

कजली

बरिसन बरिसन जलधुर औरिन कादिव कीच
कवने निरमोहिया कय धोरिया ससुरे मसावन होय
लागे रे महीना सावन का

कवने बरिस तेरी माय कवने बरस तोरे बाप
कवने बरस सजा बनिता जिन तोरी सुधिया न लेई
लागे रे महीना सावन का ।

रेखता (होली)

गोरी लाल ही लाल दिखावे ललन ललचावे
उधर लाल पैपान लाल है, लाल ही मांग भरा वे ।
टीका लाल, भाल पर शोभित प्यारी बेंदी में लाल लगावे
ललन ललचावे ।।

बारह मासी

ताकत रहिहे मधु बन की डगरिया
कोउ नहीं सुधि पेर सजनी,
लागो असाढ चहुं दिसि बरसे
भरि आए ताल ताल नदिया सगनी,
ठाठे सोच करें प्रिय बाला
कुवरी मोतिया सों अब न बनी,
सावन सखिया डाले हैं, हिंडोला
चुनि चुनि मोतियन मांग भरी.....।

श्रम गीत

अवधि के क्षेत्र में प्रचलित श्रम, गीतों के अंतर्गत जंतसार (चक्की) सोहनी कोल्हू, चरखा आदि के गीतों की चर्चा करते हुए, डॉ० अवस्थी ने जंतसार, सोहनी और कोल्हू के एक एक ग ीत दिये हैं । डॉ० सोहनगी ने श्रम गीतों के अन्तर्गत, जंतसार, कोल्हू और सोहनी के अतिरिक्त निर्वाही,

(निराई के गीत) धान रोपनी के गीत, खेत के कटनी के गीत, सीला बीनने के गीत और चरखा के गीत भी दिये हैं। श्री० कृष्णदास तथा अन्य लेखकों के द्वारा संकलित गीतों में भी, जंतसार, कोल्हू और निर्वाही के गीतों का स्थान मिला है। इन गीतों का भी, परिचय प्रथम विभाग की शैली के होने के कारण विस्तार न करके एक एक प्रकार के गीतों का उदाहरण मात्र देना, काफी मालूम पड़ता है।

<u>जंतसार</u>

धीरे, धीरे, गोहुआँ, डालि केहे जंतरिया
ननदी भौजैया, गोहुआँ पीसे मोरे राम,
राजे तो आवो, देवरा दुवरे, निरखि आ,
आज कैसे आयल, अकेलवा मोरे राम ।

<u>निरवाही</u> -

एक बेरि अब ते अ, भइया हमरी नगरिया होना,
भइया बहिनी के दुख देखि जाते उ हो ना
कइसे के आवउँ बहिनि तोहरी नगरिया होना
बहिनी रहिया में बाघ बघिनिया हो ना ।

<u>धान रोपनी</u>

गलिया बेगलिया घूमें नटोवा
कोई सखि गोदना गोदा वें हरि
भितरा से निकसी हैं मोरी ननदिया,

मोरी भौजी गोदना गोदावैं रे सखी ।
कातु ले हसो मटवा गोदना के गोदी ने मोर
भौजी गोदना, गोदावैं रे सखी ।।

खेतमें कटनी

खेतन में लागी, कटनिया हो राम
माये क हुमर झला झम झमके,
झम के कलइया कगनवा हो राम,
भिनि जुमिके सखियां नाहि बंधवा ओ
भरे चलो घर की बाजरिया हो राम खेतन में ।

सीलबीनने का गीत

सींका की बीनी डेमरिया हो
सीला बीने जांव
मातु की बीनी डेमरिया हो
यहि रे डेमरिया मां
भरिले चांदनिया [सीला]
यहिये डेमरिया मां सुरज किरनियां [सील]
सीला क बीन चुन भई रेख खरिया
सदया की बनी मैं बुनरिया [सील]

कोल्हू का गीत

सोखत जमुना कोह भरिहो रामा कोह भरि अगावई
चलबु मुलुकुआ, हमरे देस हो रामा
जो हम चली कोल्हुरि तोरबे हो
राम तोहरे के देस बा
कवन कवन, फलवाबु हो रामा ।।

चरखे का गीत

धरि गयें कवन चरखवा सिरिरिंग गज ओबरि हो राम ।
दिन भरि कतबई चरखावा ओटरिया
औंठ धाइ देवई हो राम
राम साजि छनी मुत बई मइयां जी के को वां तो
प्रभु बिसराई देवई हो ।

इसी प्रकार काम गारों के अन्य लोकगीत भी इस प्रदेश में प्राप्त हैं । लेकिन उनकी ओर लोक गीत के पुर्वकों का पूरा ध्यान नहीं हुआ है । खेत और खलिहानों का और भी कई गीत है ।

मेले के गीत

डा॰ सत्यव्रत अवस्थी ने ऐसे सभी गीतों को इस वर्ग में रखे हैं जो वहाँ की जन पदीय मन्दिरों में गाये जाते हैं । उन्हीं के शब्दों में "मेले में आने वाली स्त्रियाँ रास्ते भर गीत गाती हैं । इन्हीं गीतों को मेला गीत कहा जा सकता है । इन गीतों में देवी देवताओं की पूजा का वर्णन, राम कृष्ण अथवा अन्य किसी देवता के चरित्र से संबन्धित कथानक आदि रहता है । अवधी क्षेत्र में जो गीत इस अवसर पर गाए जाते हैं, उनसे लोक की उदार धार्मिक नीति का भान होता है । बच्चों की भलाई केलिए गाये जाने वाला एक मेला गीत इस प्रकार है :-

चला देखि आयी भोला के सोरह गली
के उ चढावे अक्षत चन्दन के अब ढावे
चुनरि चुनरि
राजा चढावे अक्षत चन्दन
रानी चढावे चुनरि चुनरी
राजा चढावे फूल के गजरा
रानी चढावे चुनरि चुनरी

यह गीत शिव पूजा के हैं ।

राम, कृष्ण, हनुमान, देवी, माता, नाग, आदि हर देवी देवता के नाम इसी प्रकार गीत प्राप्त हैं । उनका रूप और भाव समान है । पिछले पृष्ठों में हमने, भोजपुरी तक इन का सामान्य रूप समझ लिया है ।

झमक रिमिझ झमिझ
देवा बरि गई
ओस ही के बूंद बुना हो ।

जन्म सोहर

जो यह सोहर गावई सुनावई हो
सो बैकुंठ जाय सुनइया फल पावइ हो ।

दोहद

सारया खेलते कवन रामा
रानी के कवन रामा
कहाँ सारी खेलिये मेरेलाल
सरिया तो घर हूं उठाय तो
मुझे खिरिस्तरे
तमोली की हटिया मेरे लाल ।

विवाह के गीत [भँवर गीत]

लाई डारो भइया लाई डारो भइया
मैं तो बहिनि तुम्हारी
पहिली भँवरिया के फूटे
भइया अब हूं तुम्हारी
दूसरी भँवरिया के पंडित
बुढ़ुकि अब हूं तुम्हारी

संस्कार गीत

संस्कार गीतों में लोक संस्कृति की धरोहर के रूप में मनाये जाने वाले षोडश संस्कारों के आयोजन एवं उनके अवसर पर सांस्कृतिक कार्य क्रमों की आयोजन किया जाता है। ऐसे सभी अवसरों पर गाये जाने वाले गीत इस वर्ग में आते हैं। अवधी के संस्कार परक गीतों में जन्म संस्कार के गीतों के अन्तर्गत सोहर गीत बहुत प्रसिद्ध है तथा बड़ी संख्या में मिलते भी हैं। यों साध, सरियारोचना, बधाई, छटी, पसनी, मुण्डन और कर्णवेधन, यज्ञोपवीत और उसके उपसंस्कारों से संबद्ध गीत भी विपुल संख्या में उपलब्ध हैं। इसी प्रकार विवाह संस्कार के अंतर्गत, वर और कन्या के घर गाये जाने वाले कई गीत प्राप्त हैं। इस विषय में पेरी, तथा भात, माहुर [मड़वा] तेलु, गोर त्याही [सुहाग] द्वार पर भाँवर, बाती, गालियाँ, ज्योनार, परिछन, बरना, बनरी, नकटा, बोली, और सबेरा - इन नामों से पुकारे जानेवाले कई गीतों का उल्लेख किया जा सकता है। ये सारे के सारे गीत वही गीत मात्र हैं, जिन्हें हमने, मिथिला और भोजपुरी में परिचय पाया।

मृत्यु संस्कार विषयक लोक-गीतों के नाम पर कबीर के निर्गुण गीतों को भी उद्धृत किया है। नीचे उन ग ीतों में से कुछ उदाहरण दिये हैं।

सोहर

कवने गुना हरियर अमवा त कवने अमल गुना हो
ललना न जानो, मलिया के सेवै,
गुना न जाने, भुइ गुना हो।
न ओहि मलिया सीचे से
न भुइ गुना हो।

सिमरी भैवरिया के पेठत

भइया अब हूँ तुम्हारी.....।

विवाह के सातवे दिन अवधी में वर और वधू को उस कोठरी में ले जाया करता है, जहाँ वर की कुल देवी की मूर्ति बिठायी गयी है। वहाँ मातृ पूजन और मातृ स्थापना की जाती है। वहाँ ज्योति मानायी जाती हैं। यहाँ पति पत्नियों की आत्मा के मिलन का कार्य होता है। यह क्रिया अवधी में विवाह कार्य क्रमों में सबसे पवित्र माना जाता है। इस समय के गीत को बाती [दीप] कहा जाता है -

लाल तुम काहे मभिमियो बाती
कि तो को मिलई माला बहिन तोरी
कि तो को सिखयो बराती।
बीतति सारी राति,
लाल कोह न मिमयो बाती।

विवाह के और भी कई गीत प्राप्त हैं। सब के यहाँ उदाहरण दिये नहीं जा सकते।

मृत्यु का एक गीत

अर्थी के पीछे चलते चलते गाये जानेवाला यह गीत, निर्गुण गीतों में आता है।

बिछुरत प्राण काया
अब काहे रोई हो ?
कवन प्राण सुनो मोरी काया
मोर तोर भी न होई हो ?

हम तो जाब अब दूसरी महल में
तोहारी कवन गति होई हो ?

धार्मिक गीत

इन गीतों में माता शीतला की पूजा, तुलसी माता की पूजा, आदियों को अंकित किया है । निर्गुण नाम से पुकारे जाने वाले कुछ गीत भी पाये जाते हैं । एक चेचक रोग की भयंकरता से बच पाने की प्रार्थना पर आधारित है तो दूसरा सांसारिक जीवन की नश्वरता पर आधारित [illegible] है ।

एक शीतला माता गीत

निमिया के डरिया माता डरी हो
पिंडोलवा की झूली झूली न
झूलत, झूलत मइया भई है, प्यासी
मइया हे रे मागी, मासी, जलवरिया की न ?

निर्गुण

नैहर वा हम का नहीं भावय,
साई की नगरिया परम अतिसुंदर,
जहँ कोउ जाय न आवय ।

बालगीत

बाल-लोक गीतों में लोरी या पालने के गीतों के अतिरिक्त, नाना प्रकार के खेलों के खेलते समय गाये जाने वाले गीतों को समाविष्ट किया गया है । एक बालगीत :-

अक्कड़ बक्कड़ बंबे बो
अस्सी नब्बे पूरे सौ
बागबुले कागुलियां बुल्ले
सावन मास कोलईदा फूलें ।

विविध गीत

अहीरों के बिरहा, कहारों के कहरवा, चमारों के गीत, धोबियों के गीत, दुसाधों के गीत, आदि इस विभाग में आते हैं । एक अवधी बिरहा का उदाहरण देखिए :-

चुरवा के मोटरी उठाय पर मैसरी
        मेहरमु धोबिया दुआर
आधा चुरवा त अबहीं धोबी मट आवइ
        अधवा में सब संसार ।

इस प्रकार कहरवा गीत भी अधिक रोचक हैं ।

एक कहरवा :-

काया की नगरिया से गगरिया भरिके
काया के अंदोलना मांमुरलिया डोरि लगावरे,
मन मारी घमडारी घन हारी ठाढी परिगा पढे दांवरे
दिल दरियाई कुआँ मेरो है, ताले भरि भरि लावरे ।

<u>पाटमी</u>

किसी को साँप काटने पर गानेवाला एक मंत्र गीत ऐसा है -

गुर सतगुर सत गुरे मन धये,
गुरे नीर गुर सायर शंकर ।
गुरु सिखमी गुर तंत्र मंत्र
गढ बसैं निरंजन ।

इसी प्रकार सचमुच हर विधा के गीत अवध में भी प्राप्त होते हैं । आगे हम बघेली की ओर चल सकते हैं ।

[5] <u>बघेली लोक काव्य</u>

<u>भाषा सीमा</u>

बघेली के उत्तर में दक्षिणी पश्चिमी [इलाहाबाद] अवधी तथा मध्य मिरजापुर की पश्चिमी भोजपुरी बोली जाती है । इस के पूरब में छोटा नागपुर और बिलासपुर की छत्तीस गढी का क्षेत्र है । इसके दक्षिण में बालाघाट की मराठी तथा पश्चिम दक्षिण में बुंदेली का क्षेत्र है । बघेली भाषा भाषियों की संख्या दो करोड की है ।

बघेली लोक काव्यों को पंवाडा और लोक गीतों में विभक्त किया है । पंवाडा बघेली में बहुत कम मात्रा में पाया जाता है । गीतों की संख्या सामान्य से अधिक है । पंवाडा विधा पर अगले अध्याय में प्रकाश डाला जाएगा ।

डा॰ उदयनारायण तिवारी ने हिन्दी और हिन्दी की बोलियाँ नामक अपने ग्रन्थ में इस बोली के संबन्ध में सराहनीय मात्रा में पता दे दिया है । श्री चन्द्र जैन ने इस बोली के लोक-साहित्य पर प्रकाश डाला है । उनके अनुसार लोक गीतों का वर्गीकरण इस प्रकार है ।

[1] संस्कार गीत [2] देवी-देवताओं का गीत [3] ऋतुओं का गीत [4] प्रेम गीत [5] बालगीत [6] विविध गीत ।

विविध गीतों में उन्होंने राष्ट्रीय गीत, जाति विशेषों के गीत आदि को मिला दिया है

संस्कार गीत

बघेली संस्कार गीतों में जन्म, मुंडन, जनेऊ, विवाह, मृत्यु आदि के गीत प्राप्त हैं ।

जन्म गीत

एक फूल फूलई रे मथुरा,
त दूसर अजुध्या हो,
तीजउ फूल फूलवेला
कासी चौध मोरे अंगन हो ।
सासबा अंगना बहारई
पछया मागे अरज कुछ करिते हो ।

मुंडन

हँसि बोली पुष्प फलाने
राम बूझ
कउने गवन माँ के साथ
बन करिया भेड छावरिहो ।

जनेउ

जनेउ वन सिकिया मढोलई
कोइली न बोलई हो
तउने बन होयले बुलेआ
बम्हई बन भटक ई तो । आदि

विवाह के गीत

बरना, कन्यादान, भाँवर, बिदा आदि के गीत इस विभाग में ध्यान देने योग्य हैं ।

बरना के गीत

बनाके लम्बी लम्बी केले गोभारी आँखियारे,
ससुरारी से मउरी आवई घुरि घुरि जोडा पेरे ।
पहिरउ, पहिरउ, रे हजारी दुलहा का छवि लागह हे ।

कन्यादान के गीत

थारी जे कांपइ गेडुआ जे कांपइ,
कांपइ कुसा केरिडारि ।

मंडप, माँ कापिइं बाबा उन्हे सिव,
देत कुमारी का दान ।।

भाँवर

पहली भँवरि फिरि आइउं,
बाबा अबइं तुम्हारी हौं हो
दूसरि भँवरि फिरि आइउं
बाबुल अबइं तुम्हारी हौं हो ।।

बिदागीत

ई सुवन्न का अवसन पामने,
जइसे घना कइ दार ।
पै ई सुवन्न मेरे कान न मानइ
उठि जंगल का जार्य ।।

ऋतुगीत

कजली, फाग, बारहमासी, जैसी ऋतु और मौसम से संबन्ध रखने वाली कई गीत बघेली लोक-गीतों में प्राप्त हैं । ये गीत भी अन्य बोलियों में परिचित विधाओं से अपनी शैली मात्र में भिन्न दिखाई पड़ता है । विषय वस्तु उन सब का समान है । इसलिए यहाँ भी उदाहरण मात्र देकर संतुष्ट होना अनिवार्य चाहता है ।

कजली

इसका सावन गीत नाम भी प्रचलित पाया जाता है ।

मदई न फूलइ भउजी रमतेराइया,
पेमवइ खेलन हम जायइ होमा
काहे का मोरि भउजी आंखिया झुरे रिउ ।
पेहम अना बम्के चिरहउ होमा ।।

फाग

अमराइया म कोइली बोली करे
मुन कुाना रे।
रंगभरी मोरी देंहिया गमना मागीरे ।
अमराइया, मा कोइली बोली करे ।
रंग भरी मोरी चोलिया, गमना मागी रे ।

बारहमासी

अगहन धुमियाँ सहम से,
पुसे अमानी हैं हो,
अब माघ महीना बेनी माधव,
मकर नहानी हैं हो ।
फागुन मा फगुआ खेलवे
बहुत नीमी रहेवे हो ।

ये प्रत्येक गीत आनन्द और उल्लास के हैं । स्त्री-पुरुष दोनों के सम्वेत स्वर में गानेवाले गीत भी इन में प्राप्त हैं ।

प्रेम-गीत

प्रेम गीत विधा हर बोलियों में प्राप्त होते हुए भी, एक प्रत्येक विधा का नाम देकर उस का परिचय देने का प्रयत्न इस खण्ड में मात्र हुआ है । वास्तव में अन्य सभी विधा के गीतों में, प्रेम गीतों का समावेश है । संयोग और विप्रलंभ शृंगार के ये गीत दूसरी विधाओं में भी इन्हीं नामों में पाया जाता है । दादरा, बिरहा, आदि यहाँ विशेष ध्यान देने योग्य हैं ।

दादरा

कउनेछैलवा केरमार,
झमाझम पनियाँ का भिझरी ।
धोतिं आही संघवा कछारी
धाँ तो कि गढे सोमार ।।
माई बाप मिलि जनम दिहिमतें
सुरति दिहिस भगवान ।।

बिरहा

आमा कच्छ पानी बनायों योगी
पिरई तोरे कारन भयों जोगी
संबी सड़किया के गोला बजार
मोहि लादे चुनरिया में बागउं बजार ।।

वास्तव में इन गीतों को गाते सुनने पर किसी भी प्रेमी का हृदय पिघल पिघल ही उठेगा ।

बालगीत

शिशुगीत और बालगीत भी बघेली गीत-विधा के निर्णायक अंग हैं । बच्चों के खेलों के समय गाने वाले गीतों की संख्या भी यहाँ अधिक पायी जाती है ।

एक बालगीत

हम गिम, छिम गिम,
            भसा तिमगिम,
नाथ मेवर, बजी छने वार ।
मालिक सुआ, बैल का बखा
बैलन बैल लड़ाय दे,
फुर फुदा, कोठ कुदायवे,
फुर फुदा, मारी लात गिरी अधिरात ।।

आदिवासियों का गीत

बघेली लोक साहित्य विद्वान श्री॰चन्द्रसेन ने अन्य लोक-साहित्य प्रवर्तकों से बढ़कर एक महान कार्य किया है कि उन्होंने, इस क्षेत्र के विभिन्न आदि जातियों के जीवन का अध्ययन किया है । उनकी महत्व पूर्ण देन यह है कि उन्होंने विन्ध्य प्रदेश के आदि वासियों के गीतों का संकलन "विन्ध्य प्रदेश के आदिवासियों का लोक गीत" शीर्षक में किया । उनके मतानुसार बघेल प्रदेश में लगभग 370,374 जन-जातियाँ पायी जाती हैं ।

इन सबकी भाषा, संस्कृति एवं सभ्यता पृथक अस्तित्व का है । ये परम सन्तोषी लोग, दैवी शक्ति में मात्र विशेष विश्वास रखते, जंगली और मे जीवन बिता रहे हैं । वे सुख दु:ख में सदैव अपनी देवता का स्मरण करते जीवन बिताते हैं । कम से कम इन लोगों का अपना तीन सौ से अधिक देव हैं । इन लोगों के गीतों को श्री चन्द्र जैन ने - "जनजाति गीत" नाम दिया है[1] । इस पुस्तक के आधार पर इन के गीत 20 प्रकार के हैं[2] । उदाहरण में, एक करमा गीत लेकर यह खण्ड समाप्त कर सकता है ।

करमागीत

ऐ हे, हे, हाय....।
पतरेला ज्वान देखेमा लागे सुहावन रे
कउन फूल फूले मुहि सुखिया हो
कउन फूल फूले मन लाल
कउन फूल फूले रस डोमरी,
जहाँ छदना करे दर बार ।
राई फूल फूले मुहि सुखिया ओ,
सेमर फूले मन लाल
महुआ फूले या रस डोमरी हो ।
जहाँ छदना करे दर बार
देखे मालगे सुहावन रे ।।

केरल में भी आदिवासियों की कई जातियां हैं । उन सब का अपना अपना पृथक पृथक, जीवन पद्धतियां और लोक गीत होते हैं । उन गीतों का पूर्ण आकलन अभी तक नहीं हुआ है । जो दस बीस गीत मिला है उनकी तुलना में ये लोग भी उन्हीं के समकक्ष मालूम पड़ता है । आगे के अध्यायों में इस विषय पर भी प्रकाश डाला जाएगा ।

1. विन्ध्यप्रदेश के आदिवासियों का लोकगीत-सं.श्रीचन्द्रजैन,प्रेमिबन्धु,जबलपुर
2. करमा, सैला, सुआ, सजनी, ददरिया, भजन, बंसुलियां, बिरहा, रीना, फाग, मस्ती, दोहा, पहेली, बालगीत, कथागीत, पाबने केगीत, संस्कार गीत, दुर्भिक्ष के गीत, देशप्रेम, विविध ।

आगे हम छत्तीस गढ के लोक काव्यों का अध्ययन कर सकते ।

[6] छत्तीसगढी लोक गीत

छत्तीसगढ मध्य प्रदेश में है । इस के अन्तर्गत रायगढ, सुरगुजा, बिलासपुर, रायपुर, दुर्ग तथा बस्तर जिला आता है । प्रागैतिहासिक काल में इस प्रदेश का अधिकांश भाग दण्डकारण्य था । आगे महा कोसल का अधिकांश भाग छत्तीसगढी में परिणत हुआ । किसी समय यहाँ छत्तीस गढों के होने के कारण इस स्थान को छत्तीसगढ नाम पडा । वे वर्षों के समय गढों की संख्या बयालिस [42] हो गया था । तब भी इस प्रदेश का नाम छत्तीस गढ ही रहा । छत्तीस गढ के अरण्यों में आदि कालीन मानव सभ्यता पनप उठी थी ।

छत्तीस गढी के क्षेत्र में पण्डित श्यामाचरण दुबे का नाम उनकी छत्तीस गढी लोक-गीतों का परिचय पुस्तक के कारण उल्लेख्य है । श्री दुबे के अतिरिक्त श्री चन्द्र कुमार का - लोक कथाओं का संग्रह-छत्तीस गढ की लोक-कथाएं शीर्षक से प्रकाशित हुआ । छत्तीस गढी के लोक साहित्य का परिचयात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने वाले विद्वानों में श्री दयाशंकर शुक्ल का नाम सर्व प्रधान है जिन्होंने ने हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास षोडश भाग में छत्तीस गढी लोक साहित्य खण्ड का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है । उनके अनुसार छत्तीस गढ के लोक काव्य को पंवाडे और गीत दोनों विधा में विभक्त कर सकते हैं ।

लोक गीत

लोक गीतों पर यहाँ परिचय किया जाएगा । पवाडा पर छत्तीसगढ के लोक गीतों को नृत्यगीत, ऋतुगीत, प्रणयगीत, त्योहार गीत,

संस्कार गीत, धार्मिक गीत, बालक गीत और विविध गीतों में विभक्त कर सकता है । इन गीतों में नृत्य गीतों का मुख्य स्थान दिया गया है ।

नृत्यगीत

छत्तीसगढ के लोग लोक नृत्य में अतिनिपुण हैं । उनके प्रत्येक नृत्य का अपना अपना गीत भी है । सुआगीत, डंडागीत, मंडई गीत, करमा गीत आदि भिन्न नृत्य के गीत इस विधा में आतेर है । सुआ गीत इस विधा में सबसे प्रधान है । एक सुआ गीत ऐसा है । सुआगीत :-

कौन पिर रखा मोर भीतर काबर ए सुवना,
कि कौन पिर रखा उजर पांख ।
सुआ मोर कौन पिर रखा उजर पांख ।
मन ही पिर रखा, मोर भीतर काबर,
अकुला पिर रखा, उजर पांख रे ।।

डंडा गीत

पहली सुमिरों गणपति गौरा कुंवर महदेवा,
फेर लेव गुरु के नांव,
कंठ बिराजे सरसति माता,
भूले अक्छर देव बताय ।।

मंडई गीत

बालकपन में एक सुवना पोसवं
पिंजरा में उडजाई
उठ उठ सुवना मन्दिर में बैठे,
पिंजरा में आग लगाई ।

कारी बन के कारी चिरैया,
कारी उदर फुन जाय
पाथर पोर के पानी पिए
झिलमा फटि झर जाय ।

करमागीत

विपत्तियों से बचने केलिए मान्यता मानी के रूप में ये गीत गाये जाते हैं । घोला रोवत है राम बिन, देखे पराम ।
बाबर खांचर खोठी ठूंठा, डोंगर बीच भंभाय ।
सबे पतेरम सोना टूरो, कहाकुते है जाय ।
घोला रोवत है, राम बिन देखे पराम ।

ऋतु गीत

ऋतु गीतों के अन्तर्गत बारह मासी होली आदि गीत दिये गये हैं ।

बारहमासा

चन्दन और सुगन्ध हो, गले पुहुप के हार ।
मोतियन करये सिंगार हो, गले पुहुप के हार ।
जेठे महिना गे लिख पतिया भेज थे,
आवत लगिगे असाढ हो ।

होली

प्रस्तुत गीत में आगामी बरस केलिए फागुन को निमन्त्रित करने की रीति है ।

फागुन महराज, फागुन महराज,
अब के गए ले कब आबे ?
अरे कउन महीना होली,
अउ कउन महीना तीजा तिहार ।
अरे कउन महीना ममो दस हरा
अउ कउन महीना दिया जलाय
अरे सावन महीना में होली,
भादों तेजा रे तिहार ।।

प्रणय गीत

प्रणय गीत विधा छत्तीसगढ़ी में भी विशेष महत्त्व का है । यहाँ के विरह गीतों की संख्या आज तक किसी ने न गिन सकी है । ददरिया वर्ग के गीत मात्र, करोड़ों की तादाद में प्राप्त किया जा सकता है । यौवन की मादक घड़ियों में पति के विदेश रहने से बालिकाओं के दादुरों की भांति, पिया पुकारने का चित्र इन गीतों में प्राप्त है ।

एक ददरिया गीत -

कुआ के पानी कुआली मांगे
पर देसी चले जावे, रो आंसी मांगे....।

प्रियतम के बिना नींद भी उड गयी :-

आमा के पेड मा, बोले ला मदना
नींद बेरी गई आवे तुम्हर किरिया,
मार मा मछरी झरे ला सेवरा,
आंधी मां झूले राजा के चेहरा.... ।

त्योहार गीत

यहाँ के त्योहार गीतों में देवी की गीतों का प्राधान्य रहा है । जँवारा, माता सेवा, गौरा हरियाली आदि त्योहार और उनके अलग अलग गीत भी प्राप्त हैं । एक जवारा गीत ऐसा है :-

संवागा, मे आरती हो माय,
संवागा, मे आरती हो माय ।
किन्ही बाग के तीन पतौ
जहाँ भवानी तोर उतपन्न ।।

गौरा गीत

यह गौरी पार्वती के नाम की जानेवाली पूजा का गीत है :-

एक पतरी रेनी झेनी,
राय रतन दुर्गा देवी,
जागो गवरी जागो गवरा
जागो सहर के लोग ।। आदि

<u>संस्कार गीत</u>

सोहर, विवाह गीत, ये दोनों इन गीतों में मुख्य है । सोहर गीत से अधिक संख्या में विवाह गीत प्राप्त हैं ।

एक सोहर :-

प्रथम चरण पद गोविंद मैं
चरन मना मेले हैं वे ओ ।
बखिमी मोर विघन हरन गन राज
सोहर ला मय गावत हांव जी ॥

<u>विवाह के गीत</u>

चुलमटी, तेलचढ़ी, मायमौरी, महडोरी, परघनी, भांवर, गारी, बिदा, इस प्रकार विवाह के विभिन्न प्रसंगों से संबद्ध गीत यहाँ भी प्राप्त हैं । ये सब, प्रथम खण्ड में प्राप्त विभिन्न विवाह गीतों के समान ही हैं । समान अर्थ और विषय के हैं । कोई विशेष आचरण यहाँ देखा नहीं जाता । चुलमटी, अन्य बोलियों से भिन्न कार्य है जो गांव वाली स्त्रियाँ दुलहन और दुल्हा के नाम मट्टी लाने जाने के कार्य का गीत है । यथा :-

तोला माटी कोड़ला,
मइ आवे मीत धीरे धीरे ।
तोर कनिहा मा टील, धीरे धीर ?

तेल में हल्दी घोलकर नहाना, पकवान बनाके देना, दुल्हा को नहाके धोये, नये पोशाक आभूषण पहनाना, बरात की अगवानी करना, माँ वर गारी, लगाना, बिदा करना आदि के भी गीत हैं ।

एक विदा गीत :-

घर अगन जावब बहि भो
मनि करो सोच विचारे हो
ददा मोर कहिथे कुं बामें धंसि जावे ।
डिया बर ददा कुंआ में धंसि जावे
डिया बर बबा लेवे बैराग ।
बालक सुकना पढता मोर ददा
मोला अटकिन मावे भैयाय ।।

धार्मिक गीत

यहाँ भजन ही प्रमुख धार्मिक गीत है । एक भजन गीत :-

मैं नजियों बिनु राम की माला,
मैं न जियो बिनु राम ।
भज राम लखन सियावन पठ बाए,
नाहीं किये भला काम ।।

बालगीत

खेल गीत प्रमुख हैं । जैसे ढोंगी पोहा ।

कु करेंब कु
छी के मजलको - काकर ककरा ।
बारह बामा लक्का - राजा दस रथ के
सब -

मत्र   का चारा ?
      कन की काड्या
      का खेल ?
      ढूँढी घोड़ा
      कोन चोर
      रामु ....।

इसी प्रकार कई प्रकार के गीत छत्तीस गढ़ में प्राप्त हैं ।

यहाँ तक अवधी समुदाय के लोक गीतों का अध्ययन यहाँ पूरा होता है । आगे हम, ब्रज समुदाय के लोक गीतों की ओर मुड़ेंगे ।

अवधी समुदाय के लोक गीतों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि, मैथिली समुदाय के लोक गीतों के समान यहाँ के लोक गीत भी, लोक-जीवन का संचित प्रतिबिंब है । आगे हम ब्रज समुदाय की ओर मुड़ेंगे ।

[7] बुन्देली लोक-गीत

बुन्देल खण्ड की भाषा है बुन्देली । यह ब्रज और कन्नौजी भाषाओं की ब्रहिन बतायी जा सकती । इस जनपद के उत्तर में ब्रज और कन्नौजी पूर्व में अवधी बघेली एवं छत्तीस गढ़ी, दक्षिण में मराठी एवं मालवी, पश्चिम में मालवी एवं राजस्थानी है । करोड़ से अधिक लोग बुन्देली बोलते हैं । बुन्देल खण्डों का पूर्वनाम ग्वालियरी था । क्रमशः बुन्देली नाम स्वीकार किया गया था । ग्वालियर, भिंड, भेलसा, गुना, शिवपुरी, दतिया, टीकमगढ़, छत्तरपुर, पन्ना, सागर, जबलपुर, बेतुल, छिंदवाड़ा - तक बुन्देली का क्षेत्र फैला है । राय सीन, और मसाना जिले इस की पूर्वी और पश्चिमी सीमा को निर्धारित करते हैं ।

बुन्देली के लोक-साहित्य को प्रकाश में लाने का श्रेय पहले पहल श्री कृष्णानन्द गुप्त को है । यों शिव सहाय चतुर्वेदी और हर प्रसाद शर्मा ने भी बुन्देली के लोक साहित्य के संग्रह में योगदान किया है । श्री कृष्णानंद गुप्त के अनुसार बुन्देल खण्ड के लोक काव्य में, राछरे [लोक-गाथा] एवं लोक गीत अधिक मात्रा में है । उन्होंने लोक गीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है । [1] ऋतु गीत, [2] श्रम गीत [3] त्योहार गीत [4] संस्कार गीत [5] यात्रागीत, [6] धार्मिक गीत [7] बालगीत [8] विविध गीत । इस वर्गीकरण में, यात्रा गीत नामक विधा अन्य बोलियों के गीतों से वर्गीकरण से, नयापन प्रस्तुत करता है । विविध गीतों में जाति गीत और अन्य विशेष अवसरों के गीतों से मतलब है ।

ऋतु गीतों के अन्तर्गत सावन मास के सेर और राछरे, वसन्त ऋतु के फाग और बारह मासी गीत ही मुख्य है । फाग गीतों का महत्व जितना बुन्देल खण्ड में प्राप्त है उतना और कहीं भी प्राप्त नहीं है ।

एक सावन गीत

पाठे के ऊपर अब बिरना झिरें
बैला कलि उतराय ।
पाई धरिल्ला रे कुवों ना
मोरो परदेसी प्यासो जाय ।

राछरे

यह वर्षा ऋतु का गीत है । राछरे प्रायः बड़े करुण होते हैं ।

रामा - रे, हो, ओ, ओ,
काना बाजी मुरलिया, भाई रे कहाँ परीक्‍कार
गोकुल बाजी मुरलिया, भाई रे मथुरा परीक्‍कार

बिलवारी

अगहन में ज्वार की फसल काटते समय यह गीत आस्मान को फटा देता है -

लरकनि ऊँचे महल दिजा जारे
वे तो का है, ल्यावें तोरे वर वारे ।
काहो ल्यावों राजा जेठ ।
छुटा पे लिखियो बारे देवरा ।।

त्योहार गीत

मौतार, दिवारी कार्तिक और बैसा इसमें मुख्य हैं ।

मौतार के गीत

ए बाबुल दूरा जिन बाये,
मोको हो रहा उन जाव ।
ए बाबुल नायँ तें
मातन जोठो स्मात हे ।।

बदरिया रामी बरसो बिरन के देस
कों मासे आयी कारी बदरिया
आमों बरस गये मेघे ।
अग्म दिसा से आई बदरिया
पछिम बरस गये मेघ ।
बदरिया रामी बरसो बिरन के देस ।।

फाग

यहाँ फाग गीत चतुष्पदी पंचपदी आदि रूपों में भी प्राप्त होते हैं ।

उबरी रचिमता है भोर की,
दई पिया प्यारे की
कच्ची भीत उठी माटी की
छाई फूस चारे की
वे बंदेज बड़ी बेवाज,
जी में दस दुआरे की ।
किवार किवरिया एकउ नइयाँ
बिना कुंची तारे की ।।

ईसुरी, गंगाधर, भुजबल और ख्याली का नाम आज के नये फाग गीतकारों के बीच प्रचलित है । फाग गीतों की नमूना और मजा अन्य किसी भी गीत में नहीं मिलता है ।

श्रमगीत

गेहूं बोने वाला किसान, कूँटी में बेल लगाने वाला बेलदा आदि पसीने को गीत से मिलाते जो रामा..... गाता है - वही बुंदेला खण्ड का श्रम गीत है । बिरवारी गीत भी इस विभाग में आते हैं ;-

दिवारी के गीत

ये दिवाली के अवसर पर गाये जाते हैं। यह गीत अजीब नर्तन के साथ गाया जाता है। अहीर जाति के लोग इस गीत नृत्य को दिवाली के रात का मुख्य कार्य मान लेते हैं। टोली भर के गायक नर्तक के साथ गली - गुचडी में प्रदर्शन करते हैं। नर्तक की पोशाक भी अजीब होती है। धागों की जाली से बनी घुटनों के नीचे तक लटकती हुई पोशाक पहने रहता है। इस में अनेक फुंदने रहते हैं जो नृत्य के समय जो चारों ओर घूमें और बड़े सुहावने लगते हैं। नर्तक अपने हाथों में मोर पंख के मूठे लिए उछल, उछल कर नाचता है, तथा ऊंची तान खींच कर गाता है। दिवारी एक अजीब राग है केवल सुनकर ही उसकी विशेषता का कुछ आभास मिल सकता है। पहले सब मिलकर अपना हाथ उठाकर एक दोहा कहते हैं। जैसे ही गाना बंद हुआ जोर से ढोल बज उठता है।

दिवारी में पहेलियाँ भी गाई जाती है। पहले पहेली गाता है, फिर उसका उत्तर भी पहेली में सुनाया जाता है - जैसे -

कब कब बापी ने काजर दब ओर
कब कब करे सिंगार। हो ओ ?

कार्तिक गीत

ये गीत कार्तिक स्नान के अवसर पर गाये जाते हैं।

सुन मुरली की टेर अकल गई राधा
सुन मुरली की टेर।
बोल मोर राधा पनियां कोंभरी,
गऊ अन टिलम की बेर।

छोडो कन्हैया प्यारे बांह हमारी
हम घर सास कठोर
कहा करे सास, कहा करे ननदी
चलो कदम की ओर ।।

रास, फाग और कार्तिक के गीत इस समान भाव का भी मिलता है ।

चैत के गीत

चैत महीने में जगन्नाथ पूजा होती है । उस अवसर पर ये गीत गाये जाते हैं ।

भले विराजे जू उडीसा जगन्नाथ पुरी में
भले विराजे जू
कबसे छोडी मथुरा ब्रिन्दावन
कब से छोडी कासी
सार खंड में आन विराजे
बिंद्रावन के वासी
तुम तो भले विराजे जू ।।

संस्कार गीत

सोहर -

ऐसी गार बोली माइन, लाल को मरा न छीने ।
हतिया चढे मोरे ससुर जु बुलावें हतिया चढन आवे ।
घोडा चढे मोरे जेठ जु बुलावें घोडा चढन आवे ।
उँटवा चढे मोरे देवराजु बुलावें उँटवा चढन आवे ।।

विवाह के गीत

भांवर, बिदाई, ये दोनों गीत मुख्य माने गये हैं ।

भांवर

पहली भांवर जब फेरियो बेटी
अब हूं हमारी जू ।।
दूसरी भंवर जब फेरियो बेटी
अब हूं हमारी जू ।।

इसी प्रकार तीसरी चौथी का क्रम शुरू होता है ।

बिदाई

जाओ साजन घर आपने
चलन चलन साजन कहें,
राजा बाबुल चलन न दे य ।
कराओ साजन जू ।
दोम जो दे औं आजन दाम जो
सतनर दे औं साजन पचनर दे औं ।
एक भई देवौं अपनी धीया
जिन बिन घर होय सिसुनी ।।

धार्मिक गीत

माता के गीत और यात्रा के गीत इस विभाग में मुख्य माना जाता है ।

माता का भजन गीत

माई, तेरे मढ़ये बादर ऊपर हो माय ।
का गम से बादर ऊपर मोरी माता
सोप्स्छिम बरस रए मेघ ।
कौना की भींजी मैया सुरंग चुनरिया
सो कौना की पचरंग पाग ।

यात्रा के गीत

दो दो या चार चार कड़ियों का यह गीत तीर्थ यात्रा में जाने वाले भक्तों का गीत है । इन गीतों को "रमटेरा" टिप्पो आदि नामों में पुकारा जाता है ।

रामनाम कहवो करोरे, मोरे प्यारे,
जब लौं घट में प्राण
कबहुं के दीन दयाल हेरे मेरे भइया,
भनक परेगी कान ।
हो भजन बोमो लिया रघुबर केरे
भजन छिं में क्या दो बेठा पार हो रा।

बालगीत

इन में बालकों के खेल गीत मुख्य हैं ।

मामुलिया का खेल

खेल के साथ यह गीत भादों में गाया जाता है -

चीकनी मामुलिया के चीकने पतोआ
बरा तरें लागी अथैया
केवारी भौजी बरा तरें लागी अथैया
मीठी कचरिया के मीठे जो बीजा
मीठे ससुर जु के बोल ।

सुअटा

यह लड़कियों का खेल है । इस का दूसरा नाम "नौरता" है । सुवटा के पूजन के समय विशिष्ट पकवान भी बनाये जाते हैं ।

हिमांचल जु की कुंवरी लड़ायती नारे सुपअटा
गौरा बेटी नेरा तो अन दयो नौं दिना नारे सुअटा
दस में दिन करियो सिंगार ।।

और एक लड़का गीत

अल्लामें गई, दल्ला में गई
दल्ला में से, लड़क ल्याई
लाड़क में ने, ढकी दीनों
ढकी मोय, कोंचो दीनों ।

जातियों का गीत

चमार के गीत

आज दिखानी मइयां मोचनियां लाल
बाग दूंढे, बगीचा दूंढे
बैठी कौन डरेयां लाल
पूरा दूंढे, मुहल्ला दूंढे,
बैठी कौन बखरियां लाल

कोटवा टूटे, अटारी टूटे
बैठे कौन अ पैयाँ लाल ।।

इसी प्रकार, अपनी शैली और सुषमा के साथ हम बुन्देली गीतों का परिचय पा सकते हैं ।

{8} ब्रज-लोक गीत

ब्रज की सीमाओं पर पश्चिम में राजस्थानी, पश्चिमोत्तर में कौरवी, उत्तर में कुमाऊँनी पूर्व में कनौजी, दक्षिण में बुंदेली के क्षेत्र पड़ते हैं । यहाँ की जन संख्या दो करोड़ तक है । पूर्व वैदिक काल तक यहाँ आर्यों का पहुँचना हुआ नहीं था । उत्तर वैदिक काल में भी पांचाल और कुरुओं का यहाँ महत्व रहा था ।

डॉ॰ सत्येन्द्र ब्रज लोक साहित्य के प्रमुख विद्वान हैं । उन्होंने ब्रज के लोक गीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है - ऋतु गीत, धार्मिक गीत, संस्कार गीत, खेल के गीत, इस प्रकार बाँट दिया हैं ।

ऋतुगीत में रसिया गीत ब्रज की अपनी शैली का है । एक रसिया गीत इस प्रकार का है :-

तु काहे रही बकराय
बँदुर पै वाली भिजवाई
वेरावत लौगई
तो पै दउं जमी आम माँ
सुत अरजुन सोपाय अरराती प ।

होली

होली, रसिया के समान जन प्रिय है । अन्य बोलियों में फाग नाम से भी यह गीत प्राप्त है ।

जाकी है रोटी की भूख बुझायो चोला
ताई ते जाको परिगो नाम पतोला ।
जाके पेच पूम अलदाई
जुल्म है गो मैया, जुल्म है गयो ।

धार्मिक गीत

भजन गीत इस में प्रमुख मानाजाता है ।

देवी

देवी की पूजा के अवसर पर अनेक गीत गाए जाते हैं ।
भजन - कार्तिक स्नान के समय स्त्रियां राधाकृष्ण भजन गाती हैं -

जागिए गोपाल लाल, भोर भई अंगना
बाट के बटोही चाले गुजना,
बाट की पनिहारी चली
हम चली तोरी जमुना - आदि ।

संस्कार गीत

जन्म सोहर :-

भाभी हथिया बंधि बहुरे दुआर में
भाभी बदन बदीए, बोई देउ
जगमोहन लुगरा दीजिए ।
लाली जे लुगरा नादेउं
कुमर जी के सोहिलो ।।

विवाह गीत

विवाह के भिन्न भिन्न गीत प्राप्त हैं । बोडी उन में एक विशेष विधा है । अन्य बोलियों में ऐसा एक गीत प्राप्त नहीं है । एक बोडी गीत देखिए :-

बोडी के गरे घुंघर बाजें रे
तेजिन तो गरे घुंघर बाजें रे
सिर तेरे कलेजी चीरा
हए कलगी पे मोरल ना चैरे ।
आँख तेरे बरेली को सुरमा
हए डारी पे मोरल नाचै रे ।
म्हों तेरे बनन को बीडा
हए लाली पे मोरल नाचैरे ।

भाँवर

ए मेरी पैली भाँवरि
अबऊ बेटी बाप की
ए मेरी दूजी भाँवरि
अब उ बेटी बाप की
ए मेरी तीजी भाँवरि
अब उ बेटी बाप की ।

विदाई का गीत

बौरे बोरे छोडी है गुड़िया
रोवत छोटी है सहेलरियाँ

रोकत छोडी अपनी मायकी
चली पिया के साथ है
मेरा पटेउ खाली ओढ़ खाली
बायो जमइया धी ये ले गए ।।

खेल के गीत

कबडी, कोठा, चील झपटा, लिरिया, आटेबाटे, अटकन, बटकन, छपरी छपरा, आदि कई प्रकार के खेल ब्रज क्षेत्र में देखा जाता है। लड़के, लड़कियाँ, जवान, युवती, सब इसी प्रकार के भिन्न खेलों में लगे दिखाई पड़ जायगी । उन सब का अपना अपना गीत है ।

कबडी का गीत

कबडी-कबडी, कबडी
....
मरे का मर जाने दो
घी की चुपड़ी खाने दो आदि

कोठा जमाल शाही

यह खेल लड़कों का है । इस खेल के समय टोली भर लड़के एक साथ यह गीत गाते हैं ।

कोठा जमाल शाही,
पीछे देखे तो मार खाई ....।

चीलमट्टा

काह के मूंड पे भिनभदरा
कौवा पादे तउ न उड़ा
मैं पादूं तो झट उड़ा... ।

लिरिया

लिरिया और भेड़ खेल में जो लड़का लिरिया बनता है वह गाता है :-

आधी राती गड़रिया ढोल
मेरी भेड़न में कोई नाये
तेरी न्यारी सी दे के जागी ।

आटे-बाटे

आटे बाटे,
दही चटाके
बर फूले बंगाली फूले
बाबा लाए तोरई
भुजियाई भोरई ।।

अटका बटकन

अटकन बटकन
दही चटकन

बाबा माप मास कटोरी
एक कटोरी फूटी
मामा की बहू रूठी
एक बात पै रूठी
दूध दही पै रूठी
दूध दही तो बहुतेरी

भरा भरा

भरी के भरा
कोरि मारे
मियाँ बुलाए
चमकत आए
पकरी बिल्ली को काना ।।

ब्रज में लोक गीतों की संख्या तो अधिक है तो भी भिन्न विधाओं पर विचार करने से वे अन्य गीतों से कम हैं ।

कनौजी लोक गीत

कनौज के आस पास का क्षेत्र कनौजी कहा जाता है । इस क्षेत्र के लोक साहित्य का संग्रह संकलन श्री रत्नराम अग्नि द्वारा किया गया है । श्री अग्नि ने कनौजी लोक गीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है । श्रमगीत संस्कार गीत, ऋतु तथा पर्व के गीत, व्रत संबन्धी गीत, खेल के गीत, जाति गीत, प्रबन्ध गीत ।

संस्कार परक लोक गीतों के अन्तर्गत, सोहर, बरूआ गीत, विवाह गीत, आदि हैं ।

संस्कार गीत, सोहर

केसी अनमनी है, आज मारी तुम का ए अनमनी
चोली चीर अनमनी टांगी केसलएं छिटकाए सुना जिया ।
छन आंगन छन भीतर डोले
आवे पहाक पीर सुनोंखिया
भोर होत पो काटन लागी
केस्न लियो अवतार सुनो जिया ।
काए के छुरिन्धयन नार छिनाओ
काए के खपर हलवाओ ।

बरूआगीत

यह यज्ञोपवीत संस्कार है । केवल ब्राह्मण और क्षत्रियों के बीच ही यह प्रथा चलती है फिर भी ये गीत भी कनौज में पाये जाते हैं ।

गीत

को मेरे मुंजावन जइए, मुंजिया कट लए ।
को लइ आवे मुंज को जनेऊ चहिए
आजा मोरे मुंजवन जइएं मुंजिया कटइएं
बेइ लइ आमें आली मुंज के जनेऊ चाहिए ।।

विवाह गीत

कनौज में विवाह के विविध रस्मों के समय कई गीत गाते हैं। उन में पीली चिट्ठी से नकटा तक दस बीस रिस्मों के गीत प्राप्त हैं। इनमें बन्ना, बिदाई, सोहाग रात आदि विशिष्ट किस्म के हैं।

बन्ना गीत

रचियाँ साँझ के निकरे हैं
आए भोर भए ।
कउने बिन माए कउने
बस में परे ।
सउँन बिमाए जबकर
बस में परे ।
सउँन कटवाए जबकर
कसम करे ।।

बिदाई के गीत

आम नीम तरे ठाढ़ी बेटी
माया कलेवा लए ठाढ़ि है रे ।
आय न लेव मोरी बेटी पर देसिन,
तुम्हरे कलेवा बड़ो दूरि रे ।
सोउत बेटी की डुलिया फँदा में,
सोउत करें असवार है रे ।
इकवन मागी दूसर वन मागी
तिसरे में पहुँची जाय है रे ।।

ऋतु तथा पर्व के गीत

सावन :- कन्नौजी सावन गीत तीन प्रकार के हैं। एक वर्षा के वर्णनों का दूसरे शृंगार के उभय पक्ष के और तीसरा ससुराल में नव वधुओं के जीवन का चित्र। अन्य बोलियों के सावन गीतों से यह भिन्न है। एक सावन गीत :-

कि अरे रामा हीरा जड़ी
संदूक मोतिन की माला रे हारी।
कि अरे रामा सोने के थारन भुजना
परोसे रामा हे रामा,
कि अरे रामा नैनों ननदबू के
भइया तुम्हारे घरैं चवर्या रे हरी।
कि अरे रामा सोने के गुडुवा
गंगाजल चाकी रामा हे रामा ।।

फाग

यह वसन्त गीत है। रात दिन फाग गाने की प्रथा चलती है।

होरी खेलि रहे नन्दलाल,
मथुरा की कुंज गलिन में।
अरे कहाँ ते आई राधा प्यारी
कहाँ ते आये नन्दलाल
अरे कहाँ ते आये गोपी ग्वाल - मथुरा ।।

बारह मासा

यह बड़ा ही लोक प्रिय गीत है । इसमें साल भर के बारहों मासों का वर्णन विरहिणी के मुख से पाया जाता है ।

चैत मास चिंता अति बाढी
प्राण हरे चित लेवे ।
कहते धीर धरें मेरी सजनी
बिन हरि मोहन देवे ।।

मेला के गीत

सीता फूली न अंग समाए,
देख छवि रामजी की
कोई कोई सखियां मंगल गावें
कोई कोई केस संवारे ।।

श्रमगीत

जंतसार

इस का "चक्की" गीत नाम कनौज में प्रचलित है । जाँत पीसने वाली स्त्रियों का गीत है यह । करुण रस का पुट इस में प्राप्त है ।

रथ सों रोकत जात जटाई,
भिक्षुक धरि आओ रावन,
भिक्षा मांगन जाई ।
कुटी बाहर भईं जानकी,
रथ पे लेत चढाई
की की बटियां काह नाम है,
कउन ही लये जाई ।।

रोपा-निराई गीत

कम निवारण के गीतों में इन का भी स्थान है । कनौज वासी भी इस कार्य में प्रथम हैं । एक कमगीत इस प्रकार है :-

कि एजी मांभ, मांभ कछवा हैं
ठाढे इक महुआ इक आम ।
कि एजी, उइ तरे ठाढे दुई घर देसिया
इक मठ मन इक राम ।
कि एजी पिउ की पूजन चलीं
सिन दे मन सखिन के सी ।।
कि एजी की हैं । तुम कोई बाट बटोही,
की रे घर देसी लोग ।।

जाति गीत

अहीरों के गीत

जस, बिरहा दोनों इन का गीत हैं । एक बिरहा :-

गोरी के जुबना उमड़न लागे,
जैसे हरिनियां के सींग ।।
मूरिख जाने कहु रोग उठत है,
पीसि लगावे नीम
मस्ती के मारे बिरहा निकरी गओ,
भूमि गई कबरी कबीर ।।

चमारों के गीत

मारे डारे कटीली तोरी आँखियाँ,
ब्रह्मा बस कीनो बिस्नु बस की नो ।
रिसि मुनि बस कीनो बजाय के बँसुरि आ ।
काम बस कीनो बिरोध बस कीनो
हरि बस कीनो लगाय के छत्ति आँ ।।

कहारों के गीत

ये अधिक श्रृंगार रस के होते हैं ।

गोरी धनाने सुवना पालो जी गोरी धनान ।
बढ़ो जतन करि पिंजरा बनावो ।
तौ मैं धने धने तार लगाए जी ।
सुवा के कागज पियाराम मठायह ओ ।।

इसी प्रकार कनौजी लोक-गीतों की संख्या अधिक है । इन सारे गीतों के उदाहरण से हम समझ सकते हैं कि अन्य बोलियों के समान यहाँ भी लोक-जीवन अपनी स्वच्छन्द गति से चली आ रही है ।

‖10‖ राजस्थानी लोक-गीत

राजस्थानी राजस्थान की भाषा है । इस भाषा को "मरुभाषा" नाम भी है । यह मारवाड़ी का विकसित रूप माना जा सकता है ।

श्री नारायण सिंह भाटिया ने राजस्थानी लोक-साहित्य पर महत्व पूर्ण अन्वेषण शुरू किया । नये युग के आरंभ में से होकर यह प्रयत्न जारी रहा है । मरु लोक काव्य में - पंवाड़ा और गीत मुख्य हैं ।

लोक गीत

भिन्न विषयों पर असंख्य गीत प्राप्त हैं । ऋतु गीत ‖2‖ श्रम गीत ‖3‖ संस्कार गीत ‖4‖ धार्मिक गीत ‖5‖ बालगीत एवं ‖6‖ विविध गीत ।

राजस्थानी गीतों का एक विशिष्ट राग है, जिसे "मांड" राग कहता है । राग सुन कर हम यह निश्चित कर सकते हैं कि यह गीत किस समय गाने का है । "तार वाद्य" "फूंक के वाद्य" ताल वाद्य इस प्रकार इस के विविध वाद्य भी हैं ।

ऋतुगीत

सावण

बाए चाल्या छा भँवर जी पीपली जी
हाजी ढोला हो गयी घेर घुमेर बैठना की
रुत चाल्या चाकरी जी ।
हा जी माँ री बाल मम्द का
ओर आप बिन छठी मन माल गेजी ।
परण चल्या छा भँवर जी गोर की जी ।।
हाँ जी ढोला हो गयी जोब जवानी ।
माण्ण की रुत चाल्या चाकरी जी
मरल जलेबी भँवर जी मैं बणोजी ।।

झुला गीत

जीडो झुलावे ओ मोरे मोरा
जलवास जामी वाय ।
जाव ए सावणी यां की तीजां बाई मायली ।
झुलो झुलायो बाई आरो
पड्यो हिलोरा डाय भावण पाली बई सासेर।।

तीज

आई आई पेल सावण के ये तीज
मने भेजो मां सालरे जी ।
और सयली मां खेलण रमण गये जाय,
मने दीयो मां पीसणो जी
फोडूं तोडूं मां चाक्कडी कोय पाट
काड अखेरूं मां पीसणों नी ।
पोई पोई मां रोटियां की ये छेट,
पछलो पोयो मां मांडीयो जी ।।

होली-फाग

गट सूं तो होली माता उतरी,
वीरा डाय क्वल सिर मोडय रायं होली ।
कूंार डोढा जी होली का सेवरा
वीरा ये कुण होली में सांठो बाल सी
वीरा ये कुण देसी मदरी दातेय रांयकी होली
वीरा राम चंद्र जी होली में सांठो बाल सी ।
वीर लिछमण जी देसी मदरी दातय
रायां की होली कुंारे डोढा जी
होली का सेवरा ।।

श्रम गीत

भणत

खेत में काम करते समय विशेष ताल-लय के साथ गाये जानेवाले गीत हैं - भणत ।

लेवो भिणजी, ना लेरो भा गोर को
घोटी बीकानेर री, सालु सांगानेर री ।
पेले छड़ें माले री कांची गिरि मां मालेरो

ननद-भावज

कोठे से आई सुंठ, कोठे से आयो जी री ।
कोठे से आवो ए, भोली ननद थारो वीरो ।
जैपुर से आये सुंठ, दिल्ली से आयो जी री
कलकत्ते से आवो ए, भोली भावज म्हारो वीरो ।।

कुरजाँ

भागी दौड़ी आगई जी आगई कुरजाँ रे पास
आपा कुरजाँ एक गाव कीय
आप धर्म की एक भाग ।
कुरजा या म्हारी भीर मीला देय
ल्यावो न कोरा कागद लावल्या वो न कल्म दवात ।

संस्कार गीत

जन्म गीत को यहाँ जच्चा (सोहर) कहता है ।

जीय पहलो मास जवाजी न लाग्यो,
बाल बोहल मन ली यो जी
दू जो मास जवो जी न लाग्यो
बुकलठ मन रली यो जी ।।

विवाह के गीत

बनडा :-

बन्डा बन्डी तो कागद मोकल्या
आज्यो मारा आबोला के देल ।
धोषठ पाला राखिया पेलो तो
पालो राबवर राखियो
पठयो सिरदार बनो को दाव
हस्ती तो जीस्या
कजली देसरा ।।

विवाह के बाद "बामा बेठना" नामक एक विशेष रीति राजस्थान में है । बड़ा-लिनायक मानना भी एक अन्य विधा है । चाक पूजना और एक रिस्म है ।

बरात की यहाँ राती जाग करते हैं । यह क्रिया, देवी-देवताओं के गीतों से समा जाता है ।

माता का भवन में जीवो मारे लाके चिड़ियो
कुमारी के बिछो, माते आट भवानी कम रई ।
माताजी ने ध्याव जीवो मदा बुढ पीव ज्यूँ
माता का भवन में जीवो चिरमट डोरो बिछो
काजलिया के बिछो माटी ।।

भांवरे

पहलो फेरोमे म्हारी लाडो बाई दादाने लाड्ली
दूजो फेरोमे म्हारी लाडो बाईय बाबी सासेलाड्ली ।
त्रणो फेरोमे म्हारी लाडो बाईय बीरो सामो लाड्ली ।
चोथो फेरो लियो म्हारी लाडो बाइए पराई ये ।

धार्मिक गीत

जलदेवता, लोकम [चेक] ये दोनों मरु प्रदेश के मुख्य गीत हैं । मरु प्रदेशों में जल दुरलभ वस्तु है । इस कारण जल देवता की स्तुति का विशेष स्थान है ।

एक जलदेवता गीत इस प्रकार है ।

हरिया बांसारी छावडी री मांय पीली रोपूल
केनु बामण बाणिए रीके विणा जारे री धीय ।
मा मूं बामण बाणिए री न विणजारे री धीय ।
हूं तो सकल देवतीए पांगलियाँ पग देय ।।

मेडल का गीत

बाड जिवाल पींपली जी, ज्यांरी सीमी छायं ।
जरा ज्यूं मेडल मातायं ।
ल्यां सलखाणी छेल तो जो छेलड चढ गयो ताप ।
जिण मस्त वालो छर गयो जी, जिण रख्यो सारी रात ।
दादी भुवा थर थर कांपी डरावा भारी अरबाण ।
ये छर्यो डरपो जोग रायां ए अरज्यूं छतर की छांय ।।

बाल गीत

दीजा ओ नेनी री आय । नेनी मे कुलाय ।
एक दीजो मातरी, आपडी गुलाबी, आय ।।
कीकर देउं बाई मातरी म्हारे मोत्यां जितली लाल
साड्यो खोपरो जिणाके रीदाब ।।
x x x x x
कन्या मन्या कुर्र जाउं जोध पुर्र ।
लाउं कबूतर्र उडाय देउं फर्र ।।

(iii) मालवी लोक गीत

भारत वर्ष के मध्य में थोडा पश्चिम की ओर हटकर बुन्देली, मराठी, गुजराती और राजस्थानी के बीच उन से घिरा हुआ वर्तमान मध्य प्रदेश के अन्तर्गत यह जनपद बसा है । ऐतिहासिक दृष्टि से मालव अत्यन्त प्राचीन जनपद है ।

मालवी लोक साहित्य के अध्येताओं में डॉ॰ श्याम परमार का नाम प्रथम आता है । उन्होंने मालवी लोक काव्यों का वर्गीकरण गीत और पंवाडों में किया है । पंवाडे सब नई घटनाओं पर आधारित हैं । यहाँ लोक गीतों पर विचार किया जाएगा । मालवी लोक गीतों का वर्गीकरण श्रमगीत, नृत्य गीत, ऋतुगीत, देवता गीत, त्योहार गीत, संस्कार गीत, प्रेम गीत, बालिका गीत, विविध गीत आदि विभागों में किया है ।

सोहर-संस्कार गीतों में मुख्य माना जाता है । समस्त मालवी सोहरों में स्त्रियों के स्वभाव के सूचक एवं परंपरा गत रागद्वेष को व्यक्त करने

वाली रचनाएं हैं । बांझपन के अभिशाप से मुक्ति की उत्कट अभिलाषा एवं संतानोत्पत्ति के लिए कठोर साधना मान मनौती टोने-टोटके के द्वारा इच्छित अभिलाषा पूरी करने की प्रवृत्ति, गर्भवती के मासिक लक्षणों का उल्लेख, प्रसव पीड़ा का वर्णन तथा पुत्री की अपेक्षा पुत्र की कामना आदि उपलब्ध हैं :-

कुलबड़ (एक सोहर)

ऊंचले उबी कुलबड़, अई अई कमर माथ पीड़ा
पिता हमारी कूठा करोवी, ससरा हमरो राज विखयी
सासु अरक भांडार चिंता हमारी कुण करेजी ।
जेठ हमारा चोधरी जी जेठाणी भोली नार चिंता हमारी ।

प्रेम गीत

साजन

साजन समदरिया का बोले पेले पार ।
साजन खेले चोपटा
साजन कुणु हार्‌या कुण जीत्या
हार्‌या हा हा लाडी का बाप
जीत्या घर में से कड
लाडी कुंवर बोल्या ।
हारता हारता आधा माथ का
गेणा म्हारा मारु जी ।।

बापू

सामुने चौकियो के सट
लीपणि प मांडणी
ननदल म बोली घर में राड
ई हन आपूरा ।

क्यो तो कई प आमां बीजली
कई आपू छाती तो म्हने देखती प मारुनी ।।

गूजरी

ओगूजरण, तमारे बुलावे देवरो
ओ गूजरण
म्हारो ओ मंदर देखन आछ्यो
ते गय गजमी गूजरी ।।

बाल गीत

ये दोतरह के प्राप्त हैं । कुंवारियों का गीत और कुमारों का गीत ।

सांझी, छजल्या, अबल्या छजल्या, हरधा-गोधा, फुमाती (पुष्पिच्छादट) खेल आदि इन गीतों में आते हैं ।

सांझी

म्हारा पिछवाड़े खेलउगी, खेलउगी,
हूं जाण्यो पपइयो बोल्यो.....।
म्हारा बीराजी घढ़वा लाग्या
घढ जो अच्छी सी डाली ।।

विवाह गीत

सगाई के साथ ही मालवी में सगाई गीत शुरू होते हैं । इस अवसर पर साजन गीत गाये जाते हैं । अच्छे जीवन के सजीव चित्र एवं

परिवार की समृद्धि इन गीतों में मुखर हुई हैं ।

मालवी के समस्त विवाह गीत ऐसे है जिन में जातियों की दृष्टि से कोई विशेष अंतर लक्षित नहीं होता । प्रत्येक क्रिया के साथ यहां भी प्रत्येक गीत गाया जाता है ।

बीरा भात

बीरा रे सब का पेयासमने नोतिया,
अगुरो क्यों आया ?
बीरा रे के स्यहारी खेती में टोट पड़्यो
केन्हा हा मउकार नटिया ।
बीरा रे, के त्यारी गडी रोधुरो टूटियो
ठेत्यारा बलधो कुछ ।

बिदा

छठी एक बोठी लो धा बेज रे मायर बन्ना,
माता बई से मिलवा दोरे हटीला बनड़ा ।
माता बई से मिलवा दोरे हटीला बन्ना ।
माता बई से मिली करी दई करो हो ।।
इसी प्रकार मालवी गीतों का एक सामान्य परिचय हम पा सकते हैं ।

(12) कौरवी लोक गीत

मूलतः मेरठ, मुजफ्फर नगर, सहारनपुर, बुलंद शहर, बिजनौर आदि जिले कुरुप्रदेश में आते हैं । हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास सोलह भाग में, डॉ॰ कृष्णचन्द्र शर्मा ने हरियाणा के अंबाला, करनाल, रोह तक, हिसारजींद, गुड़गांव, पटियाला आदि जिलों को भी कौरवी बोलनेवाले प्रदेश में मिला दिया है ।

हरियाणा के लोक साहित्य के अध्येता डा॰ शंकर लाल यादव ने इस समस्त क्षेत्र को अपने अध्ययन का विषय बनाया है[1]। कौरवी क्षेत्र को खड़ी बोली का क्षेत्र माना जा सकता है[2]। कौरवी भाषा क्षेत्र के उत्तर में गढ़वाली पूर्व में पंचाली [कन्नौजी] दक्षिण में कन्नौजी तथा ब्रज, और पश्चिम में मारवाड़ी तथा पंजाबी भाषाओं से घिरी हैं। एक करोड़ से अधिक लोग इस भाषा के बोलने वाले हैं।

डॉ॰ कृष्णचन्द्र शर्मा के अनुसार कौरवी लोक गीतों का वर्गीकरण [1] श्रमगीत [2] ऋतुगीत [3] मेलागीत [4] त्योहार गीत [5] संस्कार गीत [6] धार्मिक गीत [7] बालक गीत - इस प्रकार है। हम भी इस वर्गीकरण के अनुसार एक विहंगावलोकन कर सकते हैं।

डॉ॰ सत्या गुप्ता जैसे नये लोक-साहित्य प्रवर्तकों का वर्गीकरण अधिक व्यापक मालूम पड़ता है।

श्रमगीत

यहाँ श्रमगीत बहुधा नृत्य गीत है। स्त्रियों और पुरुषों का अलग अलग गीत पाये जाते है। उमड़ कर उठती हुई मनमुग्धी घटाओं की भांति पग घुंघुरुओं से छर छर छम, छम, शब्द करती हुई यहाँ की बालिकाएं द्रुत लय गीतों से नृत्य करती हैं तो, इस प्रदेश की सुरम्य प्रकृति का सहज आभास प्रेक्षक के मन में हर्ष पैदा करेगा।

एक श्रम-नृत्य गीत :-

---

1. खड़ी बोली का लोक साहित्य - प्र॰हिन्दुस्तानी एकाडमी।
2. डा॰ सत्यागुप्ता का पी-एच॰डी प्रबन्ध, निर्देशक: इलाहाबाद विश्वविद्यालय

हम पैंफिरोजी दुपट्टा हमें तो
ना जाणी मजरिया रे ।
चाहे सेवा मारो, चाहे राजा छोडो
हम पे न भरती गगरिया ।।
हमारी पतली सी कमरिया
न उठती गगरिया रे । हम....

मलहोर

कोल्हू चलाते समय का गीत है यह ।

बलमा खेती में करी ना खेती से हेत
साग तोड़ने मैं गयी {बरी} आन मिरगने खेत}
फुलका पोय धर पे, हरियल कर दे साग
लंबी {सी} दे दे लाकडी गौ से पर धर दे आग ।

मैं ने सब विधि तुही मनाई
मेरी कुमि को भेहर तु माई
पेला ओम्मा अटे रई प
उसे री वही मठा पेर रहए ।।

मजदूरिन का सपना

मैं टेम्पे पे सोच रई बात
के सुसर म्हारे आवेंगी ।
सुसर म्हारे आवेंगी के गाडी लावेंगी
गाडी के बूढे बैले फेर मई लावेंगी ।।

एक सावन गीत

यह ऋतु गीत है ।

आते को सासु मेरी चरमा बिछाऊं री
कबी न बताऊं री
जाते हु दूंगी दिखलाई मियां ।
लौल्ली सी ओढी जाहर, ओल्ले ओल्ले कमडेबी
आए हैं आधी सी रात मियां
उठ उठ सासु मेरी जन्म की वैरण
लड़ाई की दुश्मन
तेरे महल्लों के चोर भागे जाय मियां ।।

पटका :-

यह गीत कथागीत और मुक्तक गीत दोनों विधा के हैं । स्त्रियां मंडलाकार में खड़ी होकर घूमती हुई एक के हाथ में दूसरे के हाथ से पटका ताल मार कर नृत्य करती हुई यह गीत गाती है । केरल की "तिरुवातिरा" से इस गीत का साम्य है । एक पटका-मुक्तक गीत ऐसा है :-

राज्जा नल के बार मची होली,
रोमची ओमी प मची ।
हम पे तो राज्जा मिलवा ही ला दे ।

बारहमासा

जीवन लहरे लेय.....................
सुना सुन्दर बैसाख की बिरिया में मु करे ।

जोबन लहरे लेय तो बौत करे मीन ती
बौत रई समुझाई मैं वाले से जीत्यू
है कोई चतुर सुजान मिलावे वाले जीव कू ।।

त्योहार गीत

गणेश चतुर्थी :-

आज मेरे श्याम गणपत आये
गणपत आय मेरे सिर पर बेठे {रामा....}
अच्छे अच्छे साज दुसाले उढाएं
गणपत आय मेरे माथे पे बेठे ।

संस्कार गीत

जन्म गीत सोहर को कौरवी में "ब्याई" कहते हैं। एक ब्याई गीत इस प्रकार है ।

बालुआँ राव ठरें, सारी रतियाँ
मैं तुम से बुझुं मेरे राज.... अरे, ए मेरे राज
कहाँ रे गंवाई सारी दिन और रतियाँ
तुम्हरी सुरत एक मालन छिटिया .... अरे ।

विवाह गीत

छज्जे तो बेठी लाडेली पान चब्बे,
करे बाबा से मीनती
बाबा देस जाइओ पिरदेस जइओ
हमारी जोडी के वर ढूंढ योजी
ताउ देस जाइओ पिर देस जी
हमारी जोडी के वर ढूंढि ए....।

धार्मिक गीत

भजन गीत इस श्रेणी में अधिक है ।

गंगास्तुति

नागाऊं दुनिया के ठावं
गंगाजी सिवले जाडी
पापी पराधी जो नर कहिए
वे नर मुख में न्हाएगी
दुखी रहेगा मेरा जीव
तिरछी बहेगी मेरी धार । आदि

बाल गीत

लोरी एवं खेल के गीत इस विभाग में आते हैं :-

लाला लाला लोरी, दूध भरी कटोरी
दूध में बतासे, लाला करे तमासे ।
लाला की मांकठी, कए बात पे रुठी
दई दूध पे रुठी, दही दूध भोरा ।।

विविध गीत के अन्तर्गत, रागनी जोगियों के गीत, धोबियों के गीत, दोहरे, गाय, कुबेलन आदि विभिन्न नामों के गीत भी यहां पाए जाते हैं ।

खडी बोली का लोक गीत

यद्यपि कौरवी क्षेत्र को, खडी बोली का क्षेत्र भी माना जाता है तो भी, हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास के अनुसार - कृष्णलाल उप्रेती ने खडी बोली का अलग क्षेत्र निर्धारित कर दिया है । कुरुप्रदेश ही यह माना जा सकता है तो भी कुछ जिलाओं का नाम उनके मतानुसार और बताया जा सकता है । डॉ॰ धीरेन्द्र वर्मा का मत "खडी बोली उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद, बिजनौर, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, और मेरठ - इन पांच जिलों, रामपुर रियासत और पंजाब के अंबाला, जिले में बोली जाती है ।

खडी बोली भाषियों की संख्या दो करोड से अधिक है । यह विभाजन, कौरवी औरखडी बोली को मिलाकर बताया समझा जा सकता है । इस कारण खडी बोली के गीतों का अलग परिचय देने की आवश्यकता नहीं पडता है । अनुष्ठान गीत, ऋतु गीत, स्त्रीपुरुष क्रिया कलापों का भेद, बालगीत, संस्कारों का गीत, इस प्रकार खडी बोली के गीतों का वर्गीकरण हुआ है ।

जन्मगीत, छटी केगीत, दसूटन, मुंडन, कनछेदन, जनेऊ, विवाह के भिन्न संस्कारों के गीत आदि खडी बोली में प्राप्त है । विवाह गीतों में, सगाई, हलद तेल, मढा, धुड चढी, कोयल, बोडिया तथा बधावा, पाणिग्रहण, बिदा, गोना आदि गीत ~~इस में~~ मुख्य है ।

खडी बोली प्रदेश में "उभारणी नामक" शोक गीत - मृत्यु गीतों में अति प्रसिद्ध है ।

धार्मिक गीत में त्योहार तथा अनुष्ठानों का गीत मुख्य माना जाता है । गंगागीत, जोगियों का गीत मुख्य हैं ।

ऋतु गीतों में सावन गीत, बारहमासा, होली आदि मुख्य है। श्रम गीतों में चक्की गीत, कोल्हू तथा कुए के गीत हैं। बाल गीतों में खेल गीत ही मुख्य हैं। इस के अलावा, जातिगीत एवं राजनीति के गीत प्रसिद्ध हैं। पंजाबी और पहाड़ी समुदाय के लोक गीतों में, ऊपर उद्धृत सारी विधाएं प्राप्त हैं। पहाड़ी समुदाय में, गढ़वाली, कुमाऊनी, नेपाली, कुलुई, चंबियाली आदि के गीत आते हैं। पंजाबी समुदाय में डोगरी, कांगड़ी आदि भाषाओं के गीत भी आते हैं। इन सारी बोलियों में प्राप्त लोक गीतों के अध्ययन से यह स्पष्ट मालूम पड़ता है कि ऊपर उद्धृत अन्य बोलियों में प्राप्त लोक गीतों से बढ़कर कुछ पहाड़ी लोक गीत, विशिष्ट विधा के हैं। गीतों के गाने का ढंग भी अलग है।

---

1. खड़ी बोली का लोक साहित्य - डॉ॰ सत्यागुप्त

चौथा अध्याय

मलयालम लोक गीत - संक्षिप्त सर्वेक्षण

केरल राज्य एवं मलयालम भाषा

मलयालम[1] केरल की भाषा है। भारत के सुदूर दक्षिण पश्चिमी तट पर यह राज्य बसा है। इस राज्य के उत्तर में मैसूर [कन्नड] प्रान्त है, पूर्व में सह्या-पहाड [पश्चिमी पहाड] है। दक्षिण और पश्चिम में अरब सागर है। इन प्राकृतिक सीमाओं ने इस देश की भाषा एवं सभ्यता को अविच्छिन्न रूप में युगों से सुरक्षित रखा है।

मलयालम शब्द "मला" [पहाड] एवं "आषि" [समुद्र] शब्दों के मेल से व्युत्पन्न बताया जाता है। मला एवं समुद्र के बीच का देश मला + आषि = मलयाळम - मलयाळम [मलयालम] हो गया है। देश शब्द के अर्थ में "अळ" शब्द का भी प्रयोग होता है। जिस देश में अधिक मला [पहाड] हो उस देश केलिए भी "मलयालम" शब्द लागू है।

---

1. 1956 के भाषा पुनर्गठन स्वीकरण के अवसर से जो केरल प्रांत माना गया वही केरल प्रांत - जो तिरुविताकूर कोचीन एवं मलबार के मेल से स्थापित हुआ है।

संभव है, इस दृष्टि से भी इस देश का नाम मलयालम पड़ा हो। इस भौगोलिक सीमा के साथ साथ मलयालम की भाषा सीमाएं भी ध्यान देने योग्य हैं। मलयालम भाषी प्रदेशों के उत्तर में कन्नड भाषा बोली जाती है। पूर्व और दक्षिण में तमिष है। पश्चिम में विशाल सागर होने के कारण कोई भाषा सीमा बतायी नहीं जा सकती। लेकिन पश्चिम की अरब भाषा का बहुत हल्का प्रभाव इस देश की भाषा में सम्मिलित है। इस प्रकार हम बता सकते हैं कि सुदूर दक्षिण के पश्चिमी तट में समुद्र के किनारे कन्नड और तमिष भाषाओं की संपर्क सीमा में मलयालम देश है इस देश की भाषा है मलयालम। 1971 की जनगणना के आधार पर दो करोड से अधिक संख्या की एक जनता प्रस्तुत भाषा को निजी मातृभाषा के रूप में स्वीकार करती है।

इस भाषा के व्यक्तित्व एवं प्राचीनता पर विचार करते हुए डॉ॰ के॰एम॰ जोर्ज[1] ने बताया है मलयालम अपने में स्वतंत्र, पुरानी तथा सुसंस्कृत मालूम पड़ती है। यह भाषा द्राविडकुल में उत्पन्न एवं विशेष परिस्थिति में स्थापित विशिष्ट भाषा है। द्राविड भाषाओं का एक स्वतंत्र गोत्र होता है। प्रमुख द्राविड भाषाएं चार हैं - कन्नड, तमिष, तेलुगु और मलयालम। कन्नड और तेलुगु एक भाषा युगल मानी गयी हैं। मलयालम और तमिष दूसरा भाषा युगल है। दक्षिण भारत के उत्तरी खंड में कन्नड और तेलुगु का व्यवहार होता है जबकि उसके दक्षिण में तमिष और मलयालम का प्रचार है। संघ[2] कालों में इस प्रदेश का नाम तमिषकम था। "अकं" शब्द देश के लिए प्रयुक्त है। उत्तर में वेंकटगिरि (तिरुपति) से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक का विशाल देश तमिषकम नाम से अभिहित था।

---

1. साहित्य चरित्रं प्रस्थानङ्ङलिलूटे - डॉ॰ के॰एम॰जोर्ज।

Olrix and prop - measures - They say that Research in folk lore is not only a study in art and science but also a mode of life.

2. बी॰सी॰छठी शति से लेकर ए॰डी॰छठी शति तक का काल दक्षिण भारत के साहित्य में संघकाल माना जाता है।

तमिऴकम की मूल भाषा उस समय में एक थी । वह तमिऴ नाम से व्यवहृत थी । वह कालान्तर में[1] कोटुन्तमिऴ एवं चेन्तमिऴ नाम से विभक्त हुई । उस मूल भाषा से उत्पन्न तमिऴ की सहोदरा भाषा है मलयालम ।

इस भाषा की प्राचीनता पर विचार करने पर केवल बारहवीं सदी के बाद की सामग्रियाँ उपलब्ध हैं । बारहवीं सदी के पहले की स्पष्ट समझनेलायक कोई भी चीज़ अब तक प्राप्त नहीं है । अनुसंधाताओं द्वारा प्रस्तुत जो कोई चीज अभी प्राप्त है उसकी काल गणना असंदिग्ध सी है ।

थोड़ा इतिहास

केरल का उल्लेख रामायण तथा महाभारत में मिलता है । अशोक के शिला स्तंभों, स्तूपों और शासनों पर भी यह नाम प्राप्त है । संघकालीन रचनाओं में इस देश की चर्चा दक्षिण के अन्यतम प्रान्त के रूप में की गयी है । इतिहासों और अन्य प्रमाणों से इसलिए यह सिद्ध है कि "केरल राज्य" प्रागैतिहासिक युगों में भी कायम था । मिस्र, चीन, बेबिलोन, रोम आदि देशों से इस देश का व्यापारिक सम्बन्ध रहा था । उसके भी प्रमाण प्राप्त हैं । सारे कागजातों में इस देश को प्रजातंत्रवादी देश बताया गया है ।

प्राचीनकाल से ही यहाँ भी जन भाषा में साहित्य बनता था । इस कारण से आज भी लोक साहित्य के क्षेत्र में मलयालम भाषा धनी है । अन्य भाषाओं की भाँति गद्य और पद्य दोनों विभागों का लोक साहित्य इस भाषा में प्राप्त है । हिन्दी के समान मलयालम से भी लोक

---

1. कोटुं तमिऴ व्यावहारिक तमिऴ के और चेन्तमिऴ साहित्यिक तमिऴ के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है ।

कथाएं, लोक नाटक, लोकोक्ति ढकोसले, सूक्तियाँ आदि भिन्न श्रेणियों का साहित्य गद्य विभाग के अन्तर्गत है । पद्य-लोक काव्य-की शाखा भी बहुत विशाल एवं महत्वपूर्ण है । लोक काव्य की विधाओं में लोकगीत एवं लोकगाथाएं [कथागीत] बड़ी संख्या में प्राप्त हैं । इस प्रबन्ध में लोककाव्यों पर विचार किया गया है ।

मलयालम लोककाव्य

"रूप" की दृष्टि से मलयालम लोक काव्यों को भी दो विभागों में विभक्त कर सकते हैं [1] लोकगीत और [2] लोक गाथा ।

[1] लोक-गीत

लोकगीतों का श्रेणी विभाजन -

लोकगीतों का वर्गीकरण निम्नलिखित श्रेणियों में किया जा सकता है । [अ] संस्कार [आ] रसानुभूति [3] ऋतुएं [4] श्रम एवं पेशा [5] जातिगत संपत्ति ।

केरल की विशिष्ट भौगोलिक सीमाओं के आधार पर इस देश के गीतों को और तीन खंडों में विभक्त कर सकते हैं । [अ] उत्तरी गीत [वटक्कन्पाट्टु] [आ] मध्यदेश के गीत [नटुनाटन्पाट्टु] [इ] दक्षिणी गीत [तेक्कन्पाट्टु] ।

मलयालम लोककाव्यों के अध्ययन के समय वटक्कनप्पाट्टु, तेक्कनप्पाट्टु एवं तेक्कनप्पाट्टु कहने से उसका अलग विभाजन भी होती है[1] । इन में से प्रत्येक विधा के गीतों में भी गीत और गाथाएं अलग अलग मिलते हैं । इतिहास-आचार्य उल्लूर ने अपने केरल साहित्य के इतिहास" में यह भौगोलिक वर्गीकरण भी स्वीकार किया है[2] । उन्होंने प्रकीर्ण लोकगीत [पलवकप्पाट्टुकल], मुक्तक गीत एवं प्रबन्ध गीत जैसा रूप परक वर्गीकरण भी किया है । मुक्तकगीतों को उल्लूर ने केवल गीत नाम भी दिया है । मतलब है नियतस्वभावाले छोटे गीत । प्रबन्ध गीत से उनका तात्पर्य दीर्घ आकार के कथाश्रित गीतकाव्यों से है । हिन्दी में इन्हें लोकगाथा नाम दिया गया है ।

वस्तु एवं धर्म के आधार पर मलयालम लोक काव्यों का वर्गीकरण हुआ है । केरल का जनजीवन त्रिवर्णी संस्कार से संपन्न है[3] । यहाँ हिन्दू रहते हैं, मुसलमान है और ईसाई भी । इन तीनों भिन्न जनसमाजों के जीवन से सम्बन्धित गीत यहाँ खूब प्रचलित हैं । अतएव मलयालम के लोक काव्यों का वर्गीकरण धार्मिक दृष्टि से भी हुआ है । जैसे [1] हिन्दु गीत, [2] खिरस्तीय गीत [मार्गम्कलिप्पाट्टुकल] [3] इस्लामिक गीत [माप्पिल प्पाट्टुकल] । अन्य वर्गीकरणों की सीमाओं में भी इनमें से थोड़े से गीत आ जाते हैं । फिर भी केरल की आबादी एवं धार्मिक पृष्ठभूमि के आधार पर यह वर्गीकरण समीचीन ही लगता है ।

---

1. वटक्कनपाट्टु, उत्तरी मलबार के गीतों को कहा जाता है । इनमें पुत्तूरं एवं तच्चोलि गीत ही प्रमुख हैं । मध्य केरल के गीत तेक्कनप्पाट्टु एवं दक्षिण केरल के गीत तेक्कनप्पाट्टु है ।
2. केरल साहित्य चरित्रम, भाग-1, तीसरा संस्करण - जून 1967 अध्याय 10 - पृ.205
3. हिन्दु, मुसलमान, ईसाई - धर्मों के सम्यक मेल से ।

कुछ इतिहासकारों ने इन तीनों विभागों के गीतों का रूप और वस्तुपरक वर्गीकरण और भी किया है[1]। अनुष्ठानिक, देवतापूजा, वीरराघव शास्त्री, कुलनीति, कर्म, आचार, उद्योग, देशभक्ति, विनोद और मनोरंजन, समाज एवं राष्ट्र । इन सभी विषयों के आधार पर भिन्न भिन्न रूप के गीत मलयालम में प्राप्त हैं ।

धार्मिक अनुष्ठानों से सम्बन्धित गीत

इसके दो रूप है - पूर्ण धार्मिक और अर्ध धार्मिक ।

पूर्ण धार्मिक गीत :- सर्पप्पाट्टु [नागपूजा गीत] परदेवप्पाट्टु, "तीयाट्टु", कुत्तियोट्टप्पाट्टु, शास्ताप्पाट्टु, भाद्रप्पाट्टु आदि ।

अर्धधार्मिक गीत :- वेलरप्पाट्टु [नावेरुप्पाट्टु] पिणिप्पाट्टु, पुल्लुवरप्पाट्टु, पाणप्पाट्टु, संघकलि, पूरक्कलि, वेदान्तसंबन्धी गीत आदि इस विभाग में आते हैं ।

[2] मज़दूरों के गीत [श्रमगीत]

कृषक गीत, वट्टिट्टप्पाट्टु [टोकरी बनते समय के गीत], वण्डिप्पाट्टु [गाडी हाँकते समय के गीत] कन्नप्पाट्टु [भैंस चरानेवालों के गीत] वेट्टप्पाट्टु [शिकार करनेवालों के गीत] आदि ।

[3] खेल और विनोद के गीत

तुंपिकलि, तलयाट्टं कलि, पेण्णुकलि, पडामतुकलि, पूरक्कलि आदि इस विभाग में आते हैं ।

---

1. मलयालम साहित्य का इतिहास - डॉ. भास्करन नायर - पृ.11
ऊपर दी गयी विभाजन प्रक्रिया को और भी व्यापक दृष्टि से और सूक्ष्मांशों पर विचार करते हुए यह विभाजन किया गया है । उन्नूर के विभाजन से यह विभाजन भिन्न मात्रा का नहीं है ।
जीशंकर पिल्ले ने भी यही मार्ग स्वीकार किया । साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे - दूसरा संस्करण 1973 पृ.75 से 81 तक

§4§ सिरस्तीय गीत §मस्याणिप्पाट्टु§

आराधना सम्बन्धी गीत एवं विवाह के गीत इस विभाग में आते हैं।

§5§ इस्लामिक गीत §माप्पिळप्पाट्टु§

आराधाना क्रीडा और विनोद एवं विवाह के गीत इनमें मुख्य है। श्री तिरुविताम्कूर त्रिवेन्द्रम ने मलयालम लोकगीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है। §1§ पेशे से संबंधी §2§ विनोद संबंधी, §3§ ब्याह संबन्धी §4§ भक्ति संबन्धी §5§ तत्वोपदेश सम्बन्धी §6§ वीराराधना संबन्धी §7§ सौन्दर्य पूजन संबन्धी, §8§ पक्षिकथा संबन्धी ।

मलयालम साहित्य के प्रमुख इतिहासकार एवं लोक साहित्य के प्रवर्तकों ने अभी तक जो वर्गीकरण कर दिया है, सब अँग्रेजी साहित्य के प्राप्त अनुभव एवं यहाँ से संग्रहीत अपनी अपनी सामग्री के आधार पर है। इस विषय में समस्त भारतीय लोक-साहित्य का अध्ययन अनिवार्य है। अभी तक प्राप्त समस्त सामग्रियों का निरीक्षण और अन्य भाषाओं से उन सामग्री का साम्य वैषम्य भी देखना है। इस दृष्टि से तो मलयालम लोक साहित्य का वर्गीकरण अभी तक नहीं हुआ है। इस दृष्टि से मलयालम लोक काव्यों का वर्गीकरण और भी सार्थक और परिमार्जित रूप में आगे किया जाएगा। अभी तक प्राप्त समस्त सामग्रियों और वर्गीकरण की पद्धति को इस कार्य में स्वीकार किया गया है और नया मार्ग भी, आगे प्रबन्ध के अन्य

1· ओरु नूरु नाटन्पाट्टुकळ, भूमिका। पृ·18 व 19

खण्डों में इस वर्गीकरण पद्धति को स्वीकार किया जाएगा[1]। अब तक प्राप्त समस्त विद्वानों के मतों और वर्गीकरण पद्धतियों के सूक्ष्म निरीक्षण और आर्जित सामग्री के सूक्ष्मावलोकन के बाद उन सबों को स्वीकार कर, मलयालम लोक-काव्यों में मुक्तक (स्फुट) गीतों का वर्गीकरण निम्न लिखित रूप में करना अधिक वैज्ञानिक लगता है ।

(1) सांस्कृतिक गीत (आचारपाट्टुकल)

(2) धार्मिक अनुष्ठान के गीत (मतपरमाय अनुष्ठान पाट्टुकल)

(3) जातिविशेषों के गीत (विशेष जातिक्कारुडे पाट्टुकल)

(4) श्रमिक वर्गों के गीत (पणिप्पाट्टुकल)

(5) खेल - तमाशे के गीत (कळिकळुं तमाशकळुमुळ्ळ पाट्टुकळ)

(6) अन्य विविध गीत (मट्टु पलवक पाट्टुकल)

अन्य सभी वर्गीकरणों से यह वर्गीकरण इसलिए संगत है कि इस वर्गीकरण में वैज्ञानिक दृष्टि अधिक है ।

---

1. (1) उल्लूर, केरल साहित्य चरित्रम, अध्याय 10, पृ.205

(2) आर.नारायण पणिक्कर - केरल भाषा साहित्य चरित्रम

(3) पी. शंकरन नंपियार - मलयालम साहित्य चरित्रम

(4) पी.के. परमेश्वरन नायर - मलयालम साहित्य चरित्रम

(5) डॉ. के.एम. जोर्ज - साहित्य चरित्रम् प्रस्थानङ्ङलिलूटे

(6) टी.एम. चुम्मार - पद्य साहित्य चरित्रम

(7) एन. कृष्ण पिल्ले - कैरलियुडे कथा

(8) माओरोरी - कुंचन वरे

(9) डा. पी. जेथॉयस - केरलत्तिले क्रस्तीय साहित्य चरित्रम

(10) डा. चुम्मार - नाटक कळरि - आदि

(11) कृष्णचैतन्य - ए हिस्ट्री आफ मलयालम लिटरेचर

[1] आचारप्पाट्टुकल [सांस्कृतिक गीत]

जन्म से पहले से लेकर मृत्यु के बाद तक मानव जीवन विभिन्न संस्कारों से संबद्ध है । मलयालम गीतों में भी षोडश संस्कारों का उल्लेख करने वाले गीत हैं । इन में, जन्म, विवाह और मरण - ये ही मुख्य हैं ।

जन्म संस्कार के गीत [सोहर विभाग के गीत]

गर्भाधान, पुंसवन, दोहद, पुत्रजन्म, लोरि, शिशुगीत आदि कई गीत मलयालम में प्राप्त हैं । इन्हें जन्म संस्कार के गीत या सोहर गीत कह सकते हैं । विषय की सुविधा के अनुसार जीवन, धर्म, पेशा, और ऋतु संबन्धी वर्गीकरण भी इसे कह सकता है । हिन्दी और मलयालम लोक गीतों की समानता पर विचार करते समय यह वर्गीकरण भी समीचीन मालूम पड़ता है ।

पुत्र प्राप्ति का गीत

विवाहोपरान्त नव वधू में सन्तानोत्पत्ति की अभिलाषा होती है । एक मलयाली नववधू को विवाहानंतर कई दिन इस प्रतीक्षा में बैठना पड़ती है । वह विवश हो उठती है । उसकी वेदना की अभिव्यक्ति इस गीत में देख सकते हैं ।

ओरु मणि कुञ्ञिक्कालु काणान[1]
एत्तनिनि कात्तिरिक्कणम ञानु
ओम्नेन्टे पूमर पूर्वजियाम
इनियेत्र कालं ञान कात्तिरिक्कुं ।

---

1. नाठोडिप्पाट्टुकल - कल्लाणियम कृष्णापासाम - पृ.22

भाव : एक छोटापाव [बच्चा] कब जन्म लेगा ? मेरी अभिलाषा का वृक्ष अब कितने साल बीतने पर फूलेगा ? मेरा भाग्य क्या उसकेलिए नहीं है ? यह गीत सोहर विभाग में आता है । और एक महिलामहिला का मानसिक भाव इस गीत में देख सकते हैं । उसकी अभिलाषा प्रथम बच्चे के पुरुष हो जाने की है ।

आद्यतो कुञ्ञोराणावेणम ....
बच्चन्टे तनिरूप मायिक्केणम
मणि मणि क कण्णु नलरपुरिकों
कपोले तम्मे कण्मिक्केणम
तम्सेन्टोडिप्पिरप्पाणिलेम्मु...
तैम्टाडि कोण्टाडि चोम्मिक्केणम ....।
....

भाव : मेरी प्रथम संतान बच्चा [पुरुष] ही हो । वह अपने पिता की सूरत का ही हो जाय । उसे देखकर दूसरा स्वरूप लोका प्रशंसा करते हुए कहे कि यह बच्चा, उसके पिता का ही है । देखो वह कुन्तल और वे ही आँखें । एक स्त्री की यह अभिलाषा अमोघ है ।

<u>याककप्पाट्टु [दोहद]</u>

सोहर विभाग में एक संस्कार गीत है गार्भिन स्त्रियों की इच्छाओं का गीत । गर्भवती स्त्री, गार्भिन बनने के बाद से प्रसव समय तक भाँति भाँति की चीजें खाना चाहती है । समाज के उच्च नीच वर्गों में यह अभिलाषा समान रूप से रहती है । केरल की निम्न श्रेणी की स्त्रियों के बीच खासकर मजदूरिनों के बीच प्रचलित एक गीत नीचे दिया है । मलयालम में इस

---

1. माडोटिप्पाट्टुकल - कल्लाणिक्कल कृष्णमाशान - पृ.30

अवधि को "याक्कूकालं" [दोहदकाम] कहा जाता है । यह याक्कप्पाट्टु [दोहद] उसका उदाहरण है।

ओन्नाम मार्त पेरम्मारे,
कन्निप्पेण्णाम मण्णुतिन्नु
रन्टां मार्त पेरम्मारे...
मत्तेन्टेलयु मेक्कर्तिकडु
मुन्नां मार्त पेरम्मारे...
मानत्तां कण्णयु मेक्कुम्पु
नु नालां मार्त पेरम्मारे
नारकत्तिन्टेतिक्क तिन्नु
अंचां मार्त पेरमारे
वेप्पिन्टेलयु पचारा
आरां मार्त पेरम्मारे
अरियुं पुक्कियु मयिर मीनु
एषां मार्त पेरम्मारे
वाघेन्टे कन्नु वाक्कीनु
एट्टां मार्त पेरम्मारे
कट्टनरिकट्टतिम्मुं पेण्णु
ओंपतां मार्त पेरम्मारे
एकर्डु तविडु मेरिकेयडडु
पत्तां मार्त पेरम्मारे
पेररत्तो पेण्णोड पोम कोयवि ।

1• मलयालम स्प्ट गीतों में दस पंक्तियों के कुछ गीत है । ये एक से दस तक गिनती में गाये जाते है । इन्हें पत्तडिप्पाट्टु [दस पंक्तियों का गीत [विधा] कहा जाता है । उपर दिया हुआ यह गीत एक पत्तडिप्पाट्टु है । यह गीत मध्य केरल की निम्न जाति के लोगों में प्रचलित है - वेट्टियार ए॰प्रेमनाथ, कल्लाण्किल कृष्णनाशान आदियों के समाहारों में ये गीत प्राप्त है । वेट्टियार ए॰प्रेमनाथ - पत्तडिप्पाट्टुकल - पृ॰40

भाव : गर्भाशय में जो शिशु रहता है उसकी विकास के अनुसार तात्विक खाद्य रस की आवश्यकता है । गर्भवती ऐसी चीजों को जो, असाधारण भी होगी, खाने की इच्छा प्रकट करती है । हर देश की माताओं में ऐसी हालत हुआ करती है । हर देश की जलवायु और हर जाति की जीवन चर्या का यह आधार होता है ।

इस गीत में प्रत्येक महीना बीतने पर कौन, कौन चीजें खाने की लालसा प्रकट होती है, इसका बड़ा मनोरम सहज वर्णन है । यह स्त्री, मिट्टी, राख, कोयला, नमक, मिर्च, मछली, लाल पत्ते, कंद मूल, आदि खाने की इच्छा प्रकट करती है और दसवें महीने में एक सजीव मूर्ति को जन्म देती है । यह क्रमिक विकास और अंत में, स्वर्ण की पुतली को जन्म देना, ग्राम भावना की निसर्ग सुन्दर अभिव्यक्ति है । गीत के अंत में सब का मन, उस मंजिमा में फलाफूला है ।

<u>ततोयप्पाट्टु (शिशुजन्मोल्लास)</u>

किसी बड़े घर में सन्तान का जन्म हुआ । पता देने पर सारे रिश्तेदार भेंट लेके आये । उस प्रसंग को केरल का जन-कवि कैसे स्पष्ट करता है देखें :-

इल्लत्तोरुण्णि पिरन्नेन्नु केट्टु[1]
कोल्लत्तु निन्नवरेल्लारुं वन्नु
उण्णिक्कु पालकोड कुप्पिकोन्टन्नु
उण्णि कोरुण्णि उडुप्पु कोन्टन्नु

---

1. बच्चों पैदा होने पर उसे देखने और भेंट चढ़ाने को सगे सम्बन्धी और बन्धु जनों का आना साधारण सी बात है । हिन्दी गीतों में ऐसे कई प्रसंग प्राप्त है । पाश्चात्य देशों में भी यह साधारण आचार सा रहा है । प्रस्तुत गीत कल्लाणिक्कल कृष्णशास्त्री के नाटन पाट्टु संग्रह से है ।
   नाडोडिप्पाट्टुकल कल्लाणिक्कल कृष्णशास्त्री - पृ॰52

पोन्निन्टे चङ्ङों मौतिरक्केट्ट
पेण्णुङ्ङक्केल्लाटुं कज्यपुकाप्पुं ।

भाव : उस बड़े घर में एक बच्चे [पुरुष शिशु] का जन्म हुआ । कोल्लम देश से उसके रिश्तेदार सब आये हैं । उन्होंने भेंट के रूप में कई चीजें समर्पण कीं । उनमें बच्चे को दूध पिलाने का बोतल और रेशम का छोटा कुर्ता भी है । गाँव वासियों के बीच ऐसी हालों पर चर्चा स्वाभाविक है ।

अन्य भाषाओं में भी ऐसे गीत प्राप्त है । संतान पुरुष हो तो कहीं उत्सव भी मनाया जाता है ।

<u>मच्चिप्पाट्टु [बांझ स्त्री का दुःख गीत]</u>

समाज में बांझ स्त्रियों की निन्दा होती है । ग्राम गायकों के यह सोहर गीतों में एक का विषय है । मलयालम में बांझ स्त्रियों को "मच्ची" कहा जाता है । मच्चि स्त्रियाँ स्वयं अपने को कोसती हुई दुःख गीत गाती है । ऐसा एक मलयालम गीत :-

एन्ने कण्णुमोल पेण्णुङ्ङळ[1]
मुङ्ङितिरिक्कुन्नु मूधेवी
अम्मायि अम्मयुडु चीमुञ्ञी
अड्केरडुं चिक्कु चलुम्पिनोले
पूक्कात्त पोन्तये पोरक्कामो ?
कायक्कात्त मामरं काञ्ञारताम ।

---

1. पाट्टुकल - मीलोदर्य - पृ॰40

भाव : मैं सबके सामने निन्दिता हूँ । मेरी परछाई से भी अन्य स्त्रियाँ मुँह फेर देती है । सास हमेशा काला मुख दिखाती है । मेरे पतिदेव को भी मैं श्रावण महीने की चौथे दिन का चांद है, मेरा यह जीवन सूना है । बिमाफूल की झाडी से कौन संतृप्त होगा जिस पेड में फल नहीं लगता, वह कटुआ ही लगता । उसे काट देना ही पच्छा है ।

इसी प्रकार जन्माचार से संबन्धित कई गीत प्राप्त हैं । सब का सामूहिक महत्व है । मलयालम में सोहर गीतों का संकलन किसी ने पूरा पूरा अब तक नहीं किया है । जो दस बीस मिले हैं वे भी प्रकाशित नहीं ।

अब सोहर गीतों का या जन्माचार के गीतों का और एक वर्ग है जो बच्चे के जन्म के बाद उसे संभालने और सुलाने का है । वह भी आचार गीतों में ही आते । ये आनंद गीत है, कहीं कहीं भिन्न सामाजिक परिस्थिति का बोध कराते मलयालम में इन गीतों का नाम तारादट्टुपाट्टु है । हिन्दी में ऐसे गीतों को लोरी कहते हैं ।

तारादट्टुपाट्टु (लोरी गीत)[1]

एक कुटिया में एक साधारण स्त्री अपने बच्चे को रात में सुलाती और गाती है :-

कुम्भिन्टे मोलोड पुट्टाणुण्णु...
कुञ्ञुमोन्ट उण्णी, मररारामो....?
....
रारिरो, रारिरो ।

---

1. लोरी गीत, हर स्थानों में सोहर गीतों का भाग है । जन्म संस्कार से उसका अटूट संबन्ध है ।

भाव : उस छोटी पहाडी के ऊपर से कोई आ रहा है । उसके हाथ में एक मशाल सा दीप दिखाई देता है । शायद वह मेरे लाल का पिता होगा । रात तक बच्चे का बाप घर नहीं आया है । उसकी प्रतीक्षा में बच्चे को सुलाने वाली स्त्री अपनी आँखों के दृश्य को गीत बनाती गाती है ।

और एक लोरी है जो निम्न वर्ग की एक माता के मुँह से निकली है दिन भर की थकान से घर आकर अपने बच्चे को रूखा सूखा खिलाकर, सुलाने वाली मज़दूरिन माँ जीवन के सत्य का प्रतीक है - उस का गाना भी तीखा है -

एन मकनीरड्डोरड्डु...
कण्मणी ओर ड्डोरड्डु
नेरमोट्टु पातिरायायी
भूत संचारतु मायी
...............[1]

भाव : रे मेरा बेटा तू सो जा । अभी तो रात आधा बीत गयी है, अब भी तू सोया नहीं । देखो, भूत और प्रेत आदि के चलने का समय है । तू सो जा, नहीं तो अच्छा नहीं । वे आकर तुम्हें तंग करेंगे [व्यंग्य] दिन भर की मेहनत से थकी मांदी वह माँ कुटिया में आयी है । सवेरे सवेरे फिर काम पर जाना है । आधी रात के समय भी बच्चा सोया नहीं, माँ को सोने नहीं देता । इस परिस्थिति में उसे अपने बच्चे को धमकी देकर सुलाना है, इसलिए वह लोरी गाते गाते, यह भयदायक बात भी कहती है - अभी, रात आधी बीत गयी है - भूत प्रेत आदि के बाहर आने का समय है ।

---

1. साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे - पृ.202

तू अगर न सोये तो वे आकर तुम्हें काटेंगी मारेंगी । इसलिए मेरा बेटा तू सोजा । मेरी आंखों की पुतली । तू सोजा ।

निम्न वर्ग की जनता के स्वाभाविक जीवन का सीधा सादा चित्र यहाँ मिलता है । मलयालम का लोक कवि बड़ी सफलता से यह कह डालता है ? अभिजात वर्ग में प्रचलित एक लोरी गीत[1] :

ओमनात्तिंकल किडावो ··· नल्ल
कोमलत्तामरप्पूवो····
पूविल निरंञ मधुवो नल्ल
पूर्णेन्दु तन्टे निलावो····
·················
ईश्वरन तन्न निधियो पर
मेश्वरी तन्टे किलियो····।

भाव : अभिजात कुल की नारी, अपने बच्चे को कई उपमेयों से तुलना कर गाती सुनाती है ·····

मेरा परम भाग्य बेटा तुम्हारी तुलना मैं किस चीज से कर दूँ ? तुम चांद का पुत्र हो, या कमल फूल का मधु । तुम पूर्णिमा की चांदनी हो या भगवान की देन सुवर्ण निधि हो, मैं मानती हूँ तुम भगवती श्री पार्वती के हाथ का शुक पक्षी हो । इन सभी सुन्दर और मधुर वस्तुओं से भी तुम्हारा शरीर कोमल हो । और तुम मेरे सर्वस्व हो ।

---

1. मलयालम में अधिक लोक प्रिय एवं आज भी माताओं की ओठों में यह गीत नृत्य करता है । केरल का परिचय - पृ॰303

शिशुगीत

बच्चों के खेल और तोतली वाणी का सरस गीत भी मलयालम में प्राप्त है। जीवन का यह मुख्य काल मधुरतर है। निष्कलंकता का परिचायक है। मलयालम में भी ऐसे कई प्रसंगों से युक्त गीत हैं।

तुंपिप्पाट्टु

श्रावण में केरल के घर प्रांगण में "तुंपी" नामक छोटी सी प्राणी (एक प्रकार की तितली) उड़ती जाती है। उसे पकड़ना और उसकी पूंछ में फूल लगा कर उड़ाना बच्चों को विशेष आनन्ददायक है। ये प्राणी विमानसा ऊपर उड़ते इधर उधर चलते है। तो बच्चे उनके साथ ये गीत गाते हु फिरते हैं :-

ओण्णामा कोच्चुतुंपी
एन्टे कूटे पोरुमो नी
निन्टे कूटे पोन्नालो
एन्तेल्लाम तरुमेनिक्कु
कुलिप्पान काम कुळं तरवेन
कळिप्पानो कुळं तरवेन

---

1. तुंपी एक तरह की छोटी सी प्राणी है जो विमान जैसी लगती है। श्रावण ऋतु में ओणोत्सव के समय ये केरल में हर कहीं दिखाई देते है। बच्चों को उन्हें पकड़ना और उनके पीछे चलना आह्लादप्रद है।
साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे - पृ. 103

भाव : री मेरी प्यारी तुंपी [तितली] क्या तुम मेरे साथ चली आओगी ? बच्चे ने पूछा तुंपी ने जवाब में पूछा "अगर मैं तुम्हारे साथ आऊँ तो तुम मुझे क्या क्या दोगे ? बच्चे ने जवाब दिया "मैं तुम्हें खेलने को बच्छी जगह दूंगा" नहाने को तालाब दिखाऊँगा, और .....। बाल-भावना का यह गीत, बड़ा सुन्दर है ।

शिशु भावना को पंख देने वाले कई लोक गीत मलयालम में और भी प्राप्त हैं । उन गीतों को सुनकर बच्चे खुश होंगे । ये गीत निरर्थक हैं । उनका कोई महत्वपूर्ण रस नहीं होता । तो भी बच्चों की भावना को वे उद्दीप्त करते हैं । जैसा एक गीत -

> पिट्टच्चन चेकप्पितल चेनकट्टु
> न्नानल्ला कट्टतु कळ्ळनाणे
> कळ्ळन्टे कै वेट्टिप्पत्तलिट्टु
> पत्तलि लायिरं तुंप मुळच्चु
> तुंप मुरिच्चायिरं तोणि पणच्चु
> तोणियिलरुत्तोरुण्णिपिरन्नु ।

भाव : हमारे चाचा ने बचपन में एक सुरन की चोरी की । लेकिन वे बोलते उन्होंने चोरी नहीं की, बल्कि चोर ने चोरी की । चोर चाहे कोई भी हो, उसका हाथ काट कर एक पंडल बनाया । पंडल के ऊपर कई तुंपी के पौधे [एक छोटा पौधा जिसका फूल सफेद है] उग आये । उनके पत्तों से हज़ारों नौकाएं बनाईं । उन नौकाओं में से एक में एक लड़का पैदा हुआ ....

---

1. तुंपा का पत्ता बहुत छोटा है । उससे नाव बनाना असंभव काम है । बच्चे की कल्पना को यह उद्दीप्त करेगा तब वह उड़ उड़ कर आसमान तक पहुँचेगा ।

सारी बात निरर्थक तो है फिर भी, कुतूहल बढाता है। इन्हें सुनते ही बच्चे हंसने लगते हैं। उनकी भावना में ये सब असंभव कार्य है। फिर भी शायद संभव हो.....

बच्चों के जीवन से संबन्ध रखनेवाले कई गीत और भी हैं।

अन्न प्राशन, मुंडन, कर्ण छेदन, जनेऊ, जैसे संस्कार केरल में कम मात्रा में चलते आ रहे हैं। ब्राह्मण और कुछ वैश्य जाति के लोगों के बीच ऐसी प्रथाएं है। उन संस्कारों के अवसरों पर वे रामायण, भारत जैसे पुण्य ग्रंथों के ऐसे प्रसंगों को कुछ गीत गाकर भी खुश होते हैं। मलयालम में ऐसे गीतों की कमी है।

कल्याणप्पाट्टु (विवाह संस्कार के गीत)

भारतीय समाज में विवाह का मुख्य उद्देश्य संतान उत्पन्न कर अपनी वंश परंपरा को निरंतर बनाये रखना है। दुनिया भर में यह संस्कार अत्यन्त पुनीत और सामाजिक स्तर पर महत्वपूर्ण है। उत्तम संतान के द्वारा समाज की सेवा तथा रक्षा करना परम प्रधान है। समाज में विवाह का इतना महत्व इसी कारण से हुआ है। विवाह संस्कार के निमित्त पारिवारिक जीवन की अस्तित्व समाज में स्थापित है। कुछ आर्थिक समस्याओं का समाधान भी इस तरह से होता है। केरल में हिन्दू, मुसलमान ईसाई, सारे धर्मावलंबी लोगों में विवाह का महत्वपूर्ण स्थान है।

यहां हिन्दुओं के बीच प्रचलित दो तीन गीतों का नमूना दिया जाएगा। विवाह की क्रियाएं अधिक हैं वर या वधु को ढूंढ लेना, बात पक्की करना मुहूर्त निश्चय करना विवाह की तैयारी करना विवाह संपन्न करना

1. केरल ब्राह्मणों के बीच नंपूतिरि स्त्रियां एक विशेष विधा के गीत गाती है। जिन्हें ब्राह्मणप्पाट्टु कहते हैं उनमें ऐसे कुछ अवसरों के गीत भी प्राप्त है, जिन का उल्लेख फिर किया जाएगा। सा०च०प्र० पृ०107

आदि । इन सब के साथ साथ समस्याएं भी हैं । कन्याओं के मन में, अछावर, सुन्दर और सुमुख मिलने की आशा होती है । लेकिन माँ बाप व बन्धु अन्य विषयों पर अधिक ध्यान देते हैं । इस प्रकार वर या वधू ढूंढने के विषय में कुछ गीत प्रचलित है । एक निम्न जाति की मजदूरिन कन्या का मन प्रकट करने वाला एक गीत ऐसा है -

कुन्निन्टे मोले पेर वेच्चुमन्टप्पा,
रारि रे रे रो, एन्टप्पा....
रारि रा रा रो ....
वरुन्नोरें काणाम, पोण्णोरें काणाम
वेट्टें तिन्नां, कोट्टें नेय्यां,
रारि रारा रो...... । कन्या कहती -

भाव = ओ, मेरे पिताजी, आप किसी उन्नत चोटी में एक कुटी बनाओगे तो बड़ी अच्छा होगा कि हम वहाँ रहकर देख लें, कि जो जो रास्ते से आया जाया करेंगे । उनमें से हम अच्छा वर ढूंढ ले सकेंगी । वहाँ रहकर हम टोकरी बुनने का हमारा काम भी कर सकते, आने जाने वालों को देख भी सकते । .... दूसरा गीत - लड़की अच्छे वर की प्रतीक्षा में है कि धर वाले खासकर माँ - एक धनवान की खोज में है । एक दिन एक वर कन्या देखने आया ।

पेरुक्कालम मन्नम तरुक्कन्टम्म
श्रिरिक्कुन्नु नोक्कु करयुन्नु
पटिक्केरि कामुम वलिच्चु वेच्चयाल
नटक्कुन्नु मुक्करस्तणगुन्नु

---

1. नाडन्पाट्टुकल - कल्लाणिक्कल कृष्णाशान - पृ. 107

पेरक्कत्तोट्टु कटक्कुवान वय्या
तिक्कर्टु निन्नु कुक्कुन्नु
ओठ मर्त भिन्ति पोलिज्चार्नु मन्नु
पेडक्कालम नल्ल पणक्कारन ।

भाव :- कन्या को ढूंढने केलिए जो आया था वह बड़ा अमीर था । लेकिन उसका एक दोष था कि उसके एक पैर हाथी का साथ, दूसरा साधारण । उसे फीपाँव था । उसे देखकर लड़की फूट फूट कर रोने लगी । लेकिन माँ प्रसन्न थी । वह जानती थी अपना जामाता बड़ा पैसा वाला है । लेकिन, उसे भी यह सूझ नहीं रहा कि इतने बड़े पैर कैसे कमरे के अन्दर लाएगा । दरवाजे से वह अन्दर घुस नहीं सकता था । तब आखिर माँ को यह उपाय सूझा कि एक दीवार तोड़कर भी, उसे अन्दर आना देना कि वह बेमेल होते हुए भी संपन्न है इसलिए सराहनीय है कि सारा दुःख और दारिद्र का सवाल हल जाएगा । लोक कवि का तीखा परिहास दुराग्रही माँ बापों पर सीधा चलता है ।

एक माँ की प्रतीक्षा अपनी बेटी के ब्याह पर - गीत में ऐसा है -

करयेन्टा मोळे, चिरिक्केन्टा मोळे
निन्ने केट्टु कल्याणिक्कनु
पन्तान्टाम निरम्मुवर्
आनयुक्केडुप्पत्तु पोन्नुवरं - अन्नु
पोन्निन्टट पेट्टकं पूट्टिट स्लरं ।

---

1. कल्याणिक्कल कृष्णनाशान - नाटन्पाट्टुकळ - पृ.77
2. पडप्पाट्टुकल - ए.डी. हरिशर्मा - पृ.12

भाव : मेरी बेटी तुम, भाग्यवती हो । तुम्हें, हंसने रोने की बात क्या ? तुम्हारी शादी के दिन बारह हाथियों का बरात आएगा । प्रत्येक हाथी पर सोने की संदूक आयेगी । उसकी चाबी तुम्हारे हाथ फिर तुम्हें क्या रोना...

विवाह के दिन के कार्यक्रम और साजसज्जा पर प्रकाश डालने का एक नया गीत -

नालुमुरी कोरया वेणम्
नालु निल पंतलु वेणम
नादस्वर मेळं वेणम
ताळ मेळक्कुरवक्कुरुपोल
तालि चीकुम अपुत्तेले...

भाव : मेरी बेटी की शादी तो धूम धाम से होनी चाहिए । उसमें चार मंजिलों का पंडाल चाहिए । नादस्वर वाद्य चाहिए और स्त्रियों की तालतारी [कुरवा] भी अवश्य होनी चाहिए । जब ये सब मिले ताल बजाए उस शुभ अवसर पर विवाह की पुनीत क्रिया होगी और ताली एवं माला गले में बांध देगी । शादी की क्रियाएं आभूषण आदि का वर्णन भी गीतों में प्राप्त है । विवाह के बाद की क्रियाओं पर भी गीत हैं उनमें एक विशिष्ट सावार का गीत है -

<u>अटच्चुतुरप्पाट्टु</u>

वधु और वर को एक कमरे में बन्द रखने के बाद उस कमरे के बाहर स्त्रियाँ इकट्ठी होकर ये गीत गाती हैं । हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सबके यहाँ ये गीत प्राप्त हैं । दामाद को दरवाज़ा खोलने की विनती करते और प्रलोभन के साथ पुरस्कार देने के अर्थ में है गीत -

---

1. पण्पाट्टुकल - ए.डी. हरिशर्मा - पृ. 12

मेंड तन्छु मणियरयिल
मणवालन अलकटच्छु
मणि मोतिर कय्याले
मावि वन्नु वातिलमुट्टी
एन मकने मणवाला
मणवरेटे वातिल तुरा
पूमोतिर कय्याले
नात्तून वन्नु वातिल मुट्टी
पोन्नक्के मणवाला
मणवरेटे वातिल तुरा
पोन्नुरा वेन्नुरा
इट्टिरिक्काम पट्टुरा..... आदि

भाव : जिस कमरे में वधू बैठी है उस कमरे में वर ने भी प्रवेश किया और दरवाजा बन्द किया। कमरे के बाहर स्त्रियाँ इकट्ठी होती। तब लड़की की माँ अपनी अंगूठी की उंगली से दरवाजा खट खटाकर यह वादा करती है कि हे मेरे दामाद तुम्हें मैं सोना चांदी और कई चीज़ें दे दूंगी कि तुम दरवाज़ा खोल दो। लेकिन अन्दर से कोई पता नहीं। तब ननद, सखियाँ सब यही वादा दुहराती है। तब प्रसन्न होकर दरवाजा खोल देता है। और इसी प्रकार शादी के गीत की श्रेणि में हजारों गीत, मलयालम में प्रचलित है। हर जाति की अपनी अपनी विवाह प्रणाली और अपनी अपनी गीत विधा है। कुछ नमूने तरीके यहाँ प्रस्तुत है। शादी के गीत मन बहलाने वाले और सर्वग्राही है। कुछ गौना गीत भी मलयालम में प्राप्त है, ये शोकमय हैं -

---

1. कुंचन नंबै - माडारोटी - पृ.40

एक गीत:

इन्नेन्टे वीडु ञान विट्टुपोन्नु
ओन्निन नेरिनियिन्नी एन्टनायी••
....

भाव : मैं अपना घर छोड कर चली जाती हूँ । अपना कब कहने से क्या फायदा ? क्या अर्थ •••• सब अन्ध है••••

गौना के गीतों को शोक गीत कहा जाता है । लेकिन मृत्यु मात्र को हम शोक मान सकते है । मृत्यु संस्कार के भी कुछ गीत प्राप्त हैं । ऐसे गीतों को मलयालम में "कण्णाक्कुपाट्टु" कहते हैं ।

कण्णाक्कुपाट्टु [बरिमा]

मृत्यु सब के मन पर आघात लगाती है । उस अवसर पर गाये जाने वाले गीत हैं - कण्णाक्कुपाट्टु ।

ओमन कुञ्ञ वाविकने
तेल कञ्ञ कुटिक्काट्टेन्टच्छने
अच्छनु चोड ञान वेच्चान्नुने
इनियेप्पो काणु मेन्टच्छने ।

भाव : मेरे पिता मर गये । उन्होंने थोडा पानी तक नहीं पिया । जो खाना उनकेलिए बनाया था वह वैसा रहा है । आखिर में उन्हें कब देखूँगा ।

1• साहित्य परिश्रम पुरस्थानकुलिमुटे - पृ•84

मज़दूरों के बीच एक मृत्यु गीत ऐसा प्रचलित है जिस में से यह स्पष्ट है कि साधारण जनता पर मृत्यु भी किस आसानी से अपना अधिकार जमाती है और वे जीवन के उस अंतिम संस्कार को किस साधन से करता है उसका निदर्शन है यह गीत -

एनु मेन्टलियनुं, कन्टनुं कोमरनु,
मेक्कनु पत्तु कोर वड कूटि
कोट्टे कादिट्ट मीरक्कु पाये
अविटे वेव्वियिल्ले करिवोम तोट्टे
अविटुन्मेकुत्ते कोल्लत्तोक्क
अविटे पेम्मार्च केरा कारियिक्का
अविकुन्मेकुत्ते कोव्वी मोर्न
अविडेव्वोन्मार्च मेरों केनुत्ते,
कण्णोम्मु मोयपिच्चु,
पेविवोम्मु कूरपिच्चु
वायोम्मु कोट्टी
पीवनु पोये
अविकुन्मेन्टलियने
कूटी मोट्टेकुत्ते
तेक्कु वटक्कोट कुषिपुं वेट्टी
कुषियक्कु मुन्नु कात्तुं वेव्वु
अविकुन्मेन्टलियने,
कुषीमोट्टेकुत्ते
कन्टोन्दुवन्नोरं
वेट्टोन्दु वन्नोरं
अञ्ञायि कण्णु मी -
रनम्नु पोयिच्चे
एमेन्टे अंलयन्टे कार्यमोर्कुं
एकमायि कण्णु नीरिम्मु पोयिक्कुं ।

भाव : मैं और मेरा बहनोई जंगल में घास काटने गये थे । वहाँ उसे काले साँप ने काटा । हम उसे विषहारी के यहाँ ले गये । रात बीत गयी । जल्द उस का भाव बदला । आँखें घूम आयीं कान उतर आये । उसने अंतिम बार मुँह खोला । क्या कहना उस के प्राण उड गये । हम फिर उसे अपनी कुटी ले आये । उसकी अंत्योष्टि की । देखने वाले और सुनने वाले सब रो गये । मेरे मन में से वह दृश्य आज भी हटता नहीं । वह याद आते ही आज भी रोता हूँ ।

किसी महाकवि को भी इतनी सरलता एवं सहजता से संक्षेप में ऐसा एक कार्य करना मुश्किल है । जीवन की अनुभूति एवं अनुभव से ओतप्रोत लोक कवि आसानी से यह करुणाकुपाट्टु प्रस्तुत करता है । मलयालम में यह गीत मध्य तिरुविताकूर से [लेखक ने] पूरा संपादित किया है । उल्लूर ने इसके थोडे पद साहित्य चरित्रम में उद्धृत किया था[1] ।

[2] अनुष्ठानिक गीत [अनुष्ठानप्पाट्टुकल]

ये धार्मिक गीत हैं । पूर्ण धार्मिक एवं अर्द्ध धार्मिक दो विभागों में इन्हें विभक्त कर सकते हैं । इन गीतों में मुख्य भी देवता पूजा का है । देवी देवताओं की अर्चना, ऋतु परिवर्तन से संबन्धित मेले, वीरपूजा और कर्म संबन्धी कार्यों से मिल कर भी अनुष्ठानिक गीत गाए जाते हैं । इन गीतों में रूढि और अंधविश्वासों का परंपरागत संबन्ध है । धार्मिक अनुष्ठानों से संबन्ध रखने वाले गीतों का विषय या लक्ष्य विभिन्न प्रकार की मनो कामनाओं की पूर्ति के लिए आराध्य देवता से विनती करना है ।

1. केरलसाहित्य चरित्रम [प्रथम भाग] उल्लूर, ती॰सं॰ 1967 – पृ॰222

केरल में इन गीतों का प्रचार अधिक है ।

पूर्वधार्मिक क्रियाएं

सर्पप्पाट्टु [नागाराधना के गीत]

पूजा और भय का निकट संबन्ध है । नागाराधना उस का उत्तम उदाहरण है । आदि मानव ने नागपूजा इस तत्व के आधार पर शुरू की थी कि पूजा कर के विषैले सांप को भी, इष्ट सिद्धि का पात्र बनाया जा सकता है । नागपूजा में गीत का अधिक प्रचार है कि सांप को गीत अधिक आकर्षक होता है । कुछ विशेष राग सुनकर सांप स्वयं नाचने लगता है । संपेरा अपने हाथ की तुमड़ी [एक बाजा] से राग सुनकर सांप का नृत्य आज भी कराता है । केरल के कुछ प्रतिष्ठित ग्रामों में नागपूजा का कार्य आज भी चला जाता है । दक्षिण केरल में नागाराधना का प्रचार अधिक है । वेट्टिक्कोट्टु, मण्णारशाला, जैसे अनेक स्थानों पर नाग मन्दिर भी हैं । लोग आश्लेष नक्षत्र में [आयिल्यं के दिन] वहां जाकर पूजा करते हैं । सर्पाराधना यहां के आदिवासियों की द्राविड़ी सभ्यता का सब से पुराना नमूना माना जा सकता है । "पुल्लुवर" जाति के लोग नाग पूजा के अधिकारी माने जाते हैं । ये सर्प-दोष से बचाने के लिए जो गीत गाते हैं और जो जो क्रियाएं करते हैं वे सब अनुष्ठानिक हैं । सर्प कथा स्पद गीत भी है । प्रचलित सर्पप्पाट्टु से कुछ पंक्तियां :-

तुंपुराण्टे मतिलकत्तु
एन्तेल्लां पू विरिञ्ञे ?
तंपुराण्टे मतिलकत्तु
पिच्चिप्पू कोट विरिञ्ञु
अप्पूविन मणं कोण्टाल
नागराजावुणर्णीटुक ।

भाव : मानिक के किले के अन्दर कई कई फूल खिले है। उन फूलों में, जुही गेंदों, आदि के फूल खिले हैं। उन फूलों की गंध चारों ओर फैल गयी हैं। उन गेंदों के फूलों की सुगंध के मद में हे नाग राज आप, प्रसन्न होकर आनंद नृत्य कीजिए.... यह गीत नाग स्तुतियों में आता है।

नागोत्पत्ति संबन्धी गीत

ओम्मावुं मम्मलिकक्कडल्करे
ओम्मल्लो मणिमार्ग मुट्टयिट्टेवा
तामिट्ट मुट्टयुं पापिम किडाङ्ङुं
ताने फणम विरिच्चाडिक्कोन्टेवा
आडिक्कोण्टेवा, पाडिक्कोन्टे वा
तुल्लिक्कोन्टे सत्यं चोल्लिक्कोन्टे वा।

भाव : पहले सांप माता ने समुद्र के किनारे अंडे दिये। अंडों से सर्प संतति बाहर आयी। उन सर्प संततियों से नागवंश की वृद्धि हुई। हे नागराज आप फण उठाकर नाचते नाचते और यह सत्य बताते हुए आइए। आप हमारे देवता हैं। हमें पर अनुग्रह कीजिए।

परदेवप्पाट्टु (कुलदेवता स्तुति)

परदेव[1] का अर्थ कुलदेवता देवता है। प्राचीन केरल के लोग/*"अम्मा" शब्द से "मतलब" पार्वती एवं अय्या से परम शिव है। यह अम्मा अय्या

1. प्राचीन केरल में शिव पार्वती, भद्रकाली, वीरभद्र, भूतगण आदि शैव देवों का अधिक प्रचार था। द्राविड देवताएं आर्य देवता से भिन्न माना भी गया। आर्य जाती के आगमन के साथ साथ उनके देवों का भी यहाँ प्रचार हुआ। यहाँ के देवों को उन्होंने भी उनके अनुकूल बनाकर स्वीकार किया। वास्तव में यह, आर्य - अनार्य - की संस्कृतियों से संबद्ध रहा है।

*/अम्मा और अय्या के आराधक थे।

संकल्प देवी, देवता संकल्प ही है । अपढ और असभ्य आदि-जाति के लोग में देवों और उनके नियन्ता के रूप में भी, यह संकल्प रहा है । अधिष्ठान देवता के नाम जो अनुष्ठान क्रियाएं होती है सब का सार भी बुराई पर भलाई की जीत का है । पूजा विधि से उन्हें प्रसन्न करना और अभीष्टकी प्राप्ति करना है । गीत सब यशोगान और स्तुतियाँ हैं । ये गीत पूर्णतया आराधना प्रधान है इसलिए इन्हें पूर्ण धार्मिक गीतों में स्थान मिला है । इन में धूली चित्र [आलिंपन] के साथ गाने वाले गीत भी है :-

<u>एक परदेव पाट्टु</u>

अम्म परदेव में, आडिवरिका
अम्म पर देव में पाडिवरिका
अम्म परदेवं आदिवम्नु
अडियऴकनु वरेतरिका
आडिउरञ्ञु वरम्नेम्नम्मा
आराडि आनंदं कोन्टुम्नऴुक
आलवं भी पर देव में पोन,
ओकपुरत्तु वाकुन्नम्मे ।

भाव : हे, पोन्नोकपुरत्तु[1] वास करनेवाली अम्मे, भगवती, आप आनंद के साथ नृत्य करते आइए । आप हमारे परदेव हैं, अनुष्ठान मूर्ति हैं । आप के बिना हमारी सहायतार्थ दूसरा कोई नहीं है । हम आप की स्तुति करते हैं ।

---

1. पोन्नोकपुरत्तम्मा - मध्य केरल में प्रसिद्ध देवी है । ओकपुरं शब्द [परितपुरत्तु] माने तैल के ऊपर संचार करनेवाली अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । पार्वती । नम्मुडे पाट्टुकल - पृ.20

{3} कळमपाट्टु {आलेपन गीत}

देवी देवताओं की आराधना में गीत गाने की एक विशिष्ट विधि है कलंपाट्टु । भक्ति गीत या देवाराधना के गीतों में भी इस का वर्गीकरण किया जा सकता है । देवी देवताओं का {धूली चित्र - आलिंपन} खींचकर उस चित्र के सामने दीप जलाकर विशिष्ट विधियों से यह गीत गाते हैं । मल्य नामक विशेष जाति के लोग ये गीत गाने में प्रवीण हैं । मण्णान, कणियान, पाणन, वेलन आदि जाति के लोग सब कलं {आलिंपन} खींचकर गीत गाते हैं । इसलिए इन गीतों को जाति गत गीत भी कह सकते हैं । लेकिन यहाँ केवल भद्र काली की स्तुति में गाये जाने वाले इन गीतों को कलंपाट्टु कहा जाता है । यह गीत, प्रतिष्ठित घरानों में भी गाया जाता है । फर्श पर भिन्न रंगों से {चावल, चूना, हरे पत्ते, हल्दी आदि की धूली से} दारिक वध प्रसंग की भद्रकाली का भीकर चित्र लाल लाल आँखें, सफेद सफेद दाँत, लालोजीभ सफेद सफेद खोपडि की माला, लाल कपडा, काले काले बिखरे बाल नीला शरीर, पीत मुकुट आदि - हजारों हाथों में हजारों चमकता हथियार इस प्रकार अति रौद्र - खींचा जाता है । उस चित्र के सामने नियमानुसार गायन-वादन समेत पूजा भी की जाती है । इस गीत को भद्रकालिप्पाट्टु नाम भी है । भद्रकालि स्तुति में मुक्तक और प्रबन्ध गीत भी प्राप्त हैं । यहाँ केवल मुक्तक गीत की ~~xxxxxx/है/x~~ चर्चा की जाती है ।

उज्वलकन्या निन्तिरुन्ने
वेळिच्चप्पन्तं मारिल कुत्ति

---

1. कळम वह धूली चित्र है जो फर्श पर जैसे धूलियों से खींचा जाता है । प्राचीन-चित्र कला का यह मुख्य रूप है । प्रागैतिहासिक काल से भी यह प्रचार में था । अजंता और एल्लोरा की गुफा चित्र इस चित्र-कला की खान से मिला है ।

वट्टियट्टम्म मिन्नु कोन्टे
पोन्निन पन्तं मारित चुरिर
अग्नियुम्मामिन्नु कोन्टे
तीयिल पन्तं आयिलचुत्ती .... आदि

भीकर रूपिणी काली को अग्निनृत्त का चित्र इस गीत में प्राप्त है । तीनों बार यह काली माता अग्निशिखा से खेला करती है । उसका रूप प्रोज्वलित है ।

तीयाट्टु[1]

यह अग्नि नृत्य का गीत है । वास्तव में यह कळमाट्टु की एक विशेष विधा है । तियाट्टु कई देवी मन्दिरों में प्रचार में है । भद्रकालि तीयाट्टु और अय्यप्पन तीयाट्टु दोनों विधाएं प्रमुख हैं । यहाँ एक भद्रकालि तीयाट्टु पाट्टु दिया है ।

कारिरूम निरमोत्त तिरुमुटि तोवुन्नेन
कनम कण्णु पिरमेरिर तिलकं के तोवुन्नेन
चिलसुन्न मिळियुं, नासिका कविळ तोवुन्नेन
वळञ्ञुकोरेकिर पल्लोडु नावुं तोवुन्नेन ... आदि

भाव : काली माता का केशादि पाद [पूर्णरूप सिर से पाद तक] वर्णन है । हे काली माता ! हम तेरे काले काले बालों, की वन्दना करते हैं । अंगार जैसी आँखों की वंदना करते हैं । चन्द्रकला जैसी ललाट की वंदना करते हैं, इनी लपलपाती जीभ और सफेद सफेद दंष्ट्रों की वर्णना करते हैं ..... आदि

---

1. तीयाट्टु भद्रकालि मंदिरों में प्रत्येक तिथियों में चलाया जाता है । यहाँ पाट्टु कई विधियों और क्रियाओं से संपन्न होता है । तीयाट्टुण्णी नामक जाति के लोग यह अनुष्ठान विधि करते हैं ।

तोऱ्रम

कळमपाट्टु, भद्रकाळिप्पाट्टु, तोऱ्रम पाट्टु तीयाट्टु, आदि भिन्न नामों में आकलित सारे अनुष्ठानिक गीत - कुछ काळिप्पाट्टु हैं। भिन्न रूपों, भावों और अवसरों पर ये गाये जाते हैं। इन में स्फुट गीतों को ही साधारण अवसरों पर गाते कथागीत विशेष अवसरों पर गाते हैं।

तोऱ्रम पाट्टु[1]

मुक्तक गीतों में कुछ तोऱ्रम पाट्टु प्राप्त हैं। काळितोऱ्रम, अय्यप्पन तोऱ्रम, मणि मंक तोऱ्रम आदि भिन्न विषय के तोऱ्रमपाट्टु है। तोऱ्रम काळिकथप्पाट्टु अय्यप्पन कथप्पाट्टु दोनों लोक गाथाएं है। [कथागीत] उनपर, अगले अध्याय में कहा जाएगा। श्री परमेश्वर ने कई दुर्देवताओं की [भूतों-प्रेतों] सृष्टि की है। भद्रकाळि और वीरभद्रन की सृष्टि भी "रुद्र" से हुई है। उस कथा को संपूर्ण रूप से कहनेवाला तोऱ्रम पाट्टुकथा गीत है। उस पर प्रचलित कई लघुगीत हैं। एक तोऱ्रम पाट्टु इस प्रकार शुरू होता है।

मुक्कण्णनाम्य मायो.... मना
मानु पिडिविळ्ळाये
अय्यनु मय्यय्युमाये - अव
रन्नु वन वार्त पोये
अन्नु वन वार्त पोये गण
नायकनुपिरवाये।[2]

---

1. तोऱ्रम = सृजन, सृष्टि, सृष्टि करना। मा.संज्ञा तोऱ्रका [क्रि] [सृष्टिकरना]
2. नाडनपाट्टुकळ [कल्लाणिक्कल वृष्णमाशान] पृ.120

भाव : पहले त्रिलोचन ने हाथी का रूप धारण किया । तब गौरी ने हथिनी का भी रूप लिया । वे जंगल में आनंद नृत्य करते रहे । उस दाम्पत्य जीवन के समय उन्हें हाथी जैसी संतति का जन्म हुआ । ऐसे भगवान गणपति, हमारी सारी विघ्न बाधाएं दूर करें ।

भद्रकालि तोररम में दारूक वध तोर्रम मुख्य है । उस की कथा गीत नाटकों के रूप में भी मन्दिरों में प्रदर्शन करते हैं । मणिमंक तोर्रम भी कथा गीत है । जिस में कण्णकी की कथा है । अय्यप्पन तोर्रम भी कथागीत है ।

अय्यप्पन पाट्टु[1]

इस को शास्ताम्पाट्टु भी कहा जाता है । अय्यप्पनपाट्टु तोर्रम, तीयाट्टु आदि भिन्न विधाओं में मिलते हैं वे सब अय्यप्पन की वीर साहसिक कथा पर आधारित है । यहाँ अय्यप्पपूजा एवं स्तुति गीत के रूप में प्राप्त मुक्तक रूपों पर विचार किया जाता है । एक मुक्तक गीत ऐसा है:-

पाण्डियन कोड कक्कनायी
पन्टु मधुरयिल निन्ने कालम
तीन्टा वनित्तल मठप्पनुमुन्टे
निर्मलमाय निरमुल्लतु भी ।
अय्यने अय्यप्पा, पाहिपाहीमां
अय्यने अय्यप्पा पाहि पाही[2] ।

---

1. अय्यप्पन छ: शास्तावों में मुख्य माना जाता है । उनका केंद्र (निवासस्थान) शबरी मला माना गया है । शास्ता को एक वीरनायक भी माना जाता है। जो मध्यकाल में केरलीय जनजीवन की रक्षाधार अपने हाथ लेता था ।

2. साहित्य चरित्रम् प्रस्थानङ्ङलिलूटे - पृ.96

भाव : अय्यप्पन वीर योद्धा एवं देव पुरुष था। मनुष्य रूप में आपने कई कळरियों में आयुध शिक्षा का अभ्यास किया। पान्टि कळरी [व्यायामालय] में भी आपने शिक्षा ग्रहण की। पाण्डियन कोड नामक वीर ने उन्हें शिक्षा दी। वहाँ से आप अज्ञात वासी होकर तीण्डावन में [इसे दण्डकारण्य भी कहा जाता है] विचरण किया। ऐसा भगवान शास्ता हमें शरण दे दें, शरण दे दें।

कुत्तियोट्टंप्पाट्टु

कुत्तियोट्टम देवी मन्दिरों में सिर्फ देखा जानेवाला एक धार्मिक अनुष्ठान है, जो दक्षिण केरल में आज भी चलता है। [कुत्ति + ओट्टम =कुत्तियोट्टम वेष भूषा कर के मन्दिर को चक्कर लगाकर दौड़ना [दौड़ना परिक्रमा करना] इस गीत के कई स्तर होता है। प्रत्येक स्तर पर भिन्न तर्ज के गीत भी होते हैं। स्तुति, कवित्तं, मनोरंजन [तमाशा] तट्टुम मुट्टुम [प्रश्न एवं उत्तर] अंकम आदि। इस गीत अनुष्ठान को भी व्रत लेना चाहिए। व्रत लेकर कुत्तियोट्टम में भाग लेनेवाले बच्चों का सारा दोष दूर हो जाता है - ऐसा लोगों का विश्वास है।

कुत्तियोट्टम का एक गीत

स्तुति

श्री गण नाथनुं वाणि तानु मुन्टे
श्री गुरु देव विघ्नालमेन्नी
वर्ण तव शरण कवि तरण मम वरुणालय
सिरमाल पोल विलसीन्नमोन्नाम
ताना तानन्ना, तन्नाम ताना -
तानिन्ना तिन्नीन्ना तन्नना...।

---

1. नम्मुडेपाट्टुकळ - माळजोरी - पृ.97

भाव : भगवान श्रीगणपति, वाणीदेवी मेरे श्रीगुरुनाथ एवं इष्ट देव वरुणालयेश आदि इस कविता के निर्माणार्थ मुझ पर अनुग्रह करें। जिस प्रकार सागर में अविरोध लहरें उठती हैं उसी प्रकार मेरे मन में कविता की लहरें उठें, उसकेलिए मैं वन्दना करता हूँ।

लट्टुं मरुत्तलट्टुं [प्रश्नोत्तर]

आर्द्य पेण कोल चेयत्तुमार
आऽवर्ननु माऽ.......
....
आर्द्य पेण कोल चेयत्तु रामन
आऽ करन्नु कृष्णन.......

भाव : पहले पहले किसने नारी को मारा ? किसने नारी का कपड़ा छीन लिया ? .... पहले राम ने नारी को मारा। कृष्णने व्रजनारियों का कपड़ा छीन लिया। आदि

इसी प्रकार मलयालम के लोक गीतों में कई तरह के गीत प्राप्त हैं। उन में धार्मिक अनुष्ठानों के गीत अधिक प्रधान हैं।

इस विवरण से हम समझ सके हैं कि मलयालम के अनुष्ठान गीतों में अधिक देवता पूजा के हैं। प्रत्येक जाति विभाग के लोग ऐसे अनुष्ठानों से संबन्ध रखते हैं। इन अनुष्ठानों में आर्य जाति, द्राविड़ी और दोनों के मेल से उत्पन्न भक्ति विधाएं आज भी प्रचलित रूप में पायी जाती है।

आगे हम अनुष्ठान गीतों की दूसरी विधा पर विचार प्रस्तुत करें कि वे अर्ध धार्मिक है ।

अर्ध धार्मिक अनुष्ठानिक गीत

नावेरुपाट्टु

इस गीत को कण्णेरु पाट्टु भी कहा जाता है । लोगों के बीच ऐसा रुढी है कि छोटे बच्चों पर नजर लगने से बच्चा अस्वस्थ हो जाता है । इसे मलयालम में नावुदोषं आदि कहते हैं । इस दोष से मुक्ति पाने केलिए पूजापाठ आदि किया जाता है । उस अनुष्ठान के गीत होने से यह नावेरुपाट्टु कहा जाता है ।

एक गीत

बच्चोंको माता की गोद में बिठाकर पूजाविधि के साथ ये गीत, केरल पुलुवर आदि जाति की स्त्रियाँ गाती है :-

नूत्तुत्तारि युण्टिरिप्पतुण्णी[1]...
नूरिलेरे वयसेरे वेल्लणम...
आयुस्सुण्डायि वर्षकोटिक्कणम..
ओमन युण्णिपुडे...
नावरु पाडुन्ने..... [2] ।

भाव : हे ! उण्णी, (मुन्ना) तुझे कोई भी दोष न लगे । तू सौ वर्ष से अधिक जीवित रहे । आयुष्मान हो । सौ बार तुम्हारा पुत्तरियूण वर्ष गाँठ आने दें । आयुष्मान एवं स्वस्थ जीव न बिताने केलिए हम तुम्हारा नावेर गीत गाते हैं ।

---

1. पुत्तरियूण - केरल में किसानों के बीच ऐसी प्रथा चलती है, जो बच्चे का अन्न प्राशन है । इसे पुत्तरियूणु कहा जाता है । साल में प्रथम बार नई कटाई के चावल के खाने को भी यही शब्द पुत्तरियूणु कहा जाता है ।
2. सा.च.पु. पृ.77

प्रतिष्ठित घराने में सारे सदस्यों की दीर्घायु और ऐश्वर्यपूर्ण जीवन की इच्छा में भी गीत गाया करते हैं। गीत गाने वाले पुल्लुवर को उसका प्रतिफल भी दिया जाता है।

पिणिप्पाट्टु [वेलर पाट्टु]

"पिणि" का अर्थ दुर्दैव है। कभी कभी घराने की ऋतुमती [सयानी] कन्याओं के शरीर पर हौआ आविष्ट हो जाती है। पिणि के आवास से कंयाएं अस्वस्थ रहती हैं। ऐसे अवसरों पर वेलजाति की स्त्रियां [कभी कभी पुरुष भी] मौलसिरी [इल ञी] की भाड हिलाते हुए पिणिगीत गाते हैं। इस क्रिया से पिणि दूर हो जाती है और कन्या अच्छी हो जाती है। ऐसा लोगों का विश्वास है।
गीत:- पिणि बाधित स्त्री को आलंपन में बिठाकर प्राय: यह गीत गाता है :-

अरियाणे पिणियरं वरिका.....
अरियाणे पिणियरं वरिका.....
पूवणिञतिरुमुटिमेलु
तोलुषिञ्ञु पिणि तीर्न्नोंपिका
पोन निरमां मणि मेट्टिट मेलु
तोलुषिञ्ञु पिणि तीर्नोंपिका
कणाडि कविलिन्मेलु
तोलुषिञ्ञु पिणि तीर्नोंपिका...[1]
क्यल मिकरोत्त कण्णिन मेलु
तोलुषिञ्ञु पिणि तीर्न्नोंपिका।[2]

---

1. केरल भाषा चरित्रम - पृ.134
2. पिणिप्पाट्टु वेलन पाट्टु नाम से भी प्रसिद्ध है। `तेलम' शब्द वेदम शब्द से निष्पन्न और वेल शब्द से निष्पन्न और वेड शब्द से भी निष्पन्न कहा गया है। गुंटर्ट, श्रीकण्ठेश्वरं, आदि निघण्टुकार भी भिन्न मत प्रकट करते हैं

भाव : मैं इस बालक की कसम होकर कहता हूँ, हे दुर्देवता तुम इस लड़की के शरीर से दूर हो जाओ । उसके फूल से केशवालों से, सोने के जैसे माथे से काँच के समान शोभित कपोलों से मछली जैसी सुन्दर आँखों से, इस प्रकार शरीर के हर अवयव से तुम नीचे उतर जाओ । मैं इस मोलसिरी [इलञ्ञी] लता से आवाहन करते तुम से यही अनुरोध करता हूँ ।

इस क्रिया में इलञ्ञी की छाल का जो प्रयोग होता है उसके औषध गुण से और इस मानसिक तृप्ति से शायद फल होता होगा । जो भी हो आज भी, युगों को पार कर यह क्रिया एवं गीत समाज में प्रचलित रहे हैं ।

पारप्पाट्टु

यह सिर्फ गिरिवर्ग निवासियों के बीच प्रचलित एक विशिष्ट अनुष्ठान से संबद्ध गीत है । इस का दूसरा नाम काणिप्पाट्टु है । कथाशिल्प काणिप्पाट्टु अधिक है । मुक्तक गीत अलग विषयों पर आधारित है । यह गीत भी अभिचार दोषों को दूर करने केलिए गाया जाता है । पूर्वजों की मृत्यु के बाद उनकी आत्मा को प्रसन्न करने के उद्देश्य से भी यह गीत काणिक्कारों के बीच क्रियाओं के साथ गाया जाता है । गीत की अधिष्ठात देवता, परमशिव है । उनकी शक्ति से सारे दोष दूर हो जाते हैं । पारप्पाट्टु को कहीं कहीं पापुट्टुपाट्टु भी कहते हैं । यह गीत बहुत पुराना माना जाता है ।

वलिय कुन्निन मुकळेरि निन्नु अप्पन
अन्ने मडन्नोन्नु पाञ्ञु कोण्टे
अक्किर शालयिलेत्तियप्पन
अक्किरशालयिल निन्नु अप्पन.... ।

---

1. कुंजन वरे - माळशोरी - पृ.130

[भाव : उसी चोटी पर वह चढ गया । इधर उधर दौड कर देखा । थोडी दूर एक चोटी पर उसने एक शाला देखी, कूद कर उसके सामने आ खडे हो गये]। इन अर्ध धार्मिक अनुष्ठान गीतों के उपरान्त हम और भी कई गीतों के अनुष्ठानों से युक्त देख सकते हैं । उनमें, ओणम, तिरुवातिरा आदि उत्सवों से संबन्धित गीत है । इन गीतों में अनुष्ठानों के साथ साथ खेल तमाशा भी है । इनका नाम कलि शब्द के साथ रखा जाता है । उन ऋतु क्रम, गीतों को भी यहाँ स्थान दे सकता है । इन में ओणम, तिरुवातिरा, विषु, आदि उत्सवों के साथ गाये जानेवाले गीतों पर आगे विचार किया जाएगा ।

ओणप्पाट्टु

ओणम केरल का जन्मोत्सव है । यह श्रावण महीने में मनाया जानेवाला मुख्य उत्सव है । उस समय प्रकृति फूलों से लदी एवं हरियाली से भरी रहती है । ओणम पहले एक कार्षिकोत्सव मात्र माना गया था । लेकिन उसके पीछे उस पर धर्म का आरोप वामन महाबलि आदि की कहानियाँ और पौराणिक प्रतिष्ठित कई अनुष्ठानों का प्रवाह भी आ गया । उत्तर भारत की प्रचलित होली में जिस प्रकार प्रह्लाद, होलिका आदि की कहानियाँ है उसी प्रकार आज ओणम एक धार्मिक उत्सव है । ओणम के उत्सव होने के कारण इसके साथ अनुष्ठान गीतों के साथ साथ अन्य अंश भी है । कई तल और स्तर के गीत इसके साथ साथ प्राप्त हैं । कई प्रकार के ओणप्पाट्टु प्रचलित हैं । उनमें से कुछ नमूने के गीत ऐसे हैं :-

ओणम वरुन्नु

अम्मावन वन्निल्ला,
पत्तायों तोरन्निल्ला
एन्तेन्टे मायरे ओणम वरुन्नु
अम्मायीं वन्निल्ला,
नेल्लु पुछुङीज्ला
एन्तेन्टे मायरे ओणम वन्नु
अत्तं पत्तोणम अडुत्तल्लो मायरे...[1]

भाव : दो मामुली लोगों का संवाद है, ओणम आ गया है, मामा नहीं आया पत्तायं (भंडारा) अभी तक खोला भी नहीं है, अभी अत्तं का दसवां दिन ओणम है । अम्मायी (मामी) भी अभी नहीं आयी है, चावल पका भी नहीं । अब हे प्यारे मित्र क्या कहना ओणम कैसे मना या जाएगा? मुझे इस बात की बडी फिक्र है ।

ओणम के आगमन से पहले उसको स्वागत करने की कुतुहल का चित्र है यह । जब कवि उसे उसी गर्मी से हमे आस्वादन कराता है ।

ओणम का महत्व

ओणम का युग सम-भावना का था । उस समय को जतानेवाला एक गीत : -

मावेली[2] नाटु वाणीटु कालम्
मानुषरेल्लारुम् ओन्नु पोले

---

1. साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे - पृ.76
2. मावेली - महाबली

कळ्ळवुमिल्ला चतियुमिल्ला
कळ्ळत्तरङ्ङळ मर्रोन्नुमिल्ला
कळ्ळप्परयुं चेरुनाषियुं
तेळ्ळिक्कोलादिकळ ओन्नुमिल्ला
ऊञ्ञालिलाटणं पाट्टेणं
मञ्ञप्पुटव युटुत्तिटेणं ।

भाव : जब मावेली शासन करते थे उस समय केरल की सारी जनता समान भाव से रहती थी । समभावना एवं साम्यवाद का सामान्य स्वरुप कायम था । कहीं झूठ बोलनेवाला या लेनदेन में कपट करनेवाला नहीं था । नापतोल में भी धोखा नहीं था । सब लोग आराम औरसन्तोष से जीते थे । वे हिंडोले पर बैठकर आनन्द गीत गाते थे । उस समय प्रजाओं के आराम से जीने की सुव्यवस्था थीं । सुख और समृद्धि का समय था । ऐसा एक मोहक समय था, महाबली का, उसी की पुनीत स्मृति में आज भी लोग ओणम का उत्सव मनाते हैं । ओणोत्सव के अवसर पर कई प्रकार के मनोरंजन एवं खेल होते थे उनका अपना अपना गीत है, उन्हें भी ओणम से संबन्धित गीत या ओणप्पाट्टु में स्थान है । यद्यपि ये खेल ओणम से संबन्धित हैं तो भी उनका मुख्य स्थान खेल और विनोदों में है । इस कारण उनका परिचय खेल और विनोदों के गीतों में दिया जाएगा[2] ।

---

1. पाट्टुकळ (कैरळोदयं) पृ.91
2. नाटन्पाट्टु के अन्य कई विद्वान ओणं कलि प्पाट्टों को "ओणप्पाट्टु" विभाग में स्थान दिया है । यह विभाजन वैज्ञानिक दृष्टि से अस्वीकार है

तिरुवातिरप्पाट्टु

व्रतों और पर्वों के गीतों में तिरुवातिरप्पाट्टु भी आता है। तोभी ये अनुष्ठानिक एवं अर्ध-धार्मिक हैं। तिरुवातिरा केरल में वनिताओं का उत्सव है, स्त्रियों के आर्द्रा-व्रत से संबन्धित है। तिरुवातिरा श्रीकृष्ण का तद्भव है। इसे केरल की (मध्य केरल) युवतियों का मार-महोत्सव माना जा सकता है। इसे अनंगोत्सव भी कहते हैं। यह अगहन के आर्द्रा नक्षत्र में मनायी जाती है। लड़कियाँ सवेरे ही बरफीले नदी या तालाबों के पानी में जाकर नहाती हैं। नहाने के समय से ही गीत शुरू होता है। फिर वे घर आकर अपने को आभूषणों से सजाती और मामा छांती हैं। फिर आंगन में दीप जलाकर उस के सामने अनुष्ठानिक क्रियायें करती और गीत गाती हैं। पूजा विधि के बाद चारों ओर गोलाकार में खड़ी हो पद विन्यास से एक दूसरे के हाथ पर ताल बजाती गाती हैं। तिरुवातिरा व्रत आदि पर गीत पाये जाते हैं। पौराणिक पात्रों पर भी गीत पाया जाता है।

एक तिरुवातिरप्पाट्टु

वालिकमार कुल मौली मणे एम

बाल शशांक मुखी कामका...

x x x

पंकजाक्ष कटल वर्णन

वासुदेवन्‌ जगन्नाथन

नारदादि मुनिवृन्दां -

वन्दीडुं कृष्णन ....।[1]

---

1. ग्रामणिप्पाट्टुकल अवणिशोरी - पृ. 49

भाग्य

भाव : हे नवयौवने, रमणीरत्न, तुम्हारा [उदय हुआ है - तुम्हारा भाव शिशिरबिंब सा सुन्दर और शरीर फूल के समान सुन्दर है। तुम्हारा पंकजाक्ष, समुद्र सा नील वर्ण मेघन कृष्ण मुनि जनों से परि सेवित भगवान तुम्हें पाने केलिए आयेगा। तुम प्रसन्न हो सखी ....।

भरणिप्पाट्टु

भरणी नक्षत्र में [जो कुंभमेला मेला के समय ही होता] भगवती मन्दिरों और 'कावु' में यह गीत गाया जाता है। अधिकांश गीत शृंगारिक और कहीं कहीं अश्लील भी होते हैं। भक्ति एवं कामवासना का युगों से संबन्ध रहा। उस विषय पर विशेष शोध अनिवार्य है। यहाँ भक्ति युक्त कुछ भरणिप्पाट्टु का विचार किया जायेगा।

कोडुङल्लूरम्मे अम्मिक्कु देवी
कोल्लित्तलोन्नु कई अङ्कम देवी
काकुलीम्टि कणि कुन्दु पोवान मिन्टे,
काकर्य कोन्दु पोय पूज चेय्यान,
तानारा देवी तानारा
तानारा देवी, तानारा...!।

भाव : भक्तों का प्रश्न है - हे देवी आप कौन है और यह भक्त कौन [अंत वाद का निर्वान] है। भगवती, महा माये, तुम हमें अनुग्रह दो। हम साल में एक बार तुमसे मिलने आयेंगी, काकुलिण्डल का काम पूरा कर चले जायेंगी। तुम्हारी कृपा के प्रसाद को हम साल भर पूजा करेंगी।

----

* कोटुङल्लूर - भरणि में काकुलीम्टल एक विशिष्ट क्रिया है। जिस केलिए भिन्न गावों के लोग आकर सम्य देख कर रहा करते।

1. नाडन्पाट्टुकल [कल्लाणिक्कल कृष्णनायाम] पृ.155

गीत गाते स्तुति करने के बाद काम व्यवहार और संभोग क्रिया संबन्धी कई गीत ये भक्त गाते हैं। उन गायक भक्तों का विश्वास है लक्ष्मी देवी का अनुग्रह मिलेगा। ऐतिह्यों के अनुसार यह अनुष्टान भक्ति मार्ग सोपान है।

पूरप्पाट्टु

उत्तर केरल में अधिक प्रचलित एक उत्सव है पूरोत्सव। यह भी अनुष्ठानिक है। घर और मन्दिरों में पूरोत्सव का प्रचार है। यह भी अर्चनोत्सव है। पुरुषों का अर्चनोत्सव है पूरोत्सव। इस में पुरुष लोग व्रत निबद्ध होकर भाग लेते हैं। स्त्रियां भी कहीं कहीं गीत गाती व्रत लेती

भाग लेती हैं

एक गीत :-

इनियत्ते कोल्लम नी
नेरत्ते कालत्ते वरणे कामा
नेरे वटक्कोट्टु पोरु कामा
तेक्कन दिक्किल नी पोलन्ने कामा
ईन्तोल पन्तलिल निन्ने कुटुक्कुं कामा
ईन्तोठे पुट्टु चतियकुं कामा ....

---

* ईन्तोलकेट्टु - ईन्तोला - सजावट बनाने की पतल आदि बनाने में और अलंकृत करने में उपयोग करने वाली एक चीज है जो नारियल के पत्ते सा रहा है। यह 'शादी' कार्य केलिए अधिक उपयुक्त होता। यहाँ व्यंग्य में ईन्तोलकेट्टु कहने से - तुम्हें शादी के बन्धन में लगाने का मतलब है।

1. साहित्य चरित्रम प्रस्थानङलिलूटे - जी॰शंकर पिल्ले - पृ॰70।

भाव : हे कामदेव । तुम अगले साल में थोडे आगे आगे आजाना । तुम उत्तर की दिशा में ही जाना । दक्षिण की दिशा में मत जाना । दक्षिण की ओर जाओ तो वहाँ के लोग तुम्हें इन्तोल केट्ट में - बन्धनस्थ करेंगे । ऐसा करने से तुम नष्ट हो जाओगे ।

इसी प्रकार के अनुष्ठानिक गीत केरल में बडी संख्या में प्राप्त हैं । ऋतु और व्रतों के गीत हैं - अनुष्ठानिक गीत । ये मन्दिर और घरों में चलनेवाले अनुष्ठानों के अवसरों पर गाये जाते हैं । ये गीत हिन्दू धर्म से मात्र संबन्ध रखने वाले हैं । धर्म, अनुष्ठान, व्रत, मेला, विनोद, विश्वास, अंधविश्वास, इन सबों के जाल में फंसे ये गीत पडे हैं । ऊपरी दृष्टि से ये गीत सब प्रकार के होते हुए भी - वैज्ञानिक दृष्टि में ये अनुष्ठानिक है । अनुष्ठान का यहाँ बहुत व्यापक अर्थ है ; भिन्न धार्मिक संबन्धों से निबन्ध सामाजिक परिवर्तन से संबन्ध रखने वाले ऐसे गीतों में, धर्म, इतिहास, और सामाजिक अवस्थांतरों की छाप स्पष्ट रूप से पड जाती है । युगों के संघर्ष के ये अभिव्यक्ति हैं । इन्हें सूक्ष्मता से सुलझाने से युग परिवर्तन की आग का अन्दाज पा सकते हैं ।

(3) विशेष जातियों का गीत (जाति गीत)

जाति धर्म का एक अनिवार्य अंग है । केरल के जन-साहित्य में विशिष्ट स्थान जातियों की देन मालूम पडती है । हिन्दी जन-साहित्य में भी भिन्न जातियों की देने हम देख सकते हैं । वहाँ जाति, पेशावर होती है । धार्मिक क्रम की है । यह अंतर बडा महत्व पूर्ण है । उत्तर भारत की भिन्न जाति जैसे अहीर, धोबी, चमार आदि है जिनका अपना अपना धंधा निर्दिष्ट है । केरल में पाणन, वेलन, पुलयन, कावकारन आदि ऐसे विभाग में आते है । लेकिन उनका अपना कोई धंधा यहाँ निर्दिष्ट रूप में नहीं है । धोबी है लेकिन धोबी जाति नहीं । चमार है - लेकिन चमार जाति नहीं । पहले ये विभाजन सब रहे थे । अब सब चमार हैं,

धोबी है, नाई है, आहीर और कहार हैं । यहाँ ऐसी भी कुछ जातियाँ हैं, जो धर्म के आधार पर भिन्न हैं । उन सब के अपना अपना गीत है - वही है - नस्राणि [क्रिश्चियन धर्मावलंबी मल्याली] और माप्पिला [मुसलमान-मल्याली] । उनके गीतों को भी यहाँ जाति गीतों में स्थान इसलिए दिया गया है । उल्लूर और अन्य साहित्य इतिहासकारों ने लोक गीतों के वर्गीकरण के समय, जातियों के नाम लेकर उनके गीतों का उल्लेख किया है । विषय और वस्तु के रहते भी जातिनाम दिया है । माप्पिला प्पाट्टु भी उस क्रम में आता है । इसे प्रबन्ध में विशिष्ट ध्यान देना आवश्यक मालूम पड़ता है इसलिए इस प्रकार का विभाजन स्वीकार किया है -

1. पाणर पाट्टु[1]

द्राविड जनता में एक समय पाणर विशिष्ट जाति थी । तमिष साहित्य के संघ काल में उनका साहित्य और उनकी कलाएं अनुष्ठानिक नहीं थीं । समय के चलते चलते उनका सामाजिक महत्व और स्थान घट गया । तब वे जीवनोपयोग के रूप में कला को अनुष्ठानिक बनाने लगे । मध्यकाल में भक्ति का महत्व रहा । वीर काल से भक्तिकाल की ओर प्रयाण, इस परिवर्तन के साथ हुआ । पाणन, वेलन, मण्णान, पुल्लुवन, काक्कालन, आदि निम्न ~~स्थिति/स्त~~ स्तरीय जाति के लोगों की कला एवं उनका साहित्य इस प्रकार अनुष्ठानिक बन गया इस सार्थकता पर अधिक व्याख्या और प्रमाण चाहिए ही । यह प्रबन्ध उस उद्देश्य का नहीं है इसलिए यहाँ सिर्फ उनके गीतों पर विचार करता चलना है ।

---

1. पाणर पाट्टु - जी॰भागर्वन पिल्लै ने पाणर पाट्टुकल नामक एक पुस्तक को प्रकाशित किया है । इस पुस्तक में कही गयी सारी बातें गलत और अज्ञता का प्रतीक ~~है/~~ मालूम पड़ता है ।

पाणप्पाट्टु दो तरह के हैं । एक पाणन जाति की उत्पत्ति पर दूसरा उनकी देवी देवताओं की पूजा से संबन्धित । ये दोनों शिवपूजा संबन्धी, ही कथागीत हैं । श्री परमेश्वर के प्रच्छन्न जीवन और जीवन लीलाओं का संकल्प और उनकी शक्ति की पूजा से प्राप्त विषय को भी महत्व दिया गया है ।

तुयिलुणर्त्तल् पाट्टु [जागरण के गीत]

यह अनुष्ठानिक होते हुए भी पाणन अपनी कुलनीति और जीव का कमाने को धंधे के रूप में यह गीत गाता है । श्री परमेश्वर ने उन्हें वर दिया था कि यह गीत गाते वे जीवन-यापन करें ।

आषाढ मास की वर्षा से वातावरण में, प्रातकाल ब्रह्म मुहूर्त से पहले, ये पाणन और पाट्टी [स्त्री] घरों के आंगन में आकर श्रीपरमेश्वर और श्रीपार्वती की स्तुति में गीत गाते घर वालों को जगा देते हैं । इस क्रिया को तुयिलुणर्त्तल और गीत को तुयिलुणर्त्तल पाट्टु नाम है ।
एक गीत १-

तुयिलुणरो-तुयिलुणरो
भगवानु तुयिलुणरो
तुयिलुणरो तुयिलुणरो
श्री भगवति तुयिलुणरो
तुयिलुणरो, तुयिलुणरो
उण्णिकळु तुयिलुणरो
– – – – – तुयिलुणरो मालोर्क तुयिलुणरो ।

---

१. पाणन का कर्म कुछ भिन्न गांवों में कणियार का काम है । और कुछ गांवों में वेलन वही कर्म करता है ।

१. नाडन पाट्टुकळ [कल्लाण्णिकल कृष्णनाशान - पृ. १०

गाव : उटुक्कु [छंडी] बजाकर उनके गीत गाते समय घरों के लोग जाग उठते है । घी या जलाकर पूजा के साथ पाणन और पाट्टी को दक्षिणा देते है । पाणन और पाट्टी भी आराम के साथ अनुग्रह देकर चले जाते हैं ।

जागरण के ये गीत समाज को सुस्ती से जगाकर कर्मठ बनाने की चेतावनी के अर्थ में आज भी स्वीकार किये जाते हैं ।

अभिचार प्रयोगों तथा समाज की रक्षा शिक्षा के काम के अर्थ में भी पाणन ये क्रियाएं करते है । अंधविश्वास को अधिक महत्व देते हुए भी इस का महत्व अपनी विशेषता अवश्य है ।

कणियारपाट्टु

सब सज्जाके साथ
कणियार भी ऐक विशिष्ट जाती है जो [अनुष्ठान गीत गाते हैं । कोलम तुल्लल उनका एक गीताभिनय है।जो एक कणियार चेंटा और परा का उपयोग भी करते है ।

एक गीत :-

कारिमीतिल कारणत्ताले एन्टे
कारण पोलक्कुन्नल्लो....
कणियार चलिक्क चेंटो... एन्टे
कोल मिन्नोल अयिच्चिक्कले -
एन्निप्पोल चिरिचिप्पोमे.

----

1. कारिमीन्तल कारणत्ताले - इसके पीछे एक सूचित कथा है । जिसको स्थलपरिमिति के कारण यहाँ दे नहीं सकता । नाडन पाट्टुकॅल - कल्लाणिक्कल कृष्णनाशान - पृ. 110

भाव : है । कणियार कार्ड - यह कोर्न [खेल और नृत्य केलिए तात्कालिक रूप में बनाया किरीट] अभी तो उतार ना चाहिए । नहीं तो मैं मर जाऊँगा । यह बात कारिमीन [एक मछली] के कारण हुआ है । जिसका अब मैं दुख भोगता है ।

वेलरप्पाट्टु

वेलर भी एक हिन्दु निम्न जाति विशेष है । उनका गीत अनुष्ठानिक और विनोद प्रद दोनों है । कणुदोष नावु दोष आदि दूर करने केलिए ये अनुष्ठानिक गीत और समाज में विनोद के गीत भी गाते हैं । मावेरक पाट्टु इन के अनुष्ठानिक गीत हैं । इन गीतों को मवरी कहा जाता है । उनका उल्लेख पहले आया है ।

पुल्लुवर

पुल्लुवर भी एक निम्न जातिविशेष है । इनका गीत अनुष्ठानिक है । सर्पाराधना संबन्धी गीत इनके हैं । सर्प-पाट्टु नाम इनके विशेष गीत है । सर्पपाट्टु कथागीत और मुक्तक दोनों विधा के है । कई दिनों में समाप्त होने वाला सर्पप्पाट्टु अनुष्ठान पुल्लवों की जाविका है । ~~ब्राह्मणिप्पाट्टु~~

ब्राह्मणिप्पाट्टु

जीति गीतों में ब्राह्मणिप्पाट्टु एक विशेष स्थान रखता है । केरल ब्राह्मण नंपूतिरी नाम से जाने जाते हैं । उनकी स्त्रियाँ विशेष व्रतानु-ष्ठानों से जो गीत गाती है उन्हें ब्राह्मणिप्पाट्टु कहते हैं । प्रत्येक ऋतु और व्रत के अवसर पर ये गीत गाये जाते हैं । इन में संस्कार गीत और अनुष्ठानिक गीत दोनों आते हैं । पुराण कथाख्यानों युक्त हैं इन गीतों में अधिक।व्रज गोपी जनों की गीत कला से इन गीतों को तुलना की जा सकती है ।

बाल-गोपाल की लीला विधाओं का वर्णन इन गीतों में अधिक उपलब्ध है। मध्य केरल में इन गीतों का प्रचार आज भी है। अक्किरशेरी नारायणन नंबीशन ने इन गीतों का संग्रह करके उन्हें प्रकाशित किया है।

एक ब्राह्मणप्पाट्टु

कल्याणांगी अणिञ्ञोरुंगु
उल्लास शालिनी
कल्याण गुणा मोहिनी
कल्याणांगी ता ते ते
पोन्नुण्णि कण्णन वरुन्नु-
तिन्नु नी काणुन्नो काले
किण्णवरुं, मोहन्ना!
कण्णनुण्णि ता ते ते...।

भाव : हे सुन्दरी तुम अपनी शृंगार करके आनंद नृत्य करने को तैयार हो जाओ। तुम्हारे रमणीय कण्णन, गोपाल कृष्णन आ रहे हैं। अब तुम किसी की खोज में मत रहो।

मरत्ताणिप्पाट्टु (ख्रिस्तीय गीत)

यह धार्मिक अनुष्ठानों के साथ सामाजिक कर्म संबन्धी विधियों का भी होता है। केरल के जन-जीवन में इन गीतों का अपना महत्व रहा है।

---

1. ब्राह्मणिप्पाट्टु वास्तव में साहित्यक गीतों में अधिक आता है। अन्नप्राशन छेदन जैसे अवसरों पर भी ब्राह्मणिप्पाट्टु गाये जाते हैं। ये आचारप्पाट्टु विधा में आते हैं।

ब्राह्मणिप्पाट्टुकल - अक्किरशेरी - पृ.31

केरल में चौथी शताब्दी तक पश्चिम से ईसाई धर्म प्रचारक लोग आकर बसने लगे। उन लोगों को और उनके अनुयायियों को नस्राणी पुकारते थे। जो नसरत से आया था वह नस्राणी है। ईसा नसरत का था। ईसा मसीहा के अनुयायी को नस्राणी इसलिए कहा जाता है। कहीं कहीं इन्हें नस्राणी माप्पिला भी कहा जाता है। नस्राणिप्पाट्टु केरल में गाँव भेद के अनुसार पाया जाता है। क्रिस्तीये गीत होते हुए भी, हिन्दु लोगों के संस्कार संबन्धी गीतों से ये गीत मेल खाते हैं। इन में प्रमुख दो प्रकार के गीत हैं। पहला आराधना प्रधान दूसरा संस्कार संबन्धी।

आराधना संबन्धी गीत

मर्तोम्मापाट्टु

तोम्मा श्लीहा के नाम जो गीत गाया जाता है वह मर्तोम्मा पाट्टु है।

मरतोम्मन नन्मया लोम्नुळ्ळकुन्नु
नन्माय वरेणमे एन्नु
उत्तमनाय मिशिहायतिक्कुं
उण्णेकुन्नेल्ल वण्णम
कान्तीश मायोमे एकुम्मेन्नीवन्नीट्टु...
कर्पूर पन्तलकमे....... आदि

भाव : हम मर्तोम्मन के नाम शुरू करते हैं। वे हमें अनुग्रह करें। ईसामसीहा जिस प्रकार पवर उठा [उयर्तेकुन्नेन्नु] उस कान्ति से मार्तोम्मन हमारे इस कपूर पंतल में आकर हमें इस कार्य में अनुग्रह दें।

---

1. केरलत्तिले कृस्तीय साहित्यम - डॉ॰ पी॰ जे थामस - पृ॰155

मग्लोरेस्सलम

मग्गारैल्सर्म तम्मिल नगरियिल
मरकत, मुत्तु किलयुन्नमाट्टेन्नु
मयिलाट्टु पोले किलङुन्न मन्नमु
पत्तर मारिरमु निरमेनि येल्लामे
चीन कुन्न पोले चिन्नुन्नु मन्नमु ....।

भाव : यरोस्लेम नामक नगरी पर जो मरकत का देश है - उस देश का राजा जो मोर-पंख पसार कर नृत्य करता है उसी प्रकार आह्लाद मात्र और आनंद सुन्दित है, उनके हम आभारी हैं। वे देखने में तेजस्वी और धर्म ज्ञानी है। वह चीनकुमल के समान वहाँ शोभित है।

मर्लकरप्पाट्टु

ईसाइयों के आगमन का कथा व्याख्यक है यह गीत। किनाई तोम्मन का उल्लेख है[2]।

मलनाट्टु वाकुवान पोवान मन्नमु
बावेठे कल्पन याले पुरप्पेट्टु
याह्र चिविक्कुन्नमुवाक्वु वाक्वि
मुन्न मर्लकर कुटियेरु वतिन्नाले
तोम्मन किनायेन्न देवं मुतिर्मवार[3]।

भाव :- बहुत पहले मर्लकारा (केरल) में किनायि त्तोम्मन नामक एक साहसी ईसाई केरल आया। बावा का कल्पना पाकर वह आया था।

---

1. के. कृ. सा. च. डा. पी.जे. थामस - पृ.120
2. वही पृ.124
3. ए.डी. दूसरी शताब्दी, में क्निायीत्तोम्मन नामक मिशनरी केरल में आया था ऐसा इतिहास में पाया जाता है।

उसके साथ चार सौ लोग भी आये थे । केरल के राजा और उनके सामन्तों ने मिलकर तोम्मन का स्वागत किया । उन्हें यहाँ रहकर धर्म प्रचार करने की सुविधाएं दी गयी तोम्मन ने यहाँ के राजा को सोना चांदी की निधि दी । राजा बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें सारी सुविधाएं कर दीं ।

गीत बहुत लंबा है । एक कथागीत के समान विवरण पाया है । लेकिन इस गीत में लोक गाथा या कथागीत के गुण नहीं मिलते ।

<u>रंपाम्पाट्टु</u>

यह गीत भी तोम्मारसीहा [जो किनायितोम्मन] की जीवन गाथा है ।

साक्षात देवं मुंपोरुन ताम
सरल मार्गत्तिल गुरुवन ताम
मामक नायकन मरतोम्मा[1]
पेरुन चावुन्नो मायुन्नोन ।।

भाव : जो मरत्तोम्मा मेरा नायक है वह ईश्वर के समान है । जीवन को सरल मार्ग पर चलने का उनका उपदेश है । वह हमारा मार्ग दीप एवं आचार्य है ।

<u>पन्निप्पाट्टु</u>

कानत्तु पन्निकट्टुत्तुकत्तिपन्नि
कात्तलाय वेप्पतिन्नालेन्नां कुटि
तट्टिट्टट्टु मंचिट्टु वट्वट्टमिट्टु[2]
नायकन मन्ने येम्मकट्टु कन्टु ।

---

1. के.कृ. सा. च. – डा. पी.जे. थामस – पृ.102
2. वही पृ.107

भाव : कट्टुकल्लि नामक गिरजाघर के निर्माण संबन्धित एक गीत है । निर्माण संबन्धी कार्य इस में विस्तृत व्याख्या से दिये हैं ।

कल्याणप्पाट्टु

मलाणिप्पाट्टु में कल्याणप्पाट्टु का सबसे प्रमुख स्थान है । इस गीत के भिन्न भिन्न भेद है । उनमें ये गीत प्रमुख है :-

§1§ आरंभदिनप्पाट्टु §2§ मीर्य्य वट्टकलिप्पाट्टु §3§ अलङ्कारप्पाट्टु §4§ मैलाचिप्पाट्टु §5§ पन्तलप्पाट्टु §6§ कुरिप्पाट्टु §7§ मयिलाचिप्पाट्टु §8§ मीन्यप्पाट्टु §9§ अटच्कुरप्पाट्टु §10§ मार्ग कलिप्पाट्टु §11§ पाणनवरवुप्पाट्टु ।

§1§ आरंभदिनप्पाट्टु

चिलिच्चु चोल्लल §विवाह के पक्के होने की घोषणा§ के बाद आरंभदिन आता है । इस दिन से शादी की क्रियाएँ शुरू होती हैं ।

पेत्ती वणी पपंचु पन्तुम्नवरकिरिकाम
पुत्तनाँ पंतल चमच्चु पत्तु प्रकारत्तोडे
वट्टोड पंतलोके पट्टामकिलार्न केयत्तु
वेट्टम कोळुत्ति नम्मायिट्टुविरत्तिप्पाया ।

भाव :- बरात के स्वागत केलिए सारा प्रबन्ध करने लगे । पहले घर के अहाता आँगन साफ किया गया है । मार्ग को भी सीधा और अच्छा किया ।

---

1. डा॰ पी॰जे॰ थामस ने क्रिस्तीय गीतों का शोध कार्य किया है । उन में से कुछ गीत यहाँ प्रस्तुत है ।
के॰कृ॰मा॰च॰ - डा॰ प॰जे॰ थामस- पृ॰120

पगडंडी भी साफ की गयी । आँगन-प्रांगन भी साफ किये गये । बड़े पंदलें का निर्माणकिया गया । उसमें रेशम का अलंकार लगाया गया । दीवाले भी अलंकृत किया । फर्श पर अच्छी चटाई बिछाई गयी । इस प्रकार विवाहोत्सव केलिए सारा प्रबन्ध किया गया ।

अलंपार्त

विवाह क्रिया का एक मुख्य कार्य है अलंपार्तु । यह एक प्रकार की सजावट है ।

मारा मीशो पलवियिले
मालकाम पुतुमुकम काणान
कूरार्न बन्धुकलुं
गुणमुटय अयिमीरं
अष्पनोडम्मावम्मरायवरु
बन्धुकलुं
तेराते वन्नेत्तियोतु
मार्गमाम माल कुरिच्चु ।

भाव : रिश्तेदार और बन्धुजन सब इकट्ठे होगये । माता-पिता, मामा आदि भी, आ बैठे । पड़ोसी भी इस शुभ कार्य में भाग लेने आये । सब ये वधु और वर-रूप सज्जा करने लगे ।

मयिलांचिप्पाट्टु [मेंहदी के गीत][2]

वधु विवाह क्रिया के पहले पर शरीर मेंहदी [मैलांची] लगाती है । इस समय मेंहदी का महत्व एवं मैलांची लगाने की आवश्यकता पर जो गीत गाया जाता है - वही मयिलांचिप्पाट्टु हैं ।

1. कुरत्यामिल्लटे पाट्टुकल - आवेल - पृ.44
2. हिन्दू मुसलमान और ईसाई सब जाति के लोग विवाह के साथ साथ मयिलांची लगाते है ।

आदले मायन मलयोळके मोकिलान
हव्वा मनयालुं कूटे मलमोले,
मालक मुत्तु विलळुं मलमोलिल
अंधुं मेले पोले अंचल मेले मी•••
मैलांचियिल्लात कारणं तोंफ्रिमार
आमर मुटि्ट लोलि्व्वाई
अप्पोळे नायनेयुम्मेंम्मलविम्मट्टु
हो आ, मन याले मायन कोट्टुत्तप्पोल ।
अम्मम्मु कंम्ममार मंगल्यं चार्तुवान
पव्वला मैलांचि कोम्ट् पोतियणम
केयाले कार्यु परिच्चोळ कारणम
कैमट्टु केयियल पोतियुम्मु मैलांचि
कालाल मटम्मु कमिसिम्म कारणम
काल नळु तम्मिल पोतियुम्मु मयिलांचि
अरिपोले मण्णु पोतिच्चोळ कारणम
केपुरं तम्मिल पोतियुम्मु मयिलांचि ।

भाव : आदम और होवा जिस प्रकार ईश्वर की दया से पतिपत्नी बन गये, उसी प्रकार हे सखी हम गाती हैं तुम भी हो जाओ ••••। उस दिन सृष्टा ने एकांत चोटी के वन में [आदम] आदम को जन्म दिया । उसने चारों ओर देखा । तब नृत्य करने वाले एक मयूर के समान होवा को देख पाया । उसे देख कर आदम प्रसन्न हुआ । उस कथा के आधार पर आज भी मेहंदी लगाने की क्रिया चलती है । आदम ने हव्वा को मेहंदी के पौधे के बीच से देखा । इस कारण विवाह दिन मुहूर्त के थोडे पहले वधु को मेहंदी की शाखा में छिपा बिठाते हैं । आखिर शैतान से प्रेरणा पाकर विफल [जो फल खाने से ईश्वर ने मना था] खाया । वह पाप उनकी संतानों में आज भी है । उस कारण मैलांची लगाती जाती है । हाथ से फल काटा इसलिए हाथ पर मैलांची लगायी जाती है । पैर से चल कर फल काटा,

इसलिए पैर पर मैलांची लगायी जाती है । मेहंदी लगाने से उस पाप से मोचन प्राप्त होता है ऐसा विश्वास है ..... ।

मील्पाट्टु

विवाह के दिन वर और वधू गुरुजनों से आशीर्वाद लेकर गिरिजाघर जाते हैं । वर सज धज कर हाथी पर सवार होता है । बरात धूम धाम से चलती है । वधू पालकी में गिरिजा घर को निकलती है । बरात के आगे शस्त्र धारी लोग ठाट बाट से चलते हैं । उनके पीछे पीछे अन्य लोग और बन्धु । केरल के हिन्दू ज़मीन्दारों और सामन्तों की देखा देखी ईसाइयों ने भी यह बरात प्रथा स्वीकार की है ।

पेण्णु वेळक्कनु कण्णाटि मिन्नुं पोले
कण्णु मेंचुसि कुरि चन्दनं कोण्टु तोट्टु
कुन्तलचिन्नु तल कोति योतुक्कि केट्टी
वेन्तन मुटियुं वेच्चु कान्ति कलर्न्न कण्णम ।
x x x x x x x
मेल्लेयिरुवरेयुं पल्लक्कि लइक्केट्टत्तु
मेल्ले नडन्नेल्लारुं कल्याण घोषत्तोडे
कोट्टुं कुरवयिलियुं इष्टप्रकारत्तोडे
तालं पिडिच्चु नल्ल वाद्युं परिचक्कारुं
मेलं तेलिञ्ञा नल्ल कोल कुरवयिलियुं आदि
x x x x
मणवरयिल मरुवीडुं मंकतन्टे कल्याणं
कल्याणप्पंतलिल कातलुल्ल पंतलिलु
नल्ल मणि प्पन्तलिल नारिमेयुं पंतलिल
इलकलिट्टुं पंतलिल तालिकेट्टुं मेलं ।

1. कृस्तीय साहित्य चरित्रम - पृ.102

भाव : यह वधू एवं वर देखने में अधिक सुन्दर हैं । उन्होंने आभूषणों और रंग रोमियों से - रेशम-रेशम से अपने अपने को खूब सजाया है । दोनों बाल खूब संवारे है । सुगन्ध लगायी है । दोनों के सिर पर सुवर्ण मुकुट है ।

दोनों अपनी अपनी पालकी में बैठे हैं । कहीं कहीं वर हाथी पर और कहीं घोड़े पर भी सवार होते हैं । बरात सजेधजे, वाद्य-विधा गीत, गाने से शोभित हैं । बरात में हज़ारों लोगों का भाव कोलाहल है ।

विवाह पंडाल में वधू एवं वर वस्त्राभूषण शोभित हैं । उनकी मांगलिक क्रिया हो रही हैं ।

वाष्पाट्ट

यह आशंसा गीत है ।

वाषुविन, वाषुविन्नेन ब्बाकेसम्मेन
नदयुं मिन्टे भर्तावुं मक्कलुं कूटे
कालं पेरुमाल वाणिट्टिड्डक्कणम
वाषुवान भूतियुं कम माकेसम्मेन....¹ ।

भाव :- तुम दंपती अपनी संतानों के साथ हज़ारों वर्ष आनन्द से जीवन बिताओ । जीवन की संपन्नता और सफलता हर कार्य में हो । हमारी शुभ कामनाएं यही है ।

---

1. के.कृ. सा.च. - डॉ. पी. जे. थामस - पृ.70

कल्याणरात्रि के गीत = अट्च्यु तुरप्पाट्टु

अटच्युतुरप्पाट्टु हिन्दुओं के कल्याणप्पाट्टु नामक विभाग में जो गीत देखा वही गीत है और वही प्रसंग :- मंङ तंङ्ङु मणिवरपिल
मणवालन कलकटच्यु
....

कल्याणकलीप्पाट्टु

§1§ मार्गकलिप्पाट्टु

मार्गकलि आज एक स्वतंत्र विनोद मा रहा है । तोभी पहले यह महाणियों के विवाह की बरात से संबन्ध रखता था । यह कलि संघकलि और उसके गीत से बडी समानता रखती है । यह खेल - तेक्कुं भार्ग §दक्षिणी§ क्रिस्त्यानियों के बीच अधिक प्रचलित है । मार्गकलि में बारह खिलाडी भाग लेते हैं । शादी, पेरुनाल, उत्सव आदि समारोहों में, जुलूस के चलते चलते यह खेल खेला करते भी हैं । इस गीत में क्रिस्तीय कहानियाँ उद्धृत है । मरतोम्मा, तोमारमीहा आदि की साहसिकता की गाथा भी इस में आज हैं । मार्ग कलि, परिचं परिचमुट्टु कलि, वट्टक्कलि आदि उस समय के केरलीय खेल और आचार थे । क्रिस्तीय समाज ने उसे उसी रूप में अपनाया । कल्याणकली में ये चारों खेल खेले जाते हैं । उन सब का गीत एक सा है एक जैसा ही एक ही कथा है । सबों में मार्तोम्मा परिलम उल्लेख है । सबों में समान रूप से प्रयुक्त एक गीत देते हुए यह भाग समाप्त करेंगे ।

---

1. मार्ग कलि के गीत अर्वाचीन माने जाते हैं । 16वीं सदी की बातें इस में प्रस्तुत है ।

मरेकणिन्न पीलियुं
मयिल मेले तोन्नु मेन्नियु,
पिडित्त वण्डुं कयुं मेरुं पन्मेन्मेडुं वाक्कवे
वाक्क वाक्क नम्मुडे परिश्येल्ला भूमियेल
परिक्रूराय नटक्क वेन्टि वन्तुल्लतिन मक्कळे
अतिनाय कण्ण कात्तरुल्वान
कनिवु चेयपुक मरतोम्मन ।

मलमेलनिन्नु वेळ्ळनपु चार्ति मारियेन्नपोळ
मयिल मेलेरिनिन्नु निल्कर्ण वन्नु चंतनिल
पट्टटुळ्ळ मणिम्पुटव, पनिक्मुत्तुमालयुं
अर्न करिज्ज चंतमिल वन्नेषु न्नळ्ळुक ।

× × ×

पालवर्ण कुतिर मेलेरि, सवारिपोकुम्मेर
तानरियातुल्लोरु सर्प कुतिरपुडे कालिल चुट्टी
शूल मेडुत्तुकुत्ती, नागत्तिनवायपिळर्नु..... ।

× × × ×

उरक्कित्तल आदित्तन्टे अरिश्ये लोन्नेडुत्तु
स्वीयाकि चमळ्ळवमककवा एन्नु चेर्नमिट्ट...आदि

भाव :- हे ! मर्तोम्मन, इस वेदी में आपसे ऐसी प्रार्थना करते हैं कि आप मयूर पिच्छिका पहने मयूर के ऊपर पधार कर हमें दर्शन दीजिए । आपके शरीर पर व्याधने जो तीर मारा उसमें भी आप प्रसन्न थे । आपके अनुग्रह से ये अनुचर भी प्रसन्न है जो आपके नाम लेकर गाते हैं और खेलते हैं ।

आप जब दूध के रंगवाले सफेद घोडे पर सवारी कर रहे थे कि अचानक एक काले सर्प ने घोडे के पैरों पर घेरा डाली । आप ने जल्दी से यह देखा, और शूल लेकर सर्प का मुँह फाड दिया और मार डाला ।

---

1. के॰ कृ॰ सा॰ च॰ – डॉ॰ पी॰जे॰ थामस – पृ॰90

आदिमता की उत्पत्ति का गीत है यह । आदि मानव को पहले पहल अकेले जन्म दिया था । जब वह ऊब और निरुत्साह दीखा पड़ा सृजन हार ने उसको एक सहेली भी दी । जब आदम सो गया तब उसकी अस्थियों से एक उखाड़ किया, और उसे स्त्री बनाकर उसे ही दे दिया ।

इसी प्रकार ख्रिस्तीय गीत कई विषयों के और विविध हैं ।[1] इन गीतों में शादी के गीत अधिक महत्वपूर्ण हैं ।

केरल के ख्रिस्तीय गीत अचारों और अनुष्ठानों के होते हुए भी, सारे के सारे ऐतिहासिक तथ्यों से पूर्ण हैं । वे बैबिल की कथा से संबद्ध भी हैं । मानव जीवन के आदिम स्रोत से संबन्ध रखने वाले ये गीत अधिक महत्व पूर्ण हैं । उनका संकलन और प्रकाशन निष्कृष्ट रूप से होने की अवश्यकता शोध कार्य में लगे लोगों को अधिक मालूम पड़ती है।

<u>मापिलप्पाट्टु (इस्लामिक गीत)</u>

केरल के लोक गीतों में मापिलप्पाट्टु नामक एक विशेष विधा के गीत भी प्राप्त हैं । इन गीतों का अध्ययन और निरीक्षण-परीक्षण बहुत कम मात्रा में हुआ है । उत्तर केरल में मुसलमान लोग काफी मात्रा में रहते हैं । उनकी भाषा अरबी मलयालम है[2] । उस भाषा में रचित गीत है मापिलप्पाट्टुकल ।

---

1. विविध से मतलब - प्रत्येक क्रियाकलापों से है ।
2. अरबि मलयालम :- यह एक मिश्र भाषा है जिसमें अरबी फारसी शब्दों का अधिक योग है । वाक्य रचना आदि मलयालम व्याकरण नियमों के अनुसार होती है । इसे अरबिए/ मलयालम भाषाओं की संयुक्त मणिप्रवालम भाषा कह सकता है ।

ये गीत मलयालम गान साहित्य का एक मुख्य अंग हैं । इन गीतों के कई रूप प्राप्त हैं ।

{1} मालप्पाट्टु, वरियमप्पाट्टु, कत्तुप्पाट्टु, मदहप्पाट्टु सडि अरबि प्पाट्टु, कल्याणप्पाट्टु - मयिलांचिप्पाट्टु, केस्सुपाट्टु, पडप्पाट्टु आदि । इन में मुक्तक और प्रबन्ध गीत हैं । इन्हें आराधना एवं अनुष्ठान के गीत, कल्याणप्पाट्टु, वीराराधना के गीत - इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं ।

आराधना प्रधान गीत

{अ} मालप्पाट्टु

आराधना स्वद गीतों में "मालप्पाट्टु" मुख्य है । इन गीतों का विषय पूज्य पुरुषों का यशोगान है । इन गीतों को मेर्कप्पाट्टु नाम है । मालप्पाट्टु के भिन्न रूप हैं । मुहयिद्दीन माला, बदरमाला, रिफाई माला, नफीसत माला, मुहमुद माला आदि ।

कुछ नये मालप्पाट्टु भी प्रचलित हैं । वे स्थानों के नामों से जाने जाते हैं । मंपुरम माला, मञ्ञाकुलम माला, मलप्पुर माला आदि । मालप्पाट्टु धर्म नियमों से अधिक प्रभावित हैं । प्राचीन सनातन आस्था वाले मुस्लीम धरानों में मालप्पाट्टु का पाठ नियमित विधियों के द्वारा आज भी चलता है । रुढि के अनुसार ऐसा करने से घर के सारे दोष दूर हो जाते हैं । यह विश्वास लोगों में आज भी है ।

---

1. माप्पिलप्पाट्टु नाम - बिलकुल नया है । पच्चीस सालों से पहले अरबि मलयालम गीतों का नाम सफीनप्पाट्टु था । सफीना शब्दार्थ - जहाज {कप्पल} कप्पलपाट्टु और एक विधा माप्पिलप्पाट्टु में प्राप्त है ।

अक्कातिरिप्पोक्कुदियुं सलावत्तु
अतिमाल मुडक्कुवान अक्क चेयदे वेदापिर
आलं उडउडआवन एकन अडकाले
आये मुहम्मद, अवर किल आणोवर
एल्लाकितियिलुं वन किल आणोवर
.... ।

भाव : इसमें रसूल की महात्मा की स्तुति है । मैं खुदा के नाम शुरू करता हूँ । तुदि सलावत आदि से शुरू करने का आदेश पाकर उसे निभाने केलिए रसूल इस दुनिया में आये । वे हर बात पर साफ, धीतिमान और शक्तिशाली/कि पथप्रदर्शक हैं । वह सारी किताबों से बडा और शक्तिशाली किताब है । हर दिशाओं में मशहूर है । धार्मिक महत्व बतानेवाला और एक मालप्पाट्टु :-

एन्नुडे एकन उडयवन तन्नेकल
आकेन्नु ञान चोन्निय आर्डु अदेन्नोवर
चेकल कुडक्ते शान चेयतिल्ला ओन्नुमे
चोन्निल्ल ञानोन्नुं एन्नोडु चोल्लाद
तारीख मानुद्रेकुत्तु चेन्ननाल
केमानी मेन्ने माट्टु तन्निलपिरन्नोवर
आणु अक्कु अंदोन्नु मे कूडाते
ओरान्टु काल पोक्कु नडन्नोवर
कश मेर्द राविल नडन्नक्कु पोकुपोल
केविरल पुट्टाकिक कादिट्ले नडन्नोवर
कोषीडे मुल्लोडु कुकेन्नु चोन्नोर
कूडाते कूवि पराण्जिन्नु चिट्टवर [मुहयुद्दीन माला][2]

---

1. अरबि मलयालम साहित्य चरित्रम - ओ. अबू - पृ.10
2. वही पृ.14

भाव : मेरी जो आज्ञा है, वह खुदा की अपनी आज्ञा है । खुदाने जो आज्ञा मुझे दी मैं उसी प्रकार आपके सामने रख देता हूँ । मैं जिस बात को ही बता देता हूँ, वह वैसा ही हो सकता है ।

अल्लाह ने जो बात नहीं कहीं मैं ने कभी की नहीं है । जो करने को कहा वही किया बस ।

हिजरा 470 में केनानी नामक देश में जन्म लिया । बिना खाये पिये, बिना सोये एक मास काटा । घने अंधकार में अपनी उंगली को दीया बनाकर इधर उधर घोर जंगल में घूमते फिरते दिन काटा । मुर्गे को काट मारकर उसका मांस खाया । उसकी हड्डी को एक जगह इकट्ठा किया । तुम्ही का एक दिन ऐसा कहना पड़ा है हड्डियों तुम फिर से मुरगा बन लौट आओ । अचरज की बात है वे हड्डियाँ फिर से मुरगे बन गयीं । मुर्गे कूकते हुए उड़ गये ।

इसी प्रकार कई कल्पना प्रधान और चमत्कार पूर्ण पंक्तियाँ इस मालप्पाट्टु में हम देख सकते हैं ।

बदर माला और अन्य मालाएँ भी अधिक रोचक गीत विधाओं से मिश्र माप्पिल प्पाट्टु हैं ।

<u>नूलमालप्पाट्टु</u>

इस गीत में पैगंबर मुहम्मद की कथा और उनके प्रति कवि की श्रद्धा का विवरण पाया जाता है । काल-विवर्त्त - इस क्रम से ये गीत रचे हैं ।

आदित्तं पिरिर्त्त

अपिनाल इख्वा

दाय ओलिन्स नबिया रसूल
बदनूल बशिरियल
नीति वेन्द निबी
वेन्दर आले मबी सुदरा
नीदि मक्क मदी
माथिम मिक्कमदी
नियन्स पाद मोली ।
!
..............!

आदि मक्क से पैगंबर के रूप में जिस रसूल ने भूतल में जन्म लिया है, उसे मैं मक्का में उदित नीति का बादि समझता हूँ । उस आदि मूल को चारों वेदों का सामी एवं परम सत्पुरुष मानकर मैं उनके नाम से यह कविता शुरू करता हूँ ।

वेदान्त गीत (कप्पप्पाट्टु)[2]

माप्पिलाप्पाट्टु का सामान्य निदर्शन कप्पप्पाट्टु है । कप्पप्पाट्टु की अरबि मलयालम संज्ञा सफीन प्पाट्टु है । सफीना शब्द का अर्थ जहाज है । माप्पिला लोग अधिकतर नाविक थे और नाव के ज़रिये विदेशों से व्यापार करते थे । उनके जीवन साधनों से अधिक संबन्ध जहाजी शब्द और तत्संबन्धी रूपकों को बनाकर ही कप्पप्पाट्टु बने हैं ।

---

1. अ. म. मा. स. - ओ.अबु - पृ.34
2. नये कप्पप्पाट्टु की रचना कुञ्ञायिन मुसलियार ने की है ।

इस कारण केरलीय मुस्लीम समाज के हर स्तर के लोगों के ओठों पर कप्पप्पाट्टु का नृत्य हुआ ।

जहाज को रूपक बनाकर ज्ञानी जन-कवि ने मानव शरीर की व्यर्थता का आरोप किया है । इस में जो वेदान्त रहा है वह दंभी और कुत्सी समाज के सदस्यों की आँखें खुलने योग्य है ।

चायल ओर कप्पलोन्दु ममुक्कु
चाले पाण्टि ञाणोन्पतु मीर्क
मीर्क अञ्चु ओर मुल्ल तोर्फ
मुलिट्टु पाण्टि पुलक्कामल वेतु
ठोलेत्ते पाण्टि क्कूठो पत्तिरेन्नु
कोन्टक्कु तार चील मुन्नाकिले आने ।

x x

कण्टट्टरियालो कण्णल्ले पोट्टा ?
कारणोर चोलपोन्न केट्टल्लेपोट्टा ?
पन्टुल्लोर चोन्नित्त पत्तिरिल्ला पोट्टा ?
पेतन्न पालिनु केटुन्टो पोट्टा ?

भाव :- हमारा एक जहाज है जो मरतल (पाल) पर हवा के झोंके से चलता है । उसकी लंबाई मोबल्लिस माने छः फुट है । वह चौडाई में एक मुल्ला का होता है । उसका निर्माण बडी शिल्प चातुरी से हुआ है । सारे अवयव अंतरगामी बहिरगामी मल द्वारों से सज्जित हैं । उसकी क्रियाएं और सजावट अद्भुतावह यंत्र तंत्रों से होती हैं ।

रे ! अंधे ! क्या तुम्हारी आँखें नहीं है ? सुन-देख क्यों नहीं सके ? तुम काने हो या अंधे ? अपने पूर्वजों ने जो बताया है उसके बारे में तुम्हारा क्या विचार है ? तुमने क्या उसे सुना नहीं ? पुरानी बात खोटी नहीं होती । जैसे गाय का दूध मीठा है, (कड़ुआ नहीं है) उसी प्रकार बड़ों का कहना भी है -

वीरगीत

पटप्पाट्टु

अरबी-मलयालम के वीरगीत है पटप्पाट्टुकल । इन में युद्ध वर्णन अधिक हैं । इस्लाम के आरंभकाल में उसकी स्थापना के लिए जितने युद्ध करने पड़े उन सब का जीता जागता चित्र इन युद्ध गीतों में-पटप्पाट्टु-पाया जाता है । ये गीत आकार में बृहत् और संख्या में भी अधिक है । इसे गीत काव्य कहने से भी कोई हर्ज नहीं । इस विभाग के मापिल मलयालम में पचासों गीतों का आकलन हुआ है । बदरप्पाट्टु, उहदप्पाट्टु, मक्कप्पाट्टु, मरहप्पाट्टु फुतुहश्शाम्पाट्टु, हुनैनप्पाट्टु, आदि प्रमुख मापिलप्पडप्पाट्टु हैं । पडप्पाट्टु बहुधा अर्वाचीन है । महाकवि मोयिनकुट्टि वैद्यर की रचनाएं इस विभाग में आती हैं ।

इशल-अंकबनिप्पु, तोंकल, चेरुतोंकल, ओप्पना, विरुत्तं, तनाट विरुत्तं, तुंटर विरुत्तं, अलिफ़ विरुत्तं, कुरुम विरुत्तं, पुकर विरुत्तं, कमक विरुत्तं, कविविरुत्तं, वेरिविरुत्तं, कमक विरुत्तं, ओप्पनातुटि, रंडातुटि, काप्पु कोप्पुपाट्टु, तावेलं, तमिलवात, कविलामोले पेरुंकिल, मटकंप, अलकनट इस प्रकार पांच सौ से अधिक इशल इस मापिल पाट्टु में प्राप्त है ।

पटप्पाट्टु हम सारे खानों में रचे हैं । मंदिर कवि हसन केरलु आदि माप्पिलप्पाट्टु की जान है । ये गीत सब रसों की पुष्टि करते हैं । पटप्पाट्टु में बंध, कुतिरत्ताळं - आदि और भी ध्यान देने योग्य हैं ।

एक पटप्पाट्टु

चोडि सुरं, बिकुम पेठ पेठ
　　　　　अंबरं किडुकिडुं
भूमि चलिद भुदि मुहल
कोकुवडिड विधि
　　　　　इमाम भूमि अपिये
　　　　　पर्द कैदियाम पूकमता "सलाम"
x　　　x　　　x　　　x
पाडिडुं इळके पलर कने सळके
पिडुत्तुम्मे मिकुमकित्त न्मडत्तलवर तम्मर्टु
चोमितिळे चळम मिये चोमुचिम
पारत्तन्ने मयिलकिळं ओर
सिरादि उम्टु अरि तमर ।

वीर-रस-प्रधान एवं भयानक यह दृश्य इस अर्थ का है :-

उस युद्ध की भीकरता से हर कहीं अट्टहास, हाहाकार एवं घोड़ों की खुर ध्वनि से भी आसमान किडु किडु और पेठ पेठ शब्दों से गूंज उठता था । भूमि भी हिल रही है । जिस प्रकार जोश के साथ हुंकार करते ऐसी आवाज बनाकर दोनों विभाग के वीर सिपाही लड़े ।

इस भीषण रण में जिस की तलवार से आग निकली उस तलवार के अधिकारियों ने उल्लास के साथ दुश्मनों का सिर काटा । उन शत्रुओं का कबंध, सिर कटे मोर के समान पंख फड़ाने लगा ।

कल्याणप्पाट्टु

माप्पिलप्पाट्टु-गान का इन्द्रधनुष है कल्याणप्पाट्टु । इसमें मैलांची और कोल्कळि ओप्पना प्रमुख हैं । मेहंदी को माप्पिला मलयालम में मोयिलांची शब्द प्रयुक्त होता है । मोयिलांचिप्पाट्ट पुराना और नया दो प्रकार के हैं ।

प्राय: यह विवाह की पिछली रात को गाया जाता है । पुरुष और स्त्री दोनों दल बनाकर अपनी अपनी ओर से गीत गाते हैं । जब पुरुषों की संख्या अधिक हो, स्त्रियां उन्हें परास्त करने की कोशिश करती हैं । तब बाजी लगायी जाती है । संगीत प्रतियोगिता सी अनुभव होती है । दोनों विभागों में समझौते केलिए प्रभात को ही आना पड़ता है । कुछ पुराने मैलांचिप्पाट्टु नीचे दिये जाते हैं ।

काढने माचि माचि कळवेल्ला मळ्ळोरि ~~~
माद मे माचि माचि मलयेल्ला मिळ्ळोरि ~~~
उदिर कळल मकुडिल उदिर करिपुं पूप्पिरि ~~~
आदर पोरिम्मलम्मल आ~रलाय मोलांचि
x x x x x
आरिरल पोय कपिदुत्तु आये
कळाोळोळी....
पुरई कळल मकुडिल पूळिवन्नो
पेन्नामरा

चैलामरा पुक्कारिञ्ञु चैंतिरप्पट्टणिञ्ञ
कन्नि कदिर मुररत्तु कमपदिञ्ञ
मोम मुररत्तु
उन्नद पुमार आडि
मोलाचिप्पट्टु पोलो
x x x
ओरां लाव बेट्ट बीव मुक्कनु
मैव मोलाचि
रंरां लाव बेट्ट बीषु रंरलमोल
पुलिक्कुत्त
....
....
ओंपदां लावु बेट्ट बीट्टुपर्नु
पोन्नय मोलाचि
पोन्नु पूमालयिट्टे पूकन्नु कोंटि मोलाचि...

भाव :- यह मोयिलाचि हजारों कोस दूर से आया है । सप्त सागरों को लांघकर लाया है । हमारी कन्याओं की रक्षा भाको बढाने में - क्षीर सागर में चेंकटल (लाल सागर) के उस पार से यह मोलाचि लाया है । यह कमल फूल की आभा देनेवाली है । कन्याओं के मन को मोहक बनाने वाली है ।

जहाँ यह मैलांची लगाया था वह पक कर आकर्षक बना । प्रथम रात की चाँद से, चौदहवीं का चांद तक इसे अमोघ शोभायमान बनाया । उसी प्रकार मोलाचि लगाती है उसकी सूरत भी उसी प्रकार क्रम से बढ बढ कर आएगी ।

सागर के अंतःस्थल में डूबती सूरज की लालिमा लानेवाली है यह मैलाचि| दुनियां इसे मींचते सारा सागर सूख गया है ।

ओप्पनप्पाट्टु

बरात के निगमन और यात्रा मे ' ये गीत गाये जाते हैं। अम्मायिप्पाट्टु, कल्योठप्पाट्टु, अप्पप्पाट्टु आदि ओप्पना में आये हैं। बरात के जुलूस और पंदाल के मेले में ये गीत अधिक हर्षदायक हैं।

ओप्पनक्पायल अधिक मधुर है। ओप्पनाचायल का एक गीत :-

माल वेर रत्न माला
मिर्कवि तारळु पुत्ते माला
माल चक्कर मिन्नि माला
मदिर चिन्नि एन्न माला।

भाव :- कई प्रकार के कांचन और रत्न के हार के नाम बताये जाएगी। वेरमाला [रत्नहार] इनमें प्रधान है। पुत्ते माला चक्करमिन्नी मालय, मदिर चिन्नी तिलनी माला जैसे अनेक प्रकार के हारों का नाम एक ओप्पन प्पाट्टु में मिलता है।

यद्यपि आचारों और अनुष्ठानों पर आधारित है, तोभी मलबार के माप्पिळा जीवन के सम्पूर्ण स्वभावों को माप्पिल पाट्टु में पा सकते हैं। ये पूर्णतया साहित्यिक पृष्ठभूमि में बने हैं, तो भी ऐतिहासिक महत्वों का अनावरण करने वाले भी हैं। केरल के सामाजिक जीवन में माप्पिळा लोगों का योगदान किस हद तक हुआ है, यह स्पष्ट करने में भी ये गीत सहायक हैं। केरल के लोक गीतों में माप्पिल प्पाट्टु अलग निधि है।

---

1. यह ताल - एवं हाथ से ताल मार कर ही गाती हैं। स्त्रियाँ ही ओप्पना अधिक गाती है।
- अ॰ म॰ मा॰ प॰ पृ॰79

हम देख चुके हैं, जाति-गत गीतों में, हिन्दू धर्म से संबन्ध रखती हुई कुछ विशेष जातियाँ जैसे मण्णार, पाणन आदियों का गीत एवं ख्रिस्तीय धर्म से संबद्ध न्नाणिप्पाट्टु, इस्लाम धर्म से संबद्ध माप्पिळप्पाट्टु - इन सारे जातिगत गीतों में अनुष्ठानिक परंपरा और आचार संस्कार ही मुख्य हैं। इन गीतों में आम जनता के जीवन की छाप जमनेवाली भाव भावनाएं पनप गये हैं।

इन सारे गीतों में सामूहिक जीवन और सांस्कारिक प्रथाओं की उद्भावनाएं स्पष्ट देख सकते हैं।

पणिप्पाट्टु (मज़दूरों के गीत)

पणिप्पाट्टु उन गीतों को कहते हैं, जो कोई काम करते समय गाये जाते हैं।¹ श्रमिक वर्ग के लोग जब कोई काम करते हैं तब वे अपनी थकावट को दूर करने केलिए गीत भी गाते हैं। ऐसा करने से काम में मन लगा रहता है। थकावट भूल भी जाती है। केरल के इन गीतों को पणिप्पाट्टु नाम उपयुक्त है। मज़दूरों के गीत श्रमिकों के गीत आदि नाम भी उचित हैं। खेत में काम करनेवाले खेत, मज़दूर, सड़क पर कंकड़ तोड़नेवाला लकड़हारा, ठेले खींचनेवाला नाव चलानेवाला, बैलगाडी, हांकनेवाला, तांगेवाला, गाय बकरी चरानेवाला अहीर आदि मज़दूर अपने जीवन की थकान लोकगीत की धुन से भुलाते हैं। आगे कुछ पणिप्पाट्टु परिचय कराया जाएगा।

---

1. पणिप्पाट्टु - श्रमगीत, श्रमिक गीत, मज़दूरों के गीत आदि

कृषक गीत

आठोपहर खेत में काम करने वाले मजदूर केरल में हर कहीं समान रूप से प्राप्त है । उनके गीतों में मिट्टी की सुगंध के साथ साथ पसीने की गंध भी है । खेती के औजारों की झनक इन गीतों में गूंज उठती है । खेती की हर प्रक्रिया में किसानों का सामूहिक गीत मिलता है ।

चेन्नेल्लु

यह अनाज की उत्पत्ति से संबन्धित एक गीत है ।

आरियन नाट्टिलुण्टायि चेन्नेल्लु
अन्नं चेर्किलि कोण्टन्नु विरलु
....

भाव :- स्वर्ग से हंस पक्षी ने चेन्नेल्लु नामक चावल का बीज लाकर केरल में डाला । इससे चावल सारे भूतल में प्रसारित हुआ ।

कृषक गीतों में यह सब से पुराना माना गया है । खेत की जुताई और बुवाई दोनों अवसरों पर गाये जाने वाला और एक गीत :-

तित्तोयि, तेय्तोयी पून्तोयिकन्ट
पून्तोयि कण्टित्त नेम्मे तेव्वु
पून्तोयि कण्टित्त अप्पपोमिवो,
पून्तोयिकण्टित्त काव्योमिवो

---

1. चेन्नेल्लु - लाल रंग का दाना, जो भूमि में पहले पहल उपज के रूप में उत्पन्न हुआ । [कुमार निकण्टु - आठवीं शताब्दी]
2. सा. च. पु. जी.शंकर पिल्ले - पृ.77

पून्तोपि कन्टित्त मेल्लुपोलिवो
पून्तोपि कन्टित्त मैरितु पोलिवो ..'

भाव : यह केवल शब्द माधुरी पर आधारित गीत है । जो शब्द ज़बान में आता है वही गीत बन जाता है । सच्चे अर्थ में यही भाटन पाट्टु है । पानी और कीचड से 'चल' चल' खेत में हवा के झोंके से पानी की लहरें ऐसा मारेंगी - जो 'तित्तो यी' तैय तोयी' का ताल मार रहा है । ऐसे तित्तोयी तैयतोयी लहरें मारने वाले खेत में क्या क्या उपज हो ? क्या उपज हो, केवल चावल सब....।

ञारपाट्टु

यह रोपाई का गीत है । रोपाई के मौसम में कतार बांध कर खेत में चावल के बीज ।ञार। रोपने वाली मज़दूरिन में - युवतियाँ और बूढ़ियाँ भी एक कंठ में गाने वाला एक गीत नीचे दिया है । केरल के किसी भी कोने में ऐसे अवसर पर ।रोपाई केसमय। ऐसा गीत आज भी सुन सकते हैं :-

मारी मळ्ळ चोरिंचे, चेह
वयलुकळोक्के नन्चि
पूट्टि योळिक्क च्यरिंचे, चेह
ञारुकळ केट्टि येरिंचे
ओमना चेंतला माला - चेह
कण्णम्म कालि कळ्ळी,
चात्ता चळ्य मारोया चेह
मक्कळेल्लारुं वन्नो ।
वन्नु निरन्निवर निन्नटे चेह
ञारेल्लां केट्टि प्पकुती ।

ओय्यप्तिला मट्टु कोराम्बर
कुत्तियुडुत्तु कुम्बिये
कण्णेक्मिये़ण्णयोल - अक्क
ओमले लोण्णु क्लिजे
पाट्टोम्नु पाटीट्ट वेम्म निक्कू
मट्टु करयक्कुकोरान..........
अय्योलोकररवेण्णु - अक्क
मेक्कारमेरि करेवे
मेय्योट्ट मौक्कि प्परवे वेड
ओमला कुट्ट ल्वेक्की
तरम्म चोक्को मोयिम्बोल - इक्के
वम्सोड कारिर्य चोक्नु..... ।

भाव : वर्षाऋतु । पानी बरसा, खेत सींच गया । सारा खेत जोत कर साफ किया गया । चावल के पौधे [आड] तैयार हो गये । रोपाई का समय आया । रोपने वाली स्त्रियाँ, ओमला, चेन्तिला, माला, कण्णम्मा, कल्पि, काली आदि चेरूमिच्चियाँ [युवमजदूरिनें] खेत में आ गयीं । वे कतार में मेल [मिरा] हो गयीं । वे कमर बाँधकर खेत में घुटने के बल खडी रहीं और समान तेजी से, रोपने लगीं । उस समय एक शुक तरुणी खेत के पास के पेड पर आ बैठी । उसके मुँह से जो शब्द निकला उसके वेग में उस ताल में एक मजदूरिन भी गाने लगीं । .... वह गीत ऐसा था है तरुम्मे [शुकतरुणी] तुम यहाँ आकर एक गीत गाओ...]

मेरम पोय मेरत्तु

मजदूरों के गीत में कुछ प्रतिक्रियात्मक प्रतिवेध स्वरों का गीत भी प्राप्त है। नीचे लिखा यह गीत उसका उदाहरण है।

मेरं पोय नेरं पोय पूवैल मरपट्टी
कुञ्ञि कोषि कुञकोषि तत्ति तत्तिच्चाडुन्ने
मेरपोयनेरत्तु कोल्ला कोल कोल्लिण्यो
अरनाषिट्टु कत्तु तन्नु, ओन्नुरिल्लेट्टे तन्नु
कोल्लाक्कोल कोल्लिण्यो।
मेरपोय मेरत्तु ....

भाव : सांझ हो गयी। सूरज केवटके पौधों की आड में छिपा है। छोटी छोटी जंगली मुर्गियाँ भी फुदकती फुदकती अपनी घोंसले की ओर चलीं। सांझ बढ़ी है। हे भगवान! अभी हम मजदूरों को इस काम से छुटकारा नहीं है क्या? थोड़ा सा ठर्रा और आधा खोपरा [नारियल] पर बुरी मौत मरते हैं। बुरी मौत---- समय बीत गयी...

कमकर का यह प्रतिवेध शब्द युगों से पीछे गूंज उठता है। सामाज की ओर।

वञ्चप्पाट्टु [नाव-गीत]

माल ढोने वाली नावों को केरल में केट्टुवल्लम [बाजरा] कहा जाता है। छोटी छोटी डोंगियों के साथ साथ बाजरे माल ढोते हुए विस्तृत जलाशयों के वक्ष से रात की एकांतता में खेते खेते आगे बढ़ते मजदूर उस निशा की

1. के॰ भाषा साहित्य चरित्रम - आर॰नारायणपणिक्कर - पृ॰170

एकान्तता में स्वभावतः कुछ गीत गाते हैं। झीलों के मध्य से इन बावरों का आवागमन एक प्रकार की साहसिकता है। इस एक मात्र यातायात के कई प्रदेश केरल के पश्चिम तट के झीलों [कायल] के पास हैं। उन बोझीले बावरों के मल्लाहों का गीत ही यहाँ वञ्चिप्पाट्टु नाम से उद्धृत है[1]। ये गीत सारे के सारे दुःख और जीवन संघर्ष का होता है। सागर में मछली पकड़ने जाते साहसिक मछुओं के गीत भी इस कोटि में आते हैं।

गीत :-

अन्यमुक्के एले-लो
अम्पुओम - एलोलो...
वेर्ड कायल्लोळम वेट्टुम
ओर्डु आयेन्टे मारने
मारने मणि मारने एन्टे
अम्पुरर मणि मारने...
मारने, वीरने, एन्टे
अम्पुरर मणि मारने...[2] ।

भाव :- यह एक दुःख कथा है। एक स्त्री, जो धीवरा है, अपने पति की अपमृत्यु की याद कर रही है......।

जब वेर्ड झील में लहरें उठेंगी, तभी मैं अपने पति देव की याद करूँगी। जब जब रात को हवा मेरे दरवाजे पर छट खटाएगी तब तब भी मैं अपने परम स्नेही, कामदेव से सुन्दर पति-देव का स्मरण करूँगी। आखिर वह कब आएगा.....

---

1. जलोत्सवों में जो प्रतियोगिता के भाव खेल हैं उनके गीत इस कोटी में नहीं आते। वे विनोद के गीतों में आते हैं।
2. सा० च० प्र० - जी० शंकरपिल्ले - पृ० 101

खेतों में मजूर और उनकी स्त्रियाँ अब भी नाच नचाती-नचाती यह गीत गाती चलती हैं। तो सुनने वाले की मन मन में बिजली छा जाती है।

इस प्रकार के और इस से भी सुन्दर हज़ारों गीत भाव-गीतों में प्राप्त है। यह प्रबन्ध उस दिशा पर हल्का सा प्रकाश डालता है।

वट्टिप्पाट्टु

टोकरी बुनने वाली स्त्रियाँ सामूहिक रूप में कार्य करते हुए यह गीत साधारणत: गाती है :-

चापिक्का[1] व्यापिन्न वेम्बे...... तेययन्तारा
वेयिलत्तु म‌ऽऽअत्तिट्टे.....
एषुन्नो मारेवुत्ते - तेययन्तारा
एवायि क्कीडम्मुन्टे - तेययन्तारा
नोट्टनुं - तुंच्चिम्मिट्टे - तेययन्तारा,
पेक्मीनुदिच्च पोले तेययन्तारा।
वट्टिक्कुं - तेच्चु मिट्टे तेययन्तारा
वट्टियुं कुट्टिप्पेयते तेययन्तारा।

भाव : इस गीत को आरंभ से अंत तक क्रम से कई बार दुहराते हैं। दुहराते दुहराते एक टोकरी की बुनावट बुन पूरी हो जाती है।

---

1. चापिक्का - ढोल का एक छोटा रूप, जिसे बच्चे और औरतें अधिक पसन्द करती है। के•सा•च• पृ•।।9

कुटा [टोकरा] बनाने की सामग्री की तलाश में [बांस काटने केलिए] हम वायक्का काट तक चले गये । वहाँ से बांस काटकर उसे धूप और हिम में डालकर पका दिया । ऐसा करने से बांस नरम नरम हो जाएगी फिर उसे सातों सातों धागों में काट लिया । उन में से सात-सात धागे लिए टोकरी के ताल और बाम बनाके रखे । उसे देखने से ऐसा लगा मानों पेरूमीन [प्रभात नक्षत्र उदित हुआ हो] उदित हुआ है । नक्षत्रों के समान किरणें डालती तालानुसार टोकरी बुन बुन कर पूरा हो जाती है । टोकरी, चटाई जैसी हर चीज़ के बुनते बुनते स्त्रियाँ और पुरुष आज भी यह गीत गाते हैं।

सामूहिक प्रकृति का हर काम करते समय उस समय की प्रेरणा से प्रतिभावान गीत रचते हैं । दूसरों की सहायता से वह गीत गाते गाते उसमें कड़ी जुड़ा जुड़ाकर लंबी बनाते हैं ।

वण्डिप्पाट्टु

माल्गाड़ी ठेले, आदि खींचने वाले मज़दूर बैल गाड़ी, तांगेआदि चलानेवाले, ऐसे प्रसंगों पर कुछ गीत गाते हैं । ऐसे गीत भी, स्वयं बने बनाये होते हैं ।

> वण्टि मल्ल वण्टी
> पो, पो, पो, वण्टी
> काल रण्टुं ओण्टी
> वण्टि कारन चट्टीक्कु.. ।
> मूलुम्न वण्टे, मुरलुन्न वण्टे
> तामर चोलयिल तेमुण्टो वण्टे । आदि [2]

---

1. टोकरी के सात, सात, धागे आमने सामने बांधने से वह नक्षत्र पादों से रहेगा, आकार में । बांस सफेद और तेजी भी है, इसलिए यह उपमा अति सुन्दर है स्वाभाविक है ।
2. ओरु मुकनाटन पाट्टुकल - किलिमानूर विश्वम्भरम - पृ.20

भाव : यह गाडी बहुत अच्छी है । यह पो, पो, पो, [मोटोर] गाडी के समान है । लेकिन इसके बैल मोटे हैं और गाडीदार बदमाश तो भी यह गाडी अच्छी है । यह भ्रमर की तेज़ी से चलती है । अरे भ्रमर उठो, उठो, वहाँ जहाँ कमल फूल के लाल तलैय्या मेलें उसकी ओर जा । वहाँ जाकर हम उनका मधु पीकर स्वस्थ हो जाएं ।

इडयप्पाट्टु

ये अहीरों के गीत हैं । गाय, बकरे, भैंस, आदि को चरानेवाले अहीर विभाग में आते हैं । इन चौपायों के पीछे, प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण में स्वच्छ विहार करने वाले ये लोग उस प्रकृति की प्रेरणा से अपने को भूल कर स्वयं गाते हैं । इतना निसर्ग सुन्दर गीत अन्य पेशेवरों से नहीं मिलता । ये लोग स्वयं आत्म विभोर होकर ही गाते हैं । ऐसे अवसरों पर वे बाँसुरी भी बजाते हैं ।

एक इडयप्पाट्टु

हे ! वा हे, कुछोटियाडे,
मेय, मेय, हे, कुछोट्टि याडे
ओम्माम मल केरि ममम्मडे
आडेल्लाँ पोयल्लो
ओम्माम मलयिले त्तिमिबु परिच्चे
ओम्मल्लो पोय केले वेल्लों कुठिच्चे
आट्टुकारे कुट्टुकारे
नम्मडे ओडेल्लाँ पोयल्लो । हे....
निम्मुडे आडिनु मेल्लेल्ला मडयाले

नैरिरयकु पूट्टुन्टे,
वाले पुवानुन्टे
कण्टिल्ले - कण्टिल्ले, पन्टे कूट्टत्तिमुट्टने
ओरिर मारने कण्टिल्ले ? हे.....।

भाव :- हे बकरे । इधर आ । उधर जा, मेय, मेय क्यों करता है ?
अरे प्यारे अहीर भाइयो । हमारा एक बकरा छूट गया है । वह कहीं
दीखता नहीं । अरे तुमने किसी ने देखा है क्या ?

अब तुम्हारे बकरे का क्या निशान है ? उसकी माथे पर एक धब्बा
है । पूंछ में भी फूल सा रंग है । वह उस चोटी से चला, दूसरे तालाब का
पानी भी पीता था । वह मेरे बकरों का राजा है । उसे मैं कहां देखूं अरे
भाई तुम जरा देखो.....।

वेट्टप्पाट्टु

ये गीत निषादों के है । कभी कभी जंगल में आखेट पर जानेवाले
साधारण लोग भी रात की एकांतता में समय बिताने और मन की कुंठाओं को
दूर करने केलिए कुछ गीत गाते है । निषादों के गीतों की समानता तो वे
नहीं कर पायेंगे तो भी उनके उस काम की कुछ शिल्पविधि और पता उन गीतों
में मिलता है ।

शिकार की खोज में निषादों का एक गीत -

मान [हिरन]

एतेतु वेलि पुरत्तो मान कूट्टं कूटिण्यो.....
एतेतु वेलिपुरत्तु मानकूट्टं कूटिण्यो....
कारा वेरि मण्पुरत्तु मान्कूट्टं कूटिण्ये...
कारा वेलि मणप्पुरत्तु मान कूट्टं कूटिण्ये

---

1. ओरु मूरु माडम पाट्टुकल - किलिमानूर विश्वंभरन - पृ.77

पिच्चा चविक्कली
पोयवायु वीशिक्काे....
अम्माम कुमिपिता ताम चविट्टि
ताम तिरिंचु
ताम चविट्टि ताम तिरित्तु तामविडे मिक्कणयो...
ऐलेतु वेलिपुरत्तु.....

भाव :- अरे, अरे, यार ! ये हिरण कहाँ पाये जाते हैं ? वे किस हो मैदान में इकट्ठे होते हैं ज़रा देखें ! कारा वेलिए में दाम में ये हिरण झुंड के झुंड पाये जाते हैं । हम उन्हें वहाँ जाकर देखें। वे अपने नन्हें मुंह में घास चबाते चबाते निरर्थक कुछ हिलाते हिलाते नृत्य करते हैं । हम वहाँ जा मिले ।

यह निषादों का एक समूह गीत है । ऐसे कई-कई पुसी भिन्न गीतों में प्राप्त हैं । हाथी पकड़ने वालों और शहद संभालनेवालों का भी अपना अपना गीत है । कामन नृत्यों के गीत भी पाये जाते हैं :- पणिप्पाट्टु की श्रेणी में, कृषक, मछुआरे, अहीर, निषाद, मल्लाह, लकड़हारे, गाड़ीवाले, तांगावाले, ठेले, कुम्हार, आदि के गीत आते हैं । कहीं कहीं धोबी, नाई आदियों के भी गीत होते हैं ।

एक ज़माने में हमारे देश में काम का आधार जाति का रिवाज होता था । उस काम काज के आधार पर गीत का विभाजन आज भी जाति गीतों में करते हैं । यह ठीक नहीं ।

आज वर्ग-गत विभाजन ही चाहिए । जो श्रमिकों का एक वर्ग है । और उच्च वर्ग की दूसरी जाति है । कला और साहित्य सब उस विभाग में आते हैं ।

कहीं भी, श्रमिकों का गीत हर जमाने में जीवित रहता है । उसमें औजारों की ध्वनि और मिट्टी की सुगन्ध एवं पसीने की गन्ध रहेगी ही ।

§5§ खेल और मनोरंजन के गीत §कलि-तमाशाप्पाट्टु§

केरल के भिन्न भिन्न गाँवों में खेल और विनोद के कई गीत प्राप्त हैं । प्रत्येक जाति और विभाग का अपना अपना विनोद है । इन विनोद प्रधान गीतों को अनुष्ठान कलाओं से संबद्ध भी समझा जा सकता है । नृत्य और खेलों से मिलकर भी कुछ गीत प्राप्त हैं ।

संघकलिप्पाट्टु

केरलीय नंपूतिरियों का एक सामाजिक विनोद है संघकलि । इसका दूसरा नाम याञकलि भी है । कहीं कहीं इसे "शास्त्रकलि" भी कहते हैं । अन्नप्राशन, उपनयन, समावर्तन, ब्याह, जैसे संस्कारों के सन्दर्भों में विनोद विधा के रूप में यह खेला खेला जाता है । इस अवसर पर गाये जानेवाले गीत भिन्न प्रकार के हैं ।

पूवगिम, नालुपाद, पाना, कूट्टम, शस्त्र - इसी प्रकार पाँच प्रसंगों पर गीत गाया जाता है ।

नाम्बूतिरिमाला का एक गीत नीचे दिया है ।

कन्टमिरुन्नु नटियिन्नु निन्न चेवडिये
एन्नुमरिक्कननिन्नप्पुक किण्णोर मायकने
चंकन चेयलेम दूतिकक वन्नेमियुं मालोपिक्यान
केणिक्कुम पुण तिरिक्कारियूर मुक्कणरे मुक्कणरे[1] ।

भाव :- यह तिरुकारियूर के शिव की स्तुति है । हे तृक्कारियूरप्पा त्रिलोचन ! आप नटराज हैं । त्रिलोकों का प्रकंपन करते हुए आप जो आनंद नृत्य करता है उस रूप का हम स्मरण करते हैं । हे भगवान ! हमारे इस रोग-बीज पर आप का सामीप्य हो जाय । जब यमदूत हमें भयभीत करके ले जाने को आयेंगे तब हे भगवान "तृक्कारियूर मंदिर में वास करनेवाले भगवान आप हमारी रक्षा केलिए आजाइए । उन यमधर्मियों को छुडा कर हमें आश्रय दीजिए ।

कंडप्पन पाट्टु[2] [केमन के आगमन] का गीत] हास्यपूर्ण है । सामाजिक आलोचना एवं घोर परिहास ऐसे गीतों में प्राप्त है । इस गीत को मञ्ञप्पाट्टु कहा जाता है । केरल के सबसे अधिक प्रचलित गीतों में एक है यह मञ्ञप्पाट्टु" ।

मञ्ञा कण्टिट्टल पोयालो चिन्ने
मञ्ञा चिकलिये पिडिक्ककाल्लो
मञ्ञा चिकलिये पिडिक्कालो चिन्ने
चप्पुं मरम चवर्ड [चप्पुं-चूडें] परिकाल्लो ।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - भाग - 1, पृ.199
2. कंटप्पन - केमन को हास्यात्मक रूप में कहा गया है । केमन-केरल के नायर जातियों का एक उपविभाग है ।

मप्पुं कवडं परिक्कानो पिन्ने
कप्पुं मुक्कुतिरुक्काल्लो,
उप्पुं मुळकुं तिरुक्कियानो पिन्ने
चट्टीमिट्टु पोरिक्काल्लो
चट्टीमिट्टु पोरिक्कानोपिन्ने
पक्किल वाट्टिट केट्टाल्लो ।
पक्किल वाट्टिट कैट्टियानो पिन्ने
तन्टाम माट्टुम्मे वेल्लाल्लो
तन्टाम माट्टुम्मे वेल्लाल्लो पिन्ने
कक्कालिलित्तिरि मोन्ताल्लो
कक्कालिलित्तिरि मोन्त्यानो पिन्ने
अम्मे पेङळों तल्लाल्लो
अम्मे पेङळों तल्यानो पिन्ने
कोलोत्तुं वातुक्क वेल्लाल्लो
कोलोत्तुं वातुक्क वेल्लानो पिन्ने
कार्यं कोण्टिट्तिरि पेशाल्लो
कार्यं कोण्टित्तिरि पेशियानो पिन्ने
कवुम्मे केरि केडम्माडाल्लो ।

भाव :- मञ्जक्काडु में जाने से वहाँ क्या करना है ? वहाँ से मञ्जक्किळियों को [एक प्रकार की चिड़िया, जिसका रंग पीला है] पकड़कर स्वादिष्ट भोजन बना सकते हैं । फिर उससे क्या कर सकते हैं? उससे ताडी की दुकान में चल कर उसके साथ ताडी पी सकते हैं । बाद में घर आकर माँ बहिनों को मार सकते हैं । उससे क्या माने ? वहाँ से सीधे कोलोत्तुं वातुक्कल [देशराजा के फाटक पर] चलेंगे । वहाँ जाने पर अत्याचारों पर टीका-टिप्पणी करके कुछ नाच करेंगे । तो ? तो फिर क्या कहना, फाँसी पर चढाया जाएगा, बस, उसी हिंडोले में झूलेंगे ।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - भाग - 1, पृ.211

यह गीत कुत्तुमोषि के समान दो दलों में बाँध कर पूछताछ के रूप में गाया जाता है। संवाद रूप में एक पूछता है और दूसरा जवाब देता उस रीति में भी गाया जाता है।

तत्कालीन सामाजिक स्थिति को वैसा ही स्पष्ट करने वाला है यह गीत।

संकलिप्पाट्टु सामाजिक सत्य प्रकाश के प्रमाण है।

एकामत्तुकलिप्पाट्टु

यह भी सवर्ण जातियों में खास कर नंपूतिरि समाज में प्रचलित एक मनोरंजक खेल है। संघ कलि से उसका थोड़ा साम्य है। [illegible] सात सात लोग दो दलों में बाँटकर संवाद के रूप में यह गीत गाकर खेलते हैं। जिस दल के लोग हार जाते हैं उन्हें स्वयं बुद्ध का पद स्वीकार करके उसका अभिनय करना पड़ता है। इसे विड्डि बोलते हैं। तब उसको पियक्कड़ काकालन, परदेसी आदि का वेश लेना पड़ता है और उसका अभिनय करना भी पड़ता है। उस समय का गीत और भी हास्यास्पद एवं मनोरंजक होता है।

एक विड्डिगीत

कम्टवर्कु पिरन्नोने
कादटु माक्कान कटिच्चोने
कटक्किल कय्याणि निम्टे
अच्चियन्नोडा,
अच्चियनोडा।

भाव :- अरे बुद्ध! कौन जाने तुम्हारा पिता कौन है और तुम किसकी संतान हो। तुम किसी की अवध संतति हो। तुम्हें देखने से ऐसा लगता है

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - भाग 1 - पृ॰129

किसी यम बिल्लाल ने तुम्हें काटा भी है । और तुम्हारी पत्नी कटकिल कल्याणी नामक वेश्या स्त्री है । तुम उसके साथ रात बितानेवाले बदमाश हो ।

हास्य और व्यंग्य की धुम में संस्कार की सीमा को ऐसे गीतों में बाँधा जाता है ।

ऐवरनाटकप्पाट्टु : ऐवरकलि गाँव में विनोद विधि के अनुसार होती है । दो दलों में पाँच पाँच आदमी अन्दरों के रूप में यह खेल खेलते हैं । संवादों के रूप में गीत गायाजाता है । एक दल का नायक दूसरे दल से गीत में प्रश्न पूछता है और दूसरे दल का नायक जल्द से जल्द प्रतिवाद के रूप में जवाब देता है । गाने वालों के हाथ में छोटे डोंगी भी होते हैं । डोंगी से ताल बजा बजा कर खेलते हैं । एक दूसरे से टकराकर चक्कर लगाकर थिरकन के साथ खेलते हैं । और गाते हैं । ऊँ खेल के गीत का स्वरूप भी ऐवर नाटक में प्राप्त है ।

शिवस्तुति का एक गीत ऐवर नाटक में ऐसा है :-

वेणमति कमयणि ञ्जोन....
वेदङ्ङल वेरतिरिच्चोन....
श्रीविकयक छनायोन.......
अरनेन्नु नामं पून्टोन ....[2]

भाव :- जिसने माहेश्वर चन्द्र कला का धारण किया है और वेदों को बाँट दिया है, और जिसने लक्ष्मी देवी का सिर्त्व अपने सिर पर ले लिया है, जिसका नाम "हर" ही स्वयं है, उस देव देवेशजी परमेश्वर को हम स्तुति करते हैं ।

1• ऐवर नाटक-पाँचवाँ जाति - माने कम्मालर का जातिगत कलाप्रदर्शन भी माना जाता है । इस पर - डॉ•चुम्मार चुन्टल का मत स्वीकार नहीं है ।
ऐवर नाटक - भूमिका - पृ•12-19 तक
वट्टकलि परिचकलि एरक्कलि - एकुमीलम कण्णाकरन-मातृभूमि -पृ•44 [1977]
2• केरल साहित्य चरित्रम - भाग-1, पृ•279

इस स्तुति के बाद विविध विषयों का गीत गाते खेलते है । उन में सामाजिक और धार्मिक कार्यों की चर्चा भी आती है ।

वट्टक्कलिप्पाट्टु[1]

वट्टक्कलि - मिकप्पुकलि - पूत्तकलि आदि नाम एक ही विनोद को दिये गये हैं । मध्य केरल और उत्तरी केरल के दक्षिणी गांवों में यह खेल आज भी होता है । कुछ विद्वान इसे ऐवरनाटक का एक अंग मानते हैं । यह ठीक नहीं । आज यह एक स्वतंत्र विनोद कला है । इसके कई गीत प्रचलित है । सामूहिक गार्हिक धार्मिक आदि विषयों का उल्लेख इन गीतों में प्राप्त है । लेकिन वट्टक्कलि दीपदान के चारों ओर चक्कर लगाते कर खेलता है । मुख्य संचालक गीत गाता है और ताल देता है, तब अन्य सदस्य गीत दुहराकर खेलता है । स्तुति गीतों के बाद विनोद प्रधान सामूहिक गीत गाते हैं ।

कोक्केल्लाम परम्पुमेय
पुषक्कम्टं तन्निलये वीणु
कोत्तीट्टु पेक्कीट्टु
तिन्नुन्नु कोक्क
वेल्ल कोक्कु परयुन्नु
तविट्टु कोक्कलतिनोठ
ममान, कूयिल माट्टिन्नु
वरक्कुन्टोयिन्तमिह ते[2] ।

---

1. ऐवरनाटक - डॉ॰ कुम्मार - भूमिका
नाटन कलिकल - कलकल - पिषारोडी
नाटन कला - सी॰एम॰एस॰ चन्तेरा ।

2. नाडन्पाट्टुकल - कल्लाणिकल कृष्णनायान - पृ॰202

भाव :- पानीभरे खेत में कई बगुले उड उडकर जा गिरे । वे, चुगते चुगते खाने लगे । उस समय एक सफेद बगुला दूसरे ताम्रवर्ण के बगुले से कहता है ऐसा कि आज कल, हिरण, कोयल आदि भी गांव भर में दीखने लगे हो - लगता है वसंत, ऋतु का आगमन है । ग्रामीण कवि ने वसन्तागमन का कार्य गीत के संकेतों के द्वारा सरल रीति में प्रस्तुत किया है ।

कोलकळिप्पाट्टु

डंडों के द्वारा ताल बजाकर विविध लय विन्यास और गति विधि से जो गीत गाकर सामूहिक रूप में खेलते हैं उसे कोलकळिप्पाट्टु कहा जाता है । द्रुत छन्द का हर गीत - हर विषय में - कोलकळि को उपयुक्त है । हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सबका अपना अपना कोलकळिप्पाट्टु प्रस्तुत है । मज़दूरों के बीच प्रचलित एक कोलकळिप्पाट्टु ऐसा है :-

चर्म्म, चिर्म्म, मऴ पेय्तोऴ
पोन्नकंकिय पुंचिरयिल
मलतोर्म्म वन्निरङ्ङी
कुचियुमुङ्ङी.....[1]

भाव :- चम, चम, चम, पानी बरस गया, सारा खेत और खलिहान पानी से तरोबोर हो गया । झील का पानी नदियों में भर आया । सारा, ताल तलैय्या भर गया ....

बरसात की सहजता पर विचार करनेवाला यह गीत, जीवन से संबद्ध है ।

---

1. माठन पाट्टुकल - कल्लाणिक्कल कृष्णमाराम - पृ.207

<u>ललयाट्टकैळिप्पाट्टु</u>

यह स्त्रियों का खेल और उसका गीत है । बाल-बिखरे बिखरकर कंटों तक सिर घुमा घुमाकर यह गीत गाती हैं ।

ललयाट्टं कळिच्चेन्टे
        ललयेन्मा चुळ्ळुन्नु
वन्टार कुळली
        मोट्टेण्ण तायो ।
एन्नुक्किळिच्चट्टे,
        ओरेळ वन्निट्टे
इन्नु पोय नाळेवा
        तोळिमारे[1] ।।

भाव :- री, प्यारी बहिनो, मैं सिर घुमा घुमा कर थक गयी हूँ । प्यारी सहेलियो । तुम मेरे सिर पर लगाने केलिए थोडा तेल दे दो । उसके जवाब में अन्य लडकियाँ हँसी उडाती हुई एक साथ गाती हैं, कि तेल अभी नहीं दे सकती कि तेल केलिए तिलका बीज बोया ही है । उसके दो ही अंकुर निकले हैं । अब तेल कहाँ से मिलेगा ? इसलिए प्यारी तुम आज जाओर कल आजाओ । इस प्रकार दस बार ये पद दुहराती है । इस सारे समय ललयाट्टं करनेवाली करती ही रही है । यह अच्छी भी है कसरत भी है ।

<u>पेण्णुकेट्टिप्पाट्टु</u>

यह भी स्त्रियों और लडकियों का खेल है । लडकियाँ दो दलों में बाँटकर एक लडकी को वधु और दूसरी को वर चुन लेती है । फिर बरात

---

1. कोर नूर नाडन पाट्टुकळ - पृ.97

निकलती है । बरात के नायक लड़की मांगते हैं । प्रस्ताव तिरस्कृत हो जाता है तो आपस में झगड़ा होती है । पुरुष विभाग जबरदस्त लड़की को ले जाते हैं । लड़की मांगने की रीति में गीत संवाद शैली में प्राप्त है । जैसे:=

ओक कुटुक्क पोम्नुतरां पेण्णिने तरुमो मामोरे,
ओक कुटुक्क पोम्नु वेन्टा पेण्णिने तरिल्ला मामोरे,
रण्टु कुटुक्क पोम्नु तरां, पेण्णिने तरुमो मामोरे
रण्टु कुटुक्क पोम्नु वेन्टा, पोन्निन्टट पेट्टर्क
पुट्टी वेन्टा, पेण्णिने तरिल्ला......... ।

भाव :- हम एक घड़ा भर, सोना देंगे, क्या तुम अपनी लड़की हम दे दोगे ? तब दूसरा दल प्रस्ताव {मांग} नामंजूर करके ऐसा जवाब देता है - हम को तुम्हारा स्वर्ण नहीं चाहिए, हमारी लड़की हम नहीं देंगे । .... गीत इसी प्रकार दुहराते दुहराते, बाजी लगाकर सीमा समाप्ति में खेल समाप्त होता है ।

लड़के भी कभी कभी इस तरह के गीत गाते खेलते हैं । पेण्णुकलि की और भी रीतियां होती हैं । गीत भी भिन्न हैं । कहीं लड़की की मूर्ति बनाकर बीच में रख कर उसे छीन लेने की प्रथा है ।

<u>मार्ग कलिप्पाट्टु</u>

यह भी कल्याणकलि का एक विभाग है । ख्रिस्तीय गीतों में आता है । विवाह केलिए जो बरात निकलती है उस समय जुलूस के आगे

---

1. पेण्णु कलि - पेण्णुकेट्टुकल्याणोत्सव के गीत अधिक है ।

आगे यह वर्ण्याणकनि (मार्ग कलि) होती है । कभी का गीत क्रिस्तीय कथाओं का होता है । ये गीत द्रुत छन्दों का होता - जैसे :-

पालक्कं कुतिर मेलेरी
सवारी चेय्युम्पोल
तामरियातुज्जोरुम्
कुतिरयुडे कालिलपुरी
शूल मेडुत्तु कुत्ती,
नागत्तिन वायिलिट्टु!

भाव :- जब दूध के समान सफेद सफेद घोड़े पर सवारी कर रहा था तब एक घोर सर्प अचानक ही घोड़े के पैर पर लिपट गया । धीर योद्धा ने जल्द शूल निकाल कर उसके मुंह में डाला और उस नागिन को मार डाला ।

इसी प्रकार खेल और विनोद के कई गीत मलयालम में हैं । इन गीतों का भी संकलन संतोषजनक रूप में नहीं हुआ है ।

आगे हम विविध गीतों की ओर मुड़ें । हमारे विभाजन के अन्दर न आनेवाले भिन्न प्रकार के कुछ गीत हैं, जिनमें प्रेम-गीत, एवं विनोद गीत ध्यान देने योग्य हैं ।

प्रेम गीत

स्नेह माने प्रेम जीवन की शक्ति है । उसके बिना सारा संसार अंधकारमय एवं सूना मालूम पड़ेगा । आदि मानव के मन में भी प्रेम भावना पैदा हुई थी । उन की मधुरानु भूतियाँ प्रबल प्रेम सत्ता से अंकित थीं ।

ललित भावना में इस प्रेम साधना को एक स्त्री के हृदय के साथ इस प्रकार प्रकट कीहैं :- अपने प्रेमी की प्रतीक्षा में एक स्त्री अपने हाथों लगायी कुन्दलता को सींचती और कहती है "इस लता पर फूल खिलने पर मेरे मन की साध भी पूरी हो जाएगी । मेरा प्रियतम आजाएगा । कुन्दलता के फूलते फूलते उसके मनकी प्रेमवल्लरी भी फूलने लगी । अब अपने प्रेमी से मिलने की उस में उमंग है ।

दूसरे गीत में प्रेमी अपनी प्रेमिका से यह निवेदन करता है - हे मेरी प्यारी ! तुम्हारी अनुपस्थिति में मैं बहुत व्याकुल हो उठा । कितना ही मैं संयम कर रहा तो भी मुझसे रहा न गया । तब मैं स्वयं एक भ्रमर बन गया और तुम्हारी खोज में आसमान में उठा, इधर इधर घूम कर ढूंढने लगा । री काली काली, सुन्दरी (कहत्तपेण्णे) ऐसा संबोधना भी करता है । केरल के लोक कवियों ने श्याम रंगों को सतरंगी माना है । इसका मतलब है सुन्दरी तुम इन्द्रधनुष सी सुन्दरी हो ।

कहत्तपेण्णे निन्ने काण तोन्नाकुन्ने[1]
वहत्तप्पेट्टु तानोरु वण्टायि वमन्नल्लो ।
वण्टायि वम तु तानोरु तुंपियायि परन्नल्लोडी
तुंपियाय परन्नु तानोरु पच्चिवालुवकल वेन्नप्पोल
पूमाल चोलनेन्ने योरु पू कोण्टोरि तन्नो.....
.... आदि[2]

वेदान्तप्पाट्टु

अद्वैत वाद निर्गुण - भक्ति आदि विषयों के कुछ गीत भी मलयालम मुक्तक गीतों में प्राप्त हैं । कबीर कवि, श्री नारायण गुरु आदि आध्यात्मिक

1. यह प्रेम गीत मछुओं के बीच प्रचलित है ।
2. साहित्य चरित्रम प्रस्थानमडलिलूटे - जी.शंकरपिल्ले - पृ.92

गुरुओं के गीत इस श्रेणी में आते हैं । जन-प्रीति एवं प्रचार के कारण इन गीतों को लोक गीतों में स्थान मिला है । जैसे :-

मूल विळक्कु मून्नाणो तक्की
मूलत्तिल माडे पडर्नुल्ल तक्की
ज्ञान विळक्कु नालाणो तक्की
ज्ञानत्तिल मोक्के पडर्नुल्ल तक्की ।[1]

लोकगीतों की सबसे बड़ी विशेषता उसके कवि का अज्ञातनामा होना है । लेकिन यह गीत तक्कूवर का कहा जाता है ।

भाव :- मूल विळक्कु (आदि ब्रह्म) तीन कलाएं है । मतलब त्रिमूर्तियों से है । ज्ञान विळक्कु का मतलब चारों वेदों से है । उसकी भी चार कलाएं हैं । वह समस्त ज्ञान मण्डल में फैल कर चमक रहा है । इस प्रकार थोड़े पदों के प्रयोग से संक्षिप्त रूप में समाज को समझाने की शक्ति लोक कविता में ही है ।

श्री नारायण गुरु का गाया गया कुण्डलिनीपाट्टु इस विभाग में आता है -

आडु पाम्पे, पुनं तेडु पाम्पे
आनंद कण्डु कण्डाडु पाम्पे.... ।
x x x
आनंद महिमा वेर्वाडु पाम्पे ।[2]

---

1. नाडन पाट्टुकळ - कल्लाणिक्कल कृष्णनाशान - पृ.197
2. वही पृ.215

भाव :- यहाँ नाभिस्थान में सोनेवाली ज्ञान शक्ति को योग मार्ग से जगाकर सुषुम्ना पथ से बोध मार्ग तक पहुँचाकर ब्रह्मानंद का अनुभव करने की विधि को - साँप नृत्य का रूप देकर - गाया है ।

इसी प्रकार कितने ही गीत इस छोटे केरल में प्रचलित हैं । इन सब के आकलन का प्रयत्न अभी बाकी है ।

मलयालम लोक गीतों में से इस अध्याय में सिर्फ मुक्तक गीतों का परिचय हम पा सके हैं । इस विभाग में हम जन जीवन की आधार शिला तक पहुँचनेवाले कई तथ्य पा चुके हैं ।

पाँचवाँ अध्याय

हिन्दी की विविध बोलियों की लोक गाथाओं का संक्षिप्त और प्रमुख लोक गाथाओं का विस्तृत अध्ययन

इस अध्याय में, लोक गाथाओं पर सामान्य रूप से और हिन्दी के प्रमुख लोक काव्यों पर विशद, अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा ।

मैथिली लोक-गाथाएं

श्रीराम इकबाल सिंह 'राकेश' ने मैथिली लोक गीतों का अध्ययन करके कुंवर विजयी, नैका बंजारवा, लोरिकायन, राजा ढोलन, बिहुला, एवं आल्हा को इस क्षेत्र के प्रचलित लोक-गाथाओं में स्थान दिया है।[1]

---

1. हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - षोडश भाग -[मैथिली लोक साहित्य]

ये लोक गाथाएं, समस्त हिन्दी भाषी लोगों के बीच उस प्रकार प्रचलित हैं, जैसे रामायण भारत आदि की कथाएं। तो भी प्रत्येक बोली में प्रत्येक लोक-गाथा का, भाषा और शैली में प्रभाव अलग अलग पड़ता है। संस्कार संबन्धी खासियत भी अलग रहेगी। प्रत्येक बोली की निजी लोक गाथाओं पर उस बोली गत शैली में रख कर विचार किया जाता है जबकि समस्त हिन्दी के प्रमुख लोक-काव्यों पर अलग विस्तार से भी विचार किया जाना इस प्रबन्ध केलिए परम आवश्यक लगता है। इस दृष्टि से, मुलहर, सलहेस, लोरिक, गढ़ बाबा, बांजरा, दयाल सिंह, रैया रणपाल, गोपी ठाकुर आदि मिथिला में अधिक विशिष्ट मानी जाने वाली लोक-गाथाएं निर्धारित की गयी है। इनमें लोरिक-लोरिकाइन - नाम से भी अन्य बोलियों में प्रचलित हैं। इसलिए अन्य प्रसिद्ध लोक-गाथाओं के साथ उसका भी नाम लगा दिया है। विस्तृत व्याख्या के साथ उस पर फिर विचार किया जाएगा।

"मैथिली लोक गीतों का अध्ययन" नामक अपने शोध प्रबन्ध [जो प्रकाशित है] में डा॰तेज नारायण लाल जी ने मिथिला के कथागीतों की जो सूची दी है उस में रुक्माल सिंह की दी हुई सूची से थोड़ी भिन्नता प्राप्त है।

मिथिला में शिष्ट प्रबन्ध काव्यों का आरंभ विद्यापति के काल से माना जा सकता है[1]। लेकिन मैथिली काव्य परंपरा का आविर्भाव उससे बहुत पहले भी बताया गया है। ज्योतिरेश्वर ठाकुर का "वर्णरत्नाकर" उस की साक्षी है। सिद्ध कवियों की रचनाएं इस ओर प्रथम क्रम माना जा सकता है। "गान ओ दोहा" के चर्या पद के बाद से जो साहित्य मिलता है वह मौखिक है। मिथिला की जनता आज तक उसे अपने कंठ में

---

1. ज्योतिरेश्वर ठाकुर का वर्णरत्नाकर ।5वीं शती का मालूम पड़ता है।

सुरक्षित कर चली आ रही है । इस का उल्लेख सर्व प्रथम ज्योतिरीश्वर ठाकुर के वर्ण रत्नाकर में "लोरिक नाचो" नाम से सर्व प्रथम हुआ । इस से विदित होता है कि "लोरिक" की कथा "तेरहवीं" शति में प्रचलित थी ।

लोरिका

लोरिका हिन्दी के मुख्य लोक-काव्यों में आता है । इसका भोजपुरी नाम "लोरिकायन" है ।

कथावस्तु मिथिला में इस प्रकार है । लोरिक एक पराक्रमी वीर था । "सुन्दरी चनैन" नामक राजकुमारी ने उसका प्रेम किया । लोरिक की पत्नी का नाम "मंजारिन" था । लेकिन राजकुमारी के प्रेम में पड़कर लोरिक मंजारिन को छोड़ कर राजकुमारी के साथ लोरिक भाग गया । वे एक सुदूर नगर में जा पहुँचे । वहाँ के राजा ने लोरिक की प्रेमिका राजकुमारी को पाने का षड्यंत्र किया । उस राजा से लोरिक ने द्वन्द्व किया और हरा दिया । आखिर राजकुमारी को लेकर अपने राज्य में गया । दोनों पत्नियों के साथ सुख मय जीवन बिताने लगा ।

मिथिला में प्राप्त लोरिका - गाथा वर्ण रत्नाकर से पूर्व का मालूम पड़ता है । भोजपुरी और अन्य बोलियों में इस कथा का प्रचार कुछ भिन्न है ।

रम्भु सरदार

रम्भु सरदार मुसहर जाति का मुखिया और वीर था । रम्भु की वीरता पर मुसहर जाति आज भी गर्व करती है । कोशी नदी को रोकने केलिए रम्भु सरदार का निश्चय उस गाथा का सर्व प्रधान घटना है । कोशी नदी रणचण्डी सी गरजती आयी । उस प्रसंग का वर्णन वीर-गाथा का मार्मिक प्रसंग है ।

सलहेस

मैथिली के प्राचीनतम कथागीतों में "सलहेस" का स्थान है । यह पौराणिक कथा पर आधारित है । सलहेस जाति में दुसाध था । सलहेस की पत्नी का नाम दौना मालिन था । सलहेस और मालिन ने मिलकर चुहोला चोर नामक एक भीकर डाकू का नाश किया । इस घटना ने सलहेस के साहस और बुद्धिमानी का गायन करने योग्य वीरकथा को बना दिया । "मोरंग" में आज भी "सलहेस" के नाम एक उद्यान है । मिथिला के लोग आज भी सलहेस की गाथा अति उत्साह के साथ गाते हैं ।

दीना-भद्री

दीना और भद्री दोनों वीर और साहसी भाई थे । वे मुसहर के "देव" माना जाता है । इन का समय सलहेस का था । इन की गाथा श्रमिकों के जीवन की साहसी घटनाओं से संबन्ध रखती है । कथा वस्तु इस प्रकार है ।

मिथिला में एक ज़माने में कनकसिंह नामक जमीनदार था । वह एक जादूगार और दुरवृत्त था । उसके खेत में मजदूर मुफ्त में काम करते थे । कनक सिंह "धाहम" इतना क्रूर था कि अपने खेत में काम करनेवाले मजदूरों को वह भर पेट भोजन भी नहीं देता था । लेकिन कोई भी उसके विरुद्ध एक शब्द तक कह नहीं सकता था ।

दीना-भद्री दोनों भाई मज़दूरों के बीच में जन्मे थे । जमीन्दार के यहाँ मज़दूरी करने केलिए वे दोनों तैयार नहीं हुए । जीविका कमाने केलिए वे शिकार खेलना मुख्य मानते थे । "धाहम" को यह धृष्टता अच्छी नहीं लगी ।

दीना-भद्री की माता का नाम बुधनी था । वह भी, मज़दूरों के वंशज होते हुए भी धीर वनिता थी । ज़मीन्दार ने एक दिन उस से ऐसा कहा कि अपने बेटों को "धाहम" की ज़मीन पर काम करने भेजना । उसने इनकार किया और कहा, हम किसी का अन्न नहीं खाते हैं । इसलिए दूसरों की ज़मीन पर काम करने भेज नहीं सकते । जंगल के कंद मूल और ~~कंद मूल और~~ शिकार पर हमारा जीवन चलता है । इस मुठ-भेड से लेकर कनक सिंह ने उस के बेटों को मार डालने का निश्चय किया । अपनी बहिन "अनोपी" की सहायता से कनक सिंहने उन दोनों वीरों को मार डाला । उन की लाशों को एक गढे में छिपा दिया । अचरज की बात है, मारने के सातवें दिन दीना-भद्री दोनों जी उठे । उन्होंने कनक सिंह को मार डाला । फिर वे दोनों गायब हो गये । गाँव वालों को बडा आश्चर्य हुआ । आज भी मुसहर लोग-दीना-भद्री को अपने देवता मानते है । उन का विश्वास है, उनके दादा जी एक दिन फिर से लौट आएंगे ।

इस कथा गीत में दीना-भद्री की वीरता का वर्णन बेजोड़ है। उसके गाने से मुसहर के काम गार आज भी उत्साह और आवेश से भर उठेंगे। दीना-भद्री की माता कुअनी के साहस पर भी गाँव वाले आज भी मुग्ध हैं। उस का साहस और धैर्य दोनों गीत में वर्णित है। गीत में कुछ जादू-टोने का वर्णन भी किया गया है[1]।

बिहुला

यह कथा गीत सारे उत्तर भारत में समान रूप से प्राप्त है। इसलिए इस गीत पर आगे विशद विवरण दिया जाएगा। इस गाथा के मैथिली रूप पर यहाँ विचार किया जाएगा[2]।

बिहुला बिसहरी महादेव की बेटी थी। वह बारह साल की अवस्था में वासुकी नाग से ब्याही गयी। एक बार उसने गौरी देवी को काट मारा। फिर उसे जीवित किया। इस कारण भगवान शिव उस पर प्रसन्न हुए और उसे यह वर दान दिया कि चन्दो बनिया के द्वारा वह पूजित किया जाएगी। एक बार वह चन्दो नगर में पहुँच गयी। चन्दो बनिया ने उस की पूजा करने से इनकार किया। बिहुला का मन दुःखी हुआ। जब बिसहरी को उसका पता चला तो वह उसके इस धृष्टता पर चिढ गया। बनिया के सारे पुत्र साँप काट से मर गये। आखिर उसके सब से छोटे पुत्र ने बिहुला के साथ विवाह कर लिया। चार दिन के अंदर बिस हरी के जलन ने उसको भी मारा। बिहुला ने अपने पति को जीवित किया। बिहुला पति परायणा नारी मानी गयी। समाज में उसकी पूजा हुई।

---

1. डा॰ ग्रियेरसन के संग्रह में दीना भद्री का गीत प्राप्त है। सुनीति कुमार चाटर जी के संग्रह में भी यह गीत प्राप्त है।

2. बिहुला की कथा कौशामी इतिवृत्त पर आधारित है।

कीर्तन की मनसा पूजा से इस गीत कथा का संबन्ध रहा है ।

ब्रजभान का कथागीत

पृथ्वी नगर का राजा "रोजन मल" का भतीजा था ब्रज भान । ब्रजभान को "सोरठी" नामक लड़की को अपने साहस से पृथ्वी नगर पहुँचाना पड़ा । उस पर आधारित है गीत । सारे उत्तर भारत में समान रूप से प्रचलित सोरठी नामक प्रबन्ध गाथा पर आगे विस्तृत व्याख्या करना पड़ता है इसलिए यहाँ सूचना मात्र देकर यहाँ समाप्त करना पड़ता है ।

गोपीचन्द

यह भी सारे उत्तर भारत में प्रचलित लोक गाथा है । गोरख नाथ का शिष्य गोपी चन्द पर है यह गाथा ।

अंबुरा का कथा गीत

यह मिथिला में प्रचलित एक लोक गाथा है । "अंबुरा" एक लड़की थी जिस की कथा भाभियों के दुर व्यवहार पर आधारित है ।

अंबुरा के माता पिता बचपन से मर गये । उसके सात भाई थे । वे हर साल विदेश को व्यापार करने केलिए जाते थे । उनके जाने पर उनकी पत्नियाँ, अंबुरा को बहुत सताती थीं । उसे ससुराल में भी चैन नहीं मिला । बारह वर्ष बाद जब उस का एक भाई लौट आया तो उसको सारी बातें मालूम हुई । उसने उन भाभियों को कड़ी सजा दी । उसने अपनी बहिन को आराम से रखा ।

नेवार का कथागीत

शंभु नामक एक बनिया के अभिष्ट दो पुत्रों के जीवन पर आधारित है यह कथा गीत । गीत में समाज की ओर सद् वृत्ती की प्रशंसा है ।

जलेछी

मिथिला में प्रचलित एक व्याकुल कथा गीत है जलेछी की । जलेछी चौदह साल की कुमारी थी । उस के पिता राजा ने पोखर खुदवाया तो उस में पानी न निकल आया । ज्योतिषी ने यह बताया कि अपनी बेटी का बलिदान करेगा तो पोखर में पानी निकल आएगा, और सारा गाँव खुश हो जाएगा । यह सुनकर राजा बहुत दुःखी हुए । आखिर उसने अपनी एक मात्र बेटी की बलि देने को ही तैयार हुआ । जब जलेछी को पता मिला तो वह बहुत प्रसन्न हुई । वह मुस्कुराती हुई पोखर में गयी । जहाँ जलेछी पोखर की ओर निकली तो पानी पोखर के अन्दर से उमड घुमड कर आया । वह पानी में डूबती डूबती निकल गयी । पोखर पानी से भर आया । सारा गाँव आज भी जलेछी का नाम लेकर गीत गाते हैं और उसे देवी समझकर पूजा देते हैं । उस साहसी बाला के जीवन त्याग की गाथा है यह । इस को मलयालम की "कई पाण्टी" की कथा से साम्य है

मगही लोकगाथाएं

मगही में प्रचलित लोक गाथाएं, मैथिली और अन्य बोलियों में प्रचलित लोकगाथाएं हैं। मगही की अपनी कहने योग्य गाथाओं का संकलन नहीं हुआ है । भक्तिपरक, जो रामायण, भारत की कथा पर आधारित कथागीत प्रचलित हैं । शिव पार्वती कथा, ध्रुव-कथा आदि भी प्रबन्ध गीतों ।

रूप में प्रचलित है। एक विशिष्ट विधा के रूप में कहने योग्य गीत विधा "बगुली" नाटक गीत की कथा है। इस में एक कथा नाटक के रूप में पात्र-पात्रियों के आगमन से और संवादों से पूर्ण होता है। यह मगही की अपनी लोक-गाथाओं में आता है। "कैजुला," "जाट-जाटिनी", "सामा चकवा" आदि ग्राम नाटकों के बारे में लोक-गीतों के विवरण के समय बताया है। इसलिए यहाँ उसका विवरण अनावश्यक समझता है। अब हम भोजपुरी की लोक गाथाओं पर विचार कर सकते।

भोजपुरी लोक-गाथाएं

डॉ॰ कृष्ण देव उपाध्याय ने "बृहत् इतिहास" के सोलहवें भाग में भोजपुरी लोक-गाथाओं का जो परिचय दिया है उसके अलावा, डॉ॰ सत्यव्रत सिन्हा ने भोजपुरी लोक-गाथा नामक एक अलग ग्रन्थ - लोक-गाथाओं पर मान-रचा है। इन दोनों के आधार पर हम ने इस प्रबन्ध में भोजपुरी लोक गाथाओं पर विचार करेंगे।

आल्हा

आल्हा मूलतः बुन्देली लोक-गाथा है। तो भी भोजपुरी में इस लोक-काव्य का प्रचार खूब फैलाते है, जैसा, अन्य हिन्दी प्रदेशों में पाया जाता है। सारे विद्वान आल्हा को चारण काला की या चारण गाथा मानते हैं। इस के रचयिता जगनिक माना भी जाता है। परन्तु जगनिक के नाम का उल्लेख कहीं नहीं मिलता है। मूललिपि ही नहीं मिलती। इसलिये आल्हा का रचयिता जगनिक को मानने का कोई प्रमाण नहीं है।

लोगों का विश्वास है कि पहले इस लोक काव्य में केवल अठारह युद्धों का ही वर्णन था, परन्तु कालान्तर में इस की संख्या बावन हो गयी है । आल्हा के नायक आल्हा और ऊदल का संबन्ध महोबा के राजा परमार्दि देव से है । महोबा का पक्ष लेकर इन दोनों वीरों ने अनेक युद्ध किये, तथा उस युग के अन्यतम वीर पृथ्वीराज चौहान को भी परास्त किया । आल्हा के नाम से ही यह लोक गाथा प्रसिद्ध है । जन श्रुति है कि आल्हा गाने से पानी बरसता है । भोजपुरी प्रदेश में, भोजपुरी बोली में यह गाथा बड़े चाव से गायी जाती है । बुन्देली पर भोजपुरी का अत्यन्त प्रभाव है जिसके आधार पर आल्हा खण्ड को भोजपुरी लोक गाथा कहना अनुचित नहीं होगा, ऐसा विद्वानों का मत है । यहाँ आल्हा 'ढोल' और 'नगाड़े' पर गायी जाती है

लोरिक

लोरिक और "लोरिकायन" नाम भोजपुरी में पड़ा है । लोरिक की कथा - लोरिकायन बन गया है - जैसे राम कथा - "रामायण" बन गया है ।

लोरिक की कथा बहुत बृहत है । गायक इसे रामायण से भी अधिक बृहत मानते हैं । वे कहते हैं - बारह खण्ड रामायण तो चौदह खण्ड लोरिकायन यह भोजपुरी में अहीरों की लोक गाथा है । उनका यह जातीय लोक-काव्य है यह वीर काव्य है, जिसका नायक लोरिक है । दुष्टों को मार कर शान्ति की स्थापना करना ही लोरिक का मुख्य उद्देश्य था । उसकी वीरता और उसका प्रेम अहीरों के गर्व का साक्ष्य है ।

विजयमल

मल्ल क्षत्रियों के युद्ध वर्णन से निर्भर यह गाथा लोक गाथाओं में एक मानी जाती है। आल्हा के समान इस लोक काव्य में भी "युद्ध" मुख्य साधन है। आल्हा में प्रत्येक युद्ध का कारण विवाह होता है। कहीं कहीं प्रत्येक विवाह का कारण युद्ध होता भी है। विजयमल में भी वैसी ही स्थिति है। यह गाथा मध्य युगीन प्रतीत होता है। इस गाथा का भी नाम, "नायक" विजयमल से पड़ा है।

बाबू कुँवर सिंह

यह गाथा भोजपुरी की अपनी गाथा है। यह भोजपुरी वीरता का प्रतिनिधि बाबू कुँवर सिंह पर आधारित है। कुँवरसिंह बिहार के शाहाबाद जिले के भोजपुरी गाँव का निवासी था। सन् 1857 के भारतीय विद्रोह में आपने पूर्वी भारत में प्रमुख रूप से भाग लिया। दुनिया यह जानती है कि इस संगठन हीन विद्रोह का परिणाम भयानक था। कुँवर सिंह वीरगति को तो प्राप्त हुए, किन्तु अपना नाम अमर कर गये। भोजपुरी प्रदेश में उनकी गाथा अत्यन्त श्रद्धा से गायी जाती है, और श्रोता आज भी इसके सुनते ही आँसु बहाता है।

शोभानयका बनजारा

यह वणिक-जाति से संबन्ध रखने वाली एक लोक-गाथा है। प्राचीन काल में व्यापारी लोग बैलों तथा नावों पर सामान लादकर व्यापार करने जाते थे

अनेकों वर्षों के बाद वे वापस आते थे। इस प्रकार व्यापार करने जानेवाला शोभा नायक है, इस गाथा का नायक। शोभा व्यापार करने केलिए मोरंग देश गया था। उस की पत्नी "जसुमति" गाथा की नायिका है। इस गाथा में विरह और पति-व्रत धर्म का अति रोचक वर्णन मिलता है। समाज की कुरीतियों, अंधविश्वासों, तथा ननद-भोजाई के कलह संबन्धों का सुन्दर चित्र - इस गाथा में खींचा गया है। सचमुच इस गाथा को प्रेम-काव्यों में स्थान दिया जा सकता है।

सोरठी

भोजपुरी की अत्यन्त रोचक और लोक-प्रिय गाथा है, सोरठी। भोजपरी समाज इस लोक-काव्य को बडी पवित्र दृष्टि से देखता है। इस गाथा के नायक, "वृजभार" और नायिका सोरठी है। यह नायिका - प्रधान गाथा है। प्रेमियों का मिलन कितना कष्ट साध्य होता है उसका मनो मय चित्र इस लोक गाथा में प्राप्त है। तंत्र एवं मूर्ख बातों के अनेक प्रकारों का और अलौकिक तत्वों का भी विशद चित्रण इस काव्य में हुआ है। इस पर नाथ संप्रदाय की स्पष्ट छाप पड़ी है। वृजभार नाथ संप्रदाय का था। सभी मतों का समन्वय प्राप्त है। कोई भी देवी देवता इस में से छूट नहीं पाये हैं। "वृजभान" को सोरठी एक साध्य थी, जिसे प्राप्त करने केलिए, उन्हें अनेक साधनाएं, करनी पडी। "सोरठी" पैदा होते ही, माता-पिता से दुर्भाग्य वश बिछुड जाती है और एक कुम्हार के यहाँ पलती है। देवी की इच्छा से, उसके प्राणों की रक्षा होती है। उस प्रसंग का महत्व गाथा में बेजोड तरीके का है। सोरठी गाने की रीति, अधिक रोचक है। यह "कर्णप्रिया" राग में दो व्यक्ति मिलाकर गाते हैं।

बिहुला

भोजपुरी में बिहुला कुछ परिवर्तन के साथ गाया जाता है । यह गाथा यहाँ की पति व्रता धर्म पर आधारित है । सावित्री सत्यवान से किसी भी प्रकार इसका महत्व कम नहीं है । सर्प दंश से मृत पति को जीवित करने के लिए बिहुला को कितना कष्ट सहना पड़ता है यह कार्य गीत में किस ढंग से बताया है, यह सुनते ही बनता है । बिहुला को आखिर सदेह स्वर्ग जाना पड़ा । इस गाथा का संबन्ध बंगाल के "मनसा" संप्रदाय से है । लोगों का उत्तम विश्वास यह है कि भागलपुर जिला के "चंपानगर" नामक गाँव से इस गाथा का संबन्ध है । यह विषय विवादास्पद है । बिहुला के प्रकरणों से इस का समाधान मिलेगा, जिस पर आगे के अध्याय में चर्चा की जाएगी । पूर्वी बिहार तथा बंगाल में नाग पंचमी के दिन "बिहुला" बिहुला सती की पूजा होती है । बिहुला आज पुराणों की देवी बन चुकी है । गायक इस गाथा को बड़े पूज्य भाव से गाते हैं । प्रचलित विश्वास है कि जब बिहुला की गाथा गाई जाती है, तो समीप सर्प भी आकर सुनते हैं । यदि उस समय साँप दिखाई जाता तो उसे मारा नहीं जाता है । बिहुला को पश्चिमी भोजपुरी प्रान्त में "बालालखन्दर" नाम भी है । पूर्वी भोजपुरी से बंगाल तक यह बिहुला नाम से ही जानी जाती है ।

राजा भरथरी

यह राजा "भरथरी" और रानी "सामदेई" की कथा पर आधारित गाथा है । नाथ पंथी परंपरा में नव नाथों में एक राजा भरथरी को माना जाता है । इस कथा को जोगी लोग ही गाते हैं ।

राजा भरथरी का संबन्ध "उज्जयिन" के राज घरा से है । ये राजा विक्रमादित्य के बड़ा भाई समझे जाते हैं । राजा गोपी चन्द के मामा भी बतलाये जाते हैं । यह राज घरानों के संबन्ध का एक कथा गीत है । राज घरानों में अधिकार का होने वाले षड्यन्त्रों, पक्ष-विपक्षों में होने वाला परिवर्तन दुमोह, आदि का चित्र भी पाया जाता है ।

राजा गोपीचन्द

यह भी राज घराने की कथा है । यहाँ मोह से अधिक त्याग का महत्व गाया है । गोपी चन्द की माता "मैनावती" थी । उन के आदेशानुसार गोपी चन्द ने अपना राज पाट एवं राजकीय सुख सुविधाएं - भोग-विलास सब कुछ छोड़ दिया । वे वन में जाकर तपस्या करने लगे । इस त्याग की कथा का हार्दिक वर्णन इस लोक काव्य में प्राप्त है । राजा गोपीचन्द नाथ पंथी थे । सातों नाथों में "गोपी" का भी नाम आता है । जोगी लोग- गोपी चन्द की गाथा बड़े आदर और विनय के साथ गाते हैं ।

भोजपुरी में प्रचलित लोक-गाथाओं में ऊपर कही गई ये गाथाएं ही मुख्य हैं । उनमें लोरिका, बिहुला, एवं आल्हा, अन्य बोलियों में - सारे हिन्दी क्षेत्र में प्रचलित पाये हैं ।

इन प्रमुख लोक - गाथाओं पर व्यापक विवरण अगले अध्याय में पाया जाएगा ।

अवधी की लोक गाथाएं

अवधी लोक गाथाओं का "पंवाड़ा" नाम प्रचलित है । "पंवाड़ा" से मतलब - यह है कि जिस गीत में किसी घटना का संपूर्ण वर्णन मिलता है । श्रवण-पितृभक्ति, शिव-पार्वती, कथा, भरथरी, चन्द्रावली, कुसुमा, आदि अवधी के मुख्य कथा-गीत है । इन लोक-गाथाओं में लोक-शैली का निर्वाह अत्यन्त विशिष्ट रूप में किया गया है ।

श्रवण-कथा

पुराणों में विस्तृत व्याख्या के साथ पानेवाला श्रवण-कुमार की कथा लोक कवियों ने नितान्त श्रद्धा - संक्षेप के साथ गाया है । इन गीतों में श्रवण - कुमार का त्याग, पितृ-भक्ति और कर्तव्य निभाने की अभिलाषा का वर्णन पाया जाता है । कौटुम्बिक जीवन में मातृ-पितृ भक्ति के भाव को जमा देना लोक-कवि का उद्देश्य माना जाता है । भारतीय सभ्यता के इस अंश को और भी, दृढ करने का प्रयत्न गीत में हुआ है । दशरथ - कथा का संबन्ध एवं राम कथा का वृत्तान्त इन गीतों के द्वारा और भी रोचक ढंग से पा सकता है ।

शिव-पार्वती

इस में भगवान नटराज की कथा मुख्य है । पार्वती परिणय, कुमार संभव - मार-दहन आदि घटनाएं मुख्यहै । गणपति संकल्प कुमार महत्व, पार्वती-परमेश्वर की प्रणय लीला आदि भक्ति निर्भर शैली में लोक-मानस को पुलकित करने के उद्देश्य से गाया गया हैं । सामाजिक-जीवन

और कौटुंबिक, भावना आदि भी इस गीत - कथा में हम पा सकते हैं ।

इन पुराण-प्रधान कथा गीतों से बढ़कर अवधी की अपनी जन शैली का लोक-काव्य कुसुमा और चन्द्रावली, नारी चरित्र के मनुहोदाहरण है ।

कुसुमा

अवधी में प्रचलित सब से महत्व पूर्ण प्रेम कथा है, कुसुमा देवी की कथा । असाधारण परिस्थितियों में उत्पन्न होने वाली प्रेम गाथाओं में इसका स्थान है । कुसुमा एक ग्राम बालिका है ।

एक दिन कुसुमा कंघी और कटोरा लेकर अपने बाबा के तालाब में स्नान करने गयी । वहाँ पर "मिरजा" उसे देख लेती है । कुसुमा का अदेय यौवन देख कर वह उस पर आकृष्ट हुआ । मिरजा ने सीधे कुसुमा के घर की ओर घोड़ा दौड़ायी । वहाँ उसका पिता धान पेरता बैठा था । मिरजा ने उसके सामने जाकर बताया कि कुसुमा को उसके साथ शादी कराये जाय । कुसुमा का पिता "चिखन" को यह प्रस्ताव थोड़ा भी अच्छा नहीं लगा । उसने बताया उसका भाई "भोजमल" से भी बताओ । भोज मल ने बताया कुसुमा की शादी बचपन में ही हो चुकी है । मिरजा शासक है, उसको यह कहना पसन्द नहीं था । उसने उन्द पिता और पुत्र को भी बन्दी बनवाया और महल की राह ली । कुसुमा को जब इसका पता मिला तो उसने मिरजा से प्रार्थना की कि अगर तुम मेरी सुन्दरता से मुग्ध हो गया हो तो, मेरे पिताजी और, भाई को हाथी और घोड़ा दे दो, तब वे मान लेंगी । यह सुनकर मिरजा हँस गया । उसने कुसुमा के पिता

और भाई को मुक्त किया । उन्हें हाथी और घोड़े मँगवाये गये । तब उसने डोली मँगवाया । कुसुमा हँसती हुई डोली पर चढ़ी ।

जब डोली सीधे राज दरबार की ओर बढ़ी तो कुसुमा ने रोका । उसने कहा, मेरे बाबाजी के यहाँ से चलना है । डोली दारों को उस रास्ते से चलने की आज्ञा दी गयी । जब डोरी बाबा के घर के पास के विशाल तालाब के पास पहुँचा तो "कुसुमा" ने कहा डोली जरा रुकने दो, मुझे थोड़ा पानी पीना है । मिरजा ने कहा यह तो गंदा पानी है, महला के तालाब का पानी स्वच्छ है । लेकिन कुसुमा ने न माना । डोली, रूकायी गयी । वह नीचे उतरी और तालाब की ओर बढ़ी । उसने उस तालाब में कूद कर अपनी जान दे दी । "मिरजा" यह देखकर हाय ! हाय कहकर रोने लगा, लेकिन कुसुमा का भाई भोजमल बहुत प्रसन्न हुए । उसकी इज्जत बच गयी । अपनी बहिन का मथ उसके हाथ में था । उसे पुचकारकर उसने कहा, मेरे कुल की प्रतिष्ठा सुरक्षित हो गयी है । कुसुमा को लोग उस दिन से कुसुमा देवी कहने लगे । कुसुमा देवी की पूजा आज भी अवध में चलायी जाती है ।

चन्द्रावली

चन्द्रावली की कथा भी कुसुमा की कथा से मिलती जुलती है । यह कथा कन्नौज में प्रचलित है । लेकिन अवधी में भी वैसी मान्यता पायी जाती है । कथा इस प्रकार है -

चन्द्रावली एक गाँव वधू थी । उसका सौन्दर्य सभी को मुग्ध करने वाला था । उसकी शादी हुई थी । एक दिन जब चन्द्रावली अपनी सहेलियों के साथ मुगलों के डेरे के पास से चली तो मुगलों ने उसे पकड़ लिया ।

मुगल राजा को उसका यौवन पसंद था । चन्द्रावली ने एक तोते के द्वारा अपने बन्दी बनाने की बात कह दी । घर वाले आकर मुगलों को काफी ललचा दिया । लेकिन उन्होंने नहीं माना । माता पिता, भाई, पति, सब के मुंह में चन्द्रावली ने यह प्रतिज्ञा की कि वह अपने कुल का नाम रखेगी । इतना कहकर उसने स्वयं आग जलाकर अपने प्राणों को छोड़ दिया । सब के हा हा कार मचाते वह साध्वी राख हो गयी । चन्द्रावली का नाम आज भी लोग देवियों की गिनती में लेते हैं । बड़ी श्रद्धा के साथ उसकी पूजा करते हैं । गीत में चन्द्रावली के साहस का वर्णन अति प्रभाव शाली ढंग से हुआ है ।

अवध में प्रचलित अन्य कथागीतों में जोगी - गाथाएं भी प्राप्त है । उनका परिचय हम ने पहले ही पा लिया था ।

बघेली की लोक-गाथा

बघेली में लोक-काव्यों का संकलन बहुत कम हुआ है । जो हुआ है - वह लोक गीत मात्र है । लोक-गाथाओं को यहां "पंवाड़ा" कहते हैं । अन्य बोलियों में प्रचलित मुख्य कथाओं का गीत रूप यहां भी प्रचलित है । उन की अपनी कोई लोक-गाथा अभी तक संग्रहीत नहीं हुआ है । रामायण-व भारत की कथा, नल-दमयंती कथा, राजा भरथरी आल्हा, लोक गीत कारों ने अपने अनुकूल रूप में गाना सीखा है । इसलिये उन पर अलग परिचय करने की आवश्यकता नहीं है ।

छत्तीस गढ़ी लोक गाथाएं

यहाँ भी गाथा ओं का "पँवाड़ा" नाम प्रचलित है । देवी देवताओं की कथा पर आधारित कुछ गाथाएं यहाँ मुख्य रूप में प्रचलित है । उसके अलावा "राजा वीर सिंह" जैसे लोक-काव्य भी पाये जाते हैं । अन्य प्रसिद्ध सभी लोक-काव्य यहाँ भी प्रचलित हैं, जैसे आल्हा । सामाजिक और ऐतिहासिक महत्व के गीत भी प्राप्त हैं । इन में छत्तीस गढी की लोक-गाथा कहने योग्य एक विशिष्ट काव्य है - राजा वीर सिंह ।

राजा वीरसिंह

राजा वीरसिंह की कथा छत्तीस गढ के गाँव गाँवों में प्रचलित है । वीर गीतों में यह सर्वश्रेष्ठ माना जाता है । यद्यपि यह वीर गीतों में गिना जाता है तो भी इस में टोना-टोट और अंधविश्वासों की जाल, जटी हुई है ।

वीर सिंह राज गढ का राजा था । उसकी पत्नी थी रमु लिया । रमुलिया का सौन्दर्य अद्वितीय था । एक दिन एक जोगी राज दरबार में आये । वह भिक्षा मांगने आया था । रानी रमुलिया ने उसे भिक्षा देने को बाहर आयी । जब से वह योगी के सामने आया, अचानक वह अदृश्य हो गयी । योगी ने उसे मक्खी बना दिया और उसे कंधे में लेकर जोगीपुर की ओर बढा । राजा वीरसिंह को जब उसका पता लगा तो उसने बडी सेना लेकर जोगी पुर का आक्रमण किया । जोगी पुर का रहस्य खुल गया । जोगीपुर के राजा मदनसिंह को मार डाला । उन के तीन रानियों के साथ वीरसिंह ने शादी की ।

इस वीर गाथा की घटनाओं में अस्वाभाविकता अधिक है । मूढ विश्वासों से भरा पड़ा है । तो भी गीत के रूप में इसका महत्व रहा है । गायक लोग इस को बड़े महत्व के साथ गाते हैं ।

देवी कथा-गाथा

यह गाथा देवी कृपा के महत्व पर आधारित है । स्थानीय देवता देवी की यह कथा इतिहास सम्मत भी है ।

दिल्ली में अकबर पादशाह का शासन था । वे हिन्दू धर्म को भी समान महत्व देकर मानते थे । उन्हें देवी देवताओं पर विश्वास दिलानेवाली एक घटना हुई ।

एक बार गढ दिल्ली में अकबर ने कोई दिव्य ज्योति देखी । उन्होंने मंत्री बीर बल से प्रकाश का पता लगाने को कहा । बीर बल ने सेवी को भेज दिया । सेवी ने वापस आकर कहा वह प्रकाश देवी-स्थान-मन्दिर से निकला है । यह प्रस्ताव अकबर को थोड़े परि हास सा लगा । उसने परिहास में बीर बल से कहा अरे - बीर-बल तुम जाके उस देवी को दरबार में पहुंचा दो । यह सुनकर बीरबल स्वयं देवी स्थान गया । उस ने देवी स्थान में खड़े होकर अकबर का सन्देश सुनाया । उस समय राज महल थर थर कांपने लगा । वहाँ बड़ी आंधी का प्रवाह सा निकला । अकबर को स्वयं प्रत्यक्षीकरण हुआ कि वह उस आंधी के कारण उड़ जाने लगता है ।

आखिर अकबर को बीरबल ने पता लगाया कि देवी के कोप से वह भी अंधा में डूब गया था । तब अकबर को मालूम हुआ, देवी का महत्व कम नहीं है । उसने परिहास का प्रायश्चित किया । वह स्वयं देवी की कृपा का पात्र बन गया । नास्तिक को भी आस्तिक बनाने में योग्य है लोक कवि का समीपन । गीत सुनते सब का हाथ मुकुलित हो जाएगा ।

बुंदेल खण्ड की लोक-गाथाएं

बुंदेल खण्ड में लोक गाथा को "पंवाड़ा" कहा जाता है । वहाँ प्रचलित मुख्य पंवाड़े है - जगद्देव, कारसदेव, अमान सिंह आदि । "आल्हा" बुंदेल खण्ड की अपनी गाथा है ।

जगद्देव - पंवारा

जगद्देव मालवा के राजा उदयादित्य का पुत्र था । "रास माला" में उसका उल्लेख प्राप्त है । अपने भाई भोज की मृत्यु के बाद उदयादित्य मालवे का राजा बन गया था । किसी घरेलु षड्यन्त्र के कारण जगद्देव को मालवा छोड़ना पड़ा और गुजरात के सोलंकी राजा सिद्ध राज जयसिंह के यहाँ जाकर नौकरी करनी पड़ी । वहाँ उन्हें अठारह वर्ष अज्ञात होकर रहना पड़ा । इतिहास में उसका उचित समाधान नहीं मिलता । इस कथा की सचाई पर चाहे कितना भी मत भेद रहें, फिर भी इस कार्य में थोड़ाभी सन्देह नहीं कि जगद्देव के नाम अनेक किंवदंतियाँ गांव गांवों में प्रचलित हैं ।

निज़ाम राज्य में प्राप्त एक शिला लेख से उसकी ऐतिहासिकता पर पता चला है, ऐसा भी सुना जाता है ।

जगदेव के पंवारे में उसका बनात वास मुख्य और उस समय की कई घटनाएं प्राप्त हैं । उन घटनाओं से संबद्ध, धरमासन दससंगेर आदि नाम भी आये हैं । उन नामों की वास्तविकता पर भी मतभेद है ।

हरजू कोरी नामक गायक के पास जगदेव पांवडे की पाण्डु लिपि प्राप्त है ।

जगदेव पंवाडा बुन्देल खण्ड की लोक गाथा का एक उत्युत्तम उदाहरण है । लोक गीतों को ग्राम गीतों की संज्ञा देना और उन के अन्दर अविरुद्ध और उच्च भावों की खोज का प्रयत्न करना ठीक नहीं है.। यह चेष्टा निरर्थक ही नहीं हानिकारक भी है । ग्राम गीत प्राय: छोटे होते हैं । रचना काल की दृष्टि से वे आधुनिक भी हो सकते हैं । लोक गाथा की परंपरा हमेशा पुरानी होती है । लोक वार्ता के अध्ययन की दृष्टि से ऐसी लोक-कथाएं ही महत्त्व पूर्ण मानी जानी चाहिए जो सर्व साधारण लोगों के मुखाग्र प्रचलित हों और जिन की रचना अपने आप ही, खेतों और खलिहानों पर हुई हों । जगदेव पंवाडा इस विभाग में आता है ।

कोरस देव

यह एक जाति विशेष की अपनी गाथा है । बुन्देल खण्ड में पशुपालक जाति के अहीर "कोरस" को अपना अधिष्ठान देवता मानते हैं ।

अहीरों और गूजरों की देवता । बुन्देल खण्ड में जिस के घर में गाय भैंस होती हैं, वहाँ कोरस देवता के चबूतरे भी पाये जाते हैं । चबूतरे पर कोरस और उस के भाई सुरपाल को रखे जाते हैं । पत्थर की मूर्ति एवं मिट्टी के घोड़ा भी चबूतरों पर रख जाते हैं । इन चबूतरों के सामने ये बाँसों में लगी सफेद झंडियाँ फहराये जाते हैं ।

प्रत्येक महीने के कृष्ण चतुर्थी और शुक्ल चतुर्थी को अहीर लोग यहाँ आकर रात को इकट्ठा होते हैं । "धुला" कोरस देव को सिर पर लिवा आता है । उस धुल्ले के सिर पर कोरस देव सवारी होते हैं । जब कोरस देव की सवारी धुल्ला पर होती है तब वे अपने हाथ का रसी सेली-जो उन की बनी होती है; चारों ओर घुमा कर अपनी पीठ पर "हूँ" "हूँ" कह कर मारता है ।

सवारी के आह्वान केलिए डमरू और घुंघरू लगी हुई ढोलक पर जो ढाँक बज जाती है - ताल भर कर गीत गाया जाता है । ये "गोट" कहलाते हैं । इन में कोरस देव एवं अन्य वीर पुरुषों का यशोगान और उनके अद्भुत और साहसिक कार्यों का वर्णन होता है । "गोट" गाने वाले गोटया गीत जारी रखते रखते कोरस देव धुल्ला पर सवारी हो जाती और लोगों की विनती, सुनकर अपने नाम का "भभूत" दे देता है । दो तीन बजे रात तक यह गीत और गीत चलता रहता है । "कोरस" देव के गीत को - कोरस गोट कहा जाता है । अहीरों केलिए यह गीत, पवित्र "देववाणी" है ।

गोट शब्द संस्कृत के "गोष्ठ" का अपभ्रंश है । अर्थ है - गोस्थान - या गोचार भूमि । नई नई चरागाहों की तलाश में हमारे पूर्वज, चले जाते थे । यह गोष्ठ शब्द उन गोस्थानों को कहता था । मनुष्य भी गिरोह या "गोष्ठी" बनाकर रहता था । इसलिए उसके ढोर जब हरे भरे चरागहों में फैलकर आनंद से नई नई दूब चरते थे, तब वह एक जगह इकट्ठा होकर बैठा जाता है । आमोद प्रमोद करता, हँसता खेलता और आश्चर्य से चकित हो सृष्टि के गूढ रहस्यों पर विचार करने की चेष्टा भी करता था । इस प्रकार "गोष्ठ" शब्द गायों के मिलन स्थान का मात्र नहीं, अपितु आदमियों के एक जगह मिलकर बैठने के स्थान का भी द्योतक हुआ । उसी से गिरोह या कुल का सूचक गोष्ठी शब्द बना ।

आश्चर्य की बात है, बुन्देल खण्ड के अहीरों और गूजरों ने मानव समाज की एक बहुत प्राचीन संस्था को, आज तक ज्यों का त्यों जीवित रखा है । ये सच्चे अर्थ में हमारे पशुपालक पूर्वजों के वंशधर और उनकी संस्कृति के वाहक है ।

"कारस" देव की कथा में एक जगह गूजर की बेटी ऐलादी की कथा प्राप्त है । वह दूध की मों मन की खेप अपने सिर पर रखी है । गाय भैंस के बछडे को अपने साथ लिए अपने घर की खोरों से वह बाहर निकलती है । वहाँ राजा का हाथी खडा है । ऐलादी को उस हाथी से मुठभेड करना पड़ता है । आखिर उसने हाथी का सूंड पकड़कर नीचे गिरा दिया । जंजीरों से उसे जकड़ा दिया । इसी प्रकार वीरता का प्रतीक है ऐलादी ।

यह काव्य-लोक-जीवन का खासकर अहीरों के महत्व का उद्बोधक है ।

अमानसिंह

किसी ऐतिहासिक अनुश्रुति के अनुसार रची गयी लोक-गाथा है, अमानसिंह की "पँवाड़ा" । राछरा में यह गीत गाया जाता है । बुंदेल खण्ड में अमान सिंह का कथा गीत राछरा समस्त जनता में लोक प्रिय है ।

अमानसिंह पन्ना नरेश हृदय शाह के पौत्र और छत्त्रसाल के प्रपौत्र थे । ठाकुर प्राणसिंह धीरे जालौन जिले के कोठी ग्राम का रहने वाला था । अमान सिंह की बहिन ने इन से शादी की । किसी विषय को लेकर दोनों साले - बहनोई में बड़ा वैमनस्य एवं मन मुटाव हो गया । अमानसिंह ने बहनोई को मार डाला । इस विषय को लेकर ही अमानसिंह नामक राछरा-कथागीत बनाया गया । बुंदेल खण्ड में यह गीत आज भी, साधारण लोग बड़े मजे से गाते हैं । सखियों के साथ आज भी नव विवाहिताएं आनंद पूर्वक यह गीत गाती हुई हिंडोल झूल रही है । परन्तु आज भी अमानसिंह की बहिन को अभी तक कोई लिवाने नहीं गया । वह अभी ससुराल में ही है । उसे बुला लाने को माम का अनुरोध होता है । इसी प्रकार यह गाथा अधिक रोचक मालूम पड़ता है ।

ब्रज की लोक-गाथाएं

ब्रज लोक गाथाएं "पंवाँडा" नामक से प्रसिद्ध है ।

रांझा

हीरा रांझे की कहानी सारे उत्तर भारत में प्रसिद्ध है । ब्रज में इस कहानी पर गाने वाली लोक गाथा है - "रांझा" । यह एक विशेष राग है । इस लोक गाथा में "रांझा" इस कथा में नायक का नाम भी "रांझा" है । नायिका का नाम "हीरा" है । यह कथा पंजाबी है तो भी ब्रज में इस कथा गीत का प्रचार है । इस की लोक प्रियता ने इसे एक ब्रज लोक-गाथा बना दिया है । यह एक - प्रेम गाथा है । इस में कई उपकथाएं मिलाई गयी है । इस लोक गाथा कई पहरियों में [खण्डों में] रचा गया है । "चिकारा" नामक वाद्य की सहायता से ब्रज के लोक गायक आज भी यह प्रेम कथा गाते हैं ।

जाहर पीर

हिन्दी के लोक-महाकाव्यों में जाहर पीर का नाम मिलाया जा सकता है । इस गाथा में नाथ पंथ, एवं शैव परंपरा दोनों का प्रभाव पा सकता है । इस लोक-काव्य को "गुरुगुग्गा" नाम भी प्राप्त है । जाहर पीर बागर के राजा "देवराय" का पुत्र था । इन की रानी का नाम "बाछल था" । राज देव को कोई "लाल" पुत्र का जन्म नहीं हुआ था । एक बार गुरु "गोरखनाथ" वहाँ आ गये । उन के आशीर्वाद पाकर रानी को

पुत्र प्राप्ति हुई । उस बच्चे को जाहर पीर नाम रखा । ये पंच पीर में एक कहने लगे । नीला घोड़ा [नीलाघोड़ा] जाहर पीर की सवारी में रहे । एक दिन जाहर पीर ने "सिरियल" राजकुमारी को सपने में देखा । जागते ही वह "सिरियल" की खोज में निकल पड़ा । बड़े युद्ध करने के बाद - वह सिरियल को जीत लिया । यह काव्य लहरियों में बंट गया है । चंदोवा पर जाहर पीर के जीवन की मुख्य घटनाएं वर्णित है । चाकुक लोहे का बना होता है । इसे जाहर पीर कहते समय टाँगा जाता है ।

धार्मिक अनुष्ठानों में "जाहर पीर" पूरा गाने की प्रथा आज भी ब्रज के गांवों में है । देवी ज्योती और देवी गाथा के समान जाहर पीर की ज्योति एवं गाथा दोनों आज भी होता है ।

जाहर पीर ने सिरियल के साथ विवाह भी किया था । इन की मौसी के पुत्र ने [अरजन सरजन] उन से आधा राज्य अपने अधीन में लाकर राज पाट संभालना चाहा । लेकिन जाहर पीर ने उन की अनुमति नहीं दी । इस पर रुष्ट होकर उसने मुसलमान दुश्मनों को चढ़ाई केलिए ले आया । जाहर पीर ने उनसे युद्ध किया । जाहर पीर विजयी हुए और इन्होंने अपने दोनों भाई के सिर काट लिए । इस समाचार से इन की माता ने इन का मुख देखने से इनकार कर दिया तब से भूमि में समा गया । इस गीत कथा में जीवन के उन्नतावस्थाओं का समावेश पाया जाता है ।

---

1. पंचपीर - सरवर सुलतान, नीला घोड़ा, मज्जूकमार, नरसिंह पाड़े जाहर पीर - ये पांच-पीर कहे गये ।

ढोला

ब्रज के लोक-प्रिय गाथाओं में ढोला का मुख्य स्थान है। इस में राजा नल और उस के पुत्र ढोल की अद्भुत और रोमांचक कहानी गायी जाती है। नल का जन्म एक भयानक जंगल में हुआ। एक सेठ ने उसे अपने यहाँ ला दिया। बड़ा होने पर वह जहाज में व्यापार करने गया। विदेश में उसने एक राक्षस की बेटी से प्रेम किया। राक्षस को मार कर उसने "मोतिनी" को साथ लिया। रास्ते में राक्षस के मामा ने उससे युद्ध किया। नल समुद्र में ढके दिया गया। आखिर वह समुद्र गर्भ में पहुँच गया। वहाँ वासुकी नाग से उस का परिचय हुआ। वासुकी ने नल को बचा दिया और उसे अपना घर पहुँचा दिया। आखिर उसने राक्षस के मामा को कौशल से पराजित किया और "मोतिनी" को अपना लिया। सुख जीवन बिताते समय उसने जुआ खेल कर अपना सब कुछ खो दिया। आखिर वह अपनी पत्नी दमयंती के साथ वनवास किया। वन वास के समय उसे कई संकटों को झेलना पड़ा। वहाँ उसे ढोला नामक पुत्र पैदा हुआ। ढोला का विवाह बचपन ही में "मारु" नामक लड़की से हुआ। आखिर समय बदल गया। "ढोला मारु" का गौना बड़े धूम धाम से हुआ। इस कथा गीत में कई घटनाएँ हैं। इस गाथा में कई घटनाएं और भी है। वे सब उप कथाओं के रूप में जोड़ दिया है। बुन्देली लोक गाथाओं के बीच आल्हा और ढोला-मारु बहुत लोक-प्रिय है। उन दोनों को प्रत्येक अवसरों पर लोग गाते हैं।

चन्द्रावली

चन्द्रावली की कथा ब्रज लोक गाथाओं में प्रचलित ही है।

कनौजी लोक गाथाएं

कनौज में आल्हा, ऊधदेव का गौना, धन्नइया आदि लोक गाथाएं प्रमुख पाये जाते हैं। इन में कनौज की स्थानीय गाथाओं के बीच ऊधदेव और धन्नइया मुख्य हैं।

ऊधदेव

जामिनी गढ बहुत ऊंचे स्थान पर बसा है। उसके पास ही कलवार रहा करता है। जीवा और उसका भाई दोनों वहाँ खेल रहे थे। खेलते समय एक दिन जीवा की भाभी ने उस से कहा कि उसकी शादी बचपन से हुई थी। उस का वर ऊधदेव है। आज से बारह वर्ष पहले यह बात हुई है। ~~आज से बारह वर्ष पहले यह बात हुई है~~। इस पर जीवाने पूछा फिर मेरा गवना अभी तक क्यों हुआ। तब भाभी ने वह कहानी कह दी कि जीवा के भाई और ऊधदेव में झगडा हुई। उसने घोडी मांगी तो भाई ने इनकार किया। लेकिन भाभी ने घोडी दी। इस पर चिढ कर ऊध देव निकल पडा। रास्ते में जारौली के राजा "रायपम्मार" से उस का मुठभेड हुआ। फिर गौना लेकर लौटा। रास्ते में जल्लाराय नामक एक व्यक्ति ने उसे मदिरा पिलाकर बेहोश किया। उसने ऊधदेव की घोडी को स्वायत्त करने का प्रयत्न किया तो दोनों में झगडा हुआ। आखिर ऊधदेव मारा गया। कथा सुनकर "जीवा" सती हो जाने लगी। उसने चिता बनाकर उस आग में कूद पडने लगी तो शंकर पार्वती वहाँ प्रत्यक्ष हुए। उन्हों ने ऊधदेव को जीवित किया। जीवा के सतित्व ने मरे हुए को जीवित कर दिया इस कारण वह देवी और ऊधदेव "देव" माने गये। कथागीत बहुत रोमांच देने वाला है।

यह पावड़ा संवादात्मक शैली में गाया है । बीच बीच में गीति कथा का गायन भी प्राप्त है । जीवा का सौन्दर्य वर्णन ~~और~~ और उसके चरित्र का महत्व पूर्ण वर्णन है । यह पंवाड़ा अहीर लोगों के बीच अधिक प्रचार में है । ऊमदेव अहीर जाति का माना जाता है । आज भी कन्नौज में अहीरों की देवी-देवता, ऊमदेव और जीवा है ।

<u>धन्नइया का "पंवाड़ा"</u>

यह भी कन्नौज की स्थानीय लोक गाथा है । इस की कथा में भी जादू टोना और अंध विश्वासों का भर मार है ।

गंगा और यमुना के बीच में बकासुर नगर बसा था । "गजोधर" नामक राजा वहाँ राज करता था । उस को एक बेटी हुई जिसका नाम था "पद्मिनी" । पद्मिनी को एक वर ढूंढने केलिए नाई-~~और~~ ब्राह्मण भेजा गया । वे बसावसेनी के राजा वासुकी के यहाँ पहुँचे । वासुकी ने अपने पुत्र नागमुनियाँ का टीका पद्मिनी केलिए करने का वादा कर दिया । लेकिन नाई-ब्राह्मण किसी बहाने वहाँ से निकल भागा । वे निवासिबौरे के राजा के यहाँ पहुँचे । उसका एक बेटा था जिसका नाम था "सूरजमल" । नाई - ब्राह्मण ने पद्मिनी केलिए सूरजमल का टीका चढ़ाया । लेकिन सूरजमल को यह पसन्द नहीं था । लेकिन किसी न किसी प्रकार बरात निकली ।

लेकिन नाग मुनिया को बड़ा कुंठित हुआ । उसके मन में प्रतिशोध की घटा उमड़ गयी । उसने निश्चय किया कि किसी न किसी प्रकार वह पद्मिनी का विवाह कार्य नष्ट भ्रष्ट करेगा । वह बकासुर नगर पहुँचा ।

जब नगर में बरात आया तो वह भी उसके साथ लग गया । मंडप के पास वह नागिन के रूप में छिप गया ।

खरगलाल को यह शादी पसन्द नहीं था । बरात के अगवानी के समय भी वह अपशकुन देखता था । जब खरगलाल विवाह मंडप के पास आया तो खरगलाल को नाग मुनिया ने डस लिया । खरगलाल वहीं पड़कर मर गया । सभी ओर हा हा कार मच गया । वरण माल्यं को हाथ में लेकर अपने पति के गले में उस के अर्पण केलिए सारी वेषभूषा से सजी रहने वाली नव वधू के दुःख का कहना तो क्या है ?

बरात लौट गयी । पद्मिनी कुरुक मंडा केलिए तपस्या के द्वारा प्रस्थान हो गयी । किसी न किसी प्रकार वह कुरुक मंडा पहुँच गयी । उसकी तपस्या ने वहाँ खरगलाल को जीवित किया । लेकिन वहाँ भी पद्मिनी की परीक्षा जारी रही । एक जोगिन ने खरगलाल को प्रेमवश रूप बदलाकर जानवर बनाया, और अपने वश में रखा । सात वर्ष उसे वहाँ भी रहना पड़ा । आखिर वह उलटी तपस्या लेकर एक साल में पिहोरी लौट आयी । तत्पश्चात् "बकेसुर" आ जाती है । वहाँ पर सांपों के बंधन खोल देते हैं । तब फिर से बरात आती है पद्मिनी और खरगलाल का विवाह धूम-धाम से संपन्न होता है । वे दोनों आनंदपूर्वक जीवन बिताते हैं ।

इस लोक-गाथा में भी अवास्तविक एवं रोमांच कथात्मक कई घटनाएं हैं । इस कारण इस लोक काव्य को रोमांचक विभाग में रख सकता है ।

राजस्थानी लोक - गाथाएं

राजस्थान की प्रमुख स्थानीय लोक-गाथाएं, "पाबूजी" नागजिया, मैणादे, निहालदे आदि हैं । इन में पाबूजी और नागजिया अन्य बोलियों में अपनी लोक प्रियता के कारण गाये जाते हैं । राजस्थान में लोक-गाथा को "पंवाड़ा" कहता है ।

पाबूजी

राजस्थानी लोक गाथाओं में "पाबूजी" की गाथा अधिक महत्व पूर्ण माना जाता है । पाबूजी एक कर्तव्य परायण वीर था । इस कारण सारी हिन्दी जगत में आपके नाम कई पंवाड़े बने गये हैं ।

पाबु राठौड़ को घोड़ियों पर बड़ी शौक थी । देवल चारणी के पास एक कालेमी घोड़ी थी । पाबूजी ने उस घोड़े को मांगा । "चारणी" ने इस शर्त पर उन्हें घोड़ा दिया कि "अगर कोई मेरी गायों पर चढ़ाई होगा तो उस समय मेरी सहायता करना चाहिए । पाबूजी ने ऐसा करने का वचन दिया और घोड़ी ले ली । थोड़े समय के बाद पाबूजी का विवाह निश्चित हुआ । वधु उमर कोट के सूरज मल सोढ़ा की पुत्री थी ।

विवाह का दिन आया । बरात उमर कोट पहुँची । विवाह संस्कार की क्रियाएं एक एक भँवरे हो रही थी । केवल तीन भँवरे ले चुकी थी कि "देवल चारणी" रोती हुई आयी और उसने बताया कि अपनी गायों पर आक्रमण हो रहा है । पाबूजी को अपने वचन की याद आयी ।

शादी संपन्न करने को अभी एक ही भँवर बाकि था, तो भी शादी कार्यों को उसी प्रकार छोड कर वे सीधे घोडी पर चढ गये और "चारणी" की गायों की सेवा केलिए रवाना हुए । "जिंदराव" जो अपना बहनोई ही था, जिसने चारणी की गायों पर हमला किया था, उससे पाबूजी को लडना पडा । उस लडाई में पाबूजी वीरगति को प्राप्त हुए । चौथी भँवर द्वारा विवाह संस्कार पूर्ण होने के पहले, और सभी संबन्धियों के बहुत कुछ समझाने पर भी, पाबूजी ने अपने वचन के पालन पर - कर्तव्य पालन पर - जान दिया । उनकी इस कर्तव्य परायणता पर समाज आज भी मुग्ध है । वीर जीवन पर गाथाओं का उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है । यह गाथा बहुत रोचक और रोमांचदायक है ।

<u>नामडिये का पंवाडा</u>

नामडिया पाबूजी के बडे भाई "बूडोजी" का बेटा था । बूडोजी पाबूजी के साथ वीर स्वर्ग पा गया था । जब वे स्वर्ग सिधारे उस समय बूडोजी की पत्नी गार्भिन थी । पति के वीर मृत्यु के साथ वह सती होने लगी थी, कि उसके पहले उसने अपना पेट खोल कर बच्चे को बाहर किया । उस बच्चे को देवल चारणी के हाथ दे दिया । चारणी ने बच्चे को अपनी अपनी नानी के यहाँ पहुँचा दिया । उस बच्चे का पालन नानी ने किया । इस कारण बच्चे का नाम नानडिया रखा ।

नामडिया को बारह वर्ष की अवस्था तक अपने माता-पिता के बारे में कुछ नहीं जानता था । एक दिन वह एक सरोवर के पास खेलता था तो उसने एक गीत सुना । वह गीत पाबूजी की वीर कथा पर आधारित था ।

पनिहारियों का वह गीत लड़के ने कुतूहल से सुना । आखिर उसने उन पनिहारियों से अपनी कथा सब सुन ली । पनिहारियाँ यह नहीं जानती थी कि यह लड़का कौन है । उस समय से नान्हड़िया स्वयं वीर समझने लगा । अपने वंश की मर्यादा का, तथा अपने पिता तथा काका के घातकों से प्रतिशोध का उस में तरस हो उठा । उस भावना के जाग्रत हो उठने पर उस से रहा न गया । मामी और रिश्तेदारों के मना करने पर भी, वह बाबा गोरख नाथ का चेला बन गया । उनसे दीक्षा तथा शक्ति लेकर "जायलसींधी" के नगर के बाग में पहुंच गया । जायल सींधी से युद्ध कर के उसके पिता तथा काका मर गया था ।

नान्हड़िया पहले सींधी के नगर के बाग में पहुंच गया । वह बाग वर्षों से सूखा पड़ा था । जब से नान्हड़िया का वहाँ प्रवेश हुआ, तब से वह बाग पनपने और फूलने लगा । सींधी की पत्नी को इस के साथ दुःस्वप्न भी हुआ । उसे स्वप्न से नान्हड़िया का पता भी मिला था । उसने दूध में विष घोलकर नान्हड़िया को दिया । लेकिन गुरु कृपा से नान्हड़िया बच गया था । आखिर सींधी की पत्नी उसका सहायक बन गया । इस प्रकार उसने मार्ग के सारे संकटों को जीत लिया । वह सींधी के महल के अन्दर प्रवेश पा सका । उस समय सींधी सुखनिद्रा में पड़ा हुआ था । नान्हड़िया ने सींधी को निद्रा से जगा दिया । उसने सींधी के साथ युद्ध लड़ा । कुछ समय के बाद नान्हड़िया ने सींधी का सिर काट लिया । सींधी का सिर हाथ लेकर वह उस रण क्षेत्र में आ गया, जहाँ उसके पिता तथा चाचा स्वर्ग वासी हुए थे । उनकी समाधी पर उनके शत्रु का सिर चढ़ाकर उसने अपना प्रतिशोध पूर्ण किया । नान्हड़िया के इस प्रतिशोध ने उसे अमर बना दिया । हिन्दी के लोक-काव्यों में इतना संघर्षात्मक एक लोक-काव्य दूसरा नहीं है । आज भी इस गाथा के गाने पर लोग आवेश से भर जाएगे ।

मैनादे

इस लोक गाथा का दूसरा नाम मैनावती है । इसकी मूल कथा बंगाली में है । तो भी राजस्थान में इस का प्रचार बड़ी मात्रा में है ।

मैनावती ने वर दान के रूप में पुत्र गोपीचंद को पाया था । परन्तु शर्त यह थी कि यदि गोपीचन्द एक निश्चित समय से पूर्व जोगी नहीं हो जाएगा तो वह जीवित नहीं रह सकेगा । मैनादे ने उसे निश्चित समय से पूर्व जोगी बनाकर संसार की माया से मुक्त करवा दिया । इस कारण वह अमर हो गया । उस वीर माता के नाम रचा गया पंवाड़ा है - मैनादे । राजस्थान की स्त्रियाँ बड़े गर्व के साथ यह वीरगाथा गाती हैं । उनके मतानुसार यह लोक गाथा आज भी उनका मान रखता है ।

निहालदे

यह राजस्थान के स्थानीय गीतों में आता है । यह भी एक विशिष्ट नारी चरित पंवाड़ा है । यह स्त्री की स्थिर चित्तता का उदाहरण भी है । एक दिन निहालदे अपने बाग में झूला झूल रही थी । हैन्दव रीति नीति के अनुसार मुसलमानों का संबन्ध निषिद्ध था । लेकिन जब निहालदे ने राजा सुल्तान को देखा तब से उनका मन उन्हीं पर दृढ हो गया । उसने उनकेसाथ शादी करने का निश्चय किया । अपनी कुल मर्यादाओं को छोड कर इस निश्चय पर डटे रहने का उस का चरित्र सराहनीय था । इस घटना पर गायी गयी लोक गाथा है यह । यह नायिका प्रधान होते हुए भी इस में दृढ प्रेम का महत्व रहा है ।

कौरवी - या खड़ी बोली लोकगाथाएं

खड़ी बोली लोकगाथाएं तीन प्रकार के प्राप्त है - पौराणिक वीरकथात्मक एवं प्रेम कथात्मक ।

पौराणिक गाथाओं में - पूरन भक्त, गोपीचन्द, भरथरी शिव-पार्वती आदि मुख्य हैं ।

वीरकथात्मक गाथाओं में - आल्हा, जाहर पीर, रूपबसन्त, राजा कारक आदि मुख्य है ।

प्रेम कथात्मक गीतों में - चन्द्रावली, निहाल्दे, नीलोचमन, चन्दना, मचलन, मन्टा आदि है ।

इन में, स्थानीय गाथाओं पर आगे विचार किया जाएगा ।

मालवी लोक-गाथा

मालवी में भी लोक-गाथा को पवाड़ा नाम है । नरसिंह गढ के चैनसिंह, चीकरी के दूना सिंह, "धार गढी" "भैरथरी" नर्मदा में नाव डूबने आदि मालवा के मुख्य कथा गीत हैं ।

चेनसिंह

नरसिंह गढ का चेनसिंह साहसी और स्वतंत्रता प्रेमी थे। कुंवरसिंह के समान चेनसिंह ने भी अंग्रेजों पर हमला किया। आखिर उस वीर को स्वतंत्रता की लडाई में जीवन त्याग करना पडा।

डूंगा सिंह

डूंगा सिंह ने भी अंग्रेजों से लडकर जीवत्याग किया।
बख्तावर सिंह को, अंग्रेजों से लडना पडा और उसे इंदोर में फांसी चढाया।

नर्मदा में नाव डूबे

एक ट्राजडी है। जिसमें, नर्मदा में हुई एक, घटना का वर्णन है - जिसमें एक नाव के डूब जाने से नर्मदा के पानी में डूब मरे, कई लोगों की करुण कथा है।

इसी प्रकार "धार गढी" की धार में हुई घटना का वर्णन है।

इसी प्रकार मालवी लोक काव्य लोक गाथा और गीत दोनों से भरा पडा है।

हिन्दी की प्रमुख लोक-गाथाओं की विस्तृत व्याख्या

(1) आल्हा

हिन्दी वीर कथात्मक लोकगाथाओं में आल्हा का स्थान मुख्य है। सारे उत्तर भारत के जनजीवन से यह लोक-गाथा अभिन्नरूप में लिपटा हो रहा है। हिन्दी साहित्य के वीरगाथाकाल के अन्तर्गत जगनिक कृत आल्हा खण्ड का उल्लेख प्राप्त है। डा॰ श्याम सुन्दरदास के कथन के अनुसार प्रबन्ध मुक्तक वीरगाथाओं के अतिरिक्त उस काल में वीर गीतों की भी रचना हुई थी। अनुमान से तो ऐसा जान पड़ता है कि उस काल की रचनाओं में प्रबन्ध काव्यों की न्यूनता तथा वीर रसात्मक फुटकर पद्यों की अधिकता रही होगी[1]। आल्हा भी इन्हीं वीर गीतों के अन्तर्गत आता है। यह लोक-काव्य अपनी ओजस्विता एवं लोक-प्रियता के कारण आज भी काल कवलित होने से बच गया है।

आल्हा और परमाल रासो

जब कोई गाथा गाथा चक्र का रूप धारण करती है, तो निकट भविष्य में सरस्तु महाकाव्य के जन्म होने की संभावना है[2]। परन्तु आल्हा के संबन्ध में इस के विपरीत की संभावना बनायी गयी है। कुछ विद्वानों के मतानुसार परमालरासो नामक महा काव्य-आल्हा लोक गाथा का प्रथम रूप है।

---

1. डा॰ श्याम सुन्दर दास - हिन्दी भाषा और साहित्य - पृ॰277
2. भोजपुरी लोक गाथा - डा॰ सत्य व्रतसिन्हा - पृ॰153

अपनी ओजस्वी वृत्ति के कारण यह काव्य लोक गाथा में भी परिणत हो गया था । उसकी अमरता भी इस रूप में हुई थी[1] ।

आल्हा का मूलपाठ

ध्यान देने की बात है कि आज भी आल्हा का मूलपाठ कहीं भी प्राप्त नहीं है । श्री चार्ल्स इलियट का बनाया हुआ जो पाठ्यग्रन्थ रूप में पाया जाता है, वही सबसे पुराना माना गया[2] । सर ग्रियेरसन ने भी आल्हा के मूल पाठ के संपादन का प्रयत्न किया था । उन्होंने बिहार में प्रचलित कुछ रूपों का संग्रह करके उसका अनुवाद अंग्रेजी में प्रस्तुत किया[3] । आल्हा असल में बुन्देली लोक काव्य माना जाता है । श्री विन्सेंट स्मिथ ने ही उस का संग्रहण किया । उन्होंने भी, उसका अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया । परन्तु श्री॰ स्मिथ का यह संग्रह प्रथम रूप का मानने योग्य कोई भी सबूत प्राप्त नहीं है[4] । सर वाटर फील्ड ने भी इन्हीं गीतों का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया था ।

---

1. कभी कभी लिखित काव्य भी अपने मूल कलेवर को छोड़कर जनता की भाषा में प्रचलित होकर जीवित रहते हैं । रामायण जैसे महान काव्य इसके उदाहरण है ।
2. चार्ल्स इलियट 1835 में फर्रुखाबाद का सेटिलमेंट अफसर था ।
3. इन्डियन ऐंटि क्वेरी - 1885 - दि मेरिज आफ आल्हास मैरियेज
4. श्री॰ डब्ल्यु॰ वाटर फील्ड - 1823

दूधनाथ प्रेस हवड़ा में तैयार किया गया आल्हा का एक प्रकाशित रूप आज भी पुस्तक विक्रेताओं के पास प्राप्त है। उसे आल्हा लोक-काव्य कहा नहीं सकता। हिन्दी भाषा की सभी बोलियों में आल्हा का अपना पाठ प्राप्त है; उन सारे के सारे पाठों में गायकों का मिलाया हुआ अपना भाग अतिशयपूर्ण शैली में पाया जाता है। मलयालम के तच्चोल्ली प्याट्टु के समान कतिपय पंक्तियां भी उनमें मिलाया गया है। तो भी, हम उसे अचरज की बात न समझें, केवल स्वाभाविक ही मान सकते हैं। इस संदर्भ में डा॰ श्याम सुन्दर दास जी का यह मत भी उल्लेखनीय है कि "वीरगाथा काल की रचनाओं में तो विभिन्न कालों की घटनाओं के ऐसे असंबद्ध वर्णन हुए हैं कि वे अनेक कालों में अनेक कवियों की हुई रचनाएं जान पड़ती हैं। आज के बाजारी आल्हा में बावन युद्धों का वर्णन पाया जाता है। संयोगिता हरण पृथ्वी से लेकर बेला सती तक की घटनाएं उनमें कहीं वर्णित पायी जाती हैं[1]।

1• [1] संयोगिता स्वयंवर [2] रतीभान की लड़ाई [3] महोबा [4] माड़ो [5] नुपीठो [6] सुरजमल [7] करिया [8] जंबो [9] सिरसा [10] आल्हा का ब्याह [11] पथरीगढ़ [12] बैरीगढ़ [13] राजकुमारों से [14] वीरशाह [15] दिल्ली [16] दरवाजे [17] मछवेत [18] नरवर गढ़ [19] चन्द्रबल हरण [20] बामठ [21] अभिनन्दन [22] माखन [23] आल्हा निकाली [24] मोती जवाहर [25] राजा गंगाधर [26] गांजर [27] हरीसिंह [28] मालवी राजा [29] राजा कमलापति [30] भुगोर [31] बाढ़ चला [33] सिरसा की दूसरी [34] पोरानायक [35] धीरसिंह [36] गुजरियों की [37] अभयी रजित [38] ब्रह्मानंद [39] योगियों की [40] आल्हा अनोखा [41] सिद्धाठाकुर [42] गंगासिंह [43] नदी बेतवा [44] माखन [45] ऊदलका [46] बेलाके गवना [47] वही [48] ब्रह्मानंद का घायल [49] बेलाताहर [50] चन्दन बनाया [51] चंदनखंभा [52] बेलासती

द्वारका प्रसाद शर्मा ने अपनी पुस्तक आल्हा में केवल बत्तीस [32] युद्धों का वर्णन किया है। यह पुस्तक गद्य विवरण है, तो भी कृति के विवरण के अनुकूल है। यह ग्रन्थ अधिक मौलिक माना गया है[1]। कुछ विद्वानों के मतानुसार आल्हा में पहले केवल तेईस [23] युद्धों का वर्णन मात्र पाया जाता था। आल्हा के गायकों ने कालान्तर में कपोल कल्पित रूप में इसे बढ़ाया चढ़ाया रखा होगा। आज भी आल्हा के मूल पाठ का प्रश्न, प्रश्न मात्र रहा है। इस प्रबन्ध में अधिक अन्वेषण की बात नहीं रहती। लेकिन यह बात स्मरणीय रखना है कि मौलिक गायकों के सामने रचयिता जगनिक का नाम कहीं नहीं आता है। इस कारण रचयिता का नाम भी, ठीक बताया जा नहीं सकता है[2]।

श्री॰ वाटर फील्ड के अनुसार "आल्हा" चन्द बरदाई की रचना है। पृथ्वीराज रासो के उनहत्तरवें समय में महोबा खण्ड के नाम से आल्हा की कथा प्रस्तुत की गयी है। इस खण्ड में पृथ्वी राज द्वारा आल्हा ऊदल तथा परमाल के पराजय का वर्णन पाया जाता है। महोबा खण्ड पृथ्वीराज की महिमा गाने में सन्निहित किया गया था। लेकिन आल्हा काव्य में महोबा के पतन की सूचना भी प्राप्त नहीं है। उसमें आल्हा ऊदल की वीरता का वर्णन ही मुख्य पाया जाता है। ग्रियेरसन ने वाटर फील्ड के मत का खण्डन किया है[3]।

---

1. चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा – आल्हा इण्डियन प्रेस, प्रयाग।
2. हिस्ट्री ओफ आल्हा – [भूमिका] वाटर फील्ड – पृ॰22
3. उनके मत में, स्वतंत्र आल्हा खण्ड बुंदेली है। पृथ्वीराज रासो की भाषा पिंगल है। उसमें भी प्राप्त आल्हा खण्ड की भाषा – बैसवारी है। यह इस कारण से प्रक्षिप्त बताया जा सकता है। पृथ्वीराज रासो लिखते समय उस में उनसठ समय मात्र था। आगे जाकर समयों की संख्या "उनहत्तर" बन गयी थी। इस कारण से आल्हा समय प्रक्षिप्त बनाया जाता है।

"आल्हा खण्ड" के रचयिता को जगनिक मानने का सबूत लोक-काव्य के गीतों में नहीं पाता है । केवल जनश्रुति को आधार लिया जाय तो आल्हा का कवि जगनिक है । जगनिक को राजा परमाल की दरबारी माना जा सकता है । रचना काल और अन्य बातों के आधार पर हम इस जन श्रुति को बल दे सकते हैं । आल्हा खण्ड बारहवीं शदी की रचना है । इतना लोक-प्रिय एक काव्य सारे हिन्दुस्थान में दूसरा प्राप्त नहीं है । आज भी यह उत्तर भारत की आम जनता की जीभ पर वर्षा ऋतु के आते आते नृत्य करता है । रचयिता चाहे कोई भी हो, इस लोक-काव्य की लोक प्रियता को देखकर उसकी आत्मा मुग्ध हो जायगी ।

रचयिता

रचयिता का अज्ञात होना लोक-गाथाओं के लक्षणों में एक है । आल्हा को इस अर्थ में भी, एक लोक-काव्य माना जा सकता है । मूल पाठ का अभाव, गेयता, आदि अन्य गुणों के आधार पर भी यह विशिष्ट लोक काव्य साबित कर सकते ।

कथा

आल्हा की कथावस्तु युद्धों की कथा वस्तु है । इस में प्रत्येक युद्ध की एक कथा है । आल्हा के राजवंशी लोगों की प्रत्येक शादी स्वयंवर सब कन्याहरण एवं युद्ध पर आधारित है । कन्याहरण और युद्ध उस समय विवाह का मुख्य कार्य था[1] । युद्ध में नव वर का मरना और बिना स्पर्श के

---

1. मलयालम लोक-काव्यों में भी, खासकर वटक्कन पाट्टु में यह रीति देख सकते हैं ।

दुलहिन का सतीत्व जितना मार्मिक एवं करुणा कथा है, तो भी ऐसे हजारों घटनाओं की साक्षी हैं हिन्दी का लोक-काव्य । आल्हा की कथा इतनी मार्मिक घटना पर आधारित बन देती है कि वीर बनाफरों के युद्ध में, सत्य-नाश होता है । केवल आल्हा और उस का पुत्र इन्दल बच जाता है । महोबा रण क्षेत्र सुना पड गया । अब आल्हा और उसका पुत्र सदा केलिए कजरी वन को चले जाते हैं । आल्हा को महोबा का महत्व एक बार खडा करने केलिए लौटाने की प्रतीक्षा में महोबा वासी आज भी बैठते हैं ।

महोबा के सभी दुखी, बूढे, बच्चे, लूले, लंगडे इस विश्वास से, फिर भी रहने लगे कि आल्हा लौट आएगी । महोबा का एक वीर योद्धा आल्हा लौट आएगी - शंका नहीं महोबा का लोक-मानस आजभी उस प्रतीक्षा में है ।

आल्हा की मूलकथा भिन्न बोलियों में समान रूप से प्रचलित है । सारे हिन्दुस्थान में इस कथा की लोक-प्रियता समान रूप से स्वीकृत है । हर कहीं गायकों ने इसे प्राणभूत लालित्य के साथ गाते हैं

आल्हा और ऊदल दोनों सगा भाई एवं समान वीर थे । उनकी दोस्ती और दोनों का प्यार भी अमोघ था । आल्हा के ब्याह का प्रसंग उसका साक्षी है । नैना गढ के राजा को परास्त करके 'सोनवा' को जीत लेकर 'आल्हा' को सौंप देने तक का ऊदल का प्रयत्न, साहस और समर्पण कार्य, जीवन के और एक क्षेत्र में हम देख नहीं सकते । यहाँ एक सराहनीय प्रसंग है - जो लोक-मानस के अनुकूल लोक कवियों के काम का 'पोपील' बताया सकता है । ऊदल ने देवी से प्रार्थना की कि किसी न किसी प्रकार इस कार्य को सफल बनाने को । लेकिन देवी माता ने इनकार किया । क्योंकि देवी माता

स्थलनामों की ओर से भी आल्हा की ऐतिहासिक स्वीकार कर सकती है । राज्यों, गढ़ों, आदियों का नाम जो आल्हा लोक-गाथा में आता है सब, भौगोलिक दृष्टि से सही निकलता है । जैसे दिल्ली, कन्नौज, महोबा आदि अब भी अपना अस्तित्व खोये बिना खड़ा है । दिल्ली आज भी भारत की राजधानी है । अहो ! कितनी घटनाओं की साक्षी है यह दिल्ली । कितने राजाओं और शासकों के अट्टहास और हास विलास का यह साक्षी है । 'संचारणी दीपशिखा के समान अधिकार के हाथ आने पर कितने राजाओं का मुख यहाँ प्रसन्न हुआ और अधिकार के छूट जाने पर कितने के मुख फीके पड़ गये ? हमारी निकटवर्ती घटनाएं भी उस विचार को अपनी संभावनाएं दे रही हैं कि इंदिरा गांधी के शासन का अंतिम दृश्य भी देखने का अवसर पाकर यह दिल्ली आज भी अपना सिर उठाकर अपना राजकीय महत्व दिखला खड़ा है । पृथ्वीराज चौहान, जयचन्द और गौरी गज़नी आदि भी चित्र पट के समान सब स्मृति पथ में आ रहे हैं ।

महोबा, कन्नौज, सिरसा, नरवर, बूंदी, मांडौगढ़, बेतवानदी, उरई, नरवरगढ़, नैनागढ़, बिठूर, कजुआगढ़, बेरीगढ़ आदि गढ़ों का नाम भी भौगोलिक विधि और इतिहास नियमों पर अधिष्ठित बताया जा सकता है ।

गंगा, जमुना, चम्बल आदि नदियों का नाम भी इस गाथा में उचित संदर्भों पर आधारित है ।

गाथा में प्राप्त राजा, रानी, सेनानायक आदियों का नाम भी, इतिहास सम्मत हैं ।

जानती थी कि नैनागढ के राजा बोरे बाल, शक्तिशाली एवं टोने टोट के का था ।
देवी को भी उस का सामना करना भय था । ऊदल को गुस्सा आया ।
उसने घोडे की चाबुक से देवी को चार पांच थप्पड मारा । देवी भी ऊदल
के सामने झुक गयी । वह तुरंत नैना गढ जाने को तैयार हो गयी । ऊदल
के आनंद का तब ठिकाना न रहा ।

नैना गढ के राजा का "अमरढोल" का महत्व और बनाफरी
क्षत्रियों को अहीर जाति का मानकर नीच समझना आदि मुख्य कारण हैं ।
"हीरामन" नामक तोते का महत्व भी इस लोक काव्य की महत्ता बढाता है ।

आल्हा गाथा की ऐतिहासिकता

किसी भी गाथा या लोक-काव्य की ऐतिहासिकता पर विचार
करते समय उस काल खण्ड का पता चलना मुख्य कार्य है । ऐसे काव्यों का
काल निर्णय मुश्किल का कार्य है । विषय वस्तु के आधार पर इसका विवेचन
एक हद तक संभव है । इस कारण से हम निस्सन्देह बता सकते हैं कि आल्हा
का निर्माण काल बारहवीं सदी है । उस समय के तीन प्रमुख राजालोगों-
जयचन्द, पृथ्वीराज, परमर्दिदेव की कथा पर आधारित है, यह कथागीत ।
पृथ्वीराज चौहान और राजा जयचंद भारतीय इतिहास में हमेशा वीर सिद्ध
माने जा सकते हैं । उन के शासन काल से यह लोक काव्य - काल - बोध
में मेल खाता है । इस कारण से, इस वीर गाथा की ऐतिहासिकता पर
सन्देह की बात नहीं । बारहवीं सदी भारत में हर कहीं अराजकता एवं
युद्ध का था ।

1. आल्हा लोक-काव्यों के मुख्य युद्धों का मुख्य का मुख्य कारण
{बीज} यह अपमानना माना जा सकता है ।

एक बात से इतिहास विदुर रहता है कि उस काल खण्ड में हुए सारे युद्धों का दायित्व गायकों ने आल्हा और ऊदल पर मढ़ा दिया है । गायक अपने गीतों में यह कर सकता है, पर, इतिहासकी सम्मति इस कार्य में प्राप्त नहीं होती । असंगत कार्यों का समय साक्षी नहीं रहेगा । इतिहास भी वैसा तो ही है, कि, आल्हा खण्ड में वर्णित हर युद्धों में आल्हा और ऊदल का हाथ नहीं हो सकता ।

आल्हा के चरित्र

हम देख चुके हैं कि आल्हा एक वीरगाथा है और आल्हा उसका नायक है । इसमें वीर चरित्रों का बाहुल्य स्वाभाविक भी है । आल्हा, ऊदल, मलखान, सुलखान, रूपनावारी, रानी मल्हना सोनवा, बेला, आदियों का चरित्र उज्वल है । ये सब राजपूती वीरता का महत्व प्रत्यक्ष कर देते हैं ।

इस लोक-काव्य का सर्वश्रेष्ठ पात्र "बेला" है । इस कुमारी की करुणामयी कथा, जो वीर-सतीत्व में परिणत होती है, सुनते ही - पत्थर का सा दिल भी पिघलने लगता है । वह इस काव्य में हरा हरा रहती है । ग्रियेरसन जैसे पाश्चात्य विद्वानों ने भी उस वीर-कन्या की बार बार प्रशंसा की ।

इस काव्य का सर्व श्रेष्ठ, वीर नायक आल्हा इस लोक-काव्य में संपूर्ण रूप में उठा है । खड्ग लेकर शत्रु सेना के दल पर पिल पड़ना निरंतर लड़ते रहना और शत्रुओं को मौत के घाट उतार देना आल्हा और ऊदल को बायें हाथ का खेल था । युद्ध भूमि ही उनके खेल का मैदान था । उनके प्रचण्ड परन्तु पवित्र वीरता का यह लोक काव्य साक्षी रहा है । उनके बारे में ये पंक्तियाँ अमर ज्योति के समान है -

बारह बरसिलैं कूकरजियैं / और तेरह लै जीयैं सियार ।
बीस अठारह छत्री जीयैं / आगे जीवन को धिक्कार ।

[2] लोरिकी

हिन्दी के प्रमुख लोक-काव्यों में लोरिकी का भी स्थान है। लोरिकायिन लोरिका आदि नामों भी यह लोक गाथा प्रचलित है। इस लोक गाथा का नायक लोरिक है, इसलिए इस गाथा का नाम लोरिकायिन पड़ा है। लोरिक अहीर जाति का माना जाता है इसलिए अहीर लोग इस गाथा को अपनी निजी संपत्ति मानते हैं। लोरिकायिन, चारखण्डों में पाया जाता है। संवरु विवाह, लोरिक मंजरी विवाह लोरिक चनवा विवाह, लोरिक-जमुनी विवाह, - ये ही चार खण्ड हैं।

लोरिक और संवरु भाई थे। उन्हें मिलकर और लोरिक को अकेले भी कई युद्धों में भाग लेना पड़े। प्रत्येक युद्ध उस समय के अनुकूल था इसलिए इन घटनाओं को लेकर लोक-कवि ने अपनी भावना का चित्र बना दिया। लोरिका विशिष्ट गीत पद्धति के अनुसार आज भी गाया जाता है, जिस में ढोल का उपयोग करके आलाप के साथ गाना होता है। द्रुत गति से जब लोरिकी गाता है तो भीड़ सिर झुमाकर उसमें लयीभूत हो जाती हैं।

लोरिक की कथा भिन्न बोलियों में

लोरिक की कथा देश के भिन्न प्रांतों में भिन्न बोलियों में प्राप्त हैं। मौलिक रूप से यह भोजपुरी लोक गाथा मानी जाती है। बंगाल में प्रचलित मोरा-मैनावती लोरि की की कथागीत ही है। बुन्देला, छत्तीसगढ़ी, मिर्जापुरी, आदि भिन्न देशों में भी यह लोक-कवियों ने इसे गाया है।

लेकिन लोक-काव्य के रूप में भोजपुरी और मैथिली में अधिक महत्व दिया जाता है । कहीं कहीं "लोरिकायन" नाम से भी यह प्रचलित है । कहीं कहीं मिथिला में इस लोक-गाथा को रामायण से अधिक महत्व है । लोरिकी की मुख्य कथा उसकी दोनों शादी और उसके कारण होने वाले युद्धों पर आधारित है । विवाह के कारण होने वाला युद्ध इस काल खण्ड का सामान्य लक्षण था ।

लोरिकी की कथा

अगोरी का राजा मलयागिर दुसाध क्षत्रिय था । उसकी कुरीतियों से सारा देश असंतृप्त था । उसी नगर में "महरा" नामक एक सज्जन था, उसकी बेटी को इस नीच राजा से बचाने का प्रयत्न वह करने लगे । उस लड़की का नाम मंजरी था । मंजरी जब युवती हो गयी तो पिता ने योग्य वर की खोज में दूत भेजा । परन्तु उसके अनुरूप वर कहीं प्राप्त नहीं हुआ । दूत लौट आया । पता चला तो मंजरी गंगा में कूद कर डूब मरने लगी । लेकिन गंगा माता ने उसे मरने से बचाया । गंगा माता ने उसे लोरिक की पत्नी बनने का अनुग्रह किया ।

लोरिक कई दिन की दूरी पर "गउरागुजरात" के बुढ कुबे का बेटा था । "गउरागुजरात" का राजा "शहदेव" अपनी बेटी की शादी लोरिक से कराना चाहते थे । मंजरी की माता ने उससे सारी बातें समझाई और अपने भाई शिवचन्द को लोरिक से मिलने भेजा । अनेक कठिनाइयों को पार करके वह लोरिक से जा मिला । सारी बातें लोरिक से कह सुनाई ।

लोक रक्षक के तौर पर लोरिक का जन्म हुआ था । मलयगित की बातें सुनकर लोरिक ने मंजरी के साथ शादी करना स्वीकार किया । गउरा के राजा को यह बात अच्छी नहीं लगी । उसने नगर में ढिंढोरा पिटवादिया कि जो भी बुढ कुब के यहाँ तिलक में भाग लेगा, उसका सिर धड से निकाल जायगा । लेकिन देवी माता की सहायता से लोरिक का तिलक चढ़वा दिया । बरात चलने का दिन भी निश्चित किया गया । लेकिन राजा ने हर जगह विघ्न बाधाएं डाल दीं । उन्होंने गंगा के घाट का सारा नाव डुबा दिया ताकि बरात उस पार न पहुंच जाय । बुढकुब को खेवी में बिठाकर संवरू ने पार कराया दुल्हा लोरिक और अन्य बराती सब तैरकर गंगा पार हो गये । इस प्रकार, नदी, पहाड जंगल सब पार करके वे मंजरी के देश पहुंचे । लोरिक और बरातियों को रास्ते में कई छोटे-बडे राजाओं से युद्ध करना पडा था, लेकिन उन सब को लोरिक ने अपने कायबल से परास्त किया । सोपनी नदी के पार राजा मलयगित का धोबी उनके कपडे धोर हे थे । बरात ने उन सारे के कपडों को छीन लिया । धोबी ने जाकर राजा को पता दिया कि ध्यान से देखना । राजा बडी फौज लेकर आया । धमासान लडाई हुई । राजामलयगित मारा गया । मंजरी का विवाह लोरिक से, धूम धाम से हुआ ।

मंजरी को साथ लेकर लोरिक अपने राज्य पहुंच गया । उस समय एक बुडोल चोट्ट जिसका नाम बाठवा चमार था - गोरा गाँव में पहुंच गया । उसने सारे गाँव वालों को तंग किया । लोरिक ने उसे मार डाला । राजा ने प्रसन्न होकर लोरिक को एक दावत केलिए निमंत्रण दिया । वहाँ राजकुमारी चनवा के साथ उसे रात काटने का अवसर मिला । आखिर चनवा को साथ लेकर लोरिक भाग गया । वे दोनों हरदी बाजार में महीचन्द के देश रेह में रहने लगे । वहाँ लोरिक जमुनी कलवारिन की पंजे में पड गया ।

आखिर लोरिक ने उसके साथ भी शादी की । इस समय के अन्दर हरदी बाज़ार में लोरिक मशहूर हो गया । वहाँ के राजा ने लोरिक को अपने दरबारी मल "भीम मल" से द्वन्द्व करने केलिए बुलाया । उस प्रतियोगिता में लोरिक ने प्रतियोगी भीम मल को मार डाला । फिर हरवा, बरवा जैसे दो और मल्लों को भी मारा । आखिर वह हरदी का मालिक हो गया । मंजरी और चनवा के साथ फिर सुख जीवन बिताने लगे । लोरिकी की मुख्य कथा इस प्रकार है ।

विविध बोलियों में लोरिक की कथा थोड़े परिवर्तन के साथ प्राप्त है कहीं कहीं इस लोक गाथा के पात्रों में भी थोड़ा अंतर आ गया है । मिथिला में चनवा चनैनी है । महुवा - मनवार है । मिथिला में प्राप्त लोरिकायन में हरवा - बरवा - का कुछ अधिक महत्व था है ।

शाहाबाद प्रदेश में प्राप्त "लोरिक" की कथा में परिवर्तन है । उसमें लोरिक का अन्त इन्द्र शाप से - वह पत्थर बन जाता है । काशी के पास मणिकर्णिका घाटपर वह पत्थर आज भी देखा जाता है, ऐसा लोगों का विश्वास है ।

छत्तीस गढ़ी रूप में लोरिक अन्त में घर छोड़कर सदा केलिए चला जाता है, फिर उसे किसी ने नहीं देखा था । कथा के बीच एक प्रसंग में उसे साँप काट डाल देता है, लेकिन महा देवी की कृपा ने उसे जीवित किया ।

भिन्न बोलियों में लोरिक की कथा भिन्न प्रांतीय शैली में गायी है, आंचलिक भाव भंगिमा के साथ लोक कवि ने तहाँ तहाँ घटनाओं में परिवर्तन भी किया है । लेकिन मुख्य कथा शरीर में अन्तर कम पाया है ।

इस गाथा के भिन्न रूपों के अध्ययन से यह मालूम पड़ता है कि लोरिकायन का प्रथम रूप भोजपुरी में प्राप्त लोरिकी है । कथा में साम्य-वैषम्य के होते हुए भी अन्य गीत कारों ने इस रूप के आधार पर अपनी अपनी भाषा एवं रुचि के अनुसार गाया होगा । इस कारण कथा गति में परिवर्तन आना स्वाभाविक मात्र है । समान रूप से भिन्न गायक यह स्वीकार करते हैं है कि लोरिक उस समय के सब से बड़े वीर था, और उसने अनेकों युद्ध किया । लोरिक और मंजरी के विवाह, के संबन्ध में भी थोड़ा भी परिवर्तन कहीं भी प्राप्त नहीं है । अन्य युद्धों की बात में भी किसी का मत भेद नहीं । लोरिक के जीवन के अन्त के बारे में जो मतभेद है उस पर किसी ने भी अन्तिम बात नहीं बताया है ।

लोरिकी की ऐतिहासिकता

लोरिकी की ऐतिहासिकता अभी तक निश्चित रूप में स्वीकृत नहीं हुई है । पहले ही कहा जा चुका है कि यह अहीरों के बीच प्रचलित एक लोक-गाथा है । अहीर जाति की ऐतिहासिकता का कोई अस्तित्व अभी नहीं है । उनके जीवन का कोई तथ्य अभी तक नहीं निकाला गया है । अहीर आभीर एवं गुर्जरों की औलाद माना जाता है । पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार ये दोनों जातियां बाहर से यहाँ आई हैं । लेकिन, भारतीय विद्वानों ने इन्हें भारतीय - प्राचीन जातियों में स्थान दिया है । अहीर लोग समस्त भारत में पाये जाते हैं । आठवीं शताब्दी से अहीरों का राज्य नेपाल,

और देवगढ़ में प्राप्त था[1]। कीनान के पास भी अहीरों का माना जाता है। आजकल अहीरों की गिनती शूद्रों में की जाती है। नंदवंशी, यदुवंशी, ग्वाल वंशी, इस प्रकार प्राचीन काल से अहीरों का विभाजन था। वर्तमान काल में भी अहीर उन वंशों से अपना संबन्ध मानते हैं। ये लोग व्यायाम में अग्रणी थे। कुश्ती लड़ने और सैनिक कार्यों में भी ये कुशल रहे।

लोरिक का संबन्ध उन राजवंशी अहीर क्षत्रियों से माना जाता है। आयोधन विद्या में वह समर्थ था। गाथा में लोरिक से संबन्ध रखने वाली कई ऐतिहासिक बातें आती हैं। एक इस प्रकार है -

"सोन" नदी के किनारे लहरों से कटा-कटा एक पत्थर जो कि हाथी की कटी सूंड के समान है। वहाँ एक बहुत बड़ा पत्थर का टुकड़ा भी पड़ा है, जिस में एक पतली दरार है। इन्हीं पत्थरों के आधार पर लोरिक की कथा का ज्ञान हो गया है, जो कि हमें उस युग में ले जाता है जब कि आर्यों एवं अनार्यों में सोन नदी के किनारे विस्तृत भूमि भाग के लिए युद्ध हुआ करता था[2]।

लोक-गाथाओं का विकास क्रम बहुत ही अस्पष्ट होता है। कोई भी साधारण या असाधारण घटना तत्काल या कालान्तर में एक कथा के रूप में फैल जाती है[3] और तदनन्तर काल क्रम के साथ वही लोकगाथा के रूप में

---

1. सर हेन्ट्री - कास्ट्स एण्ड ट्राइब्स : पृ० 353
2. कुक : 'इन्ट्रोडक्शन टु दि पापुलर रिलिजन एण्ड फोक लोर आफ इण्डिया - पृ०29।
3. वही

परिणत हो जाती है । लोरिक का जन्म "गौरा" नामक गाँव में हुआ था । वह गुजरात में है । अहीरों का मुख्य गाँव "गौरा" आज भी वहाँ है । "बोहा" मैदान" का उल्लेख जो गाथा में प्राप्त है, वह आज भी उत्तर प्रदेश के बलिया नगर में प्राप्त है । आोरी हर्दी आदि घटनाओं का उल्लेख भी वहाँ प्राप्त है । ये नाम अभी ऐसा ही प्राप्त है । इन भौगोलिक दृष्टान्तों से "लोरिकी" की ऐतिहासिकता सिद्ध होती है ।

एक अपढ और अज्ञानी जनता ने उन वीर साहसिक घटनाओं को आत्मसात कर लिया होगा । उन्हें इतिहास बनाना लक्ष्य नहीं था । जिस प्रकार अपना एक बुन्देली वीर साहसिक कथा पर और तच्चोलीच्पाट्टु एवं पुत्तूरं पाट्टु, मलाबार के वीर परानों में हुई घटनाओं पर, आधारित लोक गाथाएँ बन गयी हैं उसी प्रकार लोरिक की कथा गीत भी - बन गयी है ।

लोरिक गाथा का नायक है । सम्पूर्णतः उसके चरित्र पर गाथा चलती है । गाथा की हर वस्तुओं पर ये वीरता का अवतार सिद्ध होते हैं ।

लोरिक को लोग भगवान लाल देव का अवतार मानते हैं । बचपन से ही वह शस्त्र निपुणता दिखाता है । उस का रूप और गुण दोनों प्रशंसनात्मक था । अपने विवाह के लिए वह सात देशों और सात नदियों को भी पार करते

---

1. डॉ॰ जयकान्त मिश्र के अनुसार ये घटनाएँ छः सौ साल पहले की बतायी गयी हैं । वर्णरत्नाकर - 1314 में रचा गया था । उसमें लोरिक की कथा का उल्लेख है ।

अगोरी राज्य में पहुँचता है । वहाँ भी उसने अपने साहस और महत्व की झंडा फहराता है ।

हरदी में वह अपना राज्य स्थापित करता है । वीरोचित कई सुन्दरियों का आत्मभाव बन कर सबको मुग्ध करता है । लोरिकी - लोक - काव्य लोरिक के महान चरित्र एवं उज्ज्वल व्यक्तित्व के निदर्शन हैं ।

अन्य चरित्रों को भी लोक गाथा में लोक जीवन के अनुकूल बताये गये हैं ।

मलयालम के "वडक्कन" कथा गीत से लोरिकी कई बातों में मिलती जुलती है ।

(3) विजयमल

वीरकथात्मक लोक गाथा में विजयमल भी आता है । इसका दूसरा नाम कुँवर विजयी है । भेड़ुआ और तेली लोग इस गाथा को अधिक प्यार करते हैं । लोक-गाथा में कहीं विजयमल को तेली बताया गया है । परम्परा से यह विश्वास पाया जाता है । वर्ण व्यवस्था के अनुसार तेली लोग शूद्र हैं । कुछ लोग विजयमल को - मलक्षत्रियों में स्थान देते हैं । जिन्हें अधिक नीच कुल का मानते हैं । उत्तर प्रदेश और बिहार में अधिकांश मल क्षत्रिय पाये जाते हैं ।

इस लोक गाथा में कुमार विजयमल का चरित्र प्रधानतया गाया गया है। लोरिक के समान विजयमल भी देवी की कृपा से युक्त एक वीर पुरुष है। इस लोक काव्य में प्रधानतया दो कार्यों का वर्णन है - एक, विजय मल के पिता के कष्ट का प्रतिकार, दूसरा विजयमल का विवाह। मलयालम लोकगाथा पेरुम्पुर आदि की लोक-गाथा से इस का निकट संबन्ध दिखाई देता है।

इस लोक-गाथा में भी विवाह युद्ध का कारण बन जाता है। कथा गति में विवाह गौण हो जाता है, और युद्ध प्रधान होता है। कुमार विजयमल इस लोक गाथा में लोक रक्षक के रूप में चित्रित हुआ है, अत्याचारियों को नष्ट करना, एवं लोक रक्षक के महत्व को खड़ा करना उसका ध्येय है।

लोक गाथा की कथा सूचना

रोहतास गढ के राजा धुरमल का बेटा था विजयमल धीरामल उसका भाई था। बावन देश का सूबेदार बड़ा अत्याचारी था। उसकी पुत्री थी तिलकी। विजयमल का तिलकी से ब्याह करने का तिलक चढाया गया। विवाह के समय सूबेदार के बेटा मानिक चन्द ने विजयमल को छोड़कर बाकी सब बरातियों को बन्दी बना दिया। उन्हें बावन गढ के किले में छोड़ कर विजयमल को आग में फेंक कर मार देने का भी निश्चय था।

---

1. मल शब्द - उस समय - एक विशिष्ट जाति के नाम में भी उपयोग करता था, जो क्षत्रियों में था।

विजयमल देवी का अनन्य भक्त था। देवी माता ने विजयमल को वहाँ के हिरन बछड़े का पता दिया। वह एक रहस्य मय घोड़ा था, जिसकी सहायता से, इच्छित कार्य की स्फूर्ति हो जाती थी। वह घोड़ा हमेशा भलाई का पक्ष लेता था और हितानुसार कहीं भी उड़ सकता था। विजयमल ने हिरन बछड़े को अपना लिया। उस पर उड़कर किले से बाहर आया।

विजयमल सीधे रोहदास गढ़ चला गया। वहाँ सोनावती से मिला। कुँवर विजयमल कोमल युवक था। वह युद्ध विद्या और कायकल्प में भी अद्वितीय था। सोनवती और हिरन बछड़े की सहायता से वह बावनगढ़ का रहस्य सब जान ले सका। अपने पिता भाई और साथियों को छुड़ा कर, सूबेदार से बदला लेने का उसने निश्चय किया। वह तिलकी के उद्यान में पहुँच गया। उस के आते ही सारा बाग फूलने फलने लगा। तब सूबेदार को निशाना मिला कि अपना दुश्मन आया है। उसने कलम वालों और पहरेदारों को जाग्रत किया। विजयमल ने देवी माता का स्मरण किया। देवी ने उसे दर्शन देकर आशीर्वाद दिया। तब उसने हिरन बछड़े पर उड़कर वार किया। समस्त दुश्मन धराशायी हो गये। तब उसने किले में प्रवेश किया। तिलकी ~~ने~~ की सहायता से उसने जेल का द्वार खोला। उस के पिता और भाई प्रसन्न हुए। उन्हें मुक्त करके विजयमल ने कुँवर महल की ओर मुड़ा तो माणिक चन्द ने वहीं उसकी हत्या की। हिरन बछड़े ने उसके शव शरीर को अपने ऊपर लाद कर बाहर निकला और देवी माता के मन्दिर में लाकर उसने लिटा दिया। तब देवी ने उसे जीवित किया। सोने से जागने के समान ~~जब~~ वह आँखें पोंछ कर उठ खड़ा हो गया। घोड़े पर ~~अब~~ चढ़ कर वह फिर से बावन गढ़ पहुँचा। अकेले सैनिकों के बीच कूद पड़ा। सूबेदार और माणिक चन्द को मार डाला। फिर तिलकी को साथ लेकर पालकी में बैठ कर रोहदास गढ़ पहुँचा। सोनमती की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा।

गाथा के अन्य रूपों का दिग्दर्शन

इस गाथा के अन्य रूपों का एकत्रीकरण भी हुआ है। ग्रियेरसन ने जो संपादन किया उस का पुनरुक्ति विशेष भागों को छोड दिया गया है। नहीं तो यह गाथा और भी बृहत हो जाएगी। कथानक और व्यक्तियों के नामों में बडा अन्तर प्राप्त नहीं। ग्रियेरसन के एकत्रित रूप में "जिरहनकिमा" का प्रयोग देखा जाता है जो बावन गढ केलिए प्रयुक्त नामा जा सकता है। गायकों के गाने के रूप से इस प्रकाशित रूप अधिक बडा है। उसमें भजन, झूमर, सोहर आदि अन्य विधा के गीत भी प्राप्त है।

पुस्तक विक्रेता के पास विजयमल का जो रूप पाया जाता है, उसमें कथा, विजयमल के पितामह के काल से शुरू होता है। प्रकाशित रूप में विजयमल की अगली पीढी पुत्रों, पोतों की कथा भी प्राप्त है। शोभा नय का बनजारा इसी कुल में आता है।

विजयमल लोक गाथा की ऐतिहासिकता

अन्य कुछ लोक गाथाओं के समान विजयमल लोकगाथा की भी ऐतिहासिकता सान्दिग्ध है। इतिहास में कहीं भी विजयमल का उल्लेख प्राप्त नहीं है। आल्हा की गाथा के पात्रों के चरित्र से इस गाथा के पात्रों का चरित्र भी मिलता जुलता मालूम पडता है[1]।

---

1. ग्रियेरसन ने अपने एकत्रित गाथा की भूमिका में ऐसा लिखा है - "मैं इस लोक गाथा के चरित्रों को प्रकाश में लाने को बडी कठिनाई का अनुभव करता हूँ" - ग्रियेरसन

कथानक भी थोड़े अंशों में समान है । लोक गाथाओं की यह साजात्यता हर युग में हर देश में पाया जाता है । लोक काव्य ही क्यों ? महाकाव्यों में भी एक हद तक यह गुण या दोष देखा जाता है । लेकिन रीतिरिवाज में यह गाथा मौलिक बताया जा सकता है । बावन बुर्जा, बेदुला घोड़ा आदि का वर्णन आल्हा में भी प्राप्त है । इसमें बावन गढ़ एवं बिछड़न बछड़ा है ।

लोक गाथा को लिपिबद्ध करते समय प्रायः यह कठिनाई आ जाता है कि स्मरण से गानेवाले गायक एक लोक गाथा का वर्णन दूसरे के प्रसंग में जोड़ा जाता है । यह जान बूझकर नहीं कि समानता के कारण होता है । इस कारण विजयमल एवं आल्हा की लोक गाथाओं में समान नामों घटनाओं का समावेश देखा जाता है ।

इस के बारे में यह भी कहा जा सकता है कि विजयमल नामक किसी वीर के चरित्र को लेकर आल्हा की देखा देखी किसी ने किसी लोक-काव्य बनाया होगा ।

सोन नदी के किनारे "रोहतासगढ़" नामक एक स्थल पाया जाता है । यह रोहतास गढ़ का ही नाम हो सकता है । इस के अलावा भौगोलिक या ऐतिहासिक बातों का उल्लेख इस गाथा में प्राप्त नहीं है । मल-क्षत्रियों के शासन का उल्लेख और कहीं भी प्राप्त नहीं है । सरयू नदी के किनारे गोरखपुरी में "मल्ल" जाती के लोग आज भी रहते हैं । उनका अपना गाँव "कंकराडीह" भी कहा जाता है । ये लोग भद्राकाली की पूजा के साथ साथ "डीह" की भी पूजा करते है । इन दोनों देवियों की पूजा असाधारण सा लगता है ।

---

1. डा॰ ओपर्ट, कुक, आदि भारतस्थवेत्ताओं ने मल्ल, मल, मल्लपुया आदि जाति विभागों के संबन्ध में ऐसा बताया है कि ये लोग - मला [पहाड़] से संबन्ध रखनेवाले और व्यायामी [कुश्ती लड़नेवाले] हैं । मला से मालवा, मलाबार आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है ।

सोलह बौद्ध जनपदों में, मल्ल जन पद का नाम आता है। जैन कल्पसूत्रों में "नौ" मल्लों के नाम आते है। बौद्ध ग्रन्थों में तीन मल्लों के नाम भी आते है। भगवान भी बुद्ध देव का देहान्त "कुशीनारा" [कुशी नगर] में हुआ था। उनका भौतिक शरीर वहां के मल्ला सँस्थागार में रखा गया। वहां मल्लों को प्राचीन क्षत्रिय बताया गया है। ये मल्ल लोक रक्षक विभाग के माने जाते हैं।

इन बातों के आधार पर विजय मल को इतिहास सम्मत स्वीकार किया जा सकता है। उसका चरित्र भी उसके अनुकूल है।

हिन्दी की मुख्य लोक गाथाओं का चरित्र वीरचरित ही है। वीरत्व की प्रवृत्ति एक समान कभी नहीं होती। अद्भुत कार्य, वह चाहे किस तरह का भी हो, करने की क्षमता रखने वाले वीर चरित्र वान ही है।

प्रस्तुत लोकगाथा का मुख्य पात्र विजयमल, इन सारे गुणों का आवास स्थान है। उसका भाव लोक रक्षक का है। विजयमल हमेशा देवी कृपा का पात्र बन जाता है। उसकी वीरता का पिछला बछडा अनुकूल रहता भी है। वास्तव में वह गुरुस्थान में रहा करता है। किसी भी युद्ध भूमि में, भाग जाने से विरत रहना, राजपूत वीरों की विशेषताओं में एक है। वीर विजयमल का यह गुण सर्वोच्च पद पर उसे बिठा देता है। अनेक कठिनाइयों के पश्चात मात्र उसे सफलता मिलती है। तो भी उसका अन्त मंगलमय है।

(4) बाबू कुँवरसिंह

बाबू कुँवरसिंह की लोक-गाथा हिन्दी की अन्य लोक-गाथाओं से अधिक अर्वाचीन है। निजी रूप में यह भोजपुरी लोक गाथा है। वीरगाथाओं में इसका स्थान प्रथम है।

बिहार के शाहाबाद जिले के अन्तर्गत "भोजपुर" नामक गाँव बसा है। कुँवरसिंह इसी गाँव का था। यह उज्जैन राज परंपरा का है। उज्जैन वंशी राजपूतों में बाबू कुँवरसिंह नये युग की देन थी। उनका मान सम्मान देश राजा से अधिक था। वे बचपन से ही बड़े लोक प्रिय थे।

भारतीय विद्रोह की भूमिका

जिस महान स्वतंत्रता - लड़ाई को सिपाही आन्दोलन कहकर पाश्चात्य इतिहासकारों ने घोर अन्याय किया था, वही 1857 का भारतीय विद्रोह था। बाबू कुँवरसिंह ने उस विद्रोह का मशाल अपने हाथ में ले लिया था। हमारी लोक-गाथाओं में इतिहास से इतना सीधा संबन्ध रखने वाली लोक गाथाएं दूसरी नहीं हैं।

विद्रोह के कारण॰

जैसे हमने इतिहासों में पढा, उसी प्रकार विद्रोह के चार प्रमुख कारण थे। मातृभूमि की स्वतंत्रता देशी लोगों को जान से भी प्यारी थी। देशी लोगों की अंग्रेज - विरुद्ध भावना एवं घृणा विद्रोह का प्रथम कारण था। भारत वासियों को अंग्रेजों के प्रति यदि यह संदेह न हुआ होता कि

वे लोग भारत में हुकुम जमाने आये हैं नहीं तो 1857 का विद्रोह हुआ न होता था। उनकी अदूरदर्शिता एवं जल्दबाजी की नीति के कारण झट से विद्रोह कायम हो गया था। जिनता भी अहिंसावादी होते हुए भी, लोगों को अंग्रेज़ों के विरुद्ध शस्त्र उठाना ही पड़ा। साधारण लोग उस समय में भी, गुलामी एवं स्वतंत्रता का भेदाभाव करना नहीं चाहते थे। वास्तव में अपनी व्यक्तिगत साधना में सब मस्त थे। छोटे छोटे रियासतों में बांट जाते हुए राजा लोग अपनी स्थिति संभालने में लगे हुए थे। मुगलों के शासन काल के बाद केन्द्रीय शासन का धागा टूट गया था। इस समय में अंग्रेज़ों ने आपसी फूट के कारण इस्त रियासतों में शासन जमाना चाहा। लार्ड डलहौसी की शासन-नीति जो कपटता भरी थी, सोये हुओं को अकस्मात जगाने वाली थी। सोये हुए जागे, जागे हुए आगे बढे। सारा मार्ग विद्रोह की ओर जा मिले। डलहौसी की राज्यापहार नीति, अंग्रेज़ी भाषा तथा सभ्यता का विस्तार, देशी सिपाहियों को विदेश भेजने का निश्चय नयी बन्दूकों के उपयोग का चौथा कारण जिस से मुख कार्य बनकर सुसज्जित विद्रोही दल में चिनगारी का काम किया। धर्म के कट्टर हिन्दू और मुसलमान दोनों सिपाही गुटों में ही पहले पहल विद्रोह फूट गया जिसको देशी राजा, अमीर और आम जनता ने भी अपने हाथ में ले लिया। विद्रोह ने हर कहीं तूल पकड़ा। यद्यपि अंग्रेज़ों ने इस विद्रोह को "सिपाही" विद्रोह नाम दिया तो भी, आखिर उन्हें भी मालूम हुआ कि यह केवल सिपाहियों का मात्र विद्रोह नहीं था, बल्कि राजा रईसों और आम जनता का भी भाग-भागी आजादी की लड़ाई थी। अंग्रेज़ों की अहितकारी नीति इस का मुख्य कारण था। जनता ने यह समझ ली थी, सारी दुरव्यवस्था की जड अंग्रेज़ ही है और बिना उसे यहां से खदेडे, किसी का भी कल्याण नहीं। बाबू कुंवरसिंह, रानी लक्ष्मी बाई, सम्राट बहादुरशाह, आदि इस कार्य के नेता बन गये।[1]

---

1. पण्डित ईश्वरदत्त शर्मा : "सिपाही विद्रोह"

हम ने पहले ही समझ लिया था, बाबू कुंवरसिंह गाथा भारत की स्वतंत्रता लड़ाई की पृष्ठ भूमि पर आधारित है । 1857 के विद्रोह में बाबू कुंवरसिंह की वीरता ने क्या खेल खेला, वही गाथा का मुख्य विषय है । बाबू कुंवर सिंह ने पहले इस घटना से संबन्ध स्थापित नहीं किया था । घटना क्रम के चक्कर में पड़कर उन्हें झंडा उठाना ही पडा था । उस समय बाबूजी उस्सी साल के थे । वास्तव में वे विद्रोही दलों में नहीं भी थे । पाटने के कमीशनर ने उनके ऊपर विद्रोह का आरोप किया था । इस कारण बाबू कुंवरसिंह को बाध्य होकर विद्रोह का नेतृत्व अपने ऊपर लेना ही पडा था । जीवन का ध्येय अब निश्चित हो गया और उस वृद्ध वीर ने अंग्रेज़ी राज्य के नींव को एक बार नींव से हिला दिया ।

सारे भारत में अंग्रेज़ी शासन को नींव से उखाड़ फेंकने का गुप्त प्रयत्न प्रारंभ हो रहा था । लाहोर और पटना में विद्रोही अंग्रेज़ों के विरुद्ध हो हल्ला, मचाने लगे । पाटने के कमीशनर, टेलर ने प्रतिष्ठित नेताओं को गृहबन्दी बनाया । अब स्पष्ट रूप से विद्रोह की ज्वाला भभक उठी । डॉ॰ लायल की हत्या का अभियोग लगाकर लखनऊ का पीर अली, पकडे गये । उन्हें फासी लगाया गया । तब दानापूर के सिपाही भी, स्वतंत्रता की घोषणा करने लगे । उन्होंने भी गोरे सिपाहियों से युद्ध प्रारंभ किया । कई लोग गिरफ्तार किये गये । पटना के परेड मैदान में उन्हें फासी चढाने की आज्ञा दी गयी । आरा में समाचार पहुँचा ।

राजा कुंवरसिंह को लोग अपना त्राता मानते थे । अपनी जमीन दारी के पर्वाह किये बिना भी अंग्रेज़ों से एक हद तक मेल मिलाप का कुंवर सिंह ने प्रयत्न किया । लेकिन अंग्रेज़ों का यही एक मात्र उद्देश्य था कि बाबू कुंवर सिंह के राज्य को भी, अपना कर देना । उस केलिए उन्होंने, थोडा चाल भी चली

कुँवरसिंह से तब रहा न गया । किसी न किसी प्रकार से अंग्रेज़ी शासन को उखाड़ फेंकना उनका अपना कर्तव्य समझा । उनके विरुद्ध बाबू की भृकुटी तन गयी और वे आपसे आप क्रान्ति के अगुवा बन गये । आरा में विद्रोही दलों ने कुँवरसिंह का नेतृत्व स्वीकार किया और उन्होंने मैदान में फौजी ढंग से उनका सलाम किया । वे क्रान्ति दल का अधिनायक माने गये । बाबू कुँवरसिंह के छोटे भाई "अमरसिंह" हरिकिशन, और रणदलन प्रधान सेना नायक के पदों में अवरोध किये गये ।

पहले पहल उन्होंने, दानापुर जेल की ओर बढ़े और वहाँ के कैद खाना तोड़कर कैदियों को बाहर निकाला । कचहरी की कुछ कागजें जला दी । तब से विद्रोह का आग सब कहीं फैल गया । आरा और बीबी गंज में भीकर युद्ध हुआ । बाबू की सेना को एक साल तक बराबर युद्ध करते रहना पड़ा । आखिर उन्हें जंगल की राह लेनी पड़ी । तीन चार महीने बाद वे फिर से लौट आये । आरा नगर में कुँवरसिंह ने फिर से फिर से अपना अधिकार जमाया । लेकिन दुश्मनों से वे घिरे थे । गंगा पार करते समय उनकी गोली खाकर उस सिंह का एक हाथ नष्ट हुआ । फिर भी वे युद्ध करते रहे । आखिर अंग्रेज़ों ने उन्हें गोली मार कर मार डाला । उनके भाई भी फाँसी पर चढ़ाये गये । केरल के वीर-पष्शी, वेलुतंपी आदियों के समान वीर कुँवर सिंह ने भी अपने प्राणों की तिलांजली देकर भारत माता को अंग्रेज़ों से बचाया था । पष्शी और वेलुतंपी के नाम कोई वीरगाथा नहीं बना । कुछ गीत तो बने गये । वे गाथा नहीं हो पाये । लेकिन वीर कुँवरसिंह के नाम जो वीर गाथा भोजपुरी में प्राप्त है वह हिन्दी की वीर-गाथाओं में श्रेष्ठ माना जाता है । मलयालम में वीर इरविक्कुट्टिपिल्लै पाट्टु वीर कुँवर सिंह गाथा के समकक्ष का कहा जा सकता है ।

---

1. भारत में अंग्रेज़ी राज्य - भाग - 2
   - शाहाबाद गेज़ेटियर ।

वीर कुंवरसिंह को मार डालने के बाद क्रूर अंग्रेजों ने, उनके भाइयों को भी पकड़ कर फांसी पर चढ़ाया । उन के साथी पीर अली भी फांसी चढ़ाया गया था । इस घटना पर कई लोक गीत आज भी हिन्दी में गाया जाता है । वीर कुंवर सिंह का भाई अमर सिंह कहीं भाग गया ।

वीरगाथा में, प्रत्येक घटना का वर्णन प्रत्येक खंडों में किया है । वीर कुंवर सिंह का और उनका बचपन से ही प्राप्त वीर स्वभाव, भारतीय विद्रोह की भूमि का, पीर अली की फांसी, दानापुर के सिपाहियों का विद्रोह बाबूसाहब का नेतृत्व में आना, आरा का घेरा, अंगरेजा, [आम-बाग] का संग्राम, बीबी गंज का संग्राम, मिल-मैन की पराजय, कप्तान डैन की पराजय, इंगलेस की पराजय, बाबू कुंवरसिंह का गोली से घायल होना, जगदीशपुर पर लौट आना, कुंवर सिंह की मृत्यु, अमर सिंह का पलायन, आदि सारी घटनाएं इतिहास सम्मत मात्र है । स्थान नामों में भी अन्तर लक्षित नहीं होता । कहीं दिनांक की कमी है तो वह एक मात्र कमी, इस गाथा की ऐतिहासिक महत्व की कमी में बताया जा सकता है । इस लोक गाथा में अमरसिंह की वीरता को भी, यथेष्ट महत्व दिया गया है । अमर सिंह का, राजा डुमराव से युद्ध करने का वर्णन, अत्युज्ज्वल बता सकता है । मोम्मदी के संग्राम में हार कर अमर सिंह कैमूर की पहाड़ियों में अंतर्धान हो जाता है । उसका वास्तविक वर्णन, एक रक्ताभ संध्या के समान प्राप्त है । लोक-गाथाकार ने इस वीर गाथा को अत्यधिक रंगीन और उज्ज्वल बना दिया है[1] ।

---

1. बाबू कुंवर सिंह - दुर्गानाथ पुस्तकालय "ह वाडा"

कुंवर सिंह का अन्त्य

रानी लक्ष्मी बाई की रण क्षेत्र में वीर मृत्यु हुई थी । यह समाचार वीर कुंवरसिंह को परेशान बनाने योग्य बन गया । फिर भी गाजीपुर में उन्होंने ने अंग्रेज़ों वीर कुंवर सिंह को घेर लिया । वहाँ से चालाकी से बच गया था कि गंगा पार करते समय उन के हाथ को गोली लगा । उस वीर ने उसका परवाह किये बिना दाहिने हाथ को काटकर गंगा में बहा दिया । वे पुन: जगदीशपुर में पहुँच गये । ध्वस्त एवं भग्न अपने महल के ऊपर उन्होंने ने, एक बार फिर से विजय पताका फहरा दिया था । आठ महीने तक वहाँ साधारण सा वे युद्ध करते रहे । लेकिन बहुत जल्दी ही उनका स्वर्गवास हो गया था । उसके साथ साथ जगदीशपुर के गढ़ को अंग्रेज़ों ने पूर्णतया ध्वंस कर दिया ।

भारतीय पुनर्जागरण के इतिहास में बाबू कुंवरसिंह का नाम अमर है । स्वतंत्रता के संग्राम में भाग लेने से पहले बाबू साधारण जीवन बिता रहे थे । वे घुड सवार शिकार आदियों में मन लगाकर रहते थे । वे बडे लोक-प्रिय और मिलनसार आदमी थे । शरणागतों को वे कभी भी, छोडते नहीं थे । उनका चरित्र इस प्रकार उज्ज्वल था कि म्यान से अपना तलवार एक बार उठाया तो उसका फैसला किये बिना वह म्यान में फिर लौटाया नहीं जाता था । निहत्थों पर उनकी तलवार का अधिकार कभी नहीं चलाया गया था । व्यक्तिगत वीरता में भी आप का महत्व था । अस्सी साल की अवस्था में भी घोडे पर सवार होकर मैदान में हजारों शत्रुओं का सामना करना असाधारण बात है ।

इस लोक गाथा में जिन जिन स्थानों, नालों पहाड़ों नदियों आदि के नाम आये है वे सब सत्य हैं। इस गाथा में कल्पना से अधिक वास्तविकता का पता चलता है। दिल्ली, आगरा, ग्वालियोर, इंदौर, कानपुर, बिठूर, लखनौ, इलाहाबाद, बनारस, आजमगढ, गाजीपुर, बलिया, पटना, दानापुर, बक्सर, आरा, एवं जगदीशपुर ये सारे के सारे नाम, इतिहास सम्मत एवं भौगोलिक सत्य हैं। ये सारे के सारे स्थल आज भी वही नाम लिया हुआ है।

इस लोक गाथा में, गंगा, घाघरा [सरयू] दोनों नदियों का पार ने का कई बार प्रयोग है। शत्रु सेना का उन्हें पारने, और प्रतिरोध करने का भी प्रस्ताव है।

सासाराम कै पहाड़ी, कैमूर की पहाड़ी, आदि का उल्लेख भी इस गाथा में प्राप्त है। ये पहाड़ियां बिहार में पड़ती हैं। युद्ध में भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति का नाम तक इस गाथा के गायक ठीक ठीक, समझते थे।

हर दृष्टि से, इतिहास सम्मत एवं गानेवालों और सुनने वालों के मन में वीर रस को भरा देने वाली एक वीर गाथा है, बाबू कुँवर सिंह।

[5] शोभा नयका बनजारा

अभी तक हम वीर कथात्मक लोक गाथाओं पर विचार कर रहे थे, आगे प्रेम कथात्मक लोकगाथाओं पर विचार किया जाएगा । शोभा नयका का स्थान प्रेम कथा प्रधान लोक गाथाओं में है । इस लोक गाथा में तलवारों की झन झनाहट, ढाल के ढिम ढिमाहट, हाथी घोड़ों का हट-हटाहट या घायलों का हाहा कार सुन नहीं सकते । रहस्य एवं रोमांच का भी इस में स्थान नहीं है । इस लोक-गाथा में कौटुम्बिक जीवन का महत्व एवं पति-पत्नि प्रेम का मोहक रंग देख सकता है । प्रेम तत्व की महत्ता का दिग्दर्शन स्वाभाविक रूप में इस लोक-गाथा में हुआ है । प्रेम की अनिवार्य नैसर्गिकता का वर्णन भी विविध रूप में पाया जाता है । समाज के निम्न श्रेणी के लोगों में भी प्रेम सम्बन्धी कितना आदर्श, कितनी तपस्या एवं त्याग की भावना वर्तमान है - उसका स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत लोक-गाथा में प्राप्त है ।

बनजारा शब्द से मतलब वह जाति जो घूम घूम कर व्यापार करती है - वही है । बिहार और बंगाल में नायक जाति के लोगों की बस्ति आज भी प्राप्त है । उन लोगों का प्रधान काम व्यापार करना है[1] । ग्रियेरसन ने इन्हें ट्रैफिकिंग मरचैंटस" कहा है । इस लोक गाथा को तेली, नटुआ, आदि लोग अधिकांश रूप में गाते हैं । गायक लोग-विजयमल के गाने के ढंग में यह लोक गाथा भी गाते हैं । दो लोग एक साथ द्रुत गति से यह लोक गाथा गाते हैं । प्रत्येक पंक्ति के प्रारंभ में 'ऐ रामा' - और अन्त में "रेना" रहता है ।

---

1. डॉ॰ ग्रियेरसन : जेड॰डी॰एम॰जी॰ 1888 - पृ॰461

कथा संग्रह

बांसठीह के शंभु बनजारे का बेटा था शोभा नायक । तिरहुत नगर के जादुलाह की बेटी जसवंती से उसकी शादी का प्रबन्ध बचपन से ही हुआ था । जब शोभा का यौवन हो गया तो शंभु बनजा के मन में यह विचार आ गया कि पुत्र का गवना कर देना है । उन्हों ने नाई को तिरहुत भेजा, लेकिन जसवंती के पिता ने बेटी को नादान समझकर नाई को लौटा दिया । वास्तव में जसवन्ती अपने पति से मिलना चाहती थी । उसने अपना मत भाभी से प्रकट किया । लेकिन उसका फल विरुद्ध था ।

यहाँ शोभा नायक को भी जसवंती से मिलने का मोह रहा । वह एक मणिहारी का वेष बदल कर तिरहुत पहुँचा । वहाँ एक मणिहारी का दुकान खोलकर बैठ गया । जसवन्ती को अपनी सखी से उसका पता मिला । वह सखियों के साथ मणिहारी की दुकान में आयी । मणिहारी ने अपनी पत्नी के अंग लावण्य का निरीक्षण किया । वह पूर्ण यौवना थी । शोभा ने चालाकी से जसवंती की खिल्ली उड़ायी । जसवंती को अपने पति का पता चला । वह लाज के मारे पर्दा थाम कर दौड़ गयी ।

महल में पहुँचकर दमयन्ती सोचने लगी कि शोभा नायक ने जिस प्रकार मुझे छकाया है वैसे तो उन्हें भी छकवाया जाना चाहिए । नहीं तो जीवन भर में वह मजाक उड़ाये जाएगा । उसने नगर के बाहर रास्ते में पहरा बिठा दिया । जब शोभा नायक ने उस रास्ते से सामान लदाकर निकला तो दमवंती द्वारा तैनात पुलीस ने उसे रोककर बावन लाख कौड़ी की चुंगी मांगी । शोभा ने चुंगी देने से इनकार किया तो पुलीस ने उन्हें कैद कर दिया ।

दसवन्ती ने उनसे कहलाया कि यदि वह मुर्गी का मांस खाएगा तो छुटकारा मिल जाएगा । ऐसा करने से वह धर्म भ्रष्ट हो जाता था । लेकिन शोभा तो बच जाने केलिए मुर्गी का मांस खाना स्वीकार किया । मांस खाने पर वह मुक्त कर दिया गया । शोभा सीधे अपना देश जा पहुँचा । वहाँ उसने गवना की तैयारी करके तिरहुत पहुँच कर दसवंती को विदा कराया । कोहबर की रात में शोभा ने बाजार वाली घटना सुनाकर दसवंती का मज़ाक उड़ाया । दसवन्ती ने भी नहीं छोड़ा । उसने मुर्गी के मांस खाने वाली घटना सुनाई । यह सुनकर शोभा सिर पिटा गया । सारी हंस पड़ी और सारा हाल सुनाया । उसने यह सत्य भी समझाया कि मुर्गी के मांस के बहाने में बकरी का मांस भेजा था जिससे अपने पति को धर्म भ्रष्ट होने से बचा लिया है । यह सुनकर शोभा अफसोस में पड़ गया और कोहबर का रात, आनंदपूर्वक बिता दिया । शोभा का व्यापार खूब चलता रहा । वह सोलह सौ बैलों पर जीरा मिर्च लादकर व्यापार में चल गया । हज़ारों मील की दूरी पर एक जगह शोभा ने पड़ाव डाला । रात को सोते समय उसने सामने के वृक्ष से दो हंसों [जो दंपति है] का यह कहना सुना कि उस रात को जो अपनी पत्नी से सोहाग रात मनायेगा, उसका ऐसा भाग्यवान पुत्र उत्पन्न होगा, जिसके हँसने से लाल और रोने से हीरा झरे । शोभा पड़े पड़े यह सुनता ही था कि उसके मन में यह विचार आया कि वह अपनी पत्नी से कोसों मील दूरी पर है । तब जाग गया, उठ बैठा, तब उसने हंस से अपने को यह सौभाग्य देने की प्रार्थना की । हंसने उसे झटके से प्रियतमा के पास पहुँचाया । सोहाग रात मनाकर रात बीतने पर हंसने लौटा दिया । उस रात ही में दसवंती गार्भिन बन गयी । उसे गर्भ लक्षण दीख पड़ने लगा तो ननद उस पर शंका करने लगी । उसे कुल कलंकिता कहकर निकाल दिया । आखिर उसने सत्य बताया, निशाना दिखाया, फिर भी वे नहीं मान गये । दसवंती को इस कसूर पर मार डालने का निश्चय भी हुआ । जिन हत्यारों के हाथों पर उसे मारने को डाला उन से अनुनय विनय करके दसवंती बच गयी । हत्यारों ने कुत्ते को मारकर उस ननद को दिखाया । दसवंती को उन्हों ने नौलाख अशरफी पर बेच दिया

अचानक यह घटना इस प्रकार घटी थी कि शोभा नयका के बहनोई ने, जसवंती को खरीदा था। शोभा इस समय मोरंग में किसी जादू कारिन की पंजे में पड गया था। देवी माता ने उसे वहाँ से मोचित किया। वह सीधे अपने बहनोई दीप चंद के यहाँ पहुँचा। वहाँ दमवन्ती को देखकर वह रस मे मग्न हो गया। आखिर उन्हें सारा हाल, मालूम हो गया कि किवत घटनाओं पर उसे कठिन दुःख हुआ। इस समय जसवन्ती का बच्चा काका कुँहार के यहाँ पल रहा था। वहाँ से बच्चे को साथ लेकर वे सीधे घर चले। वहाँ ननद को ये सब अफसोस की बात थी। अपनी क्रूरता का उसे उचित सजा भी मिला। शोभाने फिर अपना जीवन सुख मय बिताया। प्रेमकथा एक स्त्री को, अपने पति के पाने केलिए क्या क्या कष्ट भोगना पडा था, उसका उचित वर्णन इस लोक गाथा में प्राप्त हुआहै।

हिन्दी की समस्त बोलियों में यह लोक गाथा प्राप्त होती है। यह आदर्श भोजपुरी में प्राप्त लोक गाथा है। हर बोलियों में यह गाथा बजार में प्राप्त है।

लोक गाथा को, जसवंती का सपना, भाभी और माता से गवना की याचना, शोभा नयका का मणिहारी का वेष धारण करके मोरंग जाना, हंस-हंसिनी, संवाद, दसवंती का पुत्र उत्पन्न होना, उसपर कुल कलंकिनी का आरोप, शोभा जसवंती पुनर्मिलन, ननद को दण्ड देना - इसी प्रकार खंडों में बाँट दिया गया है। इन सारी घटनाओं में कथा का महत्व अधिक बढा है। प्रत्येक खण्ड में, संयोग - वियोग - पक्षों का माहात्म्य रहा है। गायक लोक भी इन्हीं घटनाओं का वर्णन हृदयहारी धुनि में करते हैं।

ऐतिहासिकता का परख

यह गाथा इतिहास से अधिक संबन्ध रखनेवाली नहीं है। वास्तव में यह एक जाति गत गाथा बोल सकता है। अनेक वर्षों केलिए व्यापार करने को विदेश जाना बनजारी जाति का काम है। यह एक अलिखित नियम के समान देखा जाता भी है। विरहित अवस्था में जीने की आवश्यकता स्त्रियों को हमेशा पड़ती है। विरह सहना एवं कष्ट झेलना उनके जीवन का मुख्य कार्य सा रहता है। हिन्दी के लोक गीतों का अधिकांश भाग इस विषय पर विचार किया हुआ है। यह लोक-गाथा उन लोक गीतों का एक विकसित रूप है। बिहारी लोक जीवन का एक जीता जागता चित्र यह गाथा प्रस्तुत करती है। बैलों पर सामान लादकर नेपाल की तराइयों में जाकर व्यापार करनेवाले उन साधारण लोगों का यह यथा तथा वर्णन है। दुनियाँ भर में इस व्यापार का, प्रचार प्राप्त हुआ है। इस विषय पर चलने के कारण यह गाथा भोजपुरी व्यापारियों के नाम बनाया हुआ कहा सकता है।

शोभानायक का "मोरंग" जाना इस गाथा की मुख्य घटना है। मोरंग हिमालय की तराई कहा गया है। वहाँ हंस पक्षियों के रहने का स्थान, मानसरोवर आदि प्राप्त है। दो आब के उत्तर में यह भाग वही नाम से प्रसिद्ध है। इस जगह चावल का व्यापार आजभी खूब चलता है।

सिरहत, बांस डीह, बहराइच, बरछा बाजार आदि आज भी प्रसिद्ध जनपद हैं। वहाँ के वणिक जाति, आज भी इस विभाग में आते हैं। उनका चरित्र लोक गायकों के सामने आज भी गाने योग्य है।

---

1. गियेरसन - सेलेक्टेट स्पेसिमेंस ओव बिहारी लेंग्वेज। पृ०187

शोभानायक प्रस्तुत लोक-गाथा का नायक है । उनके चरित्र की विशेषता प्रथमतः वे एक व्यापारी थे, दूसरे में एक प्रेमोपासक एवं चरित्रवान व्यक्ति हैं । अपनी प्रियतमा से ही उस का प्रथम मिलन उनके प्रेम विह्वल हृदय का उदाहरण है । वह देखने में भी कोमल था कि हर कहीं स्त्रियां उसको प्रेम करने लगती है । उसकी पत्नी जसवंती भी सचरित्र वाली है । इसके जीवन का सारा क्रम परीक्षा का होता है । बारह वर्षों तक उसके पति परदेश में रहता है । उस समय का उसका जीवन दुःखपूर्ण है । शोभा उच्चादर्शों का आदमी रहते हुए भी, उसकी पत्नी, उसे उसी रास्ते में चलाने में सफल भी बनती है । उसका जीवन भी सर्वत्र त्याग और करुणा से निर्भर है ।

§6§ सोरठी

यह लोक-गाथा रोमांच जनक विभाग में आती है । पूर्वी भोजपुरी प्रदेश में यह गाथा अधिक प्रचलित है । सारे उत्तर भारत में खास कर हिन्दी भाषी प्रदेशों में इस लोक गाथा का प्रचार समान रूप से पाया जाता है । रोमांच तत्व की अधिकता इस में है ।

रोमांच तत्व

अंग्रेज़ी के "रोमांस" शब्द से ही रोमांच शब्द की उत्पत्ति मान सकते हैं । लेकिन हिन्दी में रोमांच शब्द व्यापक अर्थ को ग्रहण करता है । यहाँ अंग्रेज़ी के सुपर नाचुरल एलिमेंट का भी भाव समावेश कर गया है । रोमांस एक भाव है जो किसी अद्भुत दृश्य देखने अथवा अद्भुत कार्य करने के कारण उत्पन्न होता है । इसके दोनों पक्ष होते हैं । मनुष्य की कल्पना के परे कोई सुन्दर दृश्य अथवा अद्भुत कार्य जैसे घोड़े का उड़ना, पेड़ पक्षी

आदि का बोलना इत्यादि देखकर मन को आनंद होता है इस के विपरीत भूत, प्रेत, जादू टोना का कार्य देखकर मन में जो भय उत्पन्न होता है, ये दोनों कार्य रोमांच तत्व के अंतर्गत होता है ।

हिन्दी के लोक-काव्यों में रोमांच तत्व भारतीय जन जीवन के अनुरूप ही हुआ है । भारतीय जीवन का प्रमुख आदर्श सत्य की विजय पर अधिष्ठित है । "सोरिठा" नामक लोक गाथा में भी हमने यह बात समझ लिया है । उसके प्रत्येक पंक्तियों में यह कार्य भली भांति दर्शाया भी है । इस का यह महत्व रहा है कि असत्य भले कितना भी शक्ति शाली क्यों न हो, वह अन्त में पराभूत हो जायेगा । यह तत्व हर धार्मिक एवं आध्यात्मिकतात्व की चरम सीमा को भी प्राप्त करते हैं । यह रोमांच मंगलाचरणकारी भी है । सोरठी की लोकगाथा का आदर्श भी अन्य नहीं है ।

सोरठी का प्रकाशित रूप दूधनाथ प्रेस से निकला है । यह लोक गाथा बहुत बृहद् होने के कारण इस का संपूर्ण संकलन पहले नहीं हुआ था । डॉ॰ ग्रियेरसन ने अन्य लोक गाथाओं का संग्रह किया था, लेकिन उनके बीच सोरठी का नाम नहीं आया था । सोरठी के गायक आज भी बड़ी भक्तिभाव के साथ यह गाते हैं । विधिपूर्वक इस के गाने का समय तेरह रात है । खंजड़ी, टुंटुनी आदि बजाकर ही ये लोग यह लोक गाथा गाते हैं । दो व्यक्ति एक साथ मिलकर गाते हैं । यह गाथा भी निम्न जाति के लोगों के बीच अधिक प्रचलित है । प्रकाशित पुस्तकों में यह लोक गाथा बत्तीस खण्डों में प्राप्त है ।

सोरठी की कथा अत्यंत रोचक है । सोरठी सोरठपुर के राजा उदयभान की पुत्री थी । राज-पण्डित व्यास मुनि के निर्देशानुसार बचपन में वह गंगा नदी में बहायी गयी थी । यह लड़की जन्म से ही बहुत पवित्र और

विशिष्ट गुणों वाली थी । वह बारह जन्मों की ध्यान रखती थी । इस कारण व्यास पण्डित के मन में उसके प्रति ईर्ष्या पैदा हुआ । उसने चालाकी से राजा को प्रेरणा देकर राजकुमी का नाश करना चाहा । लेकिन सत्य का पराभाव कब होता है ? सोरठी बच गयी । वह केवा कुमहार के यहाँ सकुश पलने लगी । केवा कुम्हारिन की पत्नी बांझ थी । कुमहार को गंगा में बहता हुआ एक काठ का सन्दुक मिला था । उस सन्दूक में एक लड़की को देखकर वह बहुत प्रसन्न हुआ । कुमहारिन के भी आनंद का ठिकाना न रहा था । उन्हों ने लाड प्यार से उसका पालन पोसन किया । नवयौवन प्राप्त होते ही, सोरठी को - इन्द्र पुरी का संपर्क प्राप्त हुआ । उसके रहने का स्वर्ण महल बनवाया गया । व्यास पण्डित के कानों में भी इसका पता चला । उस को मालूम हुआ कि अपना गणित झूटा निकला । तब उस का जलन और भी बढ़ने लगा । उसने सोरठी को धर्म भ्रष्ट करने का निश्चय किया । राजा उदय भान को यह नहीं जानता था कि सोरठी अपनी बेटी है । व्यास पण्डित ने राजा उदयभान से सोरठी की शादी कराने का निश्चय किया । लेकिन पण्डित की कूट नीति को "सोरठी" ने वहाँ भी नरा-कूल किया । सिन्दूर दान के अवसर पर, सोरठी ने बतलाया कि यह शादी नहीं हुआ करेगी कि हम पिता-पुत्री है । उसने बीती सारी बातें कह सुनाई । राजा के दु:ख का कहना क्या ? उन्हों ने अपनी बेटी को गले से लगाया । व्यास पण्डित बुलाये गये । उस के नाक कान कटवा कर राज्य से निकाल दिया गया । सोरठी अपने पिता के साथ रहने लगी ।

दक्षिण शहर के राजा टोडरमल का बेटा बृजाभार गुरु गोरखनाथ के प्रसाद से उत्पन्न हुआ था । सोरठी ने पुस्तक का प्रजाभार को देखा था । उसका मन बृजा भार से शादी करने को चाहता था । लेकिन बृजा भार की शादी हेवन्ती नामक अन्य लड़की से पहले हुई थी । लेकिन सोरठी ने यह समझ लिया था कि अगर उसकी शादी हो तो वह बृजभार से ही हो सकता ।

इस अवसर में भी कृत्य किया गया व्यास पण्डित सोरठी से बदला लेने की ताक में था । वह गुजरात के राजा [illegible] के यहाँ गया । वह राजा कोढी था । पण्डित ने उस राजा को समझाया कि सोरठपुर में सोरठी नामक एक कन्या है, उस के साथ शादी करेगा तो कोढ निकल जाएगा । साथ ही व्यास पण्डित ने ऐसा भी कहा कि सोरठपुर पहुँचना अत्यंत साहसी मात्र कर सकता है कि बारह वर्ष से कम समय पर यह हो नहीं सकता । अपना भतीजा, ब्रज भार को यह कार्य सौंप दिया जाएगा तो शायद वह जाकर सोरठी को लाकर आप के अनुकूल कार्य कर सकता है ।

राजा यह सुन कर अधिक प्रसन्न हुए । उन्हों ने अपने भांजे ब्रजभार को बुलवाया । उसके आने पर सामने प्रश्न भी रखा । ब्रजभार मामा की बात कभी भी टाल नहीं सकता था। उसने मंजूर किया । जल्द योगी व वेश धारण कर लिया । वह गुरु गोरखनाथ के आशीर्वाद पाने केलिए निकला । यह बात जान कर सारा राज परिवार आकुल हो उठा । उन्होंने ब्रजभार का पैर पकड कर कहा कि योगी मत बनो । सोरठी को उसके पास लाकर देने को पांच परियाँ जो स्वर्ग से उतरी थीं, सन्नद्ध थी। उनका कहना भी उसने नहीं माना । उसने उत्तर दिया, मैं ने इस कार्य का बीडा उठाया है तुम लोगों की सहायता लेने से हमारी प्रतिज्ञा नष्ट हो जाएगी । आखिर सातों सेविकाओं की दी हुई, चीज़ें और आदेश लेकर, वह चला गया । वह दक्खिन शहर पहुँच गया । वहाँ अपनी माँ और हेवती को भी समझाकर वह सोरठपुर की ओर बढ निकला । रास्ते में ब्रजभान को कई आपत्तियों का सामना करना पडा । ठूँठी पकडी के पेड के नीचे उसे साँप ने काट मारा । लेकिन गंगा राम"के बडे"ने उसे वहाँ ही जीवित किया । रत्नपुरी की कन्या उससे प्रेमाभ्यर्थना की, तो भी उसने उसे टाल दिया । लेकिन ऐसा वादा कि था कि सोरठी को पाने के बाद उसे भी साथ ले जा सकता है । उसके बाद वह ब्रजभार पुर पहुंच गया । वहाँ की राज कन्या फूल कुंवरी उसे देख कर मोहित हो गया । लेकिन ब्रजभान ने उसके साथ शादी करना नहीं चाहा

तो भी फूल कुंवरी ने उसे जादू से अपने वश में रखा । हेवन्ती की पतिव्रता ने उसे वहाँ से भी बचा दिया । वहाँ से चलकर वह केदली वन में पहुँचा । वहाँ एक वृक्ष के नीचे एक बुढ़िया बैठी थी । बुढ़िया ने योगी कुजाभान को उस वन के अधिकारी घोर राक्षस से बचाना चाहा । लेकिन दानव ने उसे निगल लिया । लेकिन गुरु की कृपा से दानव का पेट चीर कर कुजभान बाहर निकला । उस राक्षस की दाहिनी जाँघ चीर कर देने पर एक देव कन्या बाहर आयी । उस कन्या ने भी कुजाभान से शादी की माँग की। लेकिन उसने स्वीकार नहीं किया । वहाँ से तुरुकी नगर चम्पापुर आदि शहरों से होकर कुजाभान ने अपनी यात्रा जारी रखी । वहाँ की सुन्दरियों ने भी, उनके साथ शादी करने की अभ्यर्थना की । सातों सावित्रियों की सहायता से वहाँ भी वह बच गया । आखिर हेवली केवली, बहिनों ने उसे पकड़कर मार डाला । लेकिन रेखवा मछली ने उसके प्राणों को मणि संभाल कर पाताल गयी । कुजाभान की मृत्यु के समय हेवन्ती के आँगन की तुलसी सूख गयी । यह निशाना पाकर वह निकली । पाताल लोक में उसने रेखवा मछली का पता ढूँढ लिया । लेकिन उसे मार कर एक साधु ने कुजाभान के जीवन की मणी अपने पास रखी थी । साधु को हेवन्ती पर दया आयी । उसने मणि वापस दी । सातों सावित्रियों की सहायता से कुजाभान फिर से जीवित हो गया ।

वहाँ से सोरठपुर पहुँच गया । सोरठी, उसकी प्रतीक्षा में थी । आधी रात में उनका मिलन हुआ । इन्द्रपुरी से सब विमान भी आया था । सोरठी और कुजभान उस विमान पर आसीन हुए । सोरठी की प्रार्थना पर, रास्ते में, कुजभान से मोहित सारी कन्याओं को उस विमान में बिठा दिया । उन सारी कन्याओं को साथ लेकर आखिर बारह वर्ष के अंतिम दिन वह गुजरात में मामा हेंगन मल के पास आ गया । सोरठी को देखते ही राजा हेंगनमल का कोढ़ अच्छा हो गया । अब उस में सुबुद्धि आ गयी थी ।

उन्होंने बृजभान से कहा कि मेरा तो चौथापन आ गया है, मैं अब सन्यास लूँगा। अतएव तुम्हीं, सोरठी से विवाह कर लो। राज्य का राजा भी हो जाओ। यह सुनकर सब प्रसन्न हुए। सोरठी और अन्य कन्याओं को लेकर बृजभान दखिनी शहर पहुँचा। माता सुनयना और हेवन्ती की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा।

लेकिन गुरु गोरखनाथ का दर्शन हुआ। चम्पापुर के राजा की पुत्री मालती को जीत लेने का उन्होंने अनुरोध किया। धवल गिरी की "सुगवा" "सुगरी" को भी ले आने को कहा। जब उन्हें भी जीत लेकर आया तो हेवन्ती स्वर्ग चली गयी थी। लेकिन गुरु कृपा से वह स्वर्ग में भी पहुँच गया। सारी कन्याओं के साथ शादी करके सुखमय जीवन बिताने लगा। आखिर माया मोह से बच कर सब स्वर्ग सिधारे।

इस लोक-गाथा को प्रत्येक बोलियों में प्रत्येक नाम है। लेकिन कथा में अंतर नहीं प्राप्त होता है। मगही और मैथिली में प्रकाशित रूप प्राप्त कर सकते हैं। भोजपुरी रूप भी अधिक महत्व का है। मौखिक रूप हर प्रांतीय भाषा में आज भी प्राप्त है। उनमें थोड़ा थोड़ा अंतर भी पाया जाता है। मैथिली में इस गाथा को कुँवर ब्रजभान नाम है। कहीं सुरठी, सोठी, आदि नाम भी पाया जाता है। कई लोक-कथाओं को भिन्न कालों की क्रिया कलापों से मिलाकर यह गाथा बनायी गयी है। भिन्न युगों में प्रचलित कई कथानकों का समावेश इस गाथा में पायाज ाता हैं।

ऐतिहासिकता

इस लोक-गाथा के बारे में कोई भी ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त नहीं है वास्तव में यह गाथा भी अपनी संदिग्ध ऐतिहासिकता लिए हुए हैं।

मौखिक परंपरा में प्राप्त काव्यों की कथा स्थान नायक नायिका आदियों पर ऐतिहासिक खोज अनावश्यक बता सकता है । समय का निर्णय भी ऐसी लोक-काव्यों की ओर अत्यंत आवश्यक नहीं । लेकिन हमारे पास कुछ संभावनों का स्थान है । इन संभावनाओं के आधार पर जो ऐतिहासिक पता मिलता है, वह ऐसा है कि -

§1§ गायकों का विश्वास

गायकों के विश्वास के आधार पर सोरठी स्वर्ग से आयी थी । यहाँ अपनी जीवन लीला समाप्त कर के वह चली गयी ।

§2§ गुरु गोरखनाथ का उदाहरण

अन्य देवी देवताओं के नाम को छोड़कर गुरु गोरखनाथ का नाम बार बार इस गीत में आता है । नाथ पंथियों ने भी इस गाथा को अपनाया होगा । अपनी इच्छा के अनुसार उन्हों ने भी इस गाथा को धर्म प्रचार के उद्देश्य से मोड़ लिया होगा ।

गोरखनाथ का आविर्भाव तेरहवीं शताब्दी में हुआ था । उस जमाने को नाथ पंथी जमाना भी बताया गया है । लेकिन नाथपंथियों के बीच स्त्री को कहीं स्थान नहीं दिया गया था । यहाँ बृजाभान को गुरु ने स्वयंवर को भी भेज दिया है ।

सारी दृष्टि से प्राचीन काल से प्रचलित गाथा में गायकों ने इस काल को भी जोड दिया मालूम पड़ता है । नाथ संप्रदाय के इतिहास में कहीं भी कृजाभान का नहीं आता है - ऐसा विष्णुदे ने कहा है[1] । केवल लोक में प्रचलित कथा पर यह गाथा बनायी है । जायसी के पद्मावत के कुछ अंशों से भी यह गाथा मिलती जुलती है । कृजाभान का चरित्र राजा रत्न सेन के चरित्र से मिलती जुलती है ।

[4] बौद्ध जातक कथाओं का उल्लेख भी इस गाथा में प्राप्त है । जातक कथाओं में केकड़ा [जलचर विशेष] बोधिसत्व का रूप है । केकड़ा सदा आर्य पथानु गामी की सहायता करता है । इस गाथा में गंगाराम केकड़ा कृजाभान को मृत्यु से बचाता है । इस लोक-काव्य को रोचक बनाने के उद्देश्य से गायकों ने इस कथा को भी जोड दिया होगा ।

[5] स्थानों का नाम

सोरठपुर, गुजरात, दक्षिणी शहर आदि इस गाथा में आता है । सोराष्ट्र प्रदेश को सोरठ नाम अभी भी पाया जाता है ।

यह लोक गाथा भी, अहीरों और गुर्जरों के बीच प्रचलित है । इस कारण से यह अनुमान कर सकता है कि सोरठी की गाथा की उत्पत्ति सोराष्ट्र से संबन्ध रखती है।

गंगा नदी का परामर्श प्राय: सभी, उत्तरी गाथाओं में प्राप्त है । इस कारण से गंगा तट में उत्पन्न कहा नहीं सकता है ।

---

1. नाथ पंथी संप्रदाय : विष्णु दे - पृ० ।।

सोरठी, वृजभान दोनों का चरित्र, इस गाथा में मुख्य है । व्यास पंडित खल पात्र है । सोरठी दिव्य चरित्र और वृजाभान साहसी है । वृजा भार कर्मठ योगी एवं सोरठी, दिव्य ज्ञानी, श्रद्धा है ।

दोनों के जीवन में भौतिक सुखों की छाया तक नहीं । यह गाथा नारी प्रधान होते हुए भी योगी मार्ग का परिचायक भी है ।

§7§ बिहुला

सारे उत्तर भारत में बिहुला की लोक गाथा प्रचलित है । उत्तर प्रदेश बिहार आदि प्रान्तों में विशेष रूप से प्रचलित है । भोजपुरी और बंगाल में यह अतिश्रद्धास्पद है । बाला लखन्दर, बारह लखन्दर आदि नामों में भी यह लोक-काव्य विख्यात है ।

बिहुला एक पूज्य देवी के समान है । सोरठी और बिहुला में एक मुख्य अंतर यह है कि सोरठी का नायक वृजाभान अपनी प्रेयसी को पाने केलिए अनेक प्रयत्न करते है । परन्तु बिहुला की लोक गाथा में बिहुला सति ही मुख्य पात्र है । वह अपने पति के पुनरजीवन केलिए अनेक प्रयत्न करती है । जिस प्रकार सावित्री सत्यवान के जीवन केलिए यमराज का पीछा करता है, वैसे बिहुला भी अपने मृत पति बाला लखन्दर के जीवन केलिए सदेह इन्द्रपुरी जाती है तथा इन्द्र को प्रसन्न करके अपने पति को जीवन दान दिलाती है । सावित्री के चरित्र से साम्यता रखते हुए भी यह निश्चित है कि यह लोक गाथा उस पौराणिक कथा का रूपान्तर नहीं है । यह लोक काव्य मनसा देवी से संबन्ध रखती है । मनसा सर्पों की देवी मानी गयी है । बंगाल में मनसादेवी की पूजा विशेष रूप से होती है । मनसा की पूजा के अन्तर्गत बिहुला की लोक गाथा का भी समावेश है । डॉ॰ दिनेश चन्द्र के मतानुसार शाक्त एवं शैव मत के अंतर्द्वन्द्वों से मनसा पूजा की उत्पत्ति हुई है[1]।

1॰ हिस्टरी आव दि बंगाली लैंगुएज एण्ड लिटरेचर - डा॰दिनेशचन्द्र सेन पृ॰150

मनसादेवी की पूजा निश्चित रूप से एक मध्ययुगीन पूजा है । इसी समय से बंगाल में मनसा संप्रदाय भी प्रचलित हो गया है । वैश्य एवं निम्न वर्ग के लोग इस संप्रदाय में शामिल हैं । प्रत्येक वर्ष श्रावण में बंगाल में मनसा पूजा होती है । उस दिन हज़ारों की संख्या में लोग नदी के किनारे जाकर बिहुला गीत गाते हैं । नावों की दौड और भिन्न भिन्न पकवानों का बनाना इसका अंग है । बिहार के पूर्वी भागों में नाग पंचमी के दिन बिहुला गाया जाता है । उस [illegible] दिन वहाँ के लोग केले के पत्ते में दीपदान बनाकर नदी में भेजा करते हैं ।

बिहुला का प्रादुर्भाव बंगाल में हुआ था । इस गाथा के निर्माण में कई लोक-कवियों का हाथ है । हिन्दी की विविध बोलियों में प्राप्त बिहुला गीत वास्तव में बंगाली बिहुला गाथा का अनुकरण मात्र है । यह गाथा द्रुत गति में दो लोगों के मिलकर गाना साधारण है । वाद्य यंत्रों में ढोलकी और टुन टुनी का उपयोग भी होता है । सोरठी के समान इस गाथा को भी बडी पवित्र भाव से गाते हैं । गायकों का यह विश्वास रहता है कि बिहुला की गाथा सुनने केलिए सर्प भी आते हैं । इस लोक गाथा में करुण स्वर प्रधान रहता है । इस कारण इस गाथा के गाते समय करुणामय वातावरण उत्पन्न होता है ।

कथा

चन्दूशाह और विषहरी ब्राह्मण दोनों एक ही शहर के रहनेवाले थे । उन दोनों में भारी अनबनी भी थी । विषहरी सांप को अपने हाथ रख सकता था । उस कारण से उसने चन्दूशाह के सारे पुत्रों को सर्पदंश से मार डाला ।

लेकिन भगवान की कृपा से चन्द्रशाह को और एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ ।
इस पर विषहरी ब्राह्मण का मन और भी जलने लगा । उस लड़के का नाम
लखन्दर था । धीमा शाह की बेटी थी बिहुला । उसके साथ लखन्दर की
शादी तय कर दी । कई परीक्षाओं के बाद धूमधाम से उनकी शादी संपन्न हुई ।
दहेज में बिहुला ने कई चीज़ें मांगली । उनमें कुत्ते, बिल्ली, गरुड़ पक्षी,
तथा नेवला भी थी । बरात जब दिल्ली में [चन्द्रशाह का नगर] पहुँचा तो
बिहुला ने श्वशुर से यह प्रार्थना की कि उसके रहने केलिए लोहे का एक अलग
घर बनवा जायें । पण्डित से सोहाग रात की शास्त्र पूछ कर बिहुला और
बाला लखन्दर अलग घर में प्रवेश पा चुके । अलग घर में पहुँच कर बिहुला ने
पलंग के चारों पैरों पर नेवला, कुत्ता, बिल्ली और गरुड़ पक्षी को बांध
दिया । फिर श्रृंगार सज्जा के बाद वह पलंग पर बैठ गयी । अपने पति
देव के साथ चौपड़ खेलने लगी । विषहर का मन बाल लखन्दर की खून के लिए
तरसता था । उसने अपने वंश के सारे सांपों को बाला लखन्दर को मारने
केलिए अलग घर में भेजा । सारे सांप अंदर घुसने में पराजित हुए । केवल
काली नागिन नामक सांप छोटे में अन्दर घुस सकी । एक कोने में जाकर वह
छिप रही । बिहुला और लखन्दर सुख सुषुप्ति में आ गयी तो काली नागिन
धीरे धीरे पलंग के पास आयी । पलंग के चारों पैरों पर बिल्ली कुत्तों को
देख कर वह चौंक पड़ी । उसने देखा बिहुला गाढ़निद्रा में है । उस के बाल,
काली नागिन के समान पलंग के बाहर पड़ा है । उन बालों को पकड़ कर
नागिन पलंग पर चढ़ी । विषहरी की प्रतीक्षा के अनुसार काली नागिन ने
बाला लखन्दर को काट मारा ।

जब बिहुला जाग गयी तो देखा बाला लखन्दर मरा पड़ा है ।
उस का सारा जान निकल गया । वह सर पीट कर रोने लगी । इस
समय विषहर ने जाकर बाला लखन्दर के पिता को यह भी समझाया कि
तुम्हारी पतोहु डायिन है उसी ने बाला को मार डाला है ।

चन्दूशाह को विषहर की बातों पर विश्वास हुआ । उसने बिहुला को भरी सभा में मार डालने का निश्चय किया । भरी सभा में बिहुला लायी गयी । बांस के बेंत से उसे मारा लेकिन वह मर न पाई । उसको जानता था, यह सब विषहरि का काम है । लेकिन उसने किसी से कुछ नहीं कहा । उसने अपने मृत पति की लाश को रोते चिल्लाते मांगा । विषहरी ने वहां भी आपत्ती देखा । लेकिन लोगों ने, बिहुला के पास उसके पति का शव ले रखा । बिहुला ने उस लाश को मटका भर दही में लपेट दिया । फिर गंगा में बरिया बनाकर उस पर लाश रखकर चल पड़ी । वह उल्टी धार पर चल दी । विषहर ने भी उसका साथ लिया । रास्ते में उसने अनेकों विघ्न-बाधाएँ डाल दी । परन्तु सबों से वह बच गयी । चलते चलते नाथ पुर पहुंची । वहां नेथिया धोबी इन्द्र का कपड़ा धो रहा था । उस की सहायता से वह इन्द्रपुरी पहुंच गयी । वहां लाल परी ने बिहुला को पहचान लिया । बिहुला ने सारी कहानी उस से कह दी । उस की सहायता से बाला लखन्दर फिर से जीवित हुआ । बहुला अपने पति के साथ पृथ्वी पर उतर आयी । चरणामृत छिड़का कर उसने आठों जेठों को भी जीवित कराया । ऐसे सतवन्तु पतोहू पाकर चान्दूशाह बहुत प्रसन्न हुए । शाह ने तब विषहर को बुलवाया । उसे कोई इनाम मिलने की प्रतीक्षा थी । बड़ी प्रसन्नता से वह दौड़ कर आया था कि बिहुला को सम्मुख देखकर विकल हुआ । भरी भीड़ के सामने उसका नाक कान कटवा गया । वह सदा केलिए देश निकाला हो गया । यहीं गाथा समाप्त हो जाती है ।

बिहुला गाथा के कई रूप प्राप्त हैं । प्रकाशित रूपों में भोजपुरी रूप अधिक मुख्य माना जाता है । इस रूप में बारह खण्डों में गाथा समाप्त

---

1. बिहुला कथा गीत - दूधनाथ प्रेस - हवड़ा ।

होती है । लेकिन मैथिली में विषहर स्त्री है, ब्राह्मण नहीं है । भोजपुरी में विषहर ईर्ष्यालु ब्राह्मण है । मैथिली में मनसा देवी की कृपा से बाला लखन्दर जीवित होता है । भोजपुरी में देवी दुर्गा की प्रसन्नता का अधिक महत्व है । दिल्ली, चमत्कार आदि की भिन्नता भी प्राप्त है । अन्य भाषाओं में जैसे, मगही, बुन्देली, ब्रज आदि बोलियों में भी यह कथा गीत, किंचित भिन्नता के साथ गायी जाती है । मलयालम भाषा में भी यह कथा, कई लोकगाथाओं के साथ उप कथा के रूप में प्रवेश पा चुकी है । केरल में सर्प पूजा के गीतों में मनसा का भी स्मरण किया जाता है । "नागमाता" के रूप में मनसा का प्रायः स्थान दिया गया है ।

ऐतिहासिकता

बिहुला का कथा गीत, इतिहास सम्मत नहीं है । लेकिन जन श्रुतियों और ऐतिह्यों के आधार पर इतिहास से उसका संबन्ध अनिवार्य रूप में जोड़ा जा सकता है । डा॰ दिनेश चन्द्र जैसे महान इतिहासकारों के मतानुसार शक्तिपूजा आर्य परिधि के अन्तर्गत नहीं आती है । लेकिन वैदिक युग के अन्त में शाक्तिक मत का आरंभ हुआ है । बिहुला में, शक्तिपूजा और सर्पपूजा का समावेश, शाक्त शैव-मतों का समावेश बताया जा सकता है । सर्प पूजा के विषय में डॉ॰ हवाल्स का मत जो क्रीट देश में ऐतिहासिक तथ्य के रूप में, सर्पपूजा का प्रचार देख सकता है - स्वीकार करने योग्य है । आज का "नागा सैट" उस इतिहास का अवशेष सा रहा है । उनके मतानुसार ईसा के तीन हज़ार वर्ष पूर्व, सारी दुनिया में समान रूप से सर्प पूजा होती थी । इसे आर्य संस्कृति का अवशेष बताया जा नहीं सकता[1] ।

---

1. डॉ॰ हवाल्स - मेथोलजिकल सर्वे - पृ॰44

बंगला साहित्य में मंगल काव्यों की प्रमुखता है । उनमें मनसा मंगल भाग में बिहुला की लोक कथा आयी है । पाँचाली ग्रन्थों में भी, मनसा पूजा की प्रधानता पायी जाती है । हेमानंद एवं बंगाल के बरदवान जिले में चम्पक नगर है । ऐसा विश्वास लोगों में आज भी है कि चाँद सौदागर की राजधानी यही है । इसी चम्पक नगर के आस पास बिहुला नदी नामक छोटी नदी बहती है । इस लोक गाथा की नायिका के नाम से इस नदी का नाम पड़ा है । लेकिन बंगाल के टिपरा जिले में भी एक दूसरा चम्पक नगर प्राप्त है ।

बंगाल के वीरभू नामक जिले में बिहुला उत्सव आज भी मनाया जाता है । यह मेला बिहुला के समय से शुरू हुआ समझा जाता है । कालु कामार का घर यहाँ है जिसने बिहुला केलिए लोहे का घर बनाया है । लेकिन इस विषय पर दूसरा मत यह है कि बिहार के भागलपुर जिले में भी एक चम्पानगर है । यहाँ एक बहुत पुराना घर है, जिसे बिहुला का अजय घर समझा जाता है । यहाँ भी श्रावण के समय मेला एवं बिहुला पूजा होती है । इन बातों से हम यह बता सकते हैं कि बिहुला की लोक गाथा में कही गयी कथा को इतिहास से भी संबन्ध है । लेकिन इन बातों को इतिहास समझने की आवश्यकता उस समय के लोगों को नहीं थी ।

बिहुला के चरित्र के बारे में भी इस लोक गाथा के प्रसंग में थोड़ा विचार करने की आवश्यकता है । इस काव्य में बिहुला का चरित्र ही मुख्य है । बाला लखन्दर अधिक कष्टों में मूल पड़ा है । बिहुला के साहस और त्याग के कारण उसे जीवन वापस मिलता है । इस कारण बिहुला का जीवन पतिव्रत धर्म का मूर्तिमत भाव है । भारतीय नारी केलिए पति परमेश्वर है ।

लोक गाथाकार ने बिहुला की कथा से इस तत्व का समर्थन करना चाहा होगा अपने चरित्र से बिहुला समाज को यह सन्देश भी देता है कि स्त्री अपने गुणों एवं तपस्या से मृतक को भी जीवित कर सकती है । बिहुला का जीवन संघर्ष मय है । वह कठिन परीक्षाओं से बीता है । उसने एक हद तक अपनी सतीत्व की चुनौती को स्वीकार किया है । वह अपने पति के साथ जीने की तृष्णा से समस्त समाज से लड़ती है, स्वर्ग में भी सदेह चली जाती है । अंत में मनसा देवी प्रसन्न हो जाती है - बिहुला को उन देवियों के सामने उचित स्थान भी मिलता है । उसका जीवनोद्देश्य भौतिक तल पर मात्र रहा नहीं है । एक समरस, भाव भी उस के जीवन से प्राप्त होता है ।

लोक-कवियों की भावना दुनिया की हर बातों पर घूमती हुई दिखाई पड़ती है । इस लोक-काव्य में भी वही हुई है ।

§7§ राजा भरथरी

यह एक योग कथात्मक लोक-गाथा है । हिन्दी की लोक गाथाओं लोक गीतों,यानी समस्त लोक काव्यों में योग कथा का अपना महत्व रहा है । प्रसिद्ध लोक-गाथाओं में, राजा भरथरी, राजा गोपी चन्द आदि आते हैं । हाथ में सारंगी लिए हुए योगियां उत्तर भारत के नगरों गलियों में बीच बीच में दिखाई देते हैं । ये लोग, भरथरी, गोपीचन्द एवं निर्गुण के कई गीत गा गाकर भीख मांगते हैं । नाथ पंथों से संबन्ध रखने के कारण इन लोक गाथाओं को योग कथात्मक लोक गाथा नाम मिला है । गुरु गोरखनाथ एवं जालंधरनाथ के शिष्य बन गे वाले राज ऋषि हैं, राजा भरथरी एवं राजा गोपी चन्द । राज-पाट, वैभव, एवं विलास को तुच्छ समझकर भगवान बुद्ध के समान समाज की ओर सेवा निरत पद रखने वाले इन कर्म योगियों के नाम

जिस आस्था के साथ लोक-कवियों ने अपनी छाप छोड़ी है उसका निदर्शन है ये दोनों गाथाएं। जोगी लोग सारंगी पर इन्हें गाते हैं। अत्यंत करुण स्वर में इन्हें गाने पर पत्थर भी पिघल जाएगा।

समस्त उत्तरी भारत में राजा भरथरी की गाथा अत्यंत लोक-प्रिय लोक काव्य है। हर बोलियों में समान रूप से यह प्रचलित है।

नाथ संप्रदाय के परवर्ती संत परम्परा के अन्तर्गत भरथरी का नाम आता है। अपने त्याग और तपस्या के कारण ये बहुत ही महत्व पूर्ण व्यक्ति बन गये। इन का नाम नव नाथों के अंतर्गत आ गया है। लोक गाथा में राजा भरथरी के वैराग्य लेने की कथा वर्णित है। ये गुरु गोरख नाथ का शिष्य बन जाते हैं। नारी के प्रति आकर्षण रहित होना नाथ संप्रदाय के दार्शनिक पक्ष का मुख्य अंग था। अतः अपनी पत्नी रानी सामदेई को "मां" संबोधित करवाकर भरथरी की, गोरख नाथ ने परीक्षा की। इस प्रकार नाथ धर्म के व्यवहारिक पक्ष का सुन्दर चित्र इस लोक-काव्य में उपस्थित किया गया है। इस काव्य में कथा दो भागों में वर्णित है। प्रथम भाग, राजा भरथरी का वैराग्य लेना, रानी सामदेई का रोकना एवं उनकी पूर्व जन्म कथा आदि है। दूसरा भाग, राजा भरथरी का मृगया, गुरु गोरखनाथ का शिष्य बनना दोनों हैं।

राजा का शिकार, वैराग्य का कारण बन जाता है। उसका कार्य तो यह है - राजा एक कृष्ण हिरण का शिकार करता है।

---

1. भरथरी की कथा - सिरमा कमा करतार।

उस मृग की मृगियां सब अनाथ हो गयी । तब मरते मरते मृग ने राजा को यह शाप दिया कि जिस तरह मेरी सत्तर सौ मृगिणियां कलपेंगी उसी प्रकार तुम्हारी रानियां भी तुम्हारे बिना विलाप करेंगी । राजाभर थरी ने जब यह सुना तब उस के हृदय पर चोट लगी । वह विचार करने लगा कि आज यदि मृग को न जिलाया जाएगा तो सत्तर सौ मृगिणियों का कल्पना लगेगा । यह सोच कर उसने उस कृष्णमृग को घोड़े पर लाद कर गुरु गोरख नाथ के पास पहुंचाया । गोरख नाथ देखते ही बोले कि बच्चा तुम ने बड़ा पाप किया है । भरथरी ने गुरु से प्रार्थना की कि बाबा कृष्णमृग को जीवित कर दीजिए अन्यथा मैं धूनी में कूद कर स्वयं को भस्म कर दूंगा । यह सुन कर गुरु गोरख नाथ बड़ी चिंता में पड़े । आखिर उन्होंने मृग को जीवित कर दिया । काला मृग जब हरिणियों के पास पहुंचा तो हरिणियों ने कहा - एक तो पापी राजा भरथरी है, जिस ने सत्तर सौ हरिणियों को रांड कर दिया था, और एक बाबा गोरखनाथ है, जिन्हों ने सब के सौभाग्य को बचाया । इस घटना से राजा भरथरी को अपनी असमर्थता का भान हुआ । वे विरक्त हो गये । उन्होंने गोरख नाथ का शिष्य बनना चाहा । राजा भरथरी सीधे गोरख नाथ के चरणों पर पड़ा । उन्होंने यह प्रार्थना की कि अपने को शिष्य बना दें । बाबा ने उन्हें मना किया । आखिर उन्हों ने यह शर्त लगाई कि यदि तुम अपनी रानी सामदेई को मां कहकर भिक्षा मांग लाओ तो तुम्हें शिष्य बना लूंगा । भरथरी योग वस्त्र धारण कर सारंगी लेकर अपने नगर की ओर चल दिये । महल के सम्मुख पहुंच कर उन्होंने भिक्षा की पुकार लगाई । रानी सामदेई जब महल से बाहर निकली तो राजा ने कहा मां भिक्षा दो । रानी चकित हो उठी, बोली, मैं आप को जोगी बनने नहीं दूंगी । अभी तो वंश को कायम रखने केलिए एक पुत्र भी नहीं हुआ, और तीन पन में एक पन भी नहीं बीता । लेकिन राजा कब मानने वाले थे ?

इस पर रानी ने भी योगिनी बनने का निश्चय किया । परन्तु राजा ने कहा कि फिर तो योग विद्या बदनाम हो जाएगी । लोग हमें ठग कहेंगे । गुरु हमें शाप देंगे । इस के पश्चात रानी ने राज्य में ही रह कर योग करने की प्रार्थना राजा से की । आखिर रानी की परीक्षा हुई । चौपट की बाजी में रानी की हार हुई । रानी मूर्छा गयी । तब राजा गुरु वचन के अनुसार भिक्षा लेकर उनकी ओर बढे । गुरु गोरख नाथ ने उन्हें अपने शिष्यों में स्थान दिया ।

भरथरी की कथा को भी भिन्न गायकों, पण्डितों ने, भिन्न रूप से प्रस्तुत किया है । त्रिधना का करतार, डॉ॰ रामकुमार वर्मा, दुर्गाशंकर प्रसाद, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि महापण्डितों के मतानुसार भरथरी का महान चरित्र नाथपंथी सम्प्रदाय के अनुकूल मात्र है । लेकिन गाथाकारों ने, रानी सामदेई को अधिक महत्व देकर ही, कथा गाते हैं । उनका पूर्व जन्म विस्तार से गाया है । कहीं राजा भरथरी की पत्नी को पिंगला नाम है । राजा के योगी बन जाने पर वह सति बन जाति है ।

एक गाथा में ऐसा भी बताया गया है कि भरथरी अपनी प्रिय पत्नी की मृत्यु के कारण निराश में जोगी बन पडा । राजा ने अपना राज्य उज्जैन भाई विक्रमादित्य को सौंप दिया है । लेकिन उन सबों से अधिक प्रचलित रूप, ऊपर उक्त है ।

---

1. सामदेई की पूर्वजन्म पर आधारित कथा यहाँ स्मरणीय है ।

भरथरी लोकगाथा की ऐतिहासिकता

भारतीय साहित्य में, इतिहास में और जनश्रुतियों में भी जो भर्तृहरि - कवि एवं शास्त्रकार के रूप में मशहूर हैं, वे ही भरथरी लोक गाथा का नायक भी मान सकते हैं इस कार्य में मतभेद है। यह भर्तृहरि इतिहास सम्मत हैं। वे गोरख नाथ का शिष्य बताया गया है। श्रृंगार शतक, नीतिशतक तथा वैराग्य शतक उनकी रचना मानी गयी हैं। उज्जैन के शासक भर्तृहरि राजा, जिन्होंने वैराग्य में, राज्य छोड़ा वे ही इस लोक गाथा का नायक माना जाता है, ऐसा भी एक मत प्रचलित है। इस राजा ने अपने राज्य को भाई विक्रमादित्य को सौंप दिया। इतिहास में उसकी रेखा प्राप्त है। आज का उत्तर प्रदेश गोरखपुर नाम से पहले प्रसिद्ध था। उस क्षेत्र के शासक भरथरी के नाम कई गाथाएं और लोक-काव्य प्रचलित हैं। डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक-गाथा प्रसिद्ध भरथरी को श्रृंगार शतक की रचयिता भर्तृहरि से भिन्न माना है।[1] चीनी यात्री ह्वियूं सांग और इट सिंग्रों के अनुसार भर्तृहरि दसवीं शती में जीवित रहे थे। लेकिन गोरखनाथ का शिष्य भरथरी उस सदी के उत्तरार्ध में जीवित रहे थे ऐसा उल्लेख प्राप्त है। उज्जयिनी लोक कथाओं का राज्य है। विक्रमादित्य की कथाएं उस विभाग में आते हैं।

श्री॰ दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह ने भोजपुरी की व्युत्पत्ति और प्राचीनता पर विचार करते हुए बिहार के उज्जैन वंशी राजपूतों की वंशावली का उल्लेख किया है। वे लिखते हैं - 274 वीं पीढ़ी में राजा गंधर्वसेन है, जिनके ज्येष्ठ

---

1. नाथ पंथ संप्रदाय - डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी - पृ॰166

पुत्र का नाम महाराज विक्रमादित्य और छोटे का नाम भरथरी है। यही इतिहास प्रसिद्ध शकारि विक्रमादित्य कहे जाते हैं। विक्रम संवत इन्हीं का चलाया - माना जाता है। पम्मार वंश मात्र अपने को विक्रम {शकारी} का वंश कहता है। राजा भरथरी {भर्तृहरि} का गोरखपुर जिले में होना आज भी किंवदंति से हमें ज्ञात है। भरथरी गीत आज भी वहीं गाया जाता है। शायद भर्तृहरि ने राज्य विक्रमादित्य केलिए बनाया था। शायद उन्हें ही वहाँ का शासक बनाया था।

दूसरा मत यह है कि शकारि विक्रमादित्य के समय ही गोरखपुर में भरथरी ने अपना शासन जमाया था। लोक परंपरा में यही विश्वास चला आता है।

भरथरी के संबन्ध में जो तथ्य उपलब्ध है, उनके संबन्ध में किसी निश्चित निष्कर्ष परपहुंचना कठिन है।

ऊपर की गयी चर्चा के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर आ सकते हैं कि भरथरी राजा थे अवश्य। उन्होंने अपना राज्य त्याग कर योगी का जीवन स्वीकार किया। यह भी तथ्य था कि वे गोरख नाथ के शिष्य थे। वे वैराग्य पंथ का प्रवर्तक भी थे। उनका समय दसवीं से बारहवीं सदी के मध्य में माना जा सकता है।

जोगी समुदायों नाथपंथों से संबन्ध रखनेवाले हिन्दी लोक गाथाओं में राजा भरथरी का स्थान पहला है। योगी लोग गली गली पर आज भी इसे सारंगी में गाते फिरते हैं।

[8] राजा गोपीचन्द

गोपीचन्द की गाथा हिन्दी की मुख्य लोक-गाथाओं में आती है। यह नाथ सम्प्रदाय के योग मार्गीय शाखा में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। नाथपंथ के प्रमुख संतों में गोपी चन्द की माँ मैनावती का नाम आता है। वे नव नाथों में प्रसिद्ध जालन्धर नाथ की शिष्या थीं। माता मैनावती की इच्छा से ही [illegible] गोपीचन्द ने अपने यौवन काल में वैराग्य ग्रहण किया। गोपीचन्द और मैनावती के विषय में अनेक कथाएं एवं गीत प्रचलित हैं। उन में सर्व श्रेष्ठ स्थान राजा गोपी चन्द के कथागीत को दे सकता है। यह लोक-काव्य अत्यन्त जनप्रिय एवं सारे उत्तर भारत में समान रूप से प्रचलित भी है। माता की प्रेरणा से पुत्र का योगी बनना एक असाधारण एवं अतिशय कार्य है। गोपीचन्द लोक-काव्य का महत्व भी यही है।

प्राय: सभी जनपदीय बोलियों में यह कथा गीत प्रचलित है। बंगाल में उसका प्रचार अत्यंत व्यापक रूप में प्राप्त है। इस का मुख्य कारण यह बताया जा सकता है कि गोपीचन्द का संबन्ध बंगाल के "पाल" वंश से था। परन्तु गोपीचन्द के चरित को, भोजपुरी मगही एवं मैथिली भाषाओं में भी, अत्यन्त लोकप्रिय बना दिया है। पूर्वीय प्रान्तों से बढ़कर यह लोकगाथा पश्चिमी प्रदेश के पंजाब सिन्ध इत्यादि प्रान्तों में भी प्रचलित है। सिन्ध में यह गाथा "परीपटाव"[1] नाम से प्रचलित है। अन्य सभी प्रान्तों में इस गाथा का नाम गोपीचन्द ही है।

---

1. परीपटाव की कथा गोपीचन्द की कथा से मिलती जुलती है तो भी यह गोपीचन्द की कथा पर आधारित है ऐसा ठीक ठीक कहा नहीं सकता।

नाथ सम्प्रदाय की अन्य सभी रेखाओं से भिन्न है, लोक गाथा की कथा। प्रस्तुत लोक गाथा में गोपीचन्द जब जोगी रूप धारण कर लेते हैं तो उस समय माता मैनावती उसे रोकती है और कहती है, अगर तुम इस चढ़ी जवानी में योगी बनना चाहते हो तो तुम मेरा पुत्र नहीं हो। तुम मेरे दूध का पिला बेटा हो ही नहीं तुम उसका दाम दे दो। इतिहास और जनश्रुति के भी यह विरुद्ध है। संभव है कि गोपीचन्द के चरित्र को उज्ज्वल बनाने और उन्नत करने के उद्देश्य से गायकों ने लोक गाथा में जीवन के यथार्थ एवं स्वाभाविक चित्र को उपस्थित करने का प्रयत्न किया होगा। गोपीचन्द इस गाथा का नायक है। उसकी माता मैनावती, बीबी, बहिन, तथा प्रजा, भी उस घटना से सम्बन्ध रखकर वैराग्य ग्रहण करते हैं। शारीरिक नश्वरता, माया का जंजाल, तथा योग का महत्व आदि विषयों पर इस लोक गाथा में सुन्दर विवरण पासकता है। भरथरी लोक गाथा के समान इस लोक गाथा में भी करुण रस प्रधान है। गोपीचन्द एवं माता मैनावती बहिन बीरान का कथोपकथन भी इस में वर्णित है।

राजसी पीताम्बर को फाड़कर उसकी गुदड़ी बनाकर राजा गोपीचन्द ने पहन लिया। इस प्रकार योगी का रूप धारण कर चलने को तैयार हुए। इसी समय माता गुदड़ी पकड़कर खड़ी हो गयी और विलाप करने लगी और बोली तुम को अपना दूध पिलाकर बड़ा किया है, उस दूध का दाम देते जाओ तब पीछे जोगी बनना। गोपीचन्द ने कहा हे माता मैं अपना कलेजा काटकर भी तेरे सामने रख दूँ परन्तु तिस पर भी मैं तेरे दूध से उत्तीर्ण नहीं हो सकता। यह कहकर वे चलने लगे। प्रजा, दरबारी, तथा रनिवास के सभी लोग विलाप करने लगे। बनिया (ग्रामवासी) बरई ने गोपीचन्द के सम्मुख आकर कहा कि मैं ने पांच बिघा बिगहा पान की खेती

तुम्हारेलिए की है, उसका मूल्य देते जाओ । गोपी चन्द ने तुरन्त लकिया के नाम पांच गांव लिख दिया और कहा मेरी माता को पान बराबर खिलाती रहो । सब को रोता छोड़कर गोपीचन्द चल दिये ।

वे केदली वन पहुंच गये । माता वनस्पति ने उन्हें दर्शन दिया । उनकी सहायता से वे छ: महीने के दूर को छ: पहरों में पार कर अपनी बहिन की राजधानी में पहुंच गये । योगी वेश में भाई को वह पहचान न सकी । आखिर कई परीक्षाओं के बाद उसको पता चला यह अपना भाई राजा गोपीचन्द ही है। जब बहिन बीरम को यह पता चला कि वह कलेजा फूट-फूट कर रोने लगी । आखिर उससे रहा न गया । आखिर उस आघात से उसने जान छोड़ी । गोपी चन्द ने गुरु का स्मरण किया । गुरु कृपा से उसने बहिन को जिला दिया । आखिर बहिन ने भी गोपी चन्द का योगी स्वरूप मान लिया । उसने पूजा विधि से भाई को स्वीकार करने को चाहा । चार सैनिकों के साथ राजा तालाब में स्नान करने गया । तालाब में वे उतर कर डूब गये, लेकिन फिर उपर उठ न आये । जाल डलवाकर देखा । तो भी उनका कोई पता नहीं मिला । बात सुन कर रोते कलपते बहिन महल में जा बैठी । गोपी चन्द की लोक गाथा यहां समाप्त होती है ।

इस लोक गाथा के अन्य कई रूप मिलते हैं । डॉ॰ गियेरसन का संपादित गाथा रूप कुछ भिन्न प्रकार के हैं । डॉ॰ राम कुमार वर्मा का प्राप्त रूप और भी भिन्न है । लेकिन सारे रूपों में राजा गोपीचन्द का और मां का दूध का दाम प्रश्न आदि पर विचार किये गये हैं । मौखिक रूपों में और भी अन्तर पाया जाता है । इन में अन्तर कम और समानता अधिक है

एक रूप में गोपीचन्द की बहिन का नाम, बीरम है तो और एक रूप में बहिन चन्द्रावली भाई को देखने केलिए महल से निकल आती है । केदली वन में उनका मिलन हो जाता है । दोनों मिलकर मामा भरथरी से वहाँ भेंट करते हैं । फिर वे केदली वन में जोगी बन कर समस्त जीवन तप में व्यतीत करते हैं । गोपीचन्द के बारे में डॉ॰ हजारी प्रसाद जी का मत यह है - वे लिखते हैं - "गोपीचन्द बंगाल के राजा थे । भर्तृहरी की बहिन मयिनावती उनकी माता थी । गोरख नाथ ने जिस समय भर्तृहरि जी को ज्ञानोपदेश दिया उसी समय मैनावती ने भी गोरख नाथ से दीक्षा ली थी । वह बंगाल के राजा से ब्याही गयी थी । इसका एक पुत्र गोपीचन्द और एक कन्या चन्द्रावली दो संतानें थीं । चन्द्रावली का विवाह सिंहल द्वीप के राजा उग्रसेन से हुआ था । पिता की मृत्यु के बाद जब गोपीचन्द बंगाल का राजा हुआ तो उसके सुन्दर कमनीय रूप को देख कर मैनावती के मन में आया कि विषय सुख में फँसने पर इसका यह शरीर नष्ट हो जाएगा । इसीलिए उसने पुत्र को उपदेश दिया कि बेटा जो शाश्वत सुख चाहता है, तो जालंधर नाथ का शिष्य होकर योगी हो जाएगा । जालंधरनाथ संयोग वश वहाँ आये हुए थे । गोपीचन्द राजपाट छोड योगी हो कदली वन चले गये । पीछे से बहिन चन्द्रावली के अत्यन्त अनुरोध से उसे भी योगिनी बनाया"[1]।

डॉ॰ रामकुमार वर्मा लिखते हैं - "गोपीचन्द के गुरु ज्वालेन्द्रनाथ थे । माता मैनावती भी ज्वालेन्द्रनाथ से प्रभावित थीं । मैनावती आध्यात्मिक दृष्टि से अपने पुत्र गोपीचन्द को चाहती थी । ज्वालेन्द्रनाथ को कुए में गढाना और गोरख नाथ की प्रार्थनासे उनके कुए से बाहर आना - गोपीचन्द की प्रतिमा को जलाना गोपीचन्द को अमरत्व देना आखिर गोपी चन्द का जोगी बनना, आदि"[2]।

1• नाथ पंथ - डॉ॰ हज़ारी प्रसाद द्विवेदी - पृ॰269

2• हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डॉ॰रामकुमारवर्मा पृ॰272-273

गोपीचन्द गाथा की ऐतिहासिकता

राजा गोपीचन्द बंगाल के "पाल" राज वंश से संबन्धित माना गया है। लेकिन उनके नाम हिन्दी में कई लोक-गीत और गाथाएं प्राप्त है। लोभी इतिहास में उनका संबन्ध पूर्णतया साबित नहीं हुआ है। पाल वंश के परवर्ती राजाओं का उल्लेख करते हुए, मजूमदार ने राजा मदन पाल का उल्लेख किया है। उनके मतानुसार मदनपाल पाल वंश का अंतिम राजा है। बिहार में भी पाल वंश के राजाओं का उल्लेख प्राप्त है। उन राजाओं के नाम के साथ "पाल" शब्द जुड़ा हुआ है। वे आधुनिक गया जिले का बताया गया है। कुछ हस्त लिखित प्रतियों में गौडाधिप भी बताया गया है। इन राजाओं का काल 1162 ईसाई में समाप्त बताया गया है।[1]

उपर्युक्त निष्कर्षों से हम निस्सन्देह बता सकते हैं कि गोपीचन्द निस्सन्देह ही ऐतिहासिक व्यक्ति थे। लेकिन भर्तृहरी को उज्जैन का और गोपी चन्द को बंगाल का कहने में असंगति है कि वे मामा-भतीजा थे। काल गणना में दोनों का समय बहुत दूरी पर भी पड़ा है। वस्तुतः इस संबन्ध की ऐतिहासिकता पूर्णतया सन्दिग्ध ही रहा है।

गोपीचन्द का चरित्र भी वैराग्य और त्याग का है। यह अज्ञाता चक्र में पड़ने पर होता है। बहिन, पत्नी, माँ आदि का कहीं इसमें भाग भी बताया है। जीवन की निस्सारता एवं ऐश्वर्य के मिथ्याभिमान का सम्यक दृष्टिकोण इस चरित्र पर बल करता है। इसके आधार पर ही गोपीचन्द के

1. हिस्ट्री आफ बंगाल - आर.सी. मजूमदार - पृ.171-172

जीवन की दिशा निश्चित हो जाती है । गुरु गोरख नाथ का प्रभाव उनके मन में खूब पड़ता है । हर प्रलोभनों, स्नेहों, एवं सिसकियों से छुटकारा होकर गोपीचन्द मुक्त हो जाते हैं । माँ से, पानवाली से, बहिन से उनका व्यवहार और कथन उज्ज्वल चरित्र का निदर्शन है । योगी नायकों का चरित्र हर कहीं उज्ज्वल ही दिखाई देता है । गाथाकार ने इस कार्य में यहाँ भी निष्कर्ष किया है । नाथ पंथी संप्रदाय का स्वाधीन शायद इस कार्य में भी पड़ा होगा । विषय सुखों का त्याग और मोह एवं माया की प्रतिमूर्ति स्त्री का त्याग इन लोक गाथाओं में मुख्य स्थान रखता है । भरथरी और गोपीचन्द दोनों में, उस पुनीत-व्रत एवं जीवन त्याग का संदेश भरा है ।

(७) संत बसंत

यह भी बुन्देली लोक-गाथा है । यह दो भाइयों की लोकगाथा है । इन दोनों भाइयों को बाँसों के अन्दर पाये गये राजकुमारों के रूप में चित्रित किया गया है । और इन दोनों भाइयों के समग्र जीवन की गाथा को इस प्रकार चित्रित किया गया है कि एक राजा की पुत्री के विवाह के लिए चार बाँसों की आवश्यकता पड़ने पर वे बाँस भी काटे गये जिन में से ये दोनों भाई निकले । राजाने सौभाग्य का अवतार समझ कर राजोचित रूप से उनका स्वागत किया । दोनों राजकुमारों को रानी के क्रोध का शिकार होना पड़ा और दोनों राजकुमारों को फिर से झील में फेंका । झील में एक तोता-मैना दंपती ने इन्हें भोजन कराया । वन में रहते और शिकार खेलते समय दोनों भाई बिछुड़ गये । संत तो अपने भाई को खोजते खोजते

एक नगर में पहुंच गया । उस राज्य का राजा मर गया था । वहाँ से होकर एक हाथी अपनी सूंड में माला लिए दौड आया । उसने संत के गले में माला पहनाया और संत को वहाँ का राजा बनाया । सन्त राजा के समान तेजस्वी था । उसे देख कर राज गुरु और मंत्री लोग चकित हुए । उसका राज्याभिषेक जल्दी कराया था । उस देश की जनता का विश्वास यह था कि भगवान ने उनके राजा निश्चित किया था ।

दूसरा भाई बसन्त वन में घूमते फिरते अपने भाई संत की खोज में पुकारते पुकारते चले । उसका भाग्य चक्र भी फिरा । वह भी एक नगर में जा पहुंचा । वहाँ के जन जीवन को एक घुडोल चोर, संत्रस्त कर रहाथा । बसंत को उसका पता चला । घुडोल चोर की हत्या उस देश का कोई भी नहीं कर सकता था । तब उस देश के राजा ने यह विज्ञापन निकाला कि जो घुडोल चोर की हत्या करेगा उसे आधा राज्य ~~आधा~~ और अपनी पुत्री दी जाएगी । बसंत ने चोर को मार डाला और अपना सुखमय जीवन प्रारंभ किया ।

संत राजा होते भी अपने भाई से मिलना चाहता था । उन्होंने अनेकों उपायें की । आखिर संत की ही योजना के अनुसार दोनों भाइयों का मिलन हुआ । संत ने सारे राज्य में यह घोषणा करा दी कि जो सन्त बसन्त की कथा सुनाए उसे पुरस्कार दिया जाएगा । बसन्त की कान में भी यह वार्ता पडी । वह साधु-वेश में संत के दर बार में पहुंचा । उसने संपूर्ण कथा सुना दी । राजा संत को मालूम हुआ यह अपना भाई बसंत ही है । दोनों भाई आपस में गले से लगाये । इस प्रकार दोनों भाइयों का मिलन हुआ ।

यह लोक गाथा बुन्देली-निजी कथा पर आधारित होते हुए भी, सारे भारत में, किसी न किसी प्रकार में इसका प्रचार है । कहीं कहीं लोक कथा के रूप में भी प्राप्त है । कहीं किसी अन्य मुख्य कथा के साथ मिलकर ही देखा जाता है ।

यह केवल लोक-कथा पर आधारित है । इतिहास से इसका संबन्ध नहीं है ।

निष्कर्ष

हिन्दी भाषी कई बोलियों में फैली हुई है । सारी बोलियों में अपनी अपनी स्थानिक लोक गाथाएं आंचलिक सत्य और सौन्दर्य का निदर्शन बन कर रहा है । जिस प्रकार मिथिला में सुख सुनर, सलहेस, लोरिक, गढ़ू बाबा, बाजिरा, दयालसिंह बिहुला आदि प्रचलित है, उसी प्रकार रन्नु सरदार, हीमा-भुही, आदि का नाम भी स्मरणीय है । अंगुरा का कथा गीत, मेवार का कथा गीत, जलेठी, आदि भी वहां की स्थानिक लोक गाथाएं हैं । कांगड़ी में कुला-जट-जटती जैसे गीत, कथा गीत में प्राप्त हैं । भोजपुरी में हिन्दी की प्रमुख सारी लोक गाथाएं प्राप्त हैं उस के साथ साथ कुछ धार्मिक-गाथाएं भी प्राप्त हैं । श्रवण-कथा, शिव-पार्वती आदि इस विभाग में आती हैं । अवधी की लोक गाथाओं में स्थानिक धार्मिक गाथाओं के अलावा, कुसुमा, चन्द्रावली भी आती है । बघेली छत्री लाठी आदियों में भी, धार्मिक गाथाएं अधिक हैं, जिनके साथ साथ राजा वीर सिंह भी प्रमुख माने गये हैं । बुन्देलखण्ड की लोक गाथाओं में, जगदेव पंवारा, कौरस देव, अमान सिंह आदि स्थानिक नाम हैं । ब्रज में राजा, जाहर पीर, ढोला, आदि मशहूर है । कनौज में, ऊधदेव, धम्मवया आदि प्रमुख हैं, तो

राजस्थानी में, पाबूजी, मामड़िये, मेणादे, निहाल दे आदि स्थानिक गाथाओं में मुख्य मानी गयी हैं । कौरवी, याने खड़ी बोली में भी कुछ स्थानिक महत्व के कथागीत प्राप्त है - रूप [बसंत] बसन्त राजा कारक आदि । मालवी में भी चैनसिंह हीरा सिंह, बख्तार सिंह, नर्मदा में नाव डूबे आदि स्थानिक लोक गाथाओं के स्तर से ऊपर नहीं उठा है ।

समस्त हिन्दी प्रदेशों में विख्यात एवं, सारे भारतीय साहित्य में प्रभाव डालने वाले लोक-काव्य हैं - आल्हा, लोरिका, शोभा नयका बन जरिया, विजयमल, सोरठी, बिहुला, राजा भरथरी, राजा गोपीचन्द सन्त बसन्त, ढोला मारू आदि । इन लोक गाथा ओं में, आल्हा सर्व श्रेष्ठ काव्य-समान वीर काव्य माना गया है । हिन्दी और मलयालम, लोक-काव्यों के तुलनात्मक अध्ययन के इस प्रबन्ध में, हिन्दी की भिन्न बोलियों में प्राप्त लोक-गाथाओं पर सामान्य रूप से और, विशिष्ट लोक-गाथाओं पर, समग्र रूप से अध्ययन हुआ है । आगे हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों की तुलना में, यह अध्ययन अधिक उपयोगी साबित हो जाएगा ।

छठा अध्याय

मलयालम लोक-गाथाओं का संक्षिप्त परिचय

वर्गीकरण

मलयालम लोक-काव्य में हमने आकार में छोटे और गेयता प्रधान प्रथम रूप के गीतों पर विचार किया है । अब दूसरे प्रकार के गीतों पर, जो आकार में बड़े हैं और जिनमें कथानक की प्रधानता के साथ गेयता भी है - विचार किया जाएगा । काव्य की दृष्टि से इन गीतों को प्रबन्ध गीत नाम दिया गया है । मलयालम में इन गीतों को कथागीत संज्ञा दी गयी है । अंग्रेजी और हिन्दी में जो गीत "बेलड" नाम से पाये जाते हैं, उन्हीं को यहाँ प्रबन्ध गीतों, या कथागीतों में स्थान दिया है । ऐसे गीतों के विषय गत एवं स्वरूपगत भेदों पर आगे निरूपण किया जाएगा ।

अंग्रेज़ी में बेलड शब्द लोक-गाथा केलिए प्रयुक्त होता है । लोक गाथा - कथा प्रधान गीत हैं । कोई गाथा, लोक-काव्य है, अलंकृत या साहित्यिक काव्य नहीं । लोक-काव्यों के मर्मज्ञों ने कथागीतों की उत्पत्ति के

आधार पर कुछ वादों की उलझन में लटका दिया है । समुदायवाद, व्यक्तिवाद, जातिवाद, चारणवाद, व्यक्तित्व हीन व्यक्ति वाद - आदियों पर । इस विषय पर हमने दूसरे अध्याय में प्रकाश डाला है[1] । यह भी स्वीकार किया गया है कि विषय वस्तु के आधार पर भी, कुछ वर्गीकरण हुआ है । प्रेमकथात्मक वीरकथात्मक, रोमांच कथात्मक, कौटुंबिक, अलौकिक, पौराणिक, सीमान्त, जंगली या आरण्यक इत्यादि ।

कुछ विद्वानों ने इन्हें धार्मिक, सामाजिक राष्ट्रीय एवं ऐतिहासिक नाम देकर भी विभक्त किया है । मलयालम कथागीतों का वर्गीकरण और निरूपण इस भूमिका के आधार पर किया जाएगा ।

समस्त केरल में समान रूप में प्रचलित कुछ कथागीत प्राप्त हैं । उन्हें मुख्यतः धार्मिक बता सकता है । अन्य गाथाएं, उत्तर केरल के कथागीत [वटक्कन्पाट्टु] मध्यकेरल के कथागीत [वटनाटन्पाट्टु] दक्षिण केरल के कथागीत [तेक्कन पाट्टु] इन श्रेणियों में विभक्त कर सकते[2] । यह विभाजन मुक्तक गीतों से अधिक प्रबन्ध गीतों को समीचीन है । इन विभागों में प्राप्त कथागीतों, को प्रेम-कथात्मक, वीरकथात्मक, रोमांच कथात्मक, अलौकिक, पौराणिक, कौटुंबिक, सामाजिक, ऐतिहासिक आरण्यक आदि उपविभागों में भी बाँट सकते हैं ।

1.	समुदाय वाद	-	ग्रिम
	व्यक्तिवाद	-	श्लेगल
	जातिवाद	-	स्टेन्थल
	चारणवाद	-	बिशप पर्सी
	व्यक्तित्व हीन व्यक्तिवाद	-	चाईल्ड
	समन्वयवाद	-	उपाध्याय

2. उल्लूर - केरल साहित्य चरित्रम - पृ.208

वटक्कन पाट्टु मुख्यत: कौटुंबिक गाथाएं हैं । इन में प्रेम कथात्मक, वीरकथात्मक, ऐतिहासिक, सामाजिक, गाथाएं, अधिक हैं । तेक्कन पाट्टु भी, सामाजिक, वीरकथात्मक ऐतिहासिक एवं प्रेम कथात्मक विषयों से युक्त हैं । तेक्कन पाट्टु ऊपर कही गयी समस्त विधाओं में प्राप्त हैं ।

मलयालम लोक-गाथाओं का आकलन अभी तक पूरा पूरा नहीं हुआ है । डॉ॰ चेलनाट अच्युत मेनोन, सर॰ पेचल्ली माणिक्कन, उल्लूर, आदि विशिष्ट व्यक्तियों ने पहले से इस ओर प्रकाश डाला था । अब कुछ नये अनुसंधाता एवं इतिहासकार भी इस ओर मुड़े हैं ।

केरल के कथागीतों का अध्ययन हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचा देगा कि सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि पर उत्पन्न एक महान साहित्यिक भंडार इसके साथ रहा है । पहले हम धार्मिक कथाओं पर आधारित एवं अनुष्ठान प्रधान लोक गाथाओं पर विचार करेंगे ।

धार्मिक कथागीत[1]

स्थानीय कथागीतों से अलग और वस्तुत: सभी जगहों पर धार्मिक गीत प्राप्त हैं । ये गीत उत्तर केरल में जैसे प्राप्त हैं वैसे दक्षिण और मध्य केरल के प्रदेशों में भी प्राप्त हैं । तीनों स्थलों के अन्य गीतों की अलग अलग शैली में एक ही कथागीत पाया जाता है । ये गीत पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं । इस कारण इन्हें पौराणिक गाथाओं में स्थान दिया जा सकता है । कालिकथा, अय्यप्पन कथा, ये दोनों द्राविडी प्राचीन कथाएं हैं । रामायण, भारत, ब्रह्म पुराण, देवी माहात्म्य आदियों की कथाओं का लोक-आविष्कार भी, कथागीतों में प्राप्त है । ये मुक्तक प्रबन्ध दोनों विभागों में समान रूप से

---

1. धार्मिक कथागीत - चिरक्कल बालकृष्णन

प्रचलित हैं। लेकिन, अनुष्ठान कथाओं के साथ सम्मिलित, लोक-नाटक के रूप में प्राप्त कथाश्रित गीतों का अलग अलग नाम है। काळिकथा पर आधारित प्रबन्ध गीतों को काळिनाटक, मुटियेरु तोर्रमपाट्टु, तीयाट्टु, परदेव पाट्टु आदि भिन्न नाम दिये गये हैं। वास्तव में ये "भद्रकाळिप्पाट्टु" विधा में आते हैं। श्री भद्रकालि के अपदानों को, दारिक वध कथा से संबद्ध कर के अनेकों लोक कवियों ने भिन्न प्रदेशों में गाथा रूप में बांधा है। विविध अनुष्ठानों के साथ इन गीतों को गाते हैं। उन प्रत्येक अनुष्ठान विधा के समय उस कथा गीत का वही नाम है। तीयाट्टु क्रिया के समय तीयाट्टु, तोर्रम पाट्टु क्रिया के समय तोर्रमपाट्टु मुटियेरु के समय मुटियेरु पाट्टु।

काळिकथप्पाट्टु

भद्रकालि, केरलीय सामाजिक जीवन में बड़ा महत्व रखती है। "काळि" द्राविड़ देवता "कोर्रवै" का नामान्तर माना जाता है।[1] बंगाल में भी काली पूजा को महत्व दिया जाता है।

भद्रकाळिप्पाट्टु, तोर्रम पाट्टु, मुटियेरुपाट्टु, चामुण्डिकथप्पाट्टु, भरणिप्पाट्टु - आदि भिन्न नामों से यह गीत प्राप्त है। सारी गाथाओं में कथा कळिकथा ही होती है। श्रीभद्र काळि, वीरभद्र, हजारों कुदेव, चामुण्डी आदि सबों का जन्म - परमशिव की कोपाग्नि से हुआ। ऐसी एक रूढ़ि पुराणों के आधार पर कहा जाता है। उसकी "मूर्ति" के अर्थ में तोर्रम शब्द से मिलाकर - एक अनुष्ठान कला चलती है। उस क्रिया के गीत होने के कारण तोर्रमपाट्टु नाम मिला है।

---

1. उळ्ळूर - केरल साहित्य चरित्रम - भाग-1,5, पृ.233
तीयाट्टु, तोर्रम, कुत्तियोट्टं, कळम आदि विशिष्ट अनुष्ठानों के समय अलग अलग क्रियाएं एवं उसके अनुकूल ताल-वादन भी होते। गीत भी उस प्रसंग के अनुसार होगी।

काळिकथा में काळि की उत्पत्ति एवं दारुकवध मुख्य हैं। काळि की उत्पत्ति की कथा पौराणिक है। दक्षयाग कथा से, शिव पार्वती कथा से - उसका संबन्ध है। शिवद्राविड देवता माना गया था। आगे चलकर, शैव, वैष्णव, आदिवासी और भिन्न व्याख्याएं आ गयी थी। उन सारी बातों से यह कथा अब संबन्ध रखती है।

भद्रा-काळी के दो रूप माने जाते हैं। एक प्रसन्न महेश्वरी का और दूसरा उग्रमूर्ति "रण चण्डी" काळि पूजा में उग्रमूर्ति - रणचण्डी - की गाथा गायी जाती है। दारिक वधो युक्ता - उग्रमूर्ति काळी का वर्णन भिन्न गीतों में पाया जाता है। हमारे काळी मन्दिरों में कार्तिक [नवंबर 15 से दिसंबर 15 तक] में अखंड रूप में भद्रकाळिप्पाट्टु का गायन होता है। केरल में प्रचलित सूर्यायत मास वृश्चिक में चलाये जाने के कारण इसे वृश्चिक प्पाट्टु भी कहते हैं[1]।

काळिकथप्पाट्टु में मुख्य प्रसंग दारुक के वध का है। पूजा, पाट्टु स्तुति, इसी प्रकार भिन्न खंडों में ये गीत प्राप्त हैं। काळिमाता का उत्पत्ति संबन्धी एक प्राचीन गीत -

> आलन्नार मति तरित्त, महादेवर मैरिक्कण्णाल
> नीलमां मलकनके निरपेक्षुदित्त मूर्ति
> नाभु मेदित्तम तित्ते, नाळुकेमुन्न शक्ती
> अखिल लोक रक्षणी, अखण्डमां मन्नितत्ते
> तोरुमक्करात्तमाके, तूयतां पट्टुटुक्कु
> सुन्दरी अम्मरत्ती ! पोन्निकम पोतिगाके[2] !

---

1. पाट्टु करने का मतलब कई कार्यक्रमों का एक अनुष्ठान है। प्रत्येक क्रिया का अपना अपना गीत है।
2. उळ्ळूर के "साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङळिलूटे, पृ. 334

यह स्तुति गीतों में आती है ।

भाव : जिस देव के सिर पर बाल शशि है, उस त्रिलोचन के तीसरे नेत्र से उत्पन्न, माता ! हम आप की स्तुति करते हैं । हे माँ तुम चारों वेदों का बीज हो, सारों लोकों की शक्ति हो, सारी दुनिया का स्वरूप हो, सातों लोकों की पराशक्ति हो । हे अखिल लोक स्वामी । अखण्ड मंत्रों की देव ा, सारी दुनिया की सृष्टि स्थिति एवं संहार करने को योग्य महा काली तुम्हारा लाल लाल कपड़ा एवं नील पहाड़ का शरीर हमें मुग्ध करते हैं । तुम लोक माता हो ।

यह गीत भद्र कालिप्पाट्टु विधा में अधिक पुराना माना जाता है । तोरम भी कहता है । प्रचण्ड रूप वाली महाकाली का वर्णन :-

उच्चक्कम्मा निन्नु कोण्डे
ओरूप्पन्त मेरिक्कवटुं
अस्तियक्कम्म निन्नुकोण्टे
अरकुल विलि ओन्नु विलिक्कवरुं
एट्टु नाटुं पोट्टुमाक
अट्टहास मुरत्तिड कोन्टे ।

भाव : दोपहर को काली माता मशाल जलाती आती है । साँझ के समय में वह हुंकार भी करती है । हुंकार के सुनते सुनते आठों दिशाएं गिड गिडाती हैं । उनके अट्टहास को सुन कर सारा पशु पक्षी भी गिड गिडाते हैं ।

---

1. कालिकथा से संबद्ध तोरम पाट्टु विधा में यह गीत भी पाया जाता है । जी॰ शंकर पिल्ले - साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे [अनुवाद]
पृ॰ 146

काळिकथा का ग्रामीण नाटकी विष्कार है, मुटियेरह । उत्तर केरल में यह तिरा नाम से अभिहित है । दारुक वध की भिन्न घटनाओं पर दारुक और काळि का वेष धारण करके कुछ लोग ग्राम शैली में नृत्य करते हैं. । आखिर नर्तक रुष्ट होता है । उस समय का वेष अत्यंत भीकर होता है । सुपारी के पेड की छाल [पाळा] को एक साथ बुनकर उसपर कई रंग डालकर मुकुट बनाते सिरपर पहनते हैं, नारियल के पेड के कोमल पत्तों को [कुरुत्तोला] एक साथ लटकाकर घाघरा [पावाडा] पहनता है । मशालों से चारों ओर उद्दीप्त करके दारुक के सिर काट ने के प्रसंग का और उसके पेट-फाटकर आंतों की माला [कुडलमाला] को बाहर लेने का प्रसंग अत्यंत भीकर बनाता है ।[1] उस समय का गीत भी, उस ताल और शैली का है -

> दारुक पुरत्तु चेन्नु निन्नु कोण्टे
> अक्कुल विलि कोण्डुविळिक्कुन्नुण्टे
> दारुक पुरमोन्नु कुलुक्कुन्नुण्टे
> दारुकन्नु मोन्नु विरयकुन्नुण्टे ।

भाव :- देवी का की रुद्रा बनकर दारुक के शहर पर जा खडी होती है । वहाँ खडे होकर उन्होंने घोर अट्टहास किया । उस शब्द से दारुक की हिम्मत टूटा गयी । वह शहर कँप कँपा गया । दारुक की भी कूदने, आपस में गिड गिडाने लगे । काळिकथाकी और एक विधा है चामुण्डि कथ्याट्टु । दारुक वध और यक्ष वध के समय काळी चामुण्डी या चण्डी बन जाती है । रणदेवता काळी यही चामुण्डी है । चामुण्डी रक्तपिपासु रणचण्डी है ।

1• कथकळि नामक क्लासिक कला का आविर्भाव इस लोक नाट्य से बताया जा सकता है ।

2• मण्णार नामक जाति के लोगों का शुद्ध काळियाट्टु है यह ।
साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे - पृ•146

इस कारण चामुण्डी की स्तुति के रूप में भी कालि कथाप्पाट्टु प्राप्त है । चामुण्डी शिष्टों की रक्षा और दुष्टों की हत्या करती है । देवी माहात्म्य के अनुसार काली चण्ड और मुण्ड दो दैत्यों की हत्या भी कर डालती है । उस अवसर को विषय बनाकर इस गीत को चामुण्डि कथप्पाट्टु भी कहते हैं । केरल के देवी मन्दिरों में जो भरणि उत्सव एवं भरणिप्पाट्टु चला जाता है वह भी इस कथा पर आधारित है । भरणि नक्षत्र में देवी का जन्म हुआ ऐसा लोगों का विश्वास है । इस कारण इसे भरणिप्पाट्टु भी कहते हैं । एक गीत ऐसा है :-

शंखोडोत्त तिरुक्कुत्तिल
तरित्त वड*मालकळुं
कोंक रण्टुं चिमिषु पोले
कोडियिडयिल मणिमार्वुं
चिक्कुं आलिलपोल वयरुं
मुडियाडयुं-ओरि-उडुत्तु ।

भाव : शंख के समान सुन्दर गले में जिसने वडमालाएं धारण किया है और जिसका स्तन युगल मणि के समान कठोर शोभित एवं कुचाग्र बोलती हो, जिसका पेट वटपत्र के समान सुन्दर एवं कृश हो, और जिसने रक्तिम दुकूल से मोहक पोशाक पहनी हो वही काली माता चामुण्डी का हम स्मरण करते हैं ।

इस गीत में गले की तुलना शंख से करने के साथ साथ, गले में खोपड़ि की माला पहननेवाली का अर्थ भी है । रौद्र-पक्ष में खोपड़े की माला को अधिक महत्व होता है [2] ।

---

* वटमाला - वटपत्रमाला, या आलिलत्तालि
1. तोररमपाट्टु - जी.शंकर पिल्ले - पृ.90
2. चामुण्डि कथप्पाट्टु - कांजिरक्कुळम कोच्चुकृष्णमाटार

चामुण्डि कथप्पाट्टु, तोरम पाट्टु [कण्णकितोरर] आदियों में, चिलप्पतिकारं कथा का लोकाविष्कार भी पाया जाता है । लोक गायकों ने इन दोनों कथाओं को मिलाकर कण्णकि को भी चामुण्डी का स्थान दिया होगा[1] । कोट्टुङल्लूर देवी मन्दिर से संबद्ध कण्णकि की कथा का आख्यान एवं पाण्ड्य राजवंशों की कथा की रूढी प्राप्त है । कण्णकी की कथा ऐतिहासिक है । यद्यपि उन्हें पौराणिक कथाओं में मिलाकर ग्राम गायकों ने यशोगानों के रूप में गाथा बनायी होगी । कालिकथा पुरानी है । कण्णकि कथा संघ कालीन - या अर्वाचीन है । कालिकथप्पाट्टु आज भी वही पुरानी रूढी संकेतों से चलता है । आदि मानव की कथा श्रेणियों में ये गीत आते हैं । प्रत्येक युग के गायकों ने उसे अपनी भावना के अनुसार बदला होगा । कुछ जोड दिया है कुछ काट डाला भी है । तो भी, भद्रकालिप्पाट्टु, तोरम्पाट्टु, तीयाट्टुपाट्टु, चामुण्डिकथप्पाट्टु सब एक ही काली माता पर आधारित हैं[2] ।

समस्त काली मन्दिरों में एक या दूसरे प्रकार में एक नाम या दूसरे नाम का कालि कथप्पाट्टु चलता है । उन सबका कथानक एक ही होता है । भद्रकालिप्पाट्टों के अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पहुँच सकते हैं कि ये सारे गीत एक ही कथा पर आधारित एवं एक ही लक्ष्य पूरती के उद्देश्य से बने हैं । भलाई की जीत एवं बुराई की हार ।

अय्यप्पन कथप्पाट्टु[1]

शास्ताप्पाट्टु, अयप्पन पाट्टु आदि नामों में प्राप्त एक अनुष्ठान परक कथा गीत है - अय्यप्पन पाट्टु । शास्ता का केरल में "अयपन" या "अय्यप्पन" नाम है । शास्ता भी द्राविड देवता माना जाता है ।

1. तोरम पाट्टु - जी. शंकर पिल्ले - भूमिका - पृ.6

2. भावति प्पाट्टुकल - कलाधिकल डॉ.कृष्णनारायन भूमिका गुरुनाट्टु कुञ्ञन पिल्ले

लेकिन बाअनाथ का मन्दिर उत्तर भारत में भी है । बागेश्वर का बाअनाथ मन्दिर मशहूर है । केरल में बाअनाथ शास्ता है । शास्ता की उत्पत्ति के बारे में कई कथाएं प्रचलित है । उनमें एक जनश्रुति है कि भार्गव राम ने केरल में बारह पुण्य स्थानों में बारह शास्ताओं की प्रतिष्ठा की । उनमें शबरी मला का धर्मशास्ता अय्यप्पन कहा जाता है, वही उन बारहों रक्षाधिकारी शास्ताओं में प्रमुख है[1] । शबरीं गिरीश धर्म शास्ता पाण्ड्या राज वंशी समझा जाता है । अय्यप्पन और पन्तलम राजा का संबन्ध कथा में इस प्रकार है -

पन्तलम राजा का कई साल कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई । उन्होंने इस उद्देश्य से कई साल शिवपूजा की । एक दिन वे जंगल में शिकार करने गये । वहाँ उन्होंने एक बच्चे का रोदन सुना । जाकर देखा तो एक सरिता के किनारे एक तेजस्वी बच्चा पड़ा हुआ मिला । राजा उस बच्चे को महल में ले आये । अपने पुत्र के समान उसका पालन पोसन किया । बच्चे का नाम ज्योतिषियों के कहानुसार अय्यप्पन रखा । वही बच्चा युग प्रभावी अय्यप्पन धर्म शास्ता बन गये । उनका मन्दिर आज भी शबरी मला में है । करोड़ों लोग मंडल व्रत लेकर आज भी शबरी मला में पहुँचकर मकर संक्रम के दिन उनके दर्शन करते हैं ।

कथा का पौराणिक आधार यह है कि अय्यप्पन हरिहरपुत्र है । उनका जन्मोद्देश्य महिषी मर्दन था । महिषी एक घोर राक्षसी थी जिसने, ब्रह्मा से यह वर प्राप्त कर ली थी कि शिव और विष्णु के पुत्र [हरि-हर सुत] के सिवा कोई भी उनका वध नहीं कर सकता । जब तक महिषी का भूवास रहेगा तब तक देव कार्यों में विघ्न बाधाएं होती थी । इस कारण समस्त देवों के साथ साथ भूमि देवी की भी अर्चना से, विष्णु एवं शिव दोनों का मेल हुआ । उनकी संतान के रूप में "हरि-हर सुत" अय्यप्पन का जन्म हुआ[2] ।

1• श्री अय्यप्पन के बारे में कई साहित्य प्राप्त हैं । अय्यप्पन पाट्टु विधाएं मुक्तक एवं प्रबन्ध दोनों रूपों में प्राप्त है । अय्यप्पनपाट्टु का मतलब कई अनुष्ठानों का कार्यक्रम है ।

2• भारत में हुई शैव वैष्णव आन्दोलनों के अन्त में दोनों विचारधाराओं के समन्वय कारी विचारधारा के रूप में-शैव वैष्णव संकलन के रूप में-अय्यप्पन का उद्भव माना जा सकता है ।

पण्डितों और शोधकारों के बीच इस कथा के आधार पर कई तरह के मतभेद प्राप्त हैं। डॉ॰ एस॰ के॰ नायर ने इस ओर एक शोधात्मक मत प्रकट किया है[1]।

इस प्रसंग पर हमें इतना ही मानना पड़ेगा कि पन्तलम राजा के पोष्य पुत्र के रूप में हरिहरपुत्र अय्यप्पन ने जन्म लिया। आखिर उन्होंने शबरी मला में अपना आवास स्थान बना लिया। भक्त लोग आज भी लाखों की संख्या में शबरी मला पर व्रतानुष्ठान के साथ जाते हैं।

शबरी मला के अय्यप्पन की कथा पर कई गीत प्राप्त हैं। उन गीतों को शास्ता प्पाट्टु या अय्यप्पनपाट्टु कहते हैं[2]। अय्यप्पनपाट्टु में अय्यप्पन का जन्म, पन्तलम में पोष्यपुत्र के समान वास, माता चीत्ता का दूध लेने की यात्रा {वन-यात्रा} बावर से युद्ध, वावर से सद्भाव, महिषी को मारना, शबरीमला में वास आदि घटनाएं लोक कवि ने, चमत्कार और लालित्य के साथ = आविष्कृत किया है। उडुक्क {ढक्का} नामक बाजा बजाकर अकेले और संघों में भक्त लोग ये गीत गाते हैं।

उल्लूर ने अपने साहित्य इतिहास में अय्यप्पन पाट्टु के प्रत्येक खण्ड को रंगम नाम दिया है। पाण्डिरंगम, पुलिरंगम, इटलकशुरंगम, वलिरंगं, ईजुरंगम, पन्तलम रंगं, केलार रंगं, इत्यादि। इन सात खण्डों में अय्यप्पन का जीवन वृत्त संपूर्ण रूप से वर्णित है।

---

1. श्री अय्यप्पन - डा॰एस॰के॰ नायर{एम॰बी॰एस॰}

2. विधि - अय्यप्पपूजा को चालिस दिनों का व्रत लेना अनिवार्य है। भक्त लोग अय्यप्प रूपांकित माला पहनते है। काला वस्त्र भी पहनते हैं अय्यप्पस्तोत्र गाते रात दिन बिताते हैं। मकर ज्योति के दिन तक शबरी मला में जाकर दर्शन करते हैं।

पुलिप्पोर्त का एक प्रसंग

आहो ! एम्पुरचेय्तु मटकोम्टाम मलयाळि,
इविडेड्डान करिंपुलि पेरक्किटप्पोम्टो,
करियोल तटित्तलोड करिंपुलि केटप्पोम्टु
पुलि पेरड़ किटक्कुन्न कल्लक्कल चेन्मुटने
अय्यने कण्टु करिंपुलियप्पोळे
कण्णोम्मुरुट्टि पुलिवाल करेरुम्मु ... ।

भाव : दवा केलिए चीत्ते की दूध लाने जिस जंगल में अय्यप्पन पहुँच गये,
उस जंगल के लोगों से उसने ऐसा पूछा कि चीत्ता, कहाँ बच्चा देकर लेटा है ?
जब उसने ओहो का शब्द मचाया तो एक मादा चीत्ता सामने आयी । वह
चीत्ता निकट की गुफा में बच्चा देकर पडी थी । वह चीत्ता [ईररप्पुली]
उस लडके को देखकर रुष्ट और भी बनने लगी । वह घूर कर देखने लगी, मूँछ,
पूंछ चलाई और वार करने की तैयारी की । प्रजनन की अवस्था में चीत्ता और
भी खूँखार बनती है ।

ईश्वरोर्त

आरारिल मणिमकुट तिलोत्तमनीतन ज्ञानपरिपूर्णन
अणिमतिकल तलयिलणिन्नरमुटे मकनु मनरिमल
कलितपलीवृत्तोड राजावे काणण मेन्नोड पही
कळोड रल्लयोजन युन्टु कटप्पतिमकनु निनच्चान[2] ।

1\. ईररप्पुली - प्रजनन की अवस्था की चीत्ता [मलयालम की एक शैली]
कुमार - या रुष्ट ।
साहित्य चरित्रम प्रस्थानडुळिलूटे - पृ. 102

2\. केरल साहित्य चरित्रम - पृ. 242

और एक शास्ताप्पाट्टु

भूतनाथ मन्मी कोटि निरंकर्म गुणालयम
भुवनलमति लमरजनङ्ङळ यत्लन तीर्तु वतिष्पवन
भूतले मलनाट्टु तन्मिल वर्न्न कोविल वनङ्ङिलिल
पुतुमयोड् विलसुम्म कामतिलन्नु विलशारमेन्तिये
पाण्ड्यनाय महीशने प्परियोडु शेकुम्माकुवाम
पलदिवस मवमरिकिल महवि कोम्ट कोम्टल निरत्तोमु

भाव : करोडों कामदेवों का सौन्दर्य जिस व्यक्ति में एक साथ एकीभूत हो, जिस शक्ति शाली ने सारे सज्जनों की रक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया हो, अपने हाथ में धनुष बाण लेकर पाण्ड्य राजा की सेवा करते हुए इस मलनाट्टु में जिसने विचरण किया हो - वही धर्म शास्ता हमारे आश्रय दाता हैं। हम उन्हीं की पूजा करते हैं।

इसी प्रकार अवदानों से युक्त वीर गाथा है अयप्पन पाट्टु। इस में भक्तिपारवश्य के साथ साथ वीर पूजा का महत्व भी पासकते हैं। अयप्पन वीर पुरुष था, साहसी था, इसी कारण उसका नाम श्रद्धा के साथ समाज लेते हैं। वीराग्रणियों की पूजा सर्वत्र होती है।

वावरस्वामिप्पाट्टु[2]

अयप्पन कथा से संबन्ध रखनेवाली एक उपकथा पर आधारित गीत है - वावरस्वामिप्पाट्टु।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.243
2. वावर - शायद - बाबर, या बेबर का तद्भव होगा।

अय्यप्पन के वनागमन के प्रसंग वावर नामक एक मुसलमान युद्ध वीर से उनका छोटा ठाठ हुआ। आमने सामने आकर दोनों को युद्ध करना पड़ा। दोनों सम वयस्क एवं समप्रभावी साबित हुए। तब से दोनों में दोस्ती साबित की गयी। वावर उस-संबन्धी मुसलमान का नाम था। अय्यप्पन की पूजा करनेवाले अय्यप्पन के सखा वावर की भी पूजा करते हैं। भारत युद्ध के कृष्णार्जुन समान, ये दोनों अय्यप्पन पाट्टु में गाये गये हैं। अय्यप्पन से वावर की घनिष्ठता के कारण शबरिमला के प्रान्त में वावर एक उपदेशा के समान पूजित माना जाता है। वावर स्वामी उनका दिव्य नाम पड़ा है। वावर स्वामि पाट्टु कथा में वावर का समग्र जीवन गाथा प्राप्त है।

पण्डितमि वेन्टतु वावरकेम्मिउळ्ळे
चिन्तिच्चु पात्तुम्मा पारातुरच्चुटन
अन्तिके निल्कुन्नोरत्ति मरक्कोन्टु
चन्तत्तिल वावरक्कु कप्पलुन्टाक्कण
तच्चरे योक्के वरुत्तियोतीडिन्नाल
इच्छय्य पोलेतामाशारि मारुम
मेळ्ळ मेळ्ळन्नोरु कप्पल तीर्तीडिन्नार

* * * * *

पोरिनि वेन्टा नी वीरनाणेरवुं
पारितिल निन्नोडु तुल्यरिल्लाल्ले
पोरिल नम्मोडु कूडे नी वावरे।
भूरि मोदं निन्ने वाणिक्काऽन्नामेडो।

भाव : वावर की माँ पात्तुम्मा ने वावर केलिए एक जहाज बनवाने का निश्चय किया। बढ़ई बुलाए गये। अत्ती नामक पेड़ से जहाज बनवाया गया।

1· केरल साहित्य चरित्रम - पृ·243

उस जहाज को पहली बार जब समुद्र में भेजा, उस शुभ अवसर पर उपचारपूर्वक कतिनाओं से पह का [गोली मारने का साशब्द] निकाला गया । बावर और साथियाँ जहाज पर सीधे दक्षिण की ओर रवाना हुए ।

जहाज सीधे दक्षिण की ओर चलाते चलाते अय्यप्पन के अधिकार स्थान पर पहुँच गया । अय्यप्पन ने जहाज में सेर करनेवालों से चुंगी [कर] देने की आज्ञा दी । बावर भी गजब का साहसी था । उसने अय्यप्पन से कहा कि हे अय्यप्पन अगर जहाज की चुंगी तुम्हें देना है तो हाथी पर तुम्हारे बैठने की चुंगी मुझे भी देना है ।

आन कवुत्तेरि प्पोकुन्नोरय्यप्पा
आनवाल काणं नमुक्कु तरिकेठो ।

वह हाथी की पूँछ का एक रोम तो रही । यह सुनते ही अय्यप्पन और बावर में लड़ाई छिड़ गयी । दोनों समान रूप से वीर एवं हठ में निपुण थे । आखिर दोनों गहरे मित्र बन गये । अय्यप्पन ने बावर से कहा -

अब हम यह युद्ध छोड़ दें । तुम जैसा वीर इस दुनिया में दूसरा नहीं हो सकते । इसलिए हे बावर तुम हमारी साथ भर दो । हम तुम्हें हमारा सामन्त बना देंगे ।

बावर और अय्यप्पन फिर शरीर और आत्मा बन कर रहे । यह कथा अपेक्षाकृत अर्वाचीन मानी जाती है । अय्यप्पन के बारे में भी जो कुछ सुना जाता है वह भी वीरगाथाओं पर अधिष्ठित है[2] ।

---

1. अय्यप्पन की कथा यद्यपि प्राचीन है, तो भी अय्यप्पन पर प्रचलित कथाएं अर्वाचीन है । सामन्त कालीन वीर योद्धाओं की कथाओं का देखा देखी ये वीरगाथाएं भी बने हैं । रामकथप्पाट्टु, अय्यप्पिप्पन आराध रामायणम कथपाट्टु - कल्लाणिक्कल कृष्णाशान
2. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.244

सीता दुःख पाट्टु

रामायण कथा पर आधारित कई कथागीत प्राप्त हैं। उनमें सीता दुःख पाट्टु एक विशिष्ट विधा का है। सीता जी से तीनों स राक्षण का चित्र खींचने को कहती हैं। सीता जी सासों की प्रेरणा से ऐसा करती हैं। जब राजा राम दरबार आया तो माता कौसल्या ने उन्हें रावण का चित्र दिखा कर ऐसा आदेश दिया कि यह सीता बुरी और बदचलन है। उसके मन में रावण का मुख अभी बसा है। उसे रावण से अब भी प्रणय है। इसलिए उसे निकाल देना चाहिए। यह सुनकर राजा राम अपनी प्रिय पत्नी को जंगल में त्याग करता है। इस घटना पर आधारित कथा गीत सीता दुः पाट्टु एक विशिष्ट लोक गीत है। सास-बहू वैर का एक यथा तथा चित्र इस गीत में प्राप्त है। रामायण के हर प्रसंग पर लोक गीत प्राप्त हैं। सब लोक गाथाएं हैं। रामकथप्पाट्टु रामायणम कथप्पाट्टु आदि इस श्रेणी में आते हैं। उनका साहित्यक महत्व होने के कारण यहाँ छोड दिया है।

भावारतम पाट्टु

भारत कथा पर आधारित पाण्डवों की कथा गीत है, भावारतम पाट्टु। इस में भारत कथा को कहीं कहीं तोड मरोड कर रखा है। लो म ग्रामीण शैली में कही गयी कथा गीत विधा में सरल और सहज स्वभाव से बहुत जन प्रिय बन गयी है। भीम, अर्जुन आदियों का साहस, माता कुंती देवी पुत्र-प्रेम आदि महाकवियों की सहज से अधिक साधारण जनों को प्राप्य बने हैं सरलता से ग्रामीण जनता इन गीतों को समझ सकती है। कथा में जो परिवर्त लाया है वह ग्राम जीवन के सन्दर्भों से चुन लिया है। भीमसेन को मारने में कुलाट्टु की रानी कान्तारी के पुत्र क्या क्या धोखा देता है उसका एक उदाह भीमसेन को सर्प दंशन कराने केलिए सर्प-विष बांसुरी देता है। सर्पदंशन से बचने वाला भीम सर्प कन्या से ब्याह करता है। ऐसी कथाएं भारतम कथा में हम देख

भड़ी पाते भावारतम पाट्टु - कल्लाणिकल कृष्णाशान - पृ.29

भीम कथाप्पाट्टु[1]

भीम के साहस पूर्ण कार्यों को ग्रामीण शैली में इस गीत में सरलता से गाया नदी पार करने केलिए मल्लाह ने रूपया मांगा । कुंती देवी के पास पैसा नहीं इस समय पुत्रों में से एक को उसके पास रखने का आदेश देता है । अपने पुत्रों को छोड़ने को कुंती देवी तैय्यार नहीं थी । तब भीम सेन ने माता जी से प्रार्थना की कि अपने को मल्लाह के यहाँ रहने देना । आखिर माता कुंती देवी ने भीम सेन को मल्लाह के हाथ दे दिया । मल्लाह ने उसे घर का नौकर बनाया । मल्लाह की पत्नी को नहाने का पानी गरम करना, तैल लगाना आदि उसका काम था । एक दिन भी म ने - बड़े कड़ाह में पानी गरम करके मल्लाह की पत्नी को उस में डुबा दिया और मार डाला । फिर वहाँ वह स्वयं बच गए फिर अपनी माँ और भाईयों के साथ जा मिला ।

पन्नु पर०००ाळ्ळु भीमन
तेगम ससकरिच्चिट्टेटुत्तिट्टु
मेल्लेयवळुम्मेल्लु
तिळ तेक्कि ससळळु मरिच्चु
कार कुन्तल चुरिट्टिप्पिडिच्चु
तिळ तेक्कि ससिट्टोम्मुळच्चु ... आदि ।[2]

भाव : भीमसेन ने मल्लाह पत्नी को हाथ पकड़कर उठा लिया और कड़ाहे गरम गरम पानी में पड़ा दिया । फिर उसके बालों को पकड़कर उस उबले पानी में डुब किया भी करायी । निस्सहायों से अधिक पैसा वसूल करनेवाले मल्लाह को उसके दुराग्रह का फल ठीक पैसा ही मिलना है । अत्याचार लोक कवि का वैर इतना साहस पूर्ण तक रहा करता है ।

---

1. भीमन कथ प्पाट्टु - कल्लाणिक्कल कृष्णनाशान - पृ.64
2. भीमन कथ प्पाट्टु - कल्लाणिक्कल कृष्णनाशान - पृ.64

इसी प्रकार, धार्मिक कथा गीतों की संख्या अधिक है। अनुष्ठानिक कथागीतों के साथ भी मनोरंजन को दृष्टि में रखकर नये नये पात्रों का आविष्कार करके नया वातावरण बना देना और मौलिक उद्भावनाओं से गाथा को सरस और रोमांचक बना देना लोक कवियों की प्रतिभा प्रदर्शन का प्रमुख सोपान है।

धार्मिक कथा गीतों में भी कम कमी, यह झलक पा सकते हैं। तो भी श्रद्धालु भक्तों को उन का व्यवच्छेदन अनिवार्य नहीं। भक्ति में सारा दोष और सारा गुण समान रूप से लयीभूत हो जाता है। समस्त केरल में आंचलिक संकुचित वृत्तियों को छोड़ कर समान रूप से प्राप्त गीतों की श्रेणी में धार्मिक गीतों को स्थान दे सकता है। लेकिन जो प्रचलित लोक गाथाएं हैं। उनको एक हद तक स्थानीय गाथाएं मान सकते हैं।

सामाजिक गाथाएं

वटक्कन्पाट्टु[1]

उत्तर केरल की जीवन-गाथा है वटक्कन्पाट्टु। मुख्यत: ये वीरगाथाएं और एक दृष्टि में ये कौटुंबिक गाथाएं हैं। पुत्तूरम्पाट्टु एवं तच्चोळिप्पाट्टु इन गाथाओं में प्रमुख है। कोलत्तुनाटु, कटत्तनाटु, वयनाटु आदि देशों के जनजीवन से संबन्ध रखते हुए भी, कतिपय घरानों के कुछ वीर पुरुष एवं वीर रमणियों के साहसिक जीवन चक्र से ये गाथाएं संबन्ध रखती हैं। पुत्तूरवीडु, आरोमलुण्णि, तच्चोलि आदि प्रशस्त घरानों में जन्मे कुछ वीर पुरुषों के नाम लेकर ये गाथाएं बनी हैं। उन नायक नायिकाओं के साथ साथ उनके सगे संबन्धियों की कथा भी गीत में स्थान प्राप्त कर लेते हैं। ये गाथाएं, उनके नामों पर बनी हैं।

1. मलबार का जिलाधीश सर.पेरुस्सी माक्लिन ने पहले पहल चार सौ से अधिक गीतों का आकलन किया था।

वटक्कनपाट्टु बहुधा वीरगाथाएं हैं, जो उन वीरों के जीवनवृत्त से संबन्धित है; जिसने अपने प्राणों से खेलते हुए मृत्यु को भी मधुरित किया था । हस्तकला, मेधाशक्ति, साहस, सिद्दि आदि का पूर्ण प्रयोग भी इन गीतों में प्राप्त हैं । ये गीत उस युग का सचित्र दर्पण हैं । इन गीतों में काल देशों की कई सूचनाएं मिलती हैं । वटक्कन पाट्टु को अधिक प्राचीन लोक गीत नहीं माना जा सकता ।

ये गीत संख्या में अधिक हैं । उन सब का आकलन जितना होना चाहिए उतना नहीं हुआ है । फिर भी कुछ भाषा प्रेमियों ने इस ओर थोड़ा प्रयत्न किया है ।

वटक्कन पाट्टु बहुधा वीर गीत हैं, इस कारण कळरी [जिमनेशियम] अंकम् [द्वन्द्व] मेय्‌वक्कं [शारीरिक तैयारी की कसरत] पयरट [अभ्यास] आयुध पयरट, डंडा, भाला, कटार, तलवार, ढाल छुरी, उरुमी, ओट्टा, गदा, अस्त्र शस्त्रों के नाम इस गीत में सर्वत्र आते हैं।

पुत्तूरम्पाट्टु

पुत्तूरम्वीट्, उत्तर केरल का एक प्रतिष्ठित घराना था । वहाँ के लोग चेकवर [चेकोर] नाम से प्रसिद्ध थे । वटक्कनपाट्टु के प्रमुख वीर आरोमल चेकवर और उनकी बहिन वीर वनिता उण्णियार्चा का जन्म, इस घराने में हुआ था । उण्णियार्चा का बेटा [आरोमुण्णी" का भी यह घराना अपना है । उन तीनों जीवन गाथाओं को पुत्तूरम पाट्टु नाम दिया गया है ।

---

1. डा॰ चेलनाट्टु अच्युत मेनोन ने पहले पहल उत्तर केरल के गीतों को वटक्कनपाट्टु नाम दिया है ।

आरोमल चेकवर

आरोमल चेकवर के जीवन से संबन्ध रखने वाली कई घटनाएं ग्राम कवियों की गाथा का विषय है। आरोमल चेकवर अस्त्र शिक्षा में निपुण हो गये थे। ये देखने में अति सुन्दर थे। द्वन्द्व में उनकी बराबरी कोई नहीं कर सकता था। उनके जीवन की सर्व श्रेष्ठ घटना उनका प्रथम अंक [पुत्तरियंकं] एवं निधन है। उनके पहले की कई कथाएं भी प्रचलित हैं। मामा के यहाँ वे जुआ खेलने को एक बार गये। उस समय की वेशसज्जा के बारे में लोक-कवि का वर्णन देखिए -

कोचिल कोडुत्तुक्क कोत्तुवळा
नाटि कोडुत्तोरु पोन कुप्पयं
नाडुवाषि कोडुत्तोरु पोन्निन तोप्पी
देशवाषि कोडुत्तोरु नागमाला,
शिष्यन्मार कोडुत्तोरु पोन चूरल कोल
एणायिरत्तिन्टे अडियेरुप्पु
एडपिरि मन्नवनीपिरियुं
चक्कमुल्लन वळ कोत्तुवळा
ताम तन्ने तीर्थिळ्ळ पोन मोतिरं
चमयङ्ङळोक्केयुं चेर्तणिञ्ञु... ।

भाव : आरोमल चेकवर की वेशभूषा इस तरह की थी कि वे अपने हाथ में जो कंकण पहना था वह उस देश के राजा का पुरस्कार था, उनकी कुर्ता, टोपी, नाग-माला आदि भी अपनी वीरता के कारण देश राजा नाट पिता, देशाधिकारी आदि का दिया हुआ था। उनके प्रियशिष्यों का ~~xxxx~~ दी हुई एक लाठी भी उनके हाथ में उस समय थी। उनका चप्पल, बहुत कीमती थी, बटाहन के काटे

1. पुत्तरियंकं - शाब्दार्थ है - प्रथम द्वंद्व।

रूप में बने कंध कंगण भी वे पहिने थे । अपनी हाथ की बनायी रत्न अंगूठी को भी उन्होंने उस समय पहना था । उतनी ठाठ बाट से वे मामा के यहाँ जाने को रवाना हुए । उनकी यह वेष सज्जा देख कर उनकी माँ स्वयं शंका करने लगी कि उन्होंने बताया, बेटा इतनी ठाट बाट की आवश्यकता नहीं कि तुम्हें किसी का भी नजर लग जाएगा, जो दोष पहुंचाने वाला है ।

आरोमल चेकवर तो अति सुन्दर उनकी वेषभूषा भी उतना मोहक थी कि उसे देखने पर पुरुष भी उनपर मुग्ध हो जाते थे । जब वह मिकचेरी नामक अपने मामा के घर पहुंचे तो मामी ने उनका उचित स्वागत किया । जलपान कराया । खूब सत्कार भी किया । मामा के साथ उसने जुआ खेला । अपनी बुद्धि मत्ता से उसने मामा को जुए में हरा दिया ।

मामा की बेटी थी तुम्पोलार्चा । जब आरोमल मामा के यहाँ पहुँचा था तब वह नहाने गयी थी । नहाने के बाद अपनी सखियों के साथ आनेवाली तुम्पोलार्चा की मादक सुन्दरता से आरोमल आकृष्ट हुए । आरोमल को इस वेषभूषा के साथ मदन मोहन के समान देख तुम्पोलार्चा में भी प्रेम उत्पन्न हुआ । दोनों की आँखें लगीं । उसी रात को उनका रहस्य मिलन हुआ । तुम्पोलार्चा ने अपना सर्वस्व उन्हें सौंप दिया ।

आरोमल घर लौटे । अपनी पत्नी कुंजुण्णीली थी । उसको यह पता नहीं था कि तुम्पोलार्चा से उनका लगाव हो सकता है । लेकिन उस दिन ही में तुम्पोलार्चा गार्भिन हो गयी थी । यह बात किसी को भी मालूम नहीं था । जब तुम्पोलार्चा ने एक बच्चे को जन्म दिया, तब आरोमल कुञ्ञुण्णीली के साथ उसके पास गया और अपने बच्चे और तुम्पोलार्चा को साथ लेकर पुत्तुर वीठ में आकर रहने लगा ।

पुत्तरियंकम

आरोमल चेकवर के जमाने में मलबार में देशीसामंत प्रथा चालू थी । उस व्यवस्था में घराने के शासन का हक आयु में बड़े को मिलता था । इस कारण से कुछ घरानों में अधिकार संबन्धी झगड़े भी होते थे । उनका फैसला अंक [illegible] से कराया जाता था । अंक दोनों विभाग के चेकवरों में होता था जिसमें एक की मृत्यु से फैसला निकलता था । जो मारा जाता उसका पक्ष हार जाता, जो विजयी होता उसको अधिकार दिलाया जाता ।

आरोमल चेकवर के समय उनकी रियासत में कुरुङ्ङिट्टडम नामक प्रतिष्ठित घराने में एक अधिकार संबन्धी मामला हुआ । आखिर अंक चलाकर मामले का फैसला निश्चित करने का निश्चय हुआ । उण्णिचन्द्रोर और उण्णिकोनार दोनों भाइयों में वैर था । उण्णिचन्द्रोर अरिङ्ङोडर को और उण्णिकोनार आरोमल को अपना अपना [illegible] के योद्धा बनाने में सफल हुए । आरोमल का यह पहला [illegible] लड़ने में सफल हुए । आरोमल का यह (पुत्तरियंक) था । अरिङ्ङोडर धोखे बाज था । इस कारण से, आरोमल के रिश्तेदार सब दुःखी हुए । वे जानते थे आरोमल बात का पक्का था इसलिए किसी भी हालत में अंक से विमुख नहीं रहेंगे । वह जान से भी अधिक प्यार मान को रखता था । अरिङ्ङोडर को धोखे बाज जानते हुए भी उसने उससे लड़ने का वादा किया । अंक शुरू हुआ । अरिङ्ङोडर ने कई बार धोखे से आरोमल को मारना चाहा । लेकिन आरोमल ने अपनी सावधानी से उससे बचते हुए वार किया । एक संगीन घड़ी में अचानक आरोमल की चुरिका टूट गयी । वे स्तब्ध हो गये ।

---

1. चुरिका – [illegible] में आयोधन करने का तलवार है जो छुरी सा लगता है ।

आरोमल को यह मालूम नहीं था कि अपने साथी, चन्तु ने धोखा दिया है। उसने चन्तु से दूसरी चुरिका मांगी तो उसने इन्कार किया। अरिङ्ङोडर ने मौका पाकर उन्पर जोर से वार किया। तो भी आरोमल पर उसका कुछ असर नहीं पडा। उन्होंने टूटी चुरिका के टुकडे को थामे लिया और उससे अरिङ्ङोडर का सिर काट डाला। आरोमल अंकं जीत गया। यह आरोमल का पुत्तरियंकं था। अरिङ्ङोडर के आक्रमण से आरोमल के पेट में एक गहरा घाव लग गया था। वह थक गया था। थकावट को दूर करने केलिए वह अंकं के मंच पर थोडा लेट गया। उस अवसर पर चन्तु ने जो आरोमल से बदला लेने को चाहता था - दीपक का कुंदा उसके पेट के घाव में घुसेड दिया। आरोमल को अब मालूम हुआ कि दगाबाज कौन है। आरोमल को अब मालूम हुआ कि दगाबाज कौन है। आरोमल घर लाया गया। वहाँ उसकी वीर मृत्यु हो गयी। जीवन में प्रथम बार उसने द्वन्द्व किया था। उस द्वंद्व को जीत भी लिया। लेकिन उसकी वीर मृत्यु भी, साथ साथ हुआ। यही पुत्तरियंकं था। आरोमल का अंत्य कलशाई थी। मृत्यु के वक्त उसने अपने छोटे भाई को बुला कर कहा :-

> पिळिच्च पिळिक्कोट्टु पेण्णु कण्णन,
> एन्ना पिळिक्कोम्टे मेरट्टने
> मरोलु मक्का पिळिक्कुण्णी
> इवने नी मक्कोण्म रक्षिक्कम
> नीयक्कातिवनाकमिक्कयक्को 1-- ।

तुपोलार्चा में आरोमल का जो बेटा पैदा हुआ था, उसकी देख रेख का भार अपने छोटे भाई के हाथ सौंपकर वह वीर पिता कहते हैं :-

"हे भाई ! मैं ने तुम्हें इसलिये बुलाया है कि तुम देखो, यह मेरा महना बेटा है। तुम इसका उचित पालन करना। मैं इस दुनियाँ से चलता हूँ, अब तुम्हारे हाथ में मैं इसे सौंप देता हूँ।

---

1. तच्चोलि प्पाट्टुकल = पृ॰205

आखिर उस वीर ने, वीरोचित संघर्ष करते करते वीर मृत्यु प्राप्त की । उस प्रसंग को - लोक - कवि ने इतना आर्द्र बनाया है -

कण्ककि्कट्टे नेरन्निया
कण्ककि्कट्टे उण्णियार्चे
कण्ण ककि्कट्टे कुञ्ञीलये
कण्ण ककि्कट्टे नालोरे
इन्नियुल्ल कालवर्यु नम्मल तम्मिल
इन्नियुल्लकालत्तुं नम्मल काण कयिल्ला -
....
कण्णयिन्नु मरिन्नु चेकोम"[1] ।

भाव : हे प्रिय भाई, प्रिय बहिन उण्णियार्चा, प्यारी पत्नी कुञ्ञीली, प्यारे बन्धुवर एवं प्रिय देश - वासी, इस जन्म में अब हमारा तुम्हारा मिलन असंभव है तुम सब के सामने में यह देश छोड कर हमेशा के लिए चला जाता हूँ - ऐसा कह कर, वीर चेकोन की आत्मा उड गयी ।

आरोमल चेकवर आज भी केरल के वीर चरितों का रोमांच है । उसके नाम सुनते ही रोंकटे खडे हो जाएगी । वीर गाथाओं में उसकी गाथा अमर है, अद्वितीय है ।

उण्णियार्चा

उण्णिआर्चा आरोमल चेकवर की बहिन भी भाई के समान वह भी शस्त्र विद्या में निपुण थी । उसका विवाह आरम्मणम्मेल नामक अम्पाडाने में हुआ था । उण्णियार्चा की वीरता पर कई गीत प्राप्त हैं । ये गीत पुत्तूर पाट्ट् विधा में आते हैं ।

---

1. केरल साहित्य परित्रम, प्रस्थानम्, उळ्ळूर - पृ.252

उण्णि आर्चा की जीवन गाथा में कई रोचक घटनाओं का वर्णन पाया जाता है । उनमें एक मुख्य घटना नागपूरम मली का आक्रमण है ।

अम्बिमनार काव पुत्तुरं बराने की भगदेवता का मन्दिर था । वहाँ कूत्तु नामक उत्सव मनाया जाता था । वहाँ के अय्यप्पन कावु में दीपोत्सव का समय भी यही था । मामों ने उण्णिआर्चा उस उत्सव में भाग नहीं लेती थी । इस बार उत्सव की पिछली रात को उसने यह सपना देखा कि अम्बिमनार कावु में वह "कूत्तु" देखने जा रही है । "झट" से वह जाग उठी । देखा तो रात का चौथा पहर है । मुर्गे ने काहल ध्वान से उषादेवी का स्वागत किया । तब उण्णिआर्चा ने निश्चय किया कि इस बार उत्सव में ज़रूर जाऊँगा । वह जल्दी से तैयारी करने लगी । उसका वर्णन यों किया गया है -

चन्दन कल्लिन्टे अरिके चेन्नु
चन्दन मुरसि कुरि वरच्चु
कण्णिणोकिक तिलकं चमच्चु तोट्टु
पोन्निरिच्चुट्टि केट्टि वेच्चु
अंजनं कोन्टवल कण्णेजुती
कुंकुमं कोन्टवल पोट्टु कुत्ती
कस्तूरि कळभकल पूशुन्नुन्टे
मेय्याभरण प्पेट्टि तुरन्नु वच्चे
एकुटलोटि वन्नाट्टु
पच्चोलप्पट्टु चुक्कियुं तीर्ते
पूक्कुल मेरिवच्चुटुक्कुन्नुन्टे,
पोन्तोळ्येटुत्तु चमयुन्नुन्टे
कोट्टपेठि वेच्चपोन्नार ताण
मीते अणिकिन्नु पूट्टुन्नुन्टे
एकुटुट्टुल्लोरु पोन्नमाल्युं
मुत्तु पतिच्चुल्ल मालयल्लो

कुळित्तल तन्नेयुं चेर्तिण्ङ्
रामायर्णं चोतिच्च स्टुक्का
पल्ला मेळुत्तट्टणियुन्नुन्टे
पोन्नुं अरन्नेयुमुक्कुन्नुन्टे
चमयलुक्लोक्के चमञ्ञोळुकी
केविरमकारिलुं पोन मोतिरं
चेर्नयोळक्कु अणियुन्नुन्टे,
उरुमियेडुत्तु अरयिल पूट्टी ।[1]

भाव : सुगन्धी तेल मालिश कर नहाकर वह आयी । फिर चन्दन, कुंकुम आदि सुगन्धी चीजों से तिलक लगाया । आँखों में अंजन लगाया । विविध रंग और रीति के आभूषण पहन लिये, नारियल के पत्तों से गाडे हरे हरे रेशम की साडी मोहक ढंग से पहन ली । हाथों में कंगन और उंगलियों पर अंगूठियाँ धर लीं । बालों का जूडा बनाकर उसमें फूल लगाया । कमर बंद और करधनी पहनी । अंत में कमर बन्द के साथ उरुमियाँ रखी जब तैयारी पूरी हुई तो वह आरम्भिण मेल से रवाना हो गयी । वह सीधे कल्लिमलर कावु जा रही थी । उण्णियार्चा का पति कुञ्ञि रामन कायर था । वह पुरुष होते हुए भी स्त्री से गया बीता था । वह भी, उण्णियार्चा के साथ निकला । तातुर नागपुरं गली से होकर उन्हें जाना था । वह उस समय के मुसल्मान आक्रमणकारियों का आवास स्थान था । उन्हें देखकर कुञ्ञिरामन के पैर कांपने लगे । आर्चा ने यह देखकर उस से कहा -

पेण्णाय ञानुं विरयक्कुन्निल्ला
आणाय निङ्ङळ विरयक्कुन्नेन्ते ?[2]

भाव : मैं एक स्त्री होते भी कांपती थोडी हूँ, आपतो पुरुष हैं, फिर इस प्रकार थर थर क्यों कांपते हैं ?॥

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.293
2. उण्णियार्चा - वडक्कन पाट्टुकल - के.वि.के.नंबियार - पृ.207

इतनी सुन्दरी एक स्त्री को गली से होकर जाते देखकर मुसलमान डाकुओं के नेता ने उसे अपने लिए पकड़ लेने की आज्ञा दी । आज्ञा सुनते ही आक्रमणकारी हुँकार मचाते उण्णिआर्चा को घेर लिया । वे वे क्या जाने कि उण्णिआर्चा कौन है । डाकुओं को देखते ही उण्णिआर्चा ने कमर कसके बांध ली -

अरयुंतलयु मुरिच्चयकुम्नु
अरयीन्नुरुमि एडुत्तलल्लु
ननमुन्टु नम्मार्चरयिल वेट्टिट
वेरिट्टु निन्नल्लो पेण्किटावु ।
अरिशं चोरिञ्ञु परञ्ञुपेण्णु,
आणु पेण्णाल्लात्त कयन्मारे
एन्नोडीराश मिडक्ल कुन्टोन्किल
एन्नुडे कयपुं पिडिञ्ञु कोलणिम
    परिय दूषणं चोल्लियार्च
    आणिका पोले चिरतुटङ्ङी
    अंक कलिकोन्ट निन्नवर्नु
    अटियीन्नु मुटियोविलरज्ञु पोयी[2] ।

फिर उण्णिआर्चा का साहस उतना जग उठा, कि उसने फिर कमर खूब बांध लिया, कमर से उरुमी निकाल ली, दुश्मनों का सामना करते रही । वह रुष्ट एवं रणचण्डी सी भी कर बन गयी । उसने दुश्मनों से ऐसा कहा कि है, नपुंसक के समान हीन, म्लेछो, अगर तुम्हें शक्ति है तो मेरे शरीर का परस करो । मैं एक स्त्री हूँ । सही तो है, लेकिन मैं तुम्हें जान से नहीं छोड़ूँगा ।

एन्नालो मोहिक्क त्तकुत्तु कोळका
पकरि तिरिञ्ञोन्नु निन्नु पेण्णु

---

1. उण्णिआर्चा - वडक्कन पाट्टुकल - के.टि.के. मंबियार - पृ.297
2. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.254

कुतिरप्पाञ्जिल वोन्नु पाऽऽायर्
ममनुन्ट् वीशीदटु निन्नु पेण्णु
रन्टामतोन्नु मरिञ्ञु पेण्णु
पतिमेट्टावे करित्तल वेवकुन्नुन्टे

भाव : तुम फड समाम मूर्खो - देख - ऐसा कहकर उसने करवट बदली, और छुरिका से वार किया, सिमियों के अन्दर तीन सौ से अधिक मुसलमान डाकू मारे गये । बाकि सारा म्लेछ उठ भाग गये ।

आखिर डाकुओं को पता लगा कि यह वीर वनिता, पुत्तूरं वीट् के आरोमल चेकवर की बहिन उण्णियार्चा है तो उससे रहा न गया । वह जल्द दौड कर आया उण्णियार्चा के पैरों पड माफी माँगा । लेकिन उण्णियार्चा ने उसका कुछ नहीं माना । तब वह सीधे, आरोमल चेकवर के पास गया और सारी बातें कह सुना दी । हजारों बार माफी माँगा तो चेकवर नागपुरं गली में आकर उण्णियार्चा को सांत्वना दी । फिर से नागपुरं गली से होकर साधारण स्त्री भी निरवल जा सकती थी । उण्णियार्चा के नाम स्मरण करते ही म्लेछ लोग और अंधा होने लगे । सारी दुनियाँ उस दिन से उण्णियार्चा को देवी सा मानने लगे ।

आरोमुण्णी

वीरांगना उण्णियार्चा का एक मात्र पुत्र था आरोमुण्णी । पुत्तूरं पाट्टु का यह भी एक वीर नायक है । आरोमल चेकवर का यह भतीजा था । आरोमल के दुखान्त का कारण इस युवा ने बहुत बचपन से माँ उण्णियार्चा से समझ लिया था । उसके प्रतिशोध की माँग सा वह बडा हो गया । उसके मन में अकेला चन्तु था, जिसने धोखे से अपने मामा का नाश कर डाला था ।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.254

उसका उचित प्रतिशोध, करना ही होगा यही आरोमुण्णी की एक मात्र अभिलाषा थी । आखिर वह कोलत्तुनाट्टु गया । वहाँ चन्तु से द्वन्द्व करके उसे, मार डाला । आरोमुण्णी की वीरता का वर्णन आरोमुण्णी नामक गाथा में इस चमक से प्राप्त है कि वह वीर अभिमन्यु के समान था । अन्य पुत्तूरम पाट्टु की समकक्षा में यह गीत भी आता है ।

चेकोन्मारायि जजनिच्चाल पिन्ने
वालकणियिल चोरल्लो चेकोन्मार्कु
पुत्तूर वीट्टिल जनियकुन्मोर्कु
नेर्मकोधिचुडे वयरमवर्कु
कवरियठच्चिडिकरिककुन्नतु
चेकवन्मार्केतु चेर्चयिल्ला .... आदि

आरोमुण्णि कथा गीत में चेकोर जाति का महत्व बतानेवाली पंक्तियाँ ऐसे है -

भाव - जिसने चेकोन का जन्म लिया, उसका अन्न, तलवार का है । जिसका जन्म पुत्तूर वीड में हुआ है उसकी आयु मुर्गी की है । कचरी में बन्द रहना चेकोन के जीवन का योग्य नहीं है - इत्यादि । उण्णियार्चा इस गीत में एक वीरमाता के रूप में और भी ऊपर उठी है । देखिए अपना एक मात्र पुत्र जो केवल सोलह वर्ष का है - उस दगाबेज चन्तु से लड़ने को उद्युक्त हो जाने लगा है तब असाधारण व्यक्तित्व के साथ वह माँ कहती है -

नेरिट्टु वेट्टिट मरिच्चोन्मिकल,
वीट्टेयकु नल्लोर मार्म तन्ने
वीराकिप्पट्टु तितानत्तोडे
आर्तु विकिच्चु हकुप्पिक्केन्टु

1• वडक्कन पाट्टुकल [सम्पूर्ण] श्रीराम विलास प्रेस - पृ•127

एल पूल नम्माय करिचिप्पवेकवाँ
ओरिक्काडु कोन्टु मरिक्कतेन्निल
पञ्चोलयिल केट्टिट वलिप्पिप्पकोन्डु
पुल्युं कुटि ञान कुडिक्कयिल्ला••• । [1]

भाव : हे मेरा बेटा, समझो कि, तुम दगेबाज चन्तु से लड़ने जा रहे हो, उसके सामने, उसके सामना करते करते, सीधे अगर तुम तलवार का मार खाकर मर जाओ तो तुम अपने घराने का शान बढा देता है, मैं बोलूँगी तुम मेरा अपना बेटा हो। वीराकिष्पट्टुविलान आदि वीरोचित मान्यताओं से तुम्हारा शव मैं घर पर ला दूँगी । अन्य क्रियाएँ भी, वीरोचित करा दूँगी । अगर धोखे में पड़कर तुम मर जाओ तो कुत्ते का सा मानूँगी मैं । उसी का तुम्हें अंत्य भी मिलेगा •••••• आदि । इस अभिमान की मूल संजीवनी लेकर आरोमुण्णी चन्तु के पास गया था । उस का चन्तु से जो द्वन्द्व हुआ, उसका भी वर्णन देखिए -

पीरिरयकुकुन्नु आरोमुण्णी
वाठि मयङ्कुन्नु चन्तवल्लाणु
ओन्निङ्ङु तेककण मारोमुण्ये
पतिनेट्टु कळरियिल पयरिर ञानुं
एन्नोड आरुं जयिक्कोरिल्ला ।
पूल्लुरं आरोमल चेकवरे
अवरोडु पोरुति ञान निन्निट्टुकडु
निन्नोडु ञानुं मङ्ङुयिप्पोल
अतुकोन्टेनियकोर भयवु मिल्ला
ञानोरु कुडिपिच चेयतोमाणु
एनियकु मरिप्पान विधियुं तन्नु
वेल्लतिन्निट्टेन्ने कोन्नीडण्म"

1• केरल साहित्य चरित्रम - पृ•255

अष्पोल परयुन्नु आरोमुण्णी
अम्मामन पण्टेकिस्तनु पोयकार्न
कक्कनति याले ओन्नु नीये
वेक्कं कोटुत्तन्नु कोम्मो चन्तु ?

भाव : साँप सा फूँकता हुआ, आरोमुण्णी ने चन्तु की ओर बढा । यह देख कर चन्तु चौंका पडा गया । लेकिन उसने आरोमुण्णी से ऐसा चिल्लाकर कहा कि मैं ने अठारह कळरियों में पयट्टु ﴾द्वन्द्व﴿ किया था । अभी तक किसी को मैं ने बिना मारे छोडा नहीं । मुझ से कोई कब तक जीत जाय । पुत्तूरम चेकवर आरोमन की बराबरी भी केवल यह चन्तु मात्र करता था । आज मैं तुमसे हार हुआ । तो भी मुझे दुःख नहीं । मैं ने एक कुटुंब वंचना की थी । उसका फल आज काल बनकर मुझ पर पडा है । मगर तुमसे अभी मेरी एक अपेक्षा है । पानी देकर मात्र मुझे मार डालना । यह सुन कर आरोमुण्णी और भी तीखे होकर पूछने लगा कि अरे ! धोखेबाज, चन्तु!क्या तुम ने, अपने मामा को जब धोखे मार डाला उस समय क्या तुम ने उन्हें पानी दिया था ? उसका जवाब उसी सिक्के में लो - यह कह कर उण्णी ने उस पर जोर से वार किया और मार डाला । उसका सिर और हाथ काट दिया दोनों वीरांबिच्चट्टु में बाँधकर माता के पदों में आकर भेंट की । उस वीर माता ने अपने बेटे को छाती से लगाया । सारी दुनिया ने आरोमुण्णी की तारिफ की ।

आरोमल चेकवर, उण्णियार्चा, आरोमुण्णी तीनों एक ही धराने के थे । तीनों ने वीरता का मुकुट लिए जीवन को धन्य बनाया । उनकी गाथाएँ वीरगाथाएँ हैं । इस कौटुंबिक वीरगाथा को वटक्कन पाट्टु विधा में मुख्य स्थान दे सकते हैं ।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.255

तच्चोळिक्कप्पाट्टु

वटक्कन पाट्टु की दूसरी मुख्यधारा तच्चोळिक्कप्पाट्टु है । तच्चोळि माणिक्कोत्तु घराना वडकरा [उत्तर केरल] में था, वहाँ ओतेनन नामक वीर योद्धा का जन्म हुआ । ओतेनन आरोमन चेकवर के समान साहसी एवं अंक विदग्ध [द्वन्द्वयुद्ध] योद्धा था । ओतेनन का पिता पुतुप्पणं गद्दाधिकारी था । ओतेनन ने बचपन से ही मतियूर गुरुक्कल [गुरु] के यहाँ से शस्त्र शिक्षा सीखी थी । उसके बड़े भाई कोम कुरुप नास्तिक थे । ओतेनन ने कतिपय शास्त्र विद्या प्रतियोगिताओं में अपनी कुशलता दिखला भी दी थी । सामूतिरि राजा को भी ओतेनन के बाहुबल और शस्त्र निपुणता पर बड़ा हर्ष था । मंत्र-तंत्रों में भी वह निपुण साबित हुआ । अपनी जान को किसी भी क्षण में दूसरों के लिए न्योछावर करने वह सदा तैयार था । इतना आदर्शवीर उस ज़माने में दूसरा नहीं था । वीराराधना में लीन जनता ने ओतेनन की वीरता से मुग्ध हो उसके जीवन की कथा पर कई गीत बनाकर उस समय गायी है । उन गीतों का केरल की वीर गाथाओं में महत्व पूर्ण स्थान है । उन वीर कथा गीतों में ओतेनन की जीवन गाथा की कई घटनाएँ प्राप्त हैं । उनमें मुख्य घटनाएँ ये हैं, उलकमारकात्तु की । तलकनार ज्ञान शक्ति हमेशा उसके साथ थी । उसके बिना ओतेनन कुछ नहीं था । पुतुप्पणम वाळुन्नोर से ओणप्पुटवा लेने जाना, कोडुमल कुञ्ञिक्कण्णन से किराया जमा लेना कुंकि अम्मा की गर्विष्ठता का उत्तर देना, चिरक्कल राजा के आदेश से मुसलमानों से युद्ध करना, कोट्टयकम कुञ्ञालि मरिक्कार की स्त्रीचपलता का उपहास करना, करिमला किले से बच जाना, इस प्रकार उसकी वीर मृत्यु तक की अनेकों घटनाएँ इस वीर गाथा में आती है ।

ओतेनन का विवाह इन घटनाओं में एक मुख्य विषय है ।

---

1. तच्चोळिक्क माम कोल घराना वडगरा रेलवे स्टेशन से एक मील पूर्व मेप्पयूर में है । वहाँ आज भी तच्चोळि ओतेनन का यादगार मंडप देखा जा सकता है ।

ओतेन्न का विवाह

कातिरूं घात्तोत्तु मातेवी अम्मा को अपनी बेटी चीरु की शादी ओतेनन से कराने की इच्छा थी । उस समय बाल्य विवाह प्रथा चलती थी । तालिकेट्टु उस का आधार था । मातेवि अम्मा ने ओतेनन के भाई के पास जाकर अपनी इच्छा प्रकट की । ओतेनन को यह जरा भी अच्छा नहीं लगा । उसने कहा -

काक्कयेप्पोले करुत्तचीरु
पनिक्करुन्नचीरुने वेन्टेन्टेट्टु
चक्कक्कुरु पल्लुं पेन्नलयुं
पनिक्करुन्नचीरु मे वेन्टेन्टेट्टा ।
अच्छनु मम्मक्कु वेन्टेन्किलुं
वटकर पोकरुप्पन सोमकनु
कोप्पर काक्कान उडाक्किक्कोट्टे
चोनोनार्क्कीरुने वेन्टेन्किलु
तोणियिल तेक्कडोषिक्ककोट्टे"

भाव : यह चीरु नामक लड़की कौए के समान काला है । कटहल के बीज सी दाँत और कटमलों से भरे बालों वाली उस भद्दा, मुझे नहीं चाहिए जी । उसके माँ बाप को अगर वह चाहिए भी नहीं तो वडकरा के कोप्रा व्यापारी को काक तर्जन के रूप केलिए भेजा करें । अगर उसे भी नहीं चाहिए तो नाव में बुलाकर बहा देने कहिए ।

यह तीखा परिहास मातेवि अम्मा को जाम से जान निकलने सा लगा । वह फिर क्षण भर भी वहाँ खड़ी न रही । मन में कोई दृढ शपथ लेकर वह चली गयी

उसने बड़े ध्यान से चीरु को पाला पोसा । यौवन में पदार्पण करते ही वही चीरु आपसरों की सुन्दरी हो गयी थी । जब अचानक ओतेनन ने चीरु को देखा तो उसे वह/अपनी सखियों के साथ वह नहाने जाती थी । पहचाना नहीं। ओतेनन ने उससे थोडा ताम्बूल मांगा । चीरु को अपने को और अपनी मां को अपमानित बनाने वाली पूर्व कथा याद आयी । उसने कृपापूर्वक नमस्कार किया और बताया ताम्बूल जो उस के पास है वह कोप्रा व्यापारी मुसलमान का जूठा है, जो ओतेनन को देने लायक नहीं है । ओतेनन को तब अपने परिहास तीरों की याद आयी । उसने चालाकी से काम लेना चाहा । साहस और चालाकी के बल पर उसका सामना किया । रातों रात उसकी शय्या बांट ली । मातेयि अम्मा को जब इस का पता लगा तो वह रोष के कारण आपसे बाहर हो गयीं । लेकिन करती क्या ?

<u>पोन्नापुरम कोट्टा</u>

पोन्नापुरं किले के बारे में भी एक गीत इन कथा गीतों के बीच प्राप्त है । कडत्तैनाट्ट नाटुवाष़ि तंपुरान की बेटी कुञ्ञिक्कावी को पोन्नापुरं किले का कप्तान ले गया । उसे बचाने में ओतेनन सफल हुए । इस वजह राजा ने उन्हें बेटी को ही उपहार में दे दीं । चारक्कल राजा के आदेशानुसार ओतेनन मुसलमान आक्रमणकारियों को जमा दिया उस वीर घटना पर भी गीत प्राप्त हुए हैं । लोगों में ममभावना गाबित करने के लिए ओतेनन ने कई लडाइयां की । कण्टाच्चेरि चाप्पन ओतेनन की सखा एवं जान का जान था । उन दोनों सखाओं की बातों से उनकी वीरता का लोक-कवि इस प्रकार उदीरण कर रहें है -

पण्टु जोनोरे कोम्पु मम्मन,
पण्टु पटर्यु कप्पनुमम्मन

1• युवतियों से ताम्बूल मांगने से मतलब प्रेमाभ्यर्थना है ।

क्यारुत्लात्त पडि क्यरि
वरिक्कल्लात्त कट्टिन्मेलिरुन्नु मम्मल
उरङल्लात्त मुरियिलुरङी मम्मल
कुक्किल्लात्त कुळत्तिल कुळिच्चु मम्मल ।[1]

भाव : हमने अनेकों और तथा अनेकों मुसलमानों [डाकुओं] की हत्या भी की । जहाँ जहाँ हम को मना किया उन सब फाटकों को हमने तोड लिया । जिस सीढी चढने से मना किया उस सीढी से हम ऊपर चढे गये । जिस पलंग पर बैठने से मना किया उस पलंग पर बैठ गये, जिस कमरे में प्रवेश निषेध लिख डाला उसी कमरे में हम जा सो गये । जिस तालाब में नहाने से मना किया उसी तालाब में हमने, कुद किया थीं । हमारा साहस उतना सराहनीय है कि हम किसी के नाक के नीचे झुक न गये ।

आज के नाराज पीढी कहने वाले युवा नेताओं में भी ऐसा क्या साहस हम कभी देख सकेते क्या ? नाराज कवि कहने वाले कवि क्या इस लोक कवि का कुता उठा सकता है ?

कोट्टमल कुंजी नामक नवोढा की रामायण पाठ की तुलना लोक-कवि ने इस गाथा में ऐसा किया है -

चोलप्पनं किळि कूवुं पोले
पंचवर्णम तत्त परयुं पोले
मादापुरं कुळलूतुं पोले
नाट्टु कुयिलु विळिक्कुं पोले ।[2]

भाव : यह क्या सुन गया है ? जीली मेना का गीत है क्या, पंचरंगी तोत्ता बोलती हो, या मादापुरं बाँसुरी की आवाज हो, या गाँव की कोयल की कूक हो ।

---

1. तच्चोळिप्पाट्टुकल - के.वि.के. नंबियार - पृ.127
2. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.260

कुञ्चियम्मा का रामायण पाठ उतना मधुर और लयबद्ध था ।

ओतेनन की वीर मृत्यु

ओतेनन का जन्मजात दुश्मन कतिरूर गुरुक्कल नामक साहसी वीर था । उस लड़ाकू से एक दिन ओतेनन को बात काटनी पड़ी । गुरुक्कल ने निन्दा सूचक बातों से ओतेनन का वैर बढ़ाया तो उसने उसी स्वर में जवाब दिया ।

तेनमुक्कु पूत्तु ओलरन्पोले
नेयिलत्तु कुम्नि मिरऽन पोले - वीरोचित स्वाध जाकर आक्रमणों से लड़कर वह अंक लड़ने निकला ।

उनकी कुशलता युद्ध में ऐसा था -
'एर्ड कलिक कोत्तिप्पार्ड पोले
कारयीन्नु नेयप्पं कुत्तुं पोले
पप्पर्ड वाट्टिट येडुक्कुं पोले"[1] ।

इतना सरल कि - जिस प्रकार, कड़ित्र नामक पक्षी जो देखने में छोटी होती, विशाल खेत से कम्मों की गुच्छ झटसे काट कर ऊपर उठती है और जिस प्रकार पगवान बनाने के बर्तन से एक काठे नोकदार तार से चुभ लेता है, या पापट पकानेवाला करता है - उसी सरलता से अपनी छुरी से वह दुश्मनों को मार डालता था । जिस दिन गुरुक्कल ने अंक निश्चित कर दिया था उस दिन लोकनार काव में अपशकुन होने लगा था । उस दिन अंक जाने से माताजी ने उसे मना किया । लेकिन एक बार अंक निश्चित किया जो ओतेनन जीते जी उससे दूर नहीं रह सकता था । उसने कतिरूर गुरुक्कल के परिहास के प्रत्युत्तर इस प्रकार दिया था -

1. केरल साहित्य चरित्रम - पृ.26।

तिरुकिल्लोरो कुरिक्कियय्यु
कोल्लित्तलोरोरो पेरेमियय्यु
अन्नु ञान तीण्टारि यायिल्लेन्नु
अन्नु ञान पेरक्किडिल्लेन्नु"[1] ऐसा न हो तो मैं ज़रूर अंक के लिए आऊँगा । ऐसा कटु वचन भी हुआ तो, चाहे देवी की भी परीक्षा छोड़कर चला जाना ही पड़ता है ।

वह सीधे अंक भूमि की ओर रवाना हो गया । वहाँ उसने गुरुक्कल और उसके मित्रों को भी मार डाला । वहाँ से विजय भेरी के साथ लौट गया । इस अवसर पर उसका हथियार अचानक युद्ध भूमि में भूल गया । उसे छोड़ देना ओतेनन को अच्छा नहीं लगा । वह बीच में से लौट गया । इस अवसर पर कतिरूर गुरुक्कल का एक शिष्य मायिन कुट्टी नामक मुसलमान ने[2] उसके माथे पर गोली मार दी । उसने जल्दी ही अपनी छुरी उँगली से उसे मार दिया । तो भी ओतेनन घर की ओर बढ़ा ।

अंक जीतने के बाद जब ओतेनन यात्रा के बीच अंक भूमि की ओर हथियार लेने निकलने लगा तब सारे लोगों ने उसे मना किया था । लेकिन उसका मान इतना बढ़िया था कि उसने कहा -

केळ्पुकेट्ट नायर पडयकुरुप्पु
आयुधमिट्टेच्चु पोयिट्टेन्नु
नालोर परञ्ञु परिहसिक्कुं
चेक्कोत्ति मार्क्कु पिणक्कियावुम्
ञान तट्टत्तानु निल्क्कयिल्ला[2] ।

---

1. इस लोक गाथाकार जन कवि के अनुसार और कुछ कथाओं और जन कृतियों के अनुसार भी तच्चोलि ओतेनन का अंत इस प्रकार है । लेकिन कुछ सिनेमा कथाओं में इस कथा को तोड़ मरोड़ कर अन्य रूप बनाये गये है ।

2. तच्चोलिप्पाट्टुकल - पृ॰ 132

अगर मैं लौट कर मेरा हथियार वापस न लाया तो सज्जन और सारी दुनियाँ मेरी हँसी उड़ाएगी । वे बोलेंगे कि वह मशहूर वीर होते हुए भी अपना हथियार भी छोड़ कर भाग गया । यह वीरों का योग्य काम नहीं है । इसलिए चाहे कोई भी कहे, मैं न मानूँगा । अगर हाथी भी मेरा मार्ग थामें, मैं उसे भी जीतकर चलूँगा ।

इस निष्कर्ष पर चलनेवाले ओतेनन का अंत्य विधि कल्पित मात्र माना जा सकता है । उनकी अंत्य संवाद भी देखिए :-

अनुजने कण्णाले काणुम्नेरं
कुम्भित्तल मुख पोट्टु पोले
पोट्टिक्करयुन्न कुट्टन्मारो
आवुन्न तर्क विलक्किन्नानुं
विलक्कियलोन्नु मी केट्टिल्लल्लो
ता मुट्टिन्नल्लो पोन्ननुजा
अनुकेट्टतेनन्नरयुन्नुन्टे ।

: : :

पोन्नियत्ताकेरे कूटीट्टुन्टे
पय्यारों कूट्टन्मेनिक्कुवेट्टा,
जनिक्कवर केल्लां मरण मुन्टे

: : :

एठने मटन्नङ्कु पोकुन्नतु
क्षीण मुन्टन्नो निनक्कोतेना -
पकरं परयुन्नु कु योतेनन
मैरिरत्तअस्तिनोकन्ट कोन्टान
पन्टारा जीविक्विल्लिन्नट्टोन्टो -

भाव : ओतेनन को इस प्रकार आसन्न मृत्यु पाकर बड़ा भाई फूट फूट कर रोने लगे

1· तच्चोळिप्पाट्टुकल - पृ·133

ओतेनन उसे सान्त्वना दी कि जन्मे वाले सब का मृत्यु भी सही है । यह जान कर आप क्यों रोते हैं । हमने भी हजारों को मार डाला सताया । हमें भी रोना पड़ता है । इस में और क्या ? मैं इस प्रकार माथे पर एक गोली का चोट लगा तो कौन कैसे जीवित रह सकता ?

अधिक क्या कहना 32 [बत्तीस] वर्ष की आयु में उस वीर का दुनियां से विदा हो गया ।

ओतेनन की वीरगाथा में केरल का रोबीन हुड कह सकता है । अंग्रेज़ी आरण्यक वीर गाथा रोबिन हुड की गाथा के समान तच्चोलि ओतेनन कोटुकक गाथा का भी महत्वपूर्ण स्थान है ।

ओतेनन का जीवन एक वीर इतिहास था, उसके चरित्र का बल, शरीर बल, और साहस एक दम वीर हृदयों को मुग्ध करनेवाला था । आज भी केरल के खेतों में काम करने वालों लोग तच्चोली प्पाट्टु गा गाकर भूख प्यास और काम की थकावट को भुलाते हैं । आम जनता की ओठों में वह वीर अपनी गाथा से दिन ब दिन पुनरजन्म ले लेता है ।

तच्चोलि चन्तु

तच्चोलि चन्तु ओतेनन का भतीजा था जो मामा के समान वीर था । चन्तु और तुळुनाटन गढ के कण्टर मेनोन में बडा द्वन्द्व हुआ । चन्तु की पत्नी थी मातु वह अलोक सुन्दरी थी । एक दिन वह ओमल्लूर कावु नामक मन्दिर में देवदर्शन करने गयी । वहाँ उत्सव हो रहा था । उत्सव देखने केलिए कण्टर मेनोन भी आया । वह अनुयायियों के साथ रत्न मंच में बैठा था कि एक सौदामिनी के समान मातु उसकी आँखों में पडी । मातु का रूप देख कर मेनोन विवश हुए । ~~उन्होंने~~ वह विस्मित होकर इस प्रकार स्वयं कहने लगा -

---

1. ओतेनन के नाम कई गीत प्रचलित है । प्रत्येक घटना का मुक्तक गीत के तौर भी गाते हैं । संपूर्ण जीवन गाथा भी गाया जाता है । हिन्दी के वीरगाथा आल्हा के समान यह भी वीरगाथा गाते गाते लोक आपसे बाहर हो जाते है ।

ईवळ पेण्णुड्डल भूमी लुम्टो ?
मानत्तीम्नेड्डामुं पोट्टि वीणो
भूमीम्मु ताने मुळच्चु वन्नो ?
पम्नुमिर मेन्नु पोन्नेन्दु ञान ?
कुन्नत्तु कोम्मयुं पूत्तपोले
इम्नाळिन तैययु तळिर्त्त पोले
कुड्डतोल यायतिन वर्ण्णं पोले
वयनाडन मञ्ञळ मुरिच्च पोले ।

भाव : ठीक है मातु का रूप सौन्दर्य उतना मादक था - उसे देखकर कटर मेनोन के मन में यह चिन्ता उत्पन्न हो सकती थी कि ऐसी स्त्रियाँ क्या भूमि में हो सकता है क्या ? यह शायद कोई अप्सरा होगी । शायद यह आस्मान से टूट कर भूमि में गिरा हुआ कोई तारा हो या भूमि से उग आयी हुई कोई सुवर्ण विग्रह हो । यह कनेर [कोम्मा] का फूल खिला सा लगता है, या आभिक सच्य हो यह नारियल के कोमल पत्तों का जाल हो या वयनाटु की हल्दी [पीली] कटी हो । इतनी सुन्दर एक युवती कैसे हो सकती ?

मेनोन कामान्ध हो उठे । वह मंच से बाहर आया और मातु का हाथ पकड़ लिए, मंच में लेकर अपनी गढ़ जा पहुँचे ।

मातु तो पतिव्रता साध्वी थी । वह कुपित नागिनी सी जाग उठी ।

वन्नुयें पिडिच्चोनेरं तम्मान
हट तुळ्ळि चिरिच्चतु मातुवेण्णु
आणुं पेण्णल्लात्त वळतिकप्पया[1]
अम्म पेट्टुम्मात्त निमळिळ्ळोरा
पम्नेनी परिञ्ञतो वळतिकप्पया
तञ्चोति वन्नु मे परियो मीयुं

---

1. वटक्कन पाट्टुकळ - श्रीरामविलासं - पृ.202

अक्कुडे पेण्णाय मातु ञानुं
उक्की नीति परि‌ञ्ञातेन्किल
कडुकिले कोत्तुपोल कोत्तुमिन्ने... [1] ।

भाव : अरे ! मूर्ख तू कब से हो या चण्डाल । तेरी क्या माँ बहिने कुछ नहीं है क्या ? तुम शायद यह नहीं जानता होगा कि यह कौन है । मैं उस तच्चोलि चन्तु की पत्नी हूँ समझ लो । अगर तुम मुझे छोड़ा भी हो, तुम्हें इस का फल भोगना पड़ेगा अवश्य ।

कण्टर मेनोन का दिल खूब उसके माँस पर था । इसलिए उसने उसे छोड़ा नहीं । चन्तु को जब इसका पता चला तो, वह आश्चर्य सा फूँक उठा । चालाकी से वह अकेले गढ के अन्दर घुस गया । कण्टर मेनोन और उसके हजारों सिपाहियों से अकेला लड़ा और कण्टर मेनोन को मार कर मातु को वापस लिया । चन्तु और मेनोन के द्वन्द्व का वर्णन गीत में देखिए ।

आर्तंकडं कण्टुटन कुञ्ञाच्चन्तु
ईररय्युलि पोले येतुर्कुन्नुन्टे ।
पोर्तु कलर्यु चेकवर् पोले,
मानत्तु वेळ्ळिडि वेट्टु पोले,
x x x
पडिरि तिरिञ्ञाडुं वेट्टिच्चन्तु
तच्चोळिच्चोतिरं वेट्टु वेट्टी
ओम्मत्तु मुरियादि वीणु मेनोन
आर्तु विळिक्कुन्न कुञ्ञाच्चन्तु [2] ।

---

1. वटक्कन पाट्टुकल - श्रीरामविलासं - पृ.230
2. वही पृ.232

भाव : मेनोन और कुञ्ञिच्चन्तु में जो द्वन्द्व हुआ वह बहुत भीकर था । जिस प्रकार प्रजनन अवस्था की चीत्ता क्रुद्ध होकर वार करती है उसी प्रकार चन्तु ने वार किया । जंगल के बैल और नर हिरण की भान्ती वे आमने सामने भिड़े । जिसप्रकार आस्मान में वज्र पात होता है उसी प्रकार दोनों का अट्टहास गूंज उठा । आखिर चन्तु ने तच्चोलि घराने के वीरों का मात्र एक मात्र शस्त्र विद्या का प्रयोग-तच्चोलिच्चोतिरं वेट्टु - से मेनोन को नौ टुकड़ों में काट डाला । माडु को साथ लेकर वह बाहर आया । तुलुनाटन गढ के अन्दर मेनोन के वध करने से तच्चोलि कुञ्ञिच्चन्तु का वीरत्व समाज में गाथा का विषय बन गया । चन्तु के बारे में और भी कई गीत प्राप्त हैं । वे सब तच्चोलि प्पाट्टु विधा में आता है । तच्चोलि प्पाट्टु वटक्कन पाट्टु विधा में हर्ष और वीरता के प्रतीक हैं ।

वटक्कन पाट्टु विधा में कुछ और वीर कथाएं भी प्राप्त है । उनमें पालाट्टु कोमप्पन पुतुनाटन केळु, कर्म्मरपिल कण्णन आदि वीर योद्धाओं की जीवन गाथाएं है । तथापि आरिकुट्टी, कोट्टयत्त कुञ्ञालि मरक्कार आदि मापिळ वीर योद्धाओं के नाम भी गीत प्राप्त है ।

पालाट्टु कोमन

कोमन तच्चोलि घराने से संबद्ध एवं ओतेनन का दूसरा भतीजा था । तो भी वह पालाट घराने की संतति होने के कारण उस घराने के नाम से जाना जाता है । कोमप्पन का उण्णियम्मा से प्रेम था । विधिवश उसे अज्ञात जंगल में बचपन बिताना पड़ा, और अपने अधिकार की संपत्ती को रहते भी, विवश रहना पड़ा । घरेलु झगडों के बीच में पड़कर ये सब हुआ था । लेकिन उण्णियम्मा के प्रेम करने का उसे अवसर मिला । उस कारण उण्णियम्मा के भाई बन्धु उसे मार डालना चाहते हैं । अपनी चालाकी एवं साहस से वह बच गया । उसकी वीरता पर कई गीत प्रचलित है । उसके साहस का एक प्रसंग गीत में ऐसा है -

अडियोर्ड वेक्की तलेरा ड्डोण्णु
मुडियुं कषिच्चिट्टु मिन्नु पेण्णु
मुटिच्चोट्टिल कोमने मिर्तुन्नुन्टु
आपिल पोट्टिच्चु तलयिल वच्चु
चन्टि वलिच्चु तलयिलिट्टु.....
कुलं चुरिरं वन्नु वळञ्ञवर्
वीराल वर्ल कोन्टु वीशिनोक्कि
....
कोमने तन्नेयुं कण्टतिल्ला[1] ।

भाव : जब उण्णियम्मा ने देखा कि कोमप्पन को पकड़ने केलिए शत्रु लोग [अपने भाई और बन्धु] आते हैं तो उसने तालाब के गले तक पानी में खड़ी हुई । अपना बाल बिखरा, फुला दिया । कुमुदिनी के [आंपल] पत्ते और तालाब की झाड़ी ने उसका शरीर भी छिपा था । दुश्मनों ने पानी में जाल पसार कर तक तलाश की । लेकिन किसी ने उसे नहीं देख पाया । उण्णियम्मा की चालाकी और कोमन के साहस का यह प्रसंग गीतकार ने और भी रोचक किया है ।

पुतुनाटन केळु

स्त्रियों के चरित्र का महत्त्व दिखानेवाला एक गीत है यह - जिस में पुतुनाटन चन्तु और उसकी पत्नी की कथा है । चन्तु का भाई था केळु । चन्तु की पत्नी मातु एक मादक - सुन्दरी थी । चन्तु को उसपर बड़ा राग भी था । उसने उसे अपना सर्वस्व दान दिया था । चट्टोकि मेनोन नामक एक अमीर लंपट ने सावधानी से मातु को धन देकर अपने वश में लाया । चन्तु यह नहीं जानता था । एक दिन रात को चन्तु मारा गया । मातु का कंटा फूट गया ।

1· वटक्कन पाट्टकळ - पृ·203

चन्तु का भाई था केळु । केळु साहसी था । भाभी के पास मैनोम की दी मुद्रायें देख कर उसे पता लगा कि सारी बातें मैनोम और मातु की धोखे से हुई है । उसने मातु को पकड लिया । उससे सत्य बताने को कहा। आखिर उसे सारी बातें कहना पडा । केळु ने एक एक प्रश्न पूछ कर उस कुलटा स्त्री का एक एक अंग काट डाला और मार डाला । गाथा कार ने इस कार्य को इस प्रकार गीत में स्पष्ट किया है -

वाक्कं चोदिच्चरिन्नु मुडि
रण्टु वर्तं वच्चरिन्नु मुला
मुन्नु वर्तं वेच्चरिन्नु कातु
नालु वर्तं वेच्चरिन्नु मुक्कु
परिकोण्टोन्मक्कंडिच्चु केळु
वायिले पल्लु मर्ननु वीणु
नेञ्चु मोन्नु कीन्नु केळु ।

भाव : केळु ने उस बदमाश औरत से एक एक प्रश्न किया । और उसके बदले उसने जो जवाब दिया उसके अनुसार एक एक अंग का विछेदन किया । पहले प्रश्न के उत्तर के प्राप्त होने पर उसके बाल काट दिये । फिर स्तन, नाक, कान, आंख, दांत, इसी प्रकार प्रत्येक अंग काट कर उसे मार डाला । स्त्री का चरित्र अभिमानी घरानों के वीर पुरुषों को जान से भी प्यारा था । बद चलनों को कटु सजा मिलता था । उसका उदाहरण है मातु और केळु की कथा ।

इसी प्रकार उत्तर केरल के मुख्य कथा गीतों का विचार हम कर चुके है । जो कहा गया है उससे अधिक कहने को बाकि है । केवल परिचय मात्र दिलाना इस प्रबंध का उद्देश्य है । इसलिए अधिक विस्तार में न ~~गया~~ जाना भी उचित समझता ।

---

1. वटक्कन पाट्टुकल - पृ.236

इटमाटम्प्पाट्टु

मध्य केरल में कई कथागीत प्रचलित हैं । केरल की लोक गाथाओं के बीच ये गीत भी आते हैं । ये गीत ज्यादातर हरि जनों के बीच प्रचलित है । हरिजन वीरों के बारे में गाया गया भी है। इटनाट [मध्य केरल] में गाये जाने वाले के अर्थ में इन कथा गीतों का नाम "इटनाटन पाट्टु" पड़ा है । लेकिन इटनाटन नाम से प्रसिद्ध एक वीर योद्धा के नाम गाये जाने वाली एक वीर गाथा, इटमाटम्प्पाट्टु नाम से अलग पायी जाती है । मध्य केरल में मशहूर हो जाने से और मध्य केरल की आयोधनाविद्या में प्रवीण होने के कारण उस वीर का नाम ऐसा पड़ा था । इस गीत के साथ साथ मध्य केरल में और भी कतिपय कथा गीत प्रचलित हैं । उनका परिचय आगे पाया जाएगा ।

वीरइटमाटम्प्पाट्टु[1]

इटनाटन, इटनाट्टुवीरन आदि नामों से एक पुलय युवा के नाम एक गाथा मध्य केरल में प्रचलित पायी जाती है । तच्चोलि ओतेनन के समान यह भी शस्त्र विद्या एवं द्वन्द्व युद्ध में निपुण था । ये दोनों वीर समकालीन भी कहा जाता है । इटनाटन के जीवन की प्रत्येक घटना गीतकारों ने गाथा के रूप में गायी हैं । आज भी मध्य केरल के खेतों खलिहानों में इस वीर गाथा की धुन सुनाई पड़ती है । इटनाटन "अंबलपुषा" [आलप्पुषा जिला] के माक्कोरि रामनप्पणिक्कर का शिष्य माना जाता है ।

---

1. इटनाट्टुवीरन, चेंकन्नूर आदि, वीरप्पनायन, अंतियाड़ चिक्का आदि मध्य केरल के वीर हरिजन थे । ये लोग अन्य लोगों केलिए अपना जान तक कुरबान करते थे । इटनाटन को - इटनाटन कुञ्ञ् भी कहते थे ।
वट्टियार पी.के. माटन कथप्पाट्टुकल - पृ.49-70

तण्णीर मुक्कं चुंकप्पाट्ट्

तण्णीर मुक्कं मध्य केरल का एक गाँव है । वहाँ झीलों के ज़रिये व्यापार खूब होता था । दूर दूर से नौका में व्यापारी लोग आया करते थे । वहाँ के अधिकारी ने इटनाटन को महसूल [कर] जमा करने को नियुक्त किया । रियासतों में उस समय कर वसूल करने का कोई नियम नहीं था । अत: कुछ शक्तिशाली वीरों को ही कर वसूल करने को भेजते थे । कर वसूल करने का अधिकार रियासत के राजा ऐसे ही लोगों को देते थे इटनाटन कुञ्ञ् को भी ऐसा अधिकार प्राप्त हुआ । उसने वहाँ एक कर-प्पुरा [महसूल वसूल करने को बैठने का घर] बनाया । कर वसूल करते वहाँ शान से रहने लगा । गीत में यह घटना इस प्रकार है -

> अन्नेरं मप्पोलिरुन्न नाटन कुञ्ञ्....
> तण्णीरा[1] - मुक्कत्तोरु चुंक प्पुर केट्टी
> चुंकं पिरिच्चव निन्नोटन कुञ्ञ्
> वीरियत्तोडिंग्ने वाणान तुटङ्ङी[2]

भाव : उस समय इडनाटन कु ञ् ने तण्णीर मुक्कं नामक जल-मार्ग में एक चुंक प्पुरा बना दिया । वहाँ शान से रहकर उस प्रदेश का चुंकं वसूल करने लगा ।

इस प्रकार रहते समय एक दिन इटनाटन को राजा से महल में जाकर मिलने की इच्छा हुई । उसने अपनी माता से पूछा राजा के दर्शन करने का [मुखं काणिक्कल] आचार और नियम क्या क्या है ? अम्मा ने उस की विधि बता दी । माँ ने बताया -

---

1. तण्णीर मुक्कं - चुंकपिरिक्कल - आज भी मशहूर है । वहाँ जलयानों से कर वसूल करने की रीति पहले थी ।
2. केरल साहित्य चरित्रम - भाग -1, पृ.270

पोन्नु कोण्टु पोन्कुषिल तेच्चम मक्कने
पोन्नु कोण्टु पोन चेन तेच्चम मक्कने
पोन्नु कोण्टु पोन पड़क्का तेच्चम मक्कने
मेन्मेरि कळसिने कण्णि वेर्रिल तेच्चम
कुम्पोठे ये पचुक्का तेच्चम मक्कने
केट्टोडे मोयिलयुं तेच्चम मक्कने... ।

भाव : उस समय के रीति रिवाज के मुताबिक राजा को सीधे महल में जाकर देखने केलिए कई भेंट ले जाना पड़ता था । सोने के चीज़ों अधिक चाहिए । सोने की मोढा [पोन्कुषिल] सोने का सुरन[पोन्मिन्मचेन] सोने का पान और सुपारी [पोन्वेर्रिला-पोन्मटक्का] आदि । और उसके साथ साधारण पान सुपारी और तंबाकू मन भर का । इन चीज़ों की भेंट चढ़ाये बिना अधिकारी [चुंगी वसूल करने का अधिकार] लोग भी, किला के फाटक के अन्दर घुस नहीं सकते थे ।

इटनाटन ने ये सारी चीजें इकट्ठी की । तब सज धज कर राज दर्शन के निकला । जब किले के पश्चिमी फाटक पर आया तो प्रतिहारियों ने उसे मना किया । प्रतिहारियों को मालूम न था यह इटनाटन है । इटनाटन ने अपना परिचय कराया । तो भी इटनाटन को अन्दर घुसने न दिया, और[2] किले का फाटक बन्द ही रखा । यह देख कर इटनाटन का रंग बदल गया । भाव बदल गया । उसने किले के अन्दर प्रवेश करना चाहा -

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - भाग-1, पृ.222
2. उस समय पुलया, परया आदि निम्न जाति के लोगों को राजमहल के गढ के अन्दर घुसना निषिद्ध था । ~~राजमहल~~ इस कारण से इटनाटन को भी प्रतिहारियों ने मना किया होगा ।

कुन्निक्कुरुपोल कण्णु तिळड्डी
नेंचत्ते रोमङ्ङळ सत्तिच्चु कोण्टे
कातिल करितुडा तुक्किच्चु कोण्टे
पनिवालन पुलिमीश पनिच्चु निरती
मुन्नु चुवटु पुरकोट्टु मारि
नालां चविट्टाल तोंडिच्चु कोट्टत्तु
वेटि पोले मुरुडिड कतकं तेरिच्चु
कोट्टक्कत्तलवन केलें चेन्नु ।

भाव : उसकी घुंघची [कुन्निक्कुरु] जैसी लाल आँखें बढ गयी । काले काले, छाती के रोंगटे खडे हो गये । चूहे की पूंछ जैसी मूंछ जैसी मूंछे सीधी हो गयीं । वह अत्यंत दुष्ट हो गया था । उसने तीन पग पीछे की ओर हटा, फिर चार पग आगे की ओर बढ कर फाटक पर भर जोरे से लात मारे । आसमानी तलवार सी आवाज निकली । किले का फाटक गिर पडा । वह बिजली सा किले में जा घुसा ।

सारा महल कांप उठा । आखिर राजा के कानों में भी खबर मिली । उन्होंने इडनाटन कुञ्ञन् को सीधे उन के सामने लाने की आज्ञा दी । राजा उसे देखकर मुस्कुराये और वीर इटनाटन विरुद दिया । उस दिन से इटनाटन कुञ्ञन् वीर इटनाटन नाम से मशहूर हो गया । आज भी इटनाटन का वीरापदान मध्य केरल के खेतों में निराई कटाई के समय हम सुन सकते हैं ।[2]

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - भाग-1, पृ.222
2. प्रत्येक अंगी व्यापारियों के हाथ से कर वसूल करने के बारे में अलग अलग इडनाटन मुक्तकगीत भी प्राप्त हैं ।

वेळुकम्पूर कुञ्ञाति

वेळुकम्पूर कुञ्ञाति पाट्टु कथा [कथागीत] के बारे में श्री शूरनाट्टु कुञ्ञन पिल्ला ने इस प्रकार लिखा है -

मध्य-तिरुविताकूर [त्रावनकोर] के परया [पंचमा] जाति के लोगों के बीच अधिक प्रचार में आया हुआ एक गीत है यह । .... चाहे, पुराना हो या नया, सत्य हो या असत्य, हमारे जनजीवन की गूँजाहट इस गीत में भी पा सकता है ।

घटनात्मक कथा गीतों में यह भी प्रधान माना जाता है । वेळुकम्पूर आति बहुत मशहूर थे । उनकी वीरता के बारे में कई गीत प्रचलित हैं । आति शस्त्र विद्या में निपुण एवं अठारह व्यायाम शालाओं [कळरि] का आचार्य था । उसने अठारह बार देश देशान्तरों में कळरि या व्यायाम शाला बनायी । प्रत्येक कळरि में वहाँ के स्थानिक वीरों के साथ लड़कर उन्हें परास्त किया । उन्नीसवीं कळरी के युद्ध में उनका निधन हुआ । उस समय आति आयु में छोटा था । इतनी युवावस्था में किसी का निधन सचमुच दुखद घटना है । उसके शिष्यों केलिए यह असह्य था ।

आति के बारे में कई कथाएं प्रचलित हैं । बचपन से आति एक दिव्यात्म था । एक दिन वह साथियों के साथ खेलते थे । तब उन्होंने देखा एक कबूतर घायल हो धरती पर पड़ा पंख फड़-फड़ा रही थी । वह एक चील की चोंच से गिर पड़ी थी । आति को बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने जल्दी से उसे उठा लिया । बड़े प्रेम से पाला पोसा । कई दिन बीत गये । कबूतर बहुत प्रसन्न थी । एक दिन उसने आति को सामने बुलाकर मानवों के स्वर में कहा - अब मैं चला जाता हूँ । मैं एक मामूली कबूतर नहीं हूँ । मैं करियात्तु कोटा का करियात्तु पणिक्कर - आचार्य हूँ । मैं वेष बदल कर हूँ । मैं अब अपने वेष में आ नहीं सकता । मैं तुम्हें यह अनुग्रह देता हूँ कि तुम अठे

1• वेळुकम्पूर कुञ्ञाति - वेट्टियार ए प्रेमनाथ
2• शूरनाट्टु कुञ्ञन पिल्ला - भूमिका - पृ•6

वीर और संग्राम धीर हो । शस्त्र विद्या में तुम्हारी बराबरी दूसरा कोई नहीं करेगा । तुम अठारह कळरियों का आचार्य बनोगे, उन्नतवीं कळरी में तुम्हारा देहान्त हो जाएगा । ऐसा कहकर कळूर एक दिव्य ज्योति के समान उठ गयी ।

वेळम्नूर आर्ति के जीवन में घटनाएं वैसा ही घटीं । वे एक दिव्य वीर धीर योद्धा बन गये । अठारह कळरियों में उनका अधिकार जमाया गया । आखिर उनका निधन हुआ ।

गीत में कळूर की बातें ऐसी है -

काले पलिररान्दु अङ्क्यु वेयत्तु
पन्नियिरुन्नि पोक्यु वेण्ण वेळम्नूराती
मक्कल कोट्टुक्कुन्ने यक्क वेळम्नूराती
ओरु कुप्पिनु निद्दिटनु पूकुनु मक्कल वेच्चु
कुरुत्तान कोट्टुक्कुन्ने यक्क करियापणिक्कर
कुरुत्तान कोट्टित्तदट्टु कूट्टि मुरुकिक[1] ।

पतिनेट्टु कळरीलु नी पोक्यु वेय्यु
तमत्तोन्ना गनोट्टु वेटी जयिक्कु
पत्तोन्पता कळरीलु नी पोकस्तेठा
पत्तोन्पता कळरी वेच्चुमिन्नट त्यमाणेटा
एन्टे तिरुपेर मीपोन्नलेठा
एन्नु पराञ्ञेक्कन पोक्यु वेयत्तु[2] ।

---

1. वेळम्नूर कुञ्ञाति = [प्रभात प्रकाशन] – पृ. 132
2. वही पृ. 32

भाव : कबूतर अरियार पणिक्कर नामक दिव्य कळरि गुरु थे । उनके अनुग्रह से भिभियों के अन्दर पेरुम्बूर आलि की सारी शस्त्र विद्याएँ अधीन हो गयीं । तब आलि ने दक्षिणा में कबूतर को खाने की चीज़े, तिल्ली, भिनडटा आदि दे दी । कबूतर ने उनसे यह भी कहा कि - उन्नीसवीं कळरी में मत जाना, और गुरु का नाम भी मत बताना ।

इस गीत में से उस समय मध्य केरल में प्राप्त अठारह गढ़ों का नाम प्राप्त होता है । उन्नीस कळरियों के नाम और इक्कस देश वासियों का [आतिरि लोग] नाम और नौ रियासतों के राजाओं की नाम भी प्राप्त होते हैं । कळरि विद्या, आममाराटें या [इच्छानुसार रूप बदलने की विद्या] आदि का पता चलता है । कु गति के अठारहों युद्ध और कई कन्याओं के साथ विवाह आदि का वर्णन भी प्राप्त है । वटक्कन पाट्टु में भी ये सारी बातें समान स्वभाव से प्राप्त हैं । लेकिन इस कथा गीत का कई अन्य गीतों की घटनाओं के समाहार के रूप में भी बताया जा सकता है ।

अतियारपिक्कप्पाट्टु

अतियार पिल्ला नामक वीर योद्धा के नाम कई गीत वटनाटन पाट्टु के बीच पाये जाते हैं । अतुयारपिल्ला भी भिन्न जाति के वीर योद्धाओं में आता है । उसकी गाथा में उसके विवाह संबन्धी गीत अति प्रधान माना जाता है ।

अतियारपिल्ला बड़ा शस्त्र निपुण था । उसका शरीर व्यायाम के कारण सुडौल था । बचपन से ही उसकी वीरता की प्रशंसा देश में होती थी ।

---

1. अतियार को देश राजा ने "पिक्का" स्थान मान दिया है ।

अपनी जाति में चार प्रमुख घराने थे उनमें एक से शादी करना वह चाहता था । एक लड़की को उसने मांगा तो उसे भाई बन्धु और सभी संबन्धी उस के विरुद्ध रहे । अतियाड पिल्ला ने बहुत कोशिश की फिर भी उसका फायदा नहीं हुआ । आखिर उसको देश छोड कर चलना पडा । पाण्ड्य देश में जा मिला । वहाँ की एक लड़की के साथ उसने शादी की । अतियापुर अच्चन नामक देशवासि और अतियाड पिल्ला में होने वाला संवाद उस घटना का परिचायक है ।

मीयोन्नु केंट्टो अतियाड पिल्ले
एळर नाळिक वेळुप्पायल्लोठा
निन्टच्चन कारणोर अण्टिल्लोठा
इप्पोळ्नु वेळोन्नु नी केट्टल्लुमिल्ला ।

भाव : अरे अतियाड पिल्ला, अभी सूरज निकलने का थोडा ही समय मात्र है । तुम्हारे बन्धु जन कोई अभी तक आया नहीं ऐसा हो तो तुम इस लड़की से शादी कैसे कर सकता है ?

उत्तर और दक्षिण केरल में कई लोक गाथाएं प्राप्त हैं । मध्य केरल में भी कई गीत प्रचलित हैं । लेकिन उन सब का आकलन नहीं हुआ है । जो दो चार गीत प्राप्त है सब हरिजनों के बीच प्रचलित हरिजन वीरों का गीत हैं । मामूली तौर पर केरल के हरि जनों को जमींदारों की भूमि में काम करके बड़ी प्रतिकूल परिस्थिति में अस्वतंत्र जीवन बिताना पड़ता था । उन्हें आजादी नहीं के बराबर थी । उनके बीच कुछ वीरों का जन्म अतिशय कार्य है । इस कारण उनके बीच के प्रतिभावान लोगों ने उनके बारे में गाना फर्ज माना भी होगा । बारह मल्लनाटन वीरों की गाथा इस विभाग में आती है । उन सब का यहाँ विवरण देना मुश्किल है । अब हम और भी दक्षिण की ओर चलें और वहाँ के लोक कथा गीतों का अध्ययन करें । वटक्कन और इटनाटन लोक कथा गीतों के साथ साम्यों की तुलना फिर करेंगे ।

1. अतियाड पिल्ल प्पाट्टु (इटनाडन पाट्टु, संपूर्ण) श्रीरामविलास प्रेस भाग - 2, पृ.70

तेक्कन पाट्टु

दक्षिण केरल में कई कथा गीत प्रचलित हैं। उन्हें तेक्कनपाट्टु कहते हैं। इन गीतों की भाषा प्रायः तमिल बोली से युक्त मलयालम है। ये गीत वटक्कन पाट्टु के समान अकृत्रिम रमणीय एवं मधुर हैं। एक अपूर्व एकता इन गीतों में देखी जाती है। इन गीतों के गाने केलिए गायक वृन्द होते हैं। कई प्रकार के बाजे की संगत के साथ ये गीत गाये जाते हैं। धनुष [विल्लु] कुट [कुट्टे] ताल, चन्द्रवलय, आदि उन बाजों के नाम हैं।[1]

तेक्कन पाट्टु[1] को ऐतिहासिक अतिमानुषिक ऐतिह्यधिष्ठित इस प्रकार तीन विभागों में विभाजित कर सकते[2] हैं। धीरोदात्त राजा महा राजा, देशभक्त सेनानायक सैनिक, पतिव्रता नारियाँ आदि की अकालिक मृत्यु और वीरमृत्यु उन्हें देवता में बदल देती हैं। यह विश्वास आज भी लोगों में पाया जाता है। उनके यशो गीतों से उन्हें संतुष्ट करना जीवन की सफलता केलिए अनिवार्य समझा जाता है और उन की पूजा केलिए ये लोग उन कथाओं को गीत रूप में गाते हैं। देश का इतिहास सामाजिक व्यवस्था आदि विषयों पर इन गीतों से पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। दक्षिण केरल के लोग ये गीत अधिक गाते हैं। एक प्रकार की आराधना उनके बीच प्रचलित है। इन गीतों के ऐतिहासिक तथ्य कालान्तर से बहुत बदल गये हैं। उसका ऐतिहासिक धीरे धीरे भी खिसक गया भी है। विभिन्न पर्वों पर विशेष स्थानों पर भिन्न गीत होते हैं। उन गीतों को बाधा प्रीतिकर गीत नाम दिया गया है। लोक गाथाओं-लोक काव्यों-में ये गीत सबसे पुराने माने जा सकते हैं। वे

---

1. तेक्कन पाट्टु कई प्रकार के कथागीतों में फैले हुए है जिनके गाने की तरीकाएं भिन्न हैं। चन्द्रवलय जैसे बाजों के साथ राम कथपाट्टु गाया जाता है। विल्लडिच्चान पाट्टु विधा में भी ये गीत गाते हैं।
2. उल्लूर केरल साहित्य चरित्रम - पृ॰27।
3. पी॰शंकर पिल्ला - साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे, पृ॰109
4. उल्लूर ने, बाधा प्रीतिकर, देश चरित्रपर एवं देवाराधना पर - इस प्रकार तीन भागों में विभक्त किया था।

केरल साहित्य चरित्रम, भाग - 1, पृ॰27।

ई॰ सन् नौवीं शताब्दी से गाये जाने वाले कहे गये हैं । लेकिन ऐसे ग गीतों का नमूना आज प्राप्त नहीं; जो प्राप्त है वे भी प्रक्षिप्त हैं । अब तेक्कन पाट्टु के चार विधाओं में ऐतिहासिक गीतों पर विचार किया जाएगा ।

ऐतिहासिक गीत

वीरपुरुषों की कथाओं से संबद्ध कथागीत केरल के दक्षिण भागों में अधिक पाये जाते हैं । ये वीर पुरुष उत्तर केरल में प्रचलित वटक्कन पाट्टु के वीर पुरुषों से अधिक इतिहास सम्मत हैं । इरविक्कुट्टिपिळ्ळा प्पाट्टु कन्नडियन पाट्टु, पुरुषा देविप्पाट्टु आदि इतिहास से/स संबन्धी हैं । तेक्कन पाट्टु विधा में ऐतिहासिक गीत ही अधिक है ।

इरविक्कुट्टिपिळ्ळा पाट्टु

इरविक्कुट्टि पिळ्ळा वेणाट्टु के एक देश-प्रेमी वीर थे । राजा रवि वर्मा का सुशासन काल था । रवि वर्मा कुलशेखर नाम से वे प्रसिद्ध थे । उनका शासन काल वेणाट्टु का वैभव काल था । इस से जलकर मदुरै के तिरुमला नायक ने एक बड़ी फौज ले आकर वेणाट्टु पर आक्रमण किया । प्रथम युद्ध में उसकी सेना का नायक वेलय्यन मारा गया और नायिक की सेना हार गयी । इसकी खबर प्राप्त होते ही मदुरा का मुख्य सेना नायक जो मामी रावसी था एक बड़ी फौज लेकर आया । रवि वर्मा कुल शेखर के मंत्रियों में सर्वप्रथम थे इरविक्कुट्टि पिळ्ळा । उन का पूरा नाम मार्तण्डन इरवि कुट्टि पिळ्ळाथा। रामय्यन के सामना करने केलिए राजा ने इरवि को नियुक्त किया । वेणाट की सेना का नायकत्व उन्होंने ले लिया । दुश्मनों से मोर्चा लेने का सारा अधिकार उन्होंने अपने हाथ ले लिया । उनकी राय में जान से भी देश की

1॰ इरविक्कुट्टि पिळ्ळा पाट्टु - कण्णिरक्कुर्ल कोच्चु कृष्ण नाटार ।

आज़ादी प्यारी है । इस विचार से आप आगे बढे । 'कणियाकुर्' नामक युद्ध-भूमि में इरवि और रामवर्मन की सेनाएं आमने सामने आयीं । घोर लड़ाई हुई । अंतिम रक्त बिन्दु को छोड कर भी, इरवि ने वार किया । आखिर शत्रुओं ने उनका सिर काट लिया । इरवि की वीर मृत्यु ने वेणाट का मान रखा । देश प्रेमी राज भक्तों में उनका नाम प्रमुख है । उनकी गाथा पुलककारी है ।

युद्ध यात्रा की पिछली रात पिल्ला की माँ और पत्नी दोनों ने जो दुःस्वप्न देखा, उसके आधार पर उन्होंने उन्हें युद्ध में जाने से रोका था । लेकिन ताक्ली का मानी १ पति पत्नियों का संवाद गीत में ऐसा है -

एन काणु पर्तावि । नी-
रिन्टु पटे पोक वेन्टाम
मेरिरवु पंडो मेन
निल्लेयानुरकियले
पारतिक्कक अमियन वन्नु
पर्तावि कोन्टु पोक कन्टेन
आममरवु मुट्टोटे
अंटिम कन्टेन पिर्वु कन्टेन
वातुक्कल मीराश्रि
वरपिळिंन्नु निकरेक्कन्टेन ।
कन्ट किनावत्तन्नु
काळमरवु पोल्लातु
पोल्लात कनवु कन्टाल
पोवर क्को पोर वेन्ता ?

---

1. इरविक्कुट्टि पिल्लप्पाट्टु - कणियांकुळं पोरुनाटार - पृ.3

भाव : हे मेरे प्रियतम मैं आप से यह विनती करती हूँ कि आप युद्ध में मत जाइए । मैं ने रात को कई दुःख एवं भी कर सपने देखे । जब मैं ने पलक बन्द की तो देखा कण्टक समीपर आके मेरे प्रियतम की साथ लेकर चलता है । ओ मेरे प्रभु । मैं ने यह भी देखा कि एक विशाल शाखीदार बरगद का पेड़ एकदम टूट पड़ा और मेरी आखों के सामने राख हो गया । इतना ही नहीं हमारे घर के आंगन तक सागर लहरें मार कर गरजते गरजते आ गया ..... इन सब का ज़रूर कुछ कारण हो सकता है इसलिए मेरे प्राणधार आप का संग्राम छोड़ दीजिए ।

यह सुनकर वीर इरवी ने क्या कहा देखिए -

पटे पोकातिन्निकन्नाल
पारिलुळ्ळोर मक्केयारो १
अन्न पटे पोकातिन्निकन्ना-
निरवि कुलत्तु पिळ्ळुन्निक्कन्नवो १
एळुटमप्पुरन्नि
निखरेकुन्निकन्नानु
यमराज दूतर वन्ना
निन्ने येन्टाल विट्टुवारो १
कन्नाने कोट्टे केट्टिट
कन्नोक्कुन्निकन्नानु
कान्नुटे याई वन्नाल
कण्टल्लोन्टालविट्टुवारो १
यमराज दूतर वन्टाल
नाक्केन्टाल विट्टुवारो १
निकेन्न वयसञ्ञ्यतुक्कु
विपनचेठ वेन्टा काण ।

---

1. इरविक्कुट्टी पिळ्ळप्याट्टु - काञ्ञ्यरकर्ते ओच्चमारार - प...

देखिए - हरिश्चि का क्या जवाब है । उन्होंने अपनी प्यारी पत्नी से कहा प्यारी ! देखो, तुम से अब मैं क्या कहूँ ? तुम्हारी बातें सुनकर मुझे अचरज ही होता है । मुझ जैसे लोगों की कमी तुम शायद समझ न पायी होगी ? मैं पुरुष हूँ, वीर हूँ, अब दुनिया यह जान कर मेरा उपहास करेगी । अगर सातों सागरों के उस पार लोहे का मठ बनाकर उसमें क्या मैं जा छिपूँ, तो भी, क्या यमराज के दूतों के आकर बुलाने पर क्या मैं छिप सकता ? मृत्यु को कौन कब रोक सकता है ? चाहे पत्थर का किला बाँधकर उस में भी जा बैठें, तब भी मृत्यु की सूरत को देख चुप चाप बैठ नहीं सकते । काल दूतों से आज या कल आजाना, ऐसा क्या कोई कह सकता है मेरी प्यारी ? फिर यह मैं क्यों कायर का मौत मरूँ ?

इस युक्ति के सामने कौन प्रश्न हो ? लोक कवि के सामने कौन टि न टिकाएगा ?

युवराज मार्ताण्ड कुलशेखर की अनुमति पाकर वह वीर जब बन सँ निकला तो उसे देख कर पुरांगनाओं का कहना -

पटेक्कुप्पोरारिनुविषिक्के
पपरं मुत्तुक्कुटे चेरुमा -
कुटेक्कु तारे हरिश्चिक्के वार,
कोमुखेप्पारडि तोरि चोण्णे ।
वीप्पिट्टु कोति रत्ने मुडित्तु मल्ल
पिंकारक्कण्णु मकुमयेकुति
काप्पिट्ट कैयिल मक्केकिलुक्क रम्मु
कुप्पिट्ट कुम्मि यडिक्कुकी
कुम्मयडि चेण्णे कुम्मयडि
कोविल्लीये कुलुक्कयडी ।
तंत पल्लाकि ले यरेकोण्टे येन्नम
तव्वा वारते पारेकी ।।[1]

---

1. हरिश्चन्द्रपिल्लप्पाट्टु - कारिन्नरकुं कोम्बु नाटार - पृ.70

देखिए - दव्वता के आगमन के समय पुरस्त्रियों के उल्लास और श्रद्धा का कोष सा चित्र है यह । वे गाती बजाती उन्हें आशीरवाद दे रही है :-

भाव : हो सखी देखो हमारे वीर नायक दरवि कुट्टिट पिक्का, युवो युवा मिलते हैं। इस मरकत सा मणि मोखक दरविपिक्के सेना के साथ छत्तरी के नीचे बैठे बैठे सवार हो रहे हैं । उस वीर सेना नायक को देखें हम उनके पदों पर पड जाए और उनकी वीर गाथा गा गाकर हम उन्हें आशीरवाद भी दे दें । हाथ से ताल मार कर हम उनका यशोगान गाकर स्वागत करें, हम आनंद मस्त नृत्य करें ।

अपने काले घोडे पर वायु वेग से दौडाकर किला कंपाते हुए उनकी सेना आगे बढी । कणियार कुप्पम में उनकी सेना ने अचरज भी किया । आखिर लडते लडते वे घोडे पर से, नीचे उतर गये । दुश्मनों ने तब उन्हें घेर कर वार किया । छोटों दुश्मनों के बीच लडते भिडते, उन्हें मार मार कर दे गिराते उन्होंने वार किया । आखिर अचानक सा, उनका सिर काट लिया गया। अपनी उम्र की 32 वीं आयु थी । वीर मृत्यु का समय ।

क्रूर एवं बदमाश दुश्मनों ने उनपर मारने के बाद भी अत्याचार किया उन्होंने उनका सिर काट लिया और उसे अपने न्यायाधिश के पास ले गया । जब उन क्रूर सैनिकों ने वीर योद्धा दरवि कुट्टिट पिक्का का सिर अपने सामने ला रखा तो दुश्मन होते हुए भी तिरुमला नायिक ने बहुत गरम होकर उन सैनिकों को डांटा । वे स्वयं पिघल गये । उनका मन विलाप करने लगा । उनका विलाप लोक-कवि के शब्दों में देखिए :-

> अय्यो ! वन्स तुरैये प्पोले,
> अवनि तन्निल ग्रन्न पालैमोम्बकन्टो ।

---

1. दरवि के पक्ष से कुछ सैनिकों ने दरवि की और के अभाव के कारण शत्रु लोगों की सहायता दी थी । इस कारण से दरवि को मार सका था । जनश्रुतियों में यह कथा चलती है ।

पाट्टु तम्मिल इम्म हरिच्चेप्पोल
मक्क मन्निरि मार कबुम्टो
ओट्टु तम्मिल हरम्मुम्ट अय्यन
उलकिल पडेतानो हरिच्चेतान ?
वैर्य पुकबुमिक्कटय
कब्अणिप्पिट्ट कातमुं
कोतिकुटिल्ल तोर मुटियबुं
कुन्टु कस्तुरि च्चोट्टबुं.... आदि

इसी प्रकार उस वीर योद्धा ने विलाप किया -
भाव : हे भगवान ! दुनियाँ में क्या ऐसा भी वीर हो सकता है ? लेकिन अन्य किसी भी देश में ऐसा कोई वीर होने ही सकता । उस के समान एक मैत्री का होना असंभव सा है । भगवान शिव ने इस हरिच को मानो इस दुनियाँ में ऐसा बनाया है । कम झुकित उसका काम, गले तक सबे उसके बाल, कुंकुमा किस चन्द्र बिंब का भाल ... क्या इस मुखु को भगवान ने यह वीर-जन्म ही दिया होगा ?

पोत मरियाते रामच्चय्यन
पोरिल चतियाल कोन्नु चोटार ।

जरूर है, उस बेवकूफ [मूर्ख] रामच्चय्यन ने धोखे से उन्हें मारा है । सीधे कोई भी उन्हें जीत नहीं सकते ।

हरिच के शव को दुश्मनों से लौट लेने का साहस उसके साथियों में जरूर था । वे नायिक के खोमे में घुस गये । आखिर अपने ने..ा का सिर लौटा लिया

---

1. हरिक्कुट्टिट पिल्ला पाट्टु - डा॰ ...रवि कुमार कोच्चु कृष्णन नाटार - पृ.73

उनके सुकुमार शरीर को देखकर पत्थर भी पिघल जाता था । फिर उसकी माँ का दिल कैसे सहन सकते - उनका विलाप आज भी इस आस्मान में गूँज उठता होगा -

अच्छाके तायाई अकम मकम पाटु कण्टु
पच्चु तरवे उण्णियुं मात्र पटे कोट्टत्तं किडण्णोने ?
मुट्टुवि वेट्टिट अरसान उनक्कु वीतिमुडिन्तल्लयो ?
भीकट्ट तोट्टि वेच्चियल्लयो कपिच्चुट वाक्कल्लयो ?
चतित्ताको उन वेट्टु परिक्कडं माराप्पु पुणिक्कुं
वेट्टिट विक्याट उनक्कु वीति इट्ट चोम्मिल्लयो ?
तापुक्कुट्टि तम्मिले ताम्मियर मुन्तियले
वेक्क्याय मन्निरि मार मिळवे उम्मे चतित्तारो ?
उन्नात मायेम्मिरवि उट्टुत्तोकवि चोपोक्कु
कटर्व्वन अतिम्पु कन्नारो कोम्टारो ?
मुडित्तल वेर कुरियुं मकित्तलनाम्कुरियुं
जामनिकुं वटिवक्कम पम्मिरवि वळकम्मिकाणोने
कुतिरे मटिम्म इट्ट पम्मिरवि वेयिल उटचाक्किल्लयो
पक्काकि उम्मे पकुार वे उम्मे चतित्ताको ?
वयलो उनक्कुळति वयल मटलो पचिमेत्ते
कुम्मो उनक्कुळति कुम्वरपो तक्कत्तं
इन्तच्चटि चोम्मयल्लो इरवि तायाक्कुतिट्टटेतु....।

महाभारत के गांधारी विलाप प्रसंग से भी लोक कवि का यह मातु रोदन हृदय को द्रवीभूत करने वाला मालूम पड़ता है :-

---

1. इरविक्कुट्टिपिळ्ळप्पाट्टु - कात्तिच्चराकुर्क कोम्मु कृष्णन माटार पृ. 72

तंपुरान्पाट्टु[1]

तंपुरान पाट्टु तिरुविताकूर [ट्रावनकोर] रियासत के स्थापक राजा वीरमार्तण्डवर्मा के मार्मिक जीवन की कथा पर आधारित है। यह गीत अर्वाचीन है इस कारण इसे तंपुरान्पाट्टु पुत्तन [नया तंपुरान्पाट्टु] बताया गया है। केरल के तत्कालीन इतिहास से यह संबद्ध है। वीर मार्तण्ड वर्मा के दुश्मन थे उनके मामा के पुत्र वलिय तंपी और कुंचु तंपी। तंपी शब्द राजघराने के सदस्य के अर्थ में व्यवहृत होता है। लेकिन राज्य शासन के उत्तराधिकारी तंपी नहीं राजा की बहिन के पुत्र होते थे। तंपियों ने शासन का अधिकार अपनाने का प्रयत्न किया। नियमानुसार उन्हें शासनाधिकार मिल नहीं सकता था। इस कारण मार्तण्ड वर्मा को मारने का उन्होंने निश्चय किया। राजा मार्तण्ड वर्मा को दुश्मनों से बचने के लिए छिपकर रहना पड़ा। अज्ञात वास के समय उन्हें कितनी जगह जाना पड़ा उसका पता नहीं। उन सब का वर्णन गीत में बड़े मोहक ढंग से किया गया है। राजा के साथ उनके विश्वस्त सेवकों को भी वहाँ पहुँचना पड़ता था। एक जगह राजा जहाँ पहुँच गये थे उस स्थान की प्राकृतिक छटा गीत में इस प्रकार वर्णित है :--

> नीलकोट्टु वेंपिल पुत्तुनित्यविळक्कोरियुं
> निन्नु विळिक्क मलनाटन मारो
> आनयुं पिडियुं निन्नु विळयाडि पोयके
> आडवि तन्निल मडि पेरट काड्यारे[2]।

भाव : नीलकोट्टुवेंपिल के पुष्पों ने दीया जलाया है। जंगली जाति के लोग खड़े खड़े हाँफते हैं। हाथी और हथिनी जहाँ खेलती है, जंगली जानवर सब इधर उधर चलते फिरते हैं। ऐसे घोर जंगल में वे जा पड़े।

---

1. तंपुरान पाट्टु दो विभाग के हैं, पुराना और नया।
   नये गीतों को ही पुत्तनपाट्टु कहा जाता है।
2. तंपुरान पाट्टु - कल्लाणिक्कल कृष्णनाशान सुमन प्रकाशन - पृ.96

कणियारकुलम के ताड़कूटि, ताम्मियरकुला[1] में हरिकुट्टि पिक्का मरे पड़े थे। उसका जट उस प्रत्येक मोड़ में पड़ा था। यह खबर पाकर हरवी की वीर माता वहाँ दौड़ कर आयी। शव के ऊपर मुख दबाकर वे रोने लगी। उसके हाहाकार का क्या अंत। वे बेटे के शव को हिलाती हिलाती रोती हुई पूछती हैं -

रे, मेरा लाल, तुम्हें इस प्रकार बलि देकर यह अभागा मैं क्यों जीती रहूँ ? तुम रणविद्या में किसी से भी पीछे नहीं थे। इस मौत को तुमने किसी की चालसे अपनायी होगी। तुम्हें यह अधिकार जमाने का भाग्य शायद नहीं होगा। तुम्हारी "अम्मा" शायद यह पसन्द नहीं करती होगी। तुम्हारे ज्ञान से कम और कुछ से भी वह प्रसन्न नहीं होती होगी। किसी दुरभिवादी का हाथ भी इस धोखे के पीछे होगा शायद।

माथे पर रक्त तिलक डालकर उसके अन्दर वेर तिलक भी डाल कर गले तक के बाल संवार कर कामदेव से भी कोमल मेरा हरवि जब आयेगा, उसको "कवि" के रूप में देखने की इस माँ की अभिलाषा आगे कब सफल बनेगी ? हे, मेरा लाल। अगर तेरा घोड़ा गिर भी जाय तो भी तुम्हारे हाथ में तलवार नहीं रहा था क्या ? उसके रहते ही तुम्हारा परस कौन कर सकता था ? हाँ मुझे मालूम है, मेरा यार, काली माता ने तुम्हें छोड़ दिया है। हाँ मुझे मालूम है, जनन से किसी ने तुम से धोखा दिया है। आज तेरा यह बिस्तर खेत है। तालाब की मेड़ ही तुम्हारा तकिया बन गया। रेशम के सेज पर काम देव सा शोभित मेरा लाल। हाय, तेरी यही गति ? हे भगवान। ....

---

1. इस प्रत्येक स्थान में हरवि का शव शरीर पड़ा हुआ मिला। कणियारकुलम - स्थल नाम। तम्मियर मुला "मोड़"।

जिन वीरों के नाम वीर शिला का पूजन हुआ, उन वीरों के बीच इरवि का भी नाम उल्लेखित हुआ है । इस गीत के द्वारा उन वीरता का स्मरण पीढ़ि गत होता भी जा रहा है ।

उलकुटे पेरुमालप्पाट्टु

इस गीत का दूसरा नाम 'तेंपुराम पाट्टु' है । दक्षिण त्रिवेन्द्र के गांव मन्दिरों में यह गीत क्रियाओं के साथ गाया जाता है । इसकी कथा बहुत रोचक है । केकरा [आज का काफिकरा है] नामक देश में पाण्ड्य राजा के बन्धु पांच देशराजा और उनकी बहिन मालयम्मा रहते थे । मालियम्मा का पुत्र था पेरुमाल । कालीमाता का वह दास था । इस कारण बचपन से माँ के कथानुसार वह बड़ा काली भक्त बन गया । सोलह वर्ष की अवस्था में वह राजा बन गया । सहज साल राज भार संभालते आखिर उन्होंने आत्माहुति की । खुद काली माता उन्हें प्रत्यक्ष था । उनके वरदान से उन जो तलवार मिला था, उसके टूट जाने पर युद्ध बन्द करने का एक शर्त था । इस तलवार के प्राप्त होते ही उसका नाम उलकुटे पेरुमाल हुआ ।

राजापाण्ड्य ने एक समय मालयम्मा के पांचों भाईयों को मार डाला था । उलकुटे पेरुमाल उसका बदला पाण्ड्य राजा से लेने गया । पाण्ड्य राजा पहले हार गये । तब वह शिव पूजा से और भी शक्ति पाकर फिर भी लड़ने आया । इस बार उलकुटे पेरुमाल का तलवार टूट गयी । उसने युद्ध भी बंद किया । लेकिन पराजित जीवन उन्हें पसन्द नहीं था । तब उस ने खुद खुदी कर दी । स्वयं गला काटकर स्वर्ग सिधारने के निश्चय से उसका उलकुटे पेरुमाल नाम सार्थक बन गया । इस वीर कथा के आधार पर बना गीत है - उलकुटे पेरुमाल पाट्टु ।

अपिननोट्टु वैके तम्पिमारे मन्नवराय
अवर पटे वेट्टियोर राज्यवु माण्टु
वैर मुट्नाने कुतिरे तेरवु केट्ट
इन्निरनिर्मु पवन्नियायवर मट्टिल
वेम्पवर्व मुत्तिनोटु माले कयेन्मा
वैवोम्पिलतन्छ्टु तिरु मैनियिलणिन्नु
नूर मर वेवई मिकन्नु पलकालम
नुत्त मन्नई पटयु मण्णिरिक्कि वाजुकार ।

भाव : मालयम्मा के भाई पांचों राज कुमारों ने लड़कर वेणा देश में अपना राज्य बसा लिया । उनका उत्सव मन्दिरों में मनाया गया । जो इन्द्र लोक के समान ऐश्वर्यवान राज्य बनता रहा । उत्कृष्ट सेनापति ने अपने शासन से उस राज्य को और भी मोहक बना दिया । उनकी अधीनता में सामन्त भी सुख चैन से दिन बिताते रहे ।

वीरगाथाओं के साथ मृत वीरों की पूजा करना एक अनुष्ठान विधा भी हो गया है । तेक्कन पाट्टु विधाओं में उनका प्रभाव अधिक है ।

2
अंचुतंपुरान्पाट्टु

त्रावनकोर राजघराने से संबंध है यह गीत । राजघरानों में होने वाले षड्यंत्रों और अपसी फूटों की कथा इस में गायी गयी है । इस गीत के चार खण्ड प्राप्त हैं । वीराट्टुपोर, माडंबु कथा, पेरुकुन्तपोर, एवाडिप्पोर इन चारों खण्डों में वेणाटु के राजा महाराजाओं और उनके महलों में होनेवाले प्राचीन तिरुवितांकोर रियासत [अब दक्षिण केरल] के इतिहास प्रकाश डालने वाली सामग्री इन गीतों में भी प्राप्त है । कई युद्ध, राज-काज संभालने में व्यस्त राजाओं की आन-बान का चित्र आदि भी इस गीत में प्राप्त है । वीराट्टु पोर नामक गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है -

---

1. तेक्कन्पाट्टुकल [संपूर्ण] श्रीरामविलास प्रेस, कोल्लम - पृ. 402
2. अंचु तंपुरान पाट्टु अर्थ चीन गीतों में आता है ।

ओट्टन मानेन्दु के ट्ट पोकुंने
उरटि कुनिये मुटि वणिप्पारा
मुटि वणित्तन्न नीट्टु तनेवाकि
मुन्नु कणिण नौरिर प्पिळ्ळे मकिवाँ
पिळ्ळे मकमकल कैटिम कोटुप्पारा
पिरियत्तुटन नीन्कल वायित्तु मेन्टु
वायिस्तु वारे पिळ्ळे मकमकल
वम्मि व्व म यावल्न्नि वळेनप्पारा"[1] ।

कपक्कुट्टत्तुपिळ्ळा नामक सामन्त को बुलाने केलिए दूत भेजने का चित्र है । उस समय दूतों को एक जगह से दूसरी जगह दौड़कर जाना पड़ता था । इस कारण से उन्हें ओट्टन [दौड़नेवाला] नाम मिला था । यहाँ ओट्टन के, तेजी से राजा का संदेश लेकर दौड़ने का वेता ही चित्र है :-

भाव : ओट्टन कपक्कुट्ट पिळ्ळा के पास अपना परिचय देता है -

मैं दूत हूँ यह जानकर पिळ्ळा ने अपना सिर झुका दिया । आगे को रीककर पत्र को स्वीकार किया । देखा तो आश्चर्य सा हो गया । मंत्रीजी को बुलाकर उनके हाथ देकर पढ़ाया" ।

राजा के सन्देश को पाकर कपक्कुट्टम पिळ्ळा एक बड़ी फौज लेकर केरल पुरम की ओर बढ़ा । इतनी बड़ी सेना देख कर दुश्मनों की जान हवा हो गयी ।

1• तेक्कन पाट्टुकल [संपूर्ण] श्रीराम विलास प्रेस - पृ•302

माढंपु कथा में राजा आदित्य वर्मा के राज्याभिषेक की कथा गायी है[1]। इस में भी कषक्कूट्टत्तु पिल्ला की सेवा का वर्णन प्राप्त है। राज-माता और युव राजा में होने वाले संवाद का चित्र गीत में इस प्रकार है -

मां - एन्ने मरन्नायो उण्णयतो ?
एन्नु मरन्नामो तिरुत्ताये ?
पेर्र कोयिमु मार्रकुमुम
आट्टयकोड नाम वन्चियम्[2]
लोकुनु कोन्टु पोवेनम्मो...

भाव : हे युवराज क्या तुम हमको भूल जाओगे ? राजमाता ने इस प्रकार पूछा। मेरी प्यारी मां यह हो नहीं सकता। जब तक इस शरीर में जान रहेगी तब तक यह हो नहीं सकता। यह जन्म भूमि आरि्रंगल और मेरी मां कभी भी भूल नहीं जाएगी। साल में एक बार यहां आजाऊंगा यह चरण छूकर ही जाऊंगा।

पेक्कुलत्तु पोर और एक्सिपोर दोनों दो प्रमुख युद्ध वर्णन है। देशिंगनाट [आज का कोल्लम] के राजा चण्डिकल मार्ताण्डवर्मा ने रविवर्मा पर विजय पायी। रविवर्मा ने सकल कला मार्ताण्ड वर्मा सहायता मांगी। पेक्कुलं और एर्वांठी में घोर युद्ध हुआ। युद्ध के उपरान्त कुछ अभिचार प्रयोगों का भी चित्र पाया जाता है।

इस गीत से प्राप्त बातें इतिहास से खूब मेल खाती है। ट्रावन्कोर के प्राचीन इतिहास पर यह गीत पूर्णतः प्रकाश डालता है। पांच राजाओं की कथा होने के कारण इस गीत को अंचु तंपुरान पाट्टु नाम [पांच राजाओं की कथा के गीत] नाम मिला है।

---

1. राजा के कुल में जन्म जात होने पर भी राजमुटि जिस के सिर पर रखा जाता है वही राजा है। राजमुटि = राज मुकुट।
2. तेक्कन पाट्टुकल [संपूर्ण] श्रीराम विलास प्रेस - पृ.305

इसी प्रकार यह कथागीत अधिक मोहक वर्णनों से भरा हुआ है ।

<u>इरविय तंपिकुंजलीपाट्टु</u>

इरवियाट्टु पाट्टु में जिन तंपियों की कथा आयी है उन तंपियों के नाम भी कई गीत प्रचलित है । वीरता एवं साहसिकता में ' ये दोनों तंपी और उनके आश्रित, एट्टुवीट्टिल पिल्लामार {आठ घरानों के मालिक} किसी से कम नहीं थे । तंपियों को वीरमार्ताण्ड वर्मा राजा ने मार डाला । उनके निधन पर उनकी माता का विलाप -

हे मेरे बेटो, तुम दोनों इस प्रकार पड़े हो, ।

रेशम के बिस्तर को छोड़ कर इस मिट्टी में जिस मोम को आग लगाने पर पिघल जाना पड़ता है, उसी प्रकार रे मेरे बेटे तुम भी पिघल कर गिरे हो...... मां के दिल की करुण वेदना यहाँ पूर्ण रूप से व्यंजित है । करुण रस एवं वीर रस का अच्छा समावेश इन ऐतिहासिक गीतों में हुआ है ।

<u>पट्टाणिप्पाट्टु</u>

केरल का इतिहास तिरुविताकूर के पोन्नन काटु से कभी भी दूर नहीं रह सकता । इतिहास की दृष्टि से उल्लेखनीय एक नया गीत इस जगह से सम्बन्धित है । उस गीत का नाम पट्टाणिप्पाट्टु है । पठान लोग पूर्व से आये विदेशी थे । उन्होंने तिरुवनन्तपुरम्पर अपना शासन जताना चाहा । वहाँ के निवासी नाटार लोग थे । उन्होंने पठानों का साहस के साथ सामना किया था । उक्त गीत से एक उदाहरण :-

मुट्टक्काट्टु मक्कित्तिम्प्

पंचनित्तप्पट्टु वेट्टान

कोट्टारत्तेकण्तिले
त्तिप्पतु के पोम पोरुळ
पिच्चकुट्टि येन्नमाटाम्
मालयिट्टान माटार्" ।

भाव : मुट्टयक्कादु की चोटी से मंजनाति का पत्ता काट लाया । महल की गली में बैठने को चला आया । पिच्चकुट्टि नामक माटार के गले में माला पहनायी गयी ।

माटार के साहस और देश प्रेम ने पठाणियों के पैर उखाड दिये। वह घटना भी इतिहास की दृष्टि से स्मरणीय है । कथा गीतों के रूप में इसी प्रकार के सैकडों ऐतिहासिक गीत प्राप्त हैं । दक्षिण के लोक गीतों में उनका महत्व पूर्ण स्थान है । देशप्रेम, साहस, वीरता, उदारता, आदि महान गुणों को और आदर्शों को ये गीत प्रेज्वलित करते हैं ।

ऐतिह्याधिष्ठित कथागीत

तेक्कन्पाट्टु में काफी संख्या इस विभाग के गीतों की है । वे हमारे सबसे पुराने गीतों में आते हैं ई॰ सन् 900 [नौ वी शताब्दी तक] के गीत इस श्रेणी में प्राप्त हैं । इन्हें विल्लटिच्चान पाट्टु या विल पाट्टु [चापगीत] में गिनना चाहिए । इतिहास से इन गीतों का संबन्ध रहा है । लेकिन जनश्रुतियों में मात्र इन घटनाओं का प्रचार है । इस कारण से इन गीतों को ऐतिह्याधिष्ठित नाम दिया है[2] ।

1॰ तेक्कन पाट्टुकल [संपूर्ण] श्री॰रामविलास प्रेस, कोल्लम, पृ॰407-8 दिवान पोरिरप्पाट्टु, रामेश्वर यात्रप्पाट्टु, अमरपुरप्पाट्टु आदि भी इस श्रेणी में आते हैं ।

2॰ केरल साहित्य चरित्रम - प्रथम भाग, पृ॰27।

कम्मण्डियन पोड

यह गीत कथा गीतों में सबसे प्राचीन माना जा सकता है । सन् 1265 की बात है । कुलशेखरन नामक एक पाण्डय राजा वल्लियूर देश में राज्य करते थे । ये देखने में अति सुन्दर एवं शस्त्रविद्यामें प्रथम थे । उनका दूसरा नाम पोन्नुपाण्डयन था ।

उस ज़माने में कांचीपुर के उत्तर में कम्मण्डियन नामक एक "शूद्र" राजा राज करता था । उसकी एक बेटी थी । वह बहुत खूब सूरत थी । उस लड़की ने एक बार पोन्नु पाण्डयन कुलशेखरन का चित्र देखा । उनका सुडौल शरीर एवं राज प्रताप देखकर वह उन्हें मन से प्यार करने लगी । उसने मन से यह प्रतिज्ञा की कि पोन्नु पाण्डयन के सिवा दूसरा किसी से भी वह शादी नहीं करेगी । पिता कम्मण्डियन को जब इसका पता चला तो उन्हें मालूम था कि यह प्रस्ताव पोन्नु पाण्डयन स्वीकार नहीं करेंगे । क्यों कि वह निचली जाति का है । ठीक वैसा ही हुआ कि पोन्नुपाण्डयन ने दूत से कहा हीन जाति की लड़की से वे विवाह नहीं कर सकते । कम्मण्डियन को यह अपमान था । उस ने एक बड़ी फौज लेकर पोन्नुपाण्डयन पर आक्रमण किया । उसे बन्दी बना दिया । कम्मण्डियन की एक मात्र इच्छा उससे बेटी की शादी कराने की थी । सुन्दर पाण्डयन को पालकी में कांचीपुर लाया गया । जब पालकी खोली तो देखा वे पालकी में मरे पड़े हैं । रास्ते में उसने खुद खुदकुशी कर दी थी । कम्मण्डियन की बेटी का क्या कहना ? उसने मृत शरीर को वरण माल्य पहनायी और उसकी चिता में कूद कर सती हो गयी । पेयकक्कुट्टि वल्लियूरम्मा आदि नाम से आज वह देवता बन गयी है । इस कथा पर आधारित जो गीत प्रचलित है उनमें से कुछ पंक्तियां ऐसे हैं - राजपुत्री कुल शेखर की तस्वीर देखती है :-

मन्मथमार वटिवतोन्माम
व्यथकित्त मेवुं वाटि
कन्मिठयम शीमयिले
कण्णि मल्लाम वीत्तिरिक्कुं
पोन्नु मणि मेटयिले
पोयप्पुकुन्तार पाळवेन्दु
वेन्दु मिन्दु पाडिळवे
तेन मयिलुं मोणि मटवार
मण्टि वेन्दु पूर्ववुंकाल
मंड यक्कल पार्तिकन्नाम... ।[1]

भाव : राजकुमारी को जब कुलशेखर का चित्र मिला तब वह बडी प्रसन्नता से उसका निरीक्षण करने लगीं। राजा का सुकोमल एवं सुठोल अंग - वह चित्र में बार बार देखने लगी । उसने लंबी सांस छोडी । वह अस्वस्थ हो उठी । महल [अंतःपुर] में इधर उधर घूमने लगी । बीच बीच में उस चित्र के पास जाकर उसे पुचकारने लगी । उसका मन उसी के प्रेम से विह्वल था ।
आखिर उसने पिता के पास अपना इंगित प्रकट कर देने का निश्चय करती हैं -

वन्तवण्णम् तवप्पटुटे
अटुक्कयन्टे वेन्दु मिन्दु
मुन्नि यटि तोफ्रितरिन्न
मोय कुफलावुरित्तटुवाम
वान्टवने पन्नुटया,
अप्पनियारोन्टु केनाय ।[2]

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - प्रथम भाग - पृ.274-275
2. वही

मामिमिरम्मु कटेम्तिलटिल्लु
मरोत्ते कोम्टु मुटिम्तिलटिल्लु
कोरलनार पाण्टिमम्मन
कुलशेखर तम्मोमिये
मट्रोरु वरेन्ने वन्नु
मालयिट निनैप्पतिल्लो...1

वही सुन्दरी अपने पिताजी के सामने जा खड़ी रही । पिता की वंदना करके उसने अपनी अभिलाषा प्रकट की । मेरे पूज्य पिताजी, आप मुझे ईश्वर के समान हैं, आप मेरी अपनी यह बात सुन लीजिए । चाहे कुछ भी हो जाय अगर मुझे जीवन भर बिना शादी की रहना भी पड़े, मुझ पर जरा-मरा आ जाय, शरीर कमज़ोर और शिथिल भी हो जाय, चाहे, मेरी यह जान भी निकल जाय फिर भी, मेरे हृदयेश्वर कुलशेखर को छोड़कर दूसरे किसी के साथ मैं इस जीवन में शादी नहीं करूँगी । दूसरा एक पुरुष मेरे गले पर वरण माल्य पहनाया जा नहीं सकता ।

कुलशेखर की आत्महत्या पर पता चलने पर वह सति होने का निश्चय करती है -

एन्नाले पाण्टिमम्मार इरन्नु विट्टार मुटाक्कुम
इन्निकस्सल पोराल इन्निमकु प्पोक्कुमिल्ले

इस प्रकार कहकर -

ताङ्ग वर्णिम्तोम करयिल
तावार कळो यतिले
चन्दनवु कारकिलु
तरित्तु मम्म कट्टे कूट्टि ।

---

1. केरल साहित्य चरित्रम - प्रथम भाग - पृ.274-275

वेम्लकुम्स तीक्कुण्डियिल
मेत्तिक्कल्लाल ताल मटन्ताले
मालेकुत्तोठे मंजमुख्योठे ...! ।

भाव : उस दुःखद दृश्य देखकर, वह कहने लगी - मेरा प्रियतम मुझे छोड़कर चला गया है । अब मैं अकेली क्यों रहती हूँ ? उसने ब्राह्मणी नदी के किनारे एक पवित्र स्थान पर चन्दन की चिता बनवायी, प्रियतम के उस चिता के आग में अपने वरणमाला के साथ कूद पड़कर वह भी सति बन गयी ।

वटुकिळ्ळमला

उसकी आत्मा "पैयकरकुट्टी" नाम से एक देवता बन गयी । उसने एक दिन राजा को सपना दिखायी और अपने और अपने प्रिय केलिए मन्दिर बनाकर उन्हें, नियमानुसार प्रतिष्ठा देने को कहा । उस आदेश के अनुसार कम्मटियन ने वळ्ळियूर में दो मन्दिर बनाकर उन दोनों को उन मन्दिरोंमें बसाया । उस जगह को आज भी वटुकिळ्ळमला नाम है ।

इस जनश्रुति पर आधारित कथा होने के कारण इसे ऐतिह्याधिष्ठित कथा गीतों में स्थान दिया गया है ।

पुळ्ळादेवी

ऐतिह्याधिष्ठित गाथाओं में पुळ्ळा देवी की गाथा मुख्य है । पुळ्ळादेवी वेण्णाट्टु नाटु की राजकन्या थी । उसकी माँ वहाँ शासन करती थी ।

---

1. वटुकिळ्ळमला को वळ्ळियूरम्मा नाम भी है । हमारे हर देवी देवता मन्दिरों के पीछे ऐसी कोई घटना हो सकती है ।

पेण्णरसु नाट के पास एक तीर्थ स्थान था । निकटवर्ती नेय्यारिन्करा राजा चैम्मुडि मन्नन था । पेण्णरसुनाट आज का आरिरम्काल है । उन दोनों राजाओं में बैर था । एक दिन चैमन मुटिमन्नने पेण्णरसु नाट से होकर निकटवर्ती तीर्थ स्थान को जाने का निश्चय किया । उन्होंने यह सन्देश आरिरंगल की रानी को दिया । रानी ने उन्हें मना किया । राजा माननेवाले कम थे । उन्होंने एक बड़ी फौज लेकर पेण्णरसु नाटु पर आक्रमण किया । पूवाडेवी सयानी थी । वह शस्त्र शिक्षा में निपुण एवं साहसी थी । उसने अपनी सेना लेकर राजा से लडी । बड़ा युद्ध हुआ । आखिर रानी को लगा कि वह पराजित होने वाली है । उस समय वह नौ मासों की गार्भिन थी । उसने तलवार से अपनी कोख काट दी और उससे भ्रूण को हाथ में लेकर राजा की ओर फेंका । यह अप्रत्याशित कार्य देखकर राजा स्तब्ध हो गये । अब जीना उन्हें असह्य लगा । उन्होंने अपनी तलवार से सिर काटकर आत्मा-हुति प्रदान कर ली ।

पूवाडेवी पहले ही मर चुकी थी । उसकी आत्मा एक दुर्देवता बनी । गीत में इन सारी घटनाओं का वर्णन भीति दायक एवं रोचक ढंग से हुआ है । चैम्मुटि मन्नन का संदेश गीत में इस प्रकार है -

माट्टं तकरात कूवलूरिल
वाकरसार चैमन मुटिमन्नन
पेट्टरसु टन कोट्टै वढ़ियाक
तीर्थ माटीयम्बे वरुवोर[1] ।

भाव : कूवलूर (नेय्यारिन्करा) के राजा चैम्मुटी मन्नन साज सज्जा के साथ तीर्थ स्थान जाएंगे । पेण्णरसुनाट से होकर उनका आगमन होगा ।

---

1. तेक्कनपाट्टुकल : श्रीराम विलास - पृ०477-479

पुष्पा देवी ने दूत के हाथ उस का जवाब इस प्रकार दिया :-

वार पट्योट्टु एतिर पोरूलु
मारराने वेट्टिट विरट्टिट्टेन
वार्तु पूलु नाक वन्नलुन्टाल
मन्नवने वेट्टिट कुलकम चेयवेन[1] ।
पन्तल तीर्थ कार तन्निले
एष्पटि तीर्थ माट वक्वारिन्के ?
तेलमाक वन्नु तीर्थ माट्टिनोकाल
वाकूकिरयाक आक्किट्टुवन[2] ।।

भाव : पुष्पादेवी का जवाब इस प्रकार था कि यह देश पेण्णरसुनाट है । तीर्थ स्थान मेरे अधीन में है । हमारे देश से एक शत्रु राजा नाज-बाज से चल नहीं सकता । अगर ऐसा किया तो वह दंभ है । उस का जवाब हमारी तलवार ही देगी लेकिन एक शर्त पर वे जा सकते हैं । शर्त यह है कि

पन्तलुटे नाट्टु वष्टि तीर्तमाट पोन मानाल,
परि वार कुतिरे हरीक वरवेण्णु
इट्टु वहु मिनियटि कण्टर वरवेण्म,
पिटित्तु वई मतिर वाल वेत्तु वरवेण्म
कालाई, तुरे पतियु निट्टुवेत्तु मन्नवई
काल नटयायिन्क वरना ने
कोटिपटे कुटि मन्नर तीर्त माट वक्किलुमो
कोरिंयिन कुंपु पकन्तु पोले
कोट्टे पिट्टु विरट्टिट पिट्ठवेनेन्न[3] ।

---

1. तेक्कन्पाट्टुकल : श्रीरामविलासं - पृ॰477-79
2. वही
3. केरल साहित्य चरित्रम - प्रथम भाग - पृ॰282

भाव :–अगर राजा को हमारे इस देश से होकर चलना अवश्य हो तो उन्हें घोड़े पर से नीचे उतर आना है । पैदल चलकर आना पड़ेगा । हाथ की तलवार हमारे सामने नीचे रखना चाहिए । सामंत – सिपाही को छोड़ कर अकेले आना है । धूम धाम से अगर परिवार समेत आयेगा तो जिस प्रकार चील मौं के बच्चे पर करेगा उसी प्रकार हमारी सेना टूट पड़ेगी" ।
कोई अभिमानी राजा एक स्त्री का यह कहना कैसे मानता ! उसका नतीजा भी वैसा ही रहा ।

अतिमानुषिक कथागीत

नीली कथाप्पाट्टु

अति मानुषता से संयुक्त कथागीत मलयालम में कम मात्रा में प्रचलित हैं । जो प्रचलित है उन्हें ऐतिह्यों में गिन सकते हैं । लेकिन नीली कथा अतिमानुष मात्र है । इसे पंचवंकाट्टु नीली की कथा भी बताया जाता है । इस कथा का मंदिरों की देव दासियों से थोड़ा संबन्ध है । कथा इस प्रकार है :–

पऴकन्नूर अम्म-अप्पन कोविल नामक मन्दिर में एक दासी थी । वह देखने में बड़ी खूबसूरत और होशियार भी थी । उसकी बेटी और भी खूब सूरत थी । उस मन्दिर के पुजारी नंबी को उस लड़की से बड़ा मोह और प्रेम था । दासी माता ने उसे चालाकी जाल में फंसा लिया । उसकी सारी संपत्ति वसूल करके उसे घर से निकाल दिया । नंबी का दिल टूट गया । लेकिन दासी की बेटी का उस पर दृढ अनुराग था । वह नंबी के साथ निकली । नंबी के मन में उस दासी के प्रति घोर विरोध था । वह प्रतिशोध की प्रतीक्षा में भी था ।

कळिक्कंकाट्टु-ञाली काकटल पौधों का वन-जंगल में एक पेड के नीचे दासी की बेटी और नंबी दोनों बैठ गये । लड़की थकावट के कारण सो गयी ।

नंबी तो ताक में था ही उसने तुरंत उस लड़की को मार डाला। उसके आभूषणों को निकालकर भागा। रास्ते में एक अंधी कुएं से उसने पानी खींचकर पी लिया। तब एक साँप ने उसे डस लिया। वह भी वहीं ठंडा हो गया।

दूसरे जन्म में दासी की बेटी ने "नीली" नामक बाधा (दुर्देवी) के रूप में जन्म लिया। नंबी ने एक चेट्टी के रूप में जन्म लिया। नीली ने चेट्टी के यहाँ जाकर उसे मार डाला। 'कळ्ळिक्काट्टु' नामक एक जगह आलत्तियूर में आज भी है। लोग इस जगह को पंचवन काट भी कहते हैं। 'पंचवन काट्टु यक्षी' नामक दुर्देवता आज भी उन देशवासियों के ओंठों पर रहती है। इस कथा पर आधारित गीत है नीलिक्कथप्पाट्टु।

नंबी की संपत्ति समाप्त होने पर दासी ने उसे घर से निकालने का निश्चय किया। वह बेटी से झगड़ा करने लगी। वह बूढ़ी दासी कहती है -

अरक्कापुळ्ळियाते
आणिक्क्योटिरम्नु
पिरित्तु पिक्क्यादुम्तु
तिन्नतिन्नमायले कोट्टुम्पुं
कणुकटियिल ना पोले
कात्तकम्मुं तुम्बकिराय,
नेराके वैतियन तन
नेम्बु मेरे काल मीटिट
वाळमेन्ट घोल्लामल
वार्त कूराते पिळ्न्तान।

---

1. नीलिक्कथप्पाट्टु : गुरनाद कुञ्ञनपिळ्ळा - पृ.26

कुत्ताडुं मवरवीट्
        कोम्ट काणियो उनकु
उत्तरवु मिक्कामल
        ओयाते वड वानेम ?
चेत्तमने पाप्पाने
        तिण्णैविट्टु एफुन्तिरेटा
केष्ठुविन्पुटे चेक्केयेन्ना
        केट्टिकन्स मरयोनुं
अजुतु कोम्टु अक्कुटय
        अकर मत्तिल पोकामल
कोम्टाटि पूवे चेय्यु
        कोकिमुक्कुं पोकामल
पट्टणत्ते विट्टिरंग्कि
        परदेशं पोनाने"

भाव : बूढी दासी का बुरा ऐसा कहना मर्म विदारक था । वह बोली जिसके पास पैसा नहीं है, उसके साथ कौन प्रेम दिखाएगी बेटी ? तब भी तुम इस पुरुष के साथ क्यों हास, विलास से खेलती हो । जैसे कफुकटी के नीचे की कुत्तिया[1] उसे तुम मास मार कर निकाल दो । उसका भी कोई जवाब उस आदमी ने न कहा तो बूढी और भी नाराज हुई और बोली, रे, मुर्खला आदमी [लज्जाहीन] तु बदमाश उठ, मेरा घर छोड बाहर जा। यहाँ तुम्हारा कोई काम नहीं । इस तीखी - अत्याचार से वह सात्विक पुरुष चंचल हो उठा । रोते हुए वह बाहर गया । अपना देश भी छोड चला गया ।

---

1. कफुकटी की कुत्तिया - एक प्रयोग है जो रसोई के पारख में पड़ी हुई है - मतलब है - गया बीता ।

इस कथा गीत की कविता का यह नमूना है । इस प्रकार की एक और कथा गीत मलयालम में प्राप्त नहीं है ।

अतिमानुष गीतों को उल्लूर ने बाधाप्रीतिकर गीतों में स्थान दिया है । केरल के ग्राम जीवन में बाधा प्रीति केलिए की जानेवाली पूजाएँ आम बात है । ये क्रियाएँ चाहे कितना ही अंध विश्वास प्रेरित हैं । फिर भी उन का दिन ब दिन प्रचार बढ़ता जा रहा है । आम जनता का मन और जान इस प्रकार की बातों को हर कहीं मानते हैं ।

हमारे देवी-देवताओं के सारे मन्दिर इस प्रकार कुछ दिव्यात्मा या साहसियों के यादगार में बने हैं । अब श्रद्धा के कारण ये देवी-देवता में बदल गये हैं ।

शहीदों के यादगार में बने शहीद मंडप और आदि कालीन मंदिर दोनों के बीच नामों भर का अंतर है । केरल के मुख्य कथा गीत और अन्य लोक काव्यों पर वैज्ञानिक दृष्टि डालने पर यह विदित होता है कि ये तत्कालीन जन जीवन का यथार्थ चित्र उपस्थित करते हैं ।

<u>सामान्य निरीक्षण</u>

कथागीतों के विभजन के समय उल्लूर ने वडक्कन पाट्टु विभाग को अलग, और तेक्कन पाट्टु को अलग इस प्रकार रखा है । तेक्कन पट के विभजन के समय उन्होंने तीन खंडों का परिचय दिया । साहित्य चरित्रम् प्रस्थानङ्ङळ् नामक ग्रन्थ में, जी·शंकरपिल्ला ने चार खंडों में, वटक्कन पाट्टु को भी मिला कर, रख दिया । इस प्रबन्ध में वटक्कन, इटनाडन, तेक्कन, तीनों ही के कथा गीतों को अलग अलग रखा है ।

कथागीतों की संख्या अधिक है । स्थापित गीतों की संख्या और भी है । उन सब का आकलन अभी तक नहीं हुआ है । सारे केरल में, समान रूप से आदर पाने वाली लोक गाथाएं है । उनका उत्पत्ति स्थान शायद उत्तर केरल होगा कहीं, शायद, दक्षिण केरल होगा, कभी । कभी मध्य केरल भी होगा । सामन्त कालीन वस्तुतः, संप्रदाय की दृष्टि होते हुए भी मलयालम भाषा के संबन्ध में ये सब धरोहर हैं । उनकी उत्पत्ति स्थान से बढ़कर भाषा महत्व एवं ऐतिहासिक महत्व स्वीकृत है ।ऐसे समस्त केरल की निधी के रूप में ये लोक गाथाएं आती हैं । उन, इने गिने लोक काव्यों पर इस अध्याय में, अध्ययन किया गया है । इसकी विशाल सीमा को परिमित दृष्टि में देखा गया है । केवल यह एक पर्यवेक्षण मात्र है ।

इन गाथाओं में, सुदूर दक्षिण के इस छोटे देश का इतिहास, जन-जीवन एवं उच्च संस्कृति स्पन्दन कर रही है । इन का लालित्य एवं इनकी सच्चाई सबसे अधिक मानने योग्य है ।

हिन्दी की लोक गाथाओं की तुलना में मलयालम की ये लोक गाथाएं समकक्ष की ही होंगी ।

सातवाँ अध्याय

हिन्दी और मलयालम लोक - गीतों का तुलनात्मक अध्ययन

सांस्कृतिक

व्यावहारिक जीवन में प्रत्येक संस्कार के दो पक्ष होते हैं । एक वैज्ञानिक जिसको मंत्रोच्चारण एवं कर्म काण्ड आदि से सम्पन्न किया जाता है । दूसरा लौकिक जिसका गीतों एवं लोकाचारों द्वारा पूर्ण किया जाता है ।

पुत्रजन्म

पुत्रजन्म पर गीत गाने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है । कतिपय प्राचीन ग्रन्थों में इस का उल्लेख मिलता है । अथर्व वेद के एक संपूर्ण सूक्त में सरल तथा सुरक्षित प्रसव के लिए प्रार्थनाएं तथा उपचार वर्णित हैं[1] । आदि कवि वाल्मीकि ने राम जन्म के समय गन्धर्वों द्वारा गाने तथा अप्सराओं द्वारा नृत्य करने का वर्णन किया है[2] । इसी प्रकार कालिदास ने अज के शुभ जन्म के

---

1. अथर्ववेद - 2 / 11
2. जगु : कलं च गन्धर्वा ननृतुश्चाप्सरोगणा:
   देवदुन्दुभयो नेदु: पुष्पवृष्टिश्च खात्पतत् ।
   रामायण [बालकाण्ड] 18 / 17 /

अवसर पर, राजादिलीप के महल में वेश्याओं द्वारा नृत्य करने एवं मंगल वाद्य बजाने का उल्लेख किया है । गोस्वामी तुलसी दास ने भी राम के जन्म पर मंगल गीत गाने का उल्लेख किया है[1] । केरल में पुत्र-जन्म संबन्धी गीत बड़ी संख्या में पाये नहीं जाते । तो भी जन्म संस्कार संबन्धी विविध आचार व्रत विधि विधान पूर्वक किये जाते हैं । परन्तु गीतों की दृष्टि से इस संस्कार का विशेष महत्व नहीं । कुछ जन्म संबन्धी गीत प्रचलित है । उन्में प्राय: जन्म दिन के बाद और जन्म के पहले गाते है । प्राय: देखा जाता है कि राम तथा कृष्ण का बाल्यस्वरूप, उनका क्रीडा कल्लोल, नटखटपन तथा प्रत्येक बालसुलभ चंचलता लगभग सभी जनपदों के जन्म संस्कार संबन्धी गीतों में विशेष रूप से उभरे हैं । कतिपय उदाहरण ऐसे भी हैं, जहां राम तथा कृष्ण के माता पिता का संतान प्राप्ति के व्रत तथा अन्य साधनाओं का उल्लेख भी हुआ है । वस्तुत: सांस्कृतिक गौरव के इन दो ‖राम तथा कृष्ण‖ प्रतीकों द्वारा पुत्र जन्म का असीम उल्लास प्राय: सर्वत्र समान रूप से व्यंजित हुआ है । प्रत्येक भारतीय माता, कौशल्या और यशोदा बन कर राम तथा कृष्ण जैसे पुत्रों को गोद में खिलाना चाहती है । माता - पिता, संतान प्राप्ति केलिए किन किन कष्टों को झेलते हैं, किस प्रकार नित्य व्रत और साधना करते हैं, इसकी व्यंजना भी कुछ गीतों में प्राप्त है[2] । बच्चे के जन्म के समय से लेकर नामकरण तक प्रथम महीने में कई अनुष्ठान किये जाते हैं । इस महीने के बाद अन्न प्राशन कर्ण छेदन मुंडन और जनेऊ का कार्य भी होता है । इन सारे अवसरों पर लोकगीत गाये जाते हैं ।

नामकरण चूडाकरण आदि प्रत्येक कर्म का अपना अपना महत्व रहा है[3] ।

---

1. गावहि मंगल मंजुलवाणी
   सुनिकल रव जनु कंठ लजानी । रामचरित मानस‖बालकाण्ड‖
2. नवजात शिशु को भूत-प्रेतों के दुष्ट प्रभावों से बचाने केलिए और सुरक्षित रखने केलिए कई मंत्र तंत्रों का प्रयोग होता है ।
3. अधास्य गोदान विप्रे वस्त्रं -
   चूडाकरम कीन्ह गुरु आई - बालकाण्ड ‖रामचरितमानस‖
   जन्मना जायते शूद्र:, संस्काराद् द्विज उच्यते ।

हिन्दी प्रदेश में जन्म उपरान्त के गीत ही अधिक प्राप्त होते हैं। पुत्र जन्म पर हर्षोल्लास एवं प्रसन्नता के गीत अधिक प्राप्त हैं। ऐसा कोई उदाहरण प्राप्त नहीं जिस में कन्या के जन्म पर हर्ष एवं उल्लास का प्रकटीकरण गीतों में हुआ हो। विश्व के समस्त लोक गीत साहित्य में भी ऐसा एक गीत, जो लड़की के जन्म में आनंद मनाते हुए गाया हो, प्राप्त नहीं हो सकता। संतान प्राप्ति की कामना तथा उसकी पूर्ति केलिए व्रत, साधना एवं अन्य आयोजन करना प्राय: दोनों प्रदेशों के लोकगीतों में समान रूप से वर्णित हुए हैं। पुराख्यान एवं पौराणिक पात्रों के माध्यम द्वारा संतान प्राप्ति केलिए व्रत साधने तथा विभिन्न कष्ट सहने का वर्णन भी दोनों भाषाओं के गीतों में अत्यंत उत्कृष्टता से हुआ है।

जन्म के उपरान्त नवजात शिशु एवं प्रसूतिका को भूत-प्रेत से मुक्त रखने केलिए टोने-टोट के आदि की भावना भी दोनों प्रदेशों के लोक गीतों में समान रूप से दृष्टि गोचर होती है। प्रसूतिका पर आरती उतारने का कार्य हिन्दी प्रदेशों में खासकर खडी बोली ब्रज, मैथिली आदि प्रदेशों में सर्वसाधारण है। नवजात शिशु केलिए सुख समृद्धि वैभव एवं ऐश्वर्य की कामना जिस सहजता एवं स्वाभाविकता से इन दोनों प्रदेशों के संबन्धी गीतों में व्यक्त हुई है। यह मातृस्नेह वात्सल्य एवं ममत्व का द्योतक है।

गर्भाधान, पुंसवन, सीमान्तोन्नयन, जन्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, कर्णवेध, विद्यारंभ यज्ञोपवीत, वेदारंभ, केशान्त, स्नान - विवाह, तथा अन्त्येष्टि - इन सब का अपना अपना गीत हिन्दी की विविध बोलियों में प्राप्त है। मलयालम में, जन्म विवाह अंत्येष्टि - ये तीन कर्म ही प्रमुख माने गये हैं। मलयाली लोगों के बीच, दोहद पक्ष के गीत भी अति प्रधान माने जाते हैं। इन सब का अपना अपना उदाहरण आगे के खण्डों में दिया गया है।

हिन्दी प्रदेशों में, मुंडन, जनेऊ, अन्नप्राशन नामकरण सबका विविध बोली-प्रदेशों में विशेष महत्व है । जैसे मगही में चूडा कर्म का जितना महत्व है उतना महत्व मैथिली प्रदेशों में प्राप्त नहीं । छत्तीस गढ में, नामकरण का अधिक महत्व है । अवध में, अन्न प्राश और जनेऊ का सबसे प्रधान महत्व है । केरल में इन सब कार्यों का कहीं कहीं महत्व है । लेकिन केवल ब्राह्मण जाति के लोग मात्र जनेऊ चूडा कर्म आदि को प्रधानता देते हैं । अन्य जातियों में ये संस्कार बहुत कम पाये जाते हैं । अतः इनसे संबन्धित गीत भी मलयालम में दुर्लभ हैं ।

मुंडन

मुंडन शब्द को संस्कृत के चूडाकरण शब्द का अपभ्रंश माना जा सकता है । मुंडन संस्कार का महत्व आजकल कम होता जा रहा है । प्राचीन काल में इस संस्कार की विशिष्टता अवश्य रही होगी । इस का प्रमाण कई गीतों में अवश्य मिलता है । समान सांस्कृतिक धरातल के कारण इस संस्कार के विभिन्न कृत्य दोनों प्रदेशों में एक हो गया है । भावसाम्य में इन दोनों प्रदेशों का गीत समान है । भाषा एवं शैली में मात्र भिन्नता देख सकते हैं ।

पुराख्यानों, पौराणिक घटनाओं एवं पात्रों द्वारा किसी कृत्य अथवा क्रिया की सांस्कृतिक अभिव्यंजना करना प्रायः संस्कार संबन्धी गीतों का विशेष लक्षण होता है, जो हिन्दी तथा मलयालम गीतों में बहुधा प्राप्त होता है । परन्तु जिस समान भावधारा तथा सांस्कृतिक उत्कृष्टता का परिचय उन गीतों द्वारा मिलता है वह अन्यथा दृष्टव्य नहीं ।

विवाह गीत

विवाह के प्रायः सभी कृत्य प्रतीकात्मक होते हैं । वर-वधू की सुख समृद्धि, दृढ-बंधन, प्रजनन-शक्ति, पोषण की प्रचुरता तथा दीर्घायु आदि की भावना इन में किसी न किसी प्रकार निहित रहती है.जिन को प्रायः सभी स्थानों पर समान रूप से देखा जा सकता है । इसके अतिरिक्त विवाह के साथ

सामूहिक हर्षोल्लास की जो भावना झलकती है, वह भी प्राय: सर्वत्र समान है, वस्तुत: उसी की अभिव्यक्ति प्राय: सभी स्थानों के विवाह गीतों में होती है । मलयालम एवं हिन्दी के विवाह गीतों पर सम्यक दृष्टि डालने पर यह स्पष्ट होता है कि इन में विवाह का अत्यन्त उदात्त एवं सांस्कृतिक स्वरूप चित्रित हुआ है । इन दोनों प्रदेशों में विवाह का प्राचीन प्रशस्त तर प्रकार - वैसा ही प्रचलित है । दोनों प्रदेशों में विवाह के प्रत्येक कृत्य से संबन्धित गीत उपलब्ध हैं जिन में क्रम बद्धता से कृत्यों की सांस्कृतिक एवं मर्यादित व्यंजना हुई है । यद्यपि दोनों प्रदेशों की विवाह पद्धतियों में कुछ स्थानीय प्रथाओं एवं परंपराओं का मिश्रण भी हुआ है, परन्तु मूलरूप में विवाह के उसी स्वरूप का अनुसरण किया जाता है, जिस का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध है । काल के भयंकर प्रहारों से वैवाहिक प्रथाओं में जितने परिवर्तनों की आशा की जा सकती थी निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उतने हुए नहीं हैं । वस्तुत: काल परिवर्तन से भी अप्रभावित, जीवन्त अस्तित्व की सुरक्षा ही इस संस्कार की प्राचीनता, विशिष्टता एवं महानता का द्योतक है । हिन्दी और मलयालम दोनों प्रदेशों में विवाह के प्रत्येक कृत्य के अनुकूल गीत गाते हैं । दोनों विभागों में समरूप के कृत्य भी देखे जाते हैं । साज बाज, वरयात्रा, स्वागत, कन्यादान आदि कई प्रकार के कृत्य हैं जिन का प्रयोजन एवं विधि विधान दोनों जनपदों में समान रूप के हैं अधिक जिससे गीतों की भाव धारा भी समान होती है ।

विवाह में मेंहदी का महत्व[1]

विवाह की साज सजावट में मेंहदी {मलयालम हिन्दु गीतों में मयिलांची मुसलमानी मोयिलांची, कृस्तीय गीत में मयिलांची} - का सार्वलौकिक महत्व रहा है ।

मेंहदी के हिन्दी प्रदेशों के गीतों में जिन सांस्कृतिक भावों की व्यंजना हुई है उसके पर्याय ही मलयालम में भी प्राप्त हैं । कुछ मलयालम गीतों में मेंहदी का

---

1. The mystle was held sacred to venus and is used as an emblem of love. The Oxford English Dictionary Vol.VII, p.813

उद्भव स्वर्ग से, बताया गया है[1]। हिन्दी के कुछ खड़ी बोली गीतों में, लंदन, दिल्ली, लाहौर आदि प्रदेशों से भी मँगवा लाने की बात बतायी गयी है। इसके अतिरिक्त वर्ण-निखार सौन्दर्य-वृद्धि एवं मांगल्य के प्रतीक रूप में मेंहदी का दोनों स्थानों के गीतों में वर्णन है।

वधू सिंगार के कृत्य एवं गीत दोनों भाषाओं में समान ही उपलब्ध हैं। इन में स्थानीय आभूषणों, एवं सिंगार - प्रसाधनों का अत्यन्त रोचक एवं सुन्दर वर्णन हुआहै। वर-यात्रा के गीतों में भी समान सांस्कृतिक भावों की व्यंजना हुई हैं। पौराणिक कथा सन्दर्भों को गीत में लाकर उस प्रसंग में गाने का क्रम हिन्दी प्रदेशों में अधिक देखा जाता है। कहीं कहीं पुराण प्रसंगों को हास्यास्पद बनाकर गाने की रीति मलयालम में भी प्राप्त है[2]। कहीं राम का आज्ञाकारी भाइयों के साथ ससुराल की ओर प्रस्थान करने का वर्णन हुआ है तो कहीं शिव को शक्ति से विवाहार्थ सुसज्जित बरात लेकर, बंधु-बांधवों सहित चित्रित किया गया है। वस्तुतः वरयात्रा के गीतों में पौराणिक व्यक्तित्वों के प्रतीकों द्वारा वर एवं वधू के उदात्त प्रणय दृढ बंधन, एवं पवित्रता की व्याख्या हिन्दी और मलयालम दोनों गीतों में समान रूप से हुई है।

कन्यापक्ष में किये जानेवाले प्रायः सभी आचार प्राचीन धर्म ग्रन्थों के अनुसार पूर्ण होते हैं। अतः इनके प्रयोजन एवं महत्व दोनों भाषा-भाषी प्रदेशों में समान ही है। गीतों की दृष्टि से इन में कोई विशेष वैषम्य दृष्टिगत नहीं होता। कन्यादान, सप्तपदी, पाणिग्रहण आदि कृत्यों का प्रयोजन एवं महत्व दोनों स्थानों पर एक सा है। हिन्दी प्रदेशों में कन्यादान को जितना कठिन एवं पवित्र कहा गया है, वैसे ही इस कार्य की महात्मता केरल के गीतों में भी

---

1. काद में लाचि लाचि कळेल्लां मळळोशिञ्ञु
माद मे लाचि लाचि मलयेल्ला मळळोशिञ्ञु ।मोचिमाचिप्पाट्टु-पृ.40

2. ञानिप्पोल पोयिल्ला केलासत्तिल
श्री महादेवने कण्टतिल्ला .... आदि । कुरवप्पाट्टु - पृ.44

व्यक्त हुई है । केवल कुछ छोटी छोटी स्थानीय प्रथाओं से जिनका विवाह संस्कार में कोई विशेष महत्व नहीं, संबन्धित गीतों में किंचित असमानता दृष्टिगोचर होती है । देहली पूजा एवं हास-परिहास के प्रसंग, गाली गीत, आदि में यह वैषम्य स्पष्ट दिखाई पड़ता है । वस्तुत: विवाह-कृत्य जिसे मलयालम में चडङ्ङु एवं क्रिया कही जाती है - उनके आधार पर केरल और हिन्दी भाषी प्रदेशों के विवाह संबन्धी गीतों की तुलना करने पर निस्संकोच रूप से कहा जा सकता है कि कुछेक को छोड़कर प्राय: अधिकांश धार्मिक रस्मों से संबन्धित गीतों में समान प्रयोजन एवं सांस्कृतिक भावधारा के अनुरूप पर्याप्त साम्य देखा जाता है ।

केरल में विवाह के साथ प्रासंगिक रूप से देवपूजन की एक विशिष्ट परंपरा, कुछ जातियों में विशेष रूप में जीवित है । विवाह के प्रत्येक कृत्यके अतिरिक्त पृथक रूप से भी इस अवसर पर कई ऐसे कृत्य किए जाते हैं । हिन्दी भाषी प्रदेशों में, हर बोली के जनपदों में, यह प्रथा और भी अधिक शक्तिशाली प्रभाव से गीतों में देखा जाता है[1] । लेकिन मलयालम के गीतों में ऐसे प्रसंगों को पुराणों से भी उद्धृत कर गाया करते हैं[2] । मह-भोजन के हास-व्यंग के गीत भी दोनों भाषाओं में प्रचुर मात्रा में प्राप्त हैं[3] । समग्र रूप से इन दोनों भाषा भाषी प्रदेशों के विवाह संस्कार संबन्धी गीतों की तुलना करते समय, केरल में, हिन्दू, मुसलमान एवं ईसाई - तीनों धार्मिक विभागों का अपना अपना गीत पाया जाता है । हिन्दी-भाषा प्रदेशों में हैन्दव विवाह संप्रदाय के गीतों को ही अधिक महत्व दिया जा सकता है । कहीं कहीं मुसलमानी, रीति रिवाज का पता भी चलता है, तो भी भाव, साम्य में दोनों समान है । केरल की मार्गम् कळि प्पाट्टु विधा, एवं माप्पिळप्पाट्टु विधा में, इस, संस्कार से संबन्ध रखनेवाली, कई, क्रियाएं है, उन सब अपने अपने पृथक, पृथक गीत भी प्राप्त है[4] ।

---

1. मैथिली लोक गीतों का अध्ययन - डॉ॰ तेजनारायणलाल - पृ॰40
2. आधुनिक साहित्य - प्रो॰ एस॰ गुप्तन नायर - पृ॰127
3. वही पृ॰147
4. केरळत्तिले कृस्तीय चरित्रम - डॉ॰ पी॰जे॰ थामस - पृ॰42-49

बे - मेल विवाह के विरुद्ध लोक-उक्तियों का तीखा परिहास जितना मलयालम गीतों में देखा जाता है उतना हिन्दी की सारी बोलियों के विवाह गीतों के सूक्ष्म निरीक्षण से भी प्राप्त नहीं होता । दहेज प्रथा का विवरण मलयालम गीतों में कम है । समग्र रूप में इन गीतों की तुलना हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है कि भाव साम्य में दोनों प्रदेशों का जन-जीवन समान है ।

क्रैस्तव एवं मुसलमानों में, विवाह एक अनुबन्ध {करारनामा} सा होता है । इस कारण उनके गीतों का समग्र अवलोकन यहाँ अलग करने की आवश्यकता नहीं । उन में लोकाचारों का बाहुल्य उतना नहीं है, जितना हिन्दू जातियों में प्राप्त है । मुसलमानों की अधिक जनसंख्या जहाँ प्राप्त है, वहाँ गीतों में वैविध्य भी पाया जाता है । उत्तर भारत में क्रिस्तीय जीवन का प्रचार है इसलिए क्रिस्तीय विवाह गीतों का प्राचुर्य मात्र, मलयालम में मिल जाता है । लेकिन ये सब हिन्दुओं के विवाह गीतों की अनुकृति मात्र रहे हैं । इसलिए मलयालम के हिन्दू-कृस्तीय विवाह गीतों में एक स्वतंत्र सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि के चिन्ह बहुत कम ही मिलते हैं । हिन्दी भाषी प्रदेशों के संबन्ध में भी यह मत लागू रहता है जो मुसलमानी और हिन्दू गीतों की तुलना में पड़ता है ।

मृत्यु गीत

हिन्दी और मलयालम में प्राप्त, मृत्यु गीतों की तुलना करने पर यह स्पष्टतः ज्ञात होता है कि वार्धक्य कालीन स्वाभाविक निधन पर मृत्युगीत गाने की प्रथा दोनों प्रदेशों में समान है । मृतक के गुणों उसकी मृत्यु से उत्पन्न कष्टों एवं दु:खों का उल्लेख समान है । मृतआत्मा को स्वर्ग सिधारने की कल्पना भी दोनों भाषा के गीतों में समान रूप से प्राप्त होती है । दोनों प्रदेशों के मृत्यु-गीतों का विषय, साधारणः इन तत्वों पर आधारित होता है ।

परन्तु आदर्श और आस्था का अमर संदेश कहीं कहीं अचानक, अकाल मृत्यु के करुण गीत में प्राप्त होता है । मृतक के गुण, शौर्य एवं आदर्शों का जितना सुन्दर वर्णन मल्यालम गीतों में हुआ है उतना सारे हिन्दी मृत्यु गीतों में भी उपलब्ध दिखाई नहीं पड़ता । अहीरों के कुछ गीतों को उस स्वर माधुरी से कोई अलग नहीं कर सकते । कृत्यों एवं क्रियाओं की दृष्टि से भी दोनों प्रदेशों के मृत्यु संस्कार में भिन्नता दिखाई पड़ती है । धार्मिक एवं जाति गत, अन्तर शव के लिटाने, बिठाने आदि क्रिया में भी देखा जाता है । तो भी प्रयोजन की दृष्टि से दोनों प्रदेशों के मृत्यु संस्कार मेंअत्यंत समानता है जो प्राय समान सांस्कृतिक भावधारा के कारण ही है । अन्य संस्कारों से मृत्यु ही एक ऐसा संस्कार है जो आदिम विश्वासों एवं विचारों से अधिक संपन्न है ।

1\. केरल में मृत्यु संस्कार की कई रीतियां प्रचलित है । अधिकांश हिन्दू मृतक-शरीर को श्मशान में जलाते है । भौतिकावशिष्ट के राख को किसी नदी में निमज्जन करने से यह क्रिया समाप्त होती है । कुछ विशेष जाति के हिन्दू लोग, जैसे पिषारोडी, अयमाकल चेट्टी, पालघाट जिले के कुछ वैश्य आदि शव को बिठने की स्थिति में [जैसे समाधि] गड्ढे में रखकर गढे में नमक भरकर गाड देते हैं । यह रीति अन्य प्रान्तों में देखा नहीं जाता । पेटी बनाकर शव को उसमें लिटाकर गाड देने की प्रथा हिन्दुओं में भी है चलती है । क्रिस्तीय जातियां शव को पेटी में लिटाकर गिरिजा घर की सिमिट्री में गाड देती हैं । मुसलमान लोग मजजिदों के कबरस्थान में शव को गाड देते हैं या कब्र बनाकर उसमें सुरक्षित रखते हैं । हिन्दू लोगों की एक विशेषता इस कार्य में यह भी है कि एक जमाने में प्रत्येक जाति का अपना अपना श्मशान था । कुछ जातियों का अपना श्मशान आज भी है । हाल में सर्कार की ओर से, सार्वजनिक श्मशान भी होते है । उसका अलग कानून भी बनाया है । मृतक को घर के आंगन में [दक्षिण] कुटी बनाकर उसमें गाड देकर वहां दीप जलाकर पूजा एवं आराधना करने की रीति कुछ प्रतिष्ठित घरानों में आज भी चलती है । हमारे मन्दिरों की उत्पत्ति शायद इस क्रिया की जड में ढूंढ लिया जा सकता है ।

2\. ~~किरण कुमारी गुप्त [हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण~~

[प्रयाग — सं-2024] पृ-2

भाषा और भौगोलिक पार्थक्य के होते हुए भी, हिन्दी और मलयालम बोलियों के संस्कारिक गीतों में जो अद्वितीय समानता दृष्टिगत है, वह मूल मानव सुलभ प्राचीन संस्कृति एवं समान परम्परा का - अवशेष मालूम पड़ता है। लोक काव्य इन अवशेषों की अनन्य खानें एवं निधियाँ हैं। आगे हम, ऋतु त्योहार एवं व्रत संबन्धी गीतों की ओर अग्रसर करें।

ऋतु गीतों की तुलना

मानव जीवन तथा प्रकृति का सम्बन्ध अनादि काल से अविच्छिन्न रहा है। सृष्टि के उषा काल में जब आदिम मानव को सर्वप्रथम प्रकृति का ही सान्निध्य एवं सहयोग प्राप्त हुआ होगा। इस कारण प्रकृति मानव की आदि सहचारी रही हैं। ऋग्वेद में ऐसा कहा है[1]। व्यावहारिक रूप से जितनी मानवेतर सृष्टि हैं, उसको प्रकृति कहा जाता है। अतः रूप, रस, गंध, स्पर्श और श्रवण आदि द्वारा अनुभूत सभी विषय प्रकृति के अन्तर्गत आ जाते हैं[2]।

दृश्य-प्रकृति मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को घेरे हुए हैं। आदिम मानव ने जब चेतना उपलब्ध की तो उसने हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियों, अगाध जलराशियों, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, श्याम जलदखण्ड, विद्युत मालाएं आदियों से घिरा हुआ अपने को परिवृत्त पाया। इन सबों ने उसे आश्चर्यान्वित किया। प्रकृति के इस अद्भुत अनंत तथा अपार सौन्दर्य से विस्मित, आदिम मानव इस के विराट स्वरूप से भयभीत भी होने लगा। फेनिल लहरों को उगलता हुआ अगाध सागर, भीम भी कर मेघों का भयंकर गर्जन, निनाद करता हुआ भयंकर झंझावात, वर्षा, हिमपात तथा सभी प्रकार के परिवर्तन उन को भयभीत करने लगे[3]।

---

1. किरण कुमारी गुप्त [हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण, प्रयाग सं. 2024] पृ. 2

2. प्रकृते महां स्ततो हंकारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः।
तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पंच भूतानि। [सांख्य दर्शन]

3. उषादेवा उदिता सूर्यस्य। रिक्तः पिपूता निरवद्यात्।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिंधुः पृथिवी उतद्यौः॥
ऋग्वेद : 3-114-1

प्रकृति का सुन्दर एवं सौम्य रूप रौद्र हो गया । वस्तुतः मानव की प्रकृति-विषयक चेतना में एक नवीन तत्व का समावेश हुआ । इस प्रकार प्रकृति कौतूहल का विषय न रह कर मनन की वस्तु बन गई । क्रमशः उसने प्रकृति के प्रत्येक अंग में मांगलिक रूपों को भी देखा । उसने इन सभी में देवत्व की प्रतिष्ठा कर ली । अतः इस भांति मानव मस्तिष्क की विकसित चेतना द्वारा प्रकृति के प्रति पूजाभाव का आविर्भाव हुआ । अपनी कल्पना से उसने सभी देवताओं को सुन्दर नाम एवं रूप दिया । वस्तुतः मानव जीवन का प्रत्येक कृत्य देवताओं से प्रभावित होने लगा । इस देवोपासना अभीष्ट की प्राप्ति केलिए शुरू हुआ ।

जब मानव समाज के मन में उल्लास और जीवन में वैभव का आधिक्य होता है, तभी उत्सव त्योहार एवं अन्य मनोरंजक उपादानों की सृष्टि होती है । संसार की विभिन्न जातियों में जितने भी उत्सव और त्योहार प्रचलित हैं, उनके मूल में आनंद की अभिव्यक्ति की भावना सर्वोपरि है । देवताओं के भय के कारण भी उत्सवों का आविर्भाव हुआ माना जा सकता है । वस्तुतः मानव मन-स्थिति के सहज विभिन्न परिवर्तन ही इस प्रकार के विशेष आयोजनों के जन्मदाता हैं । आज भी वर्षा न होने पर इन्द्र देवता की उपासना की जाती है । अशिक्षित और असभ्य जन आज भी सूखा पड़ने पर यज्ञ, होम एवं बलि देकर अन्य देवता एवं वर्षा की देवता को प्रसन्न करते हैं । वस्तुतः ऐसे सभी कृत्यों में देवानुग्रह एवं देवानुकंपा की भावना सर्वोपरि है । कहने का मतलब इतना है कि प्रकृति के "रम्य" एवं "उग्र" दोनों रूपों से आदिम मानव प्रभावित रहा है । अतः इसका पूजन शुरू किया । इसके फलस्वरूप विभिन्न उत्सव त्योहारों का जन्म हुआ । प्रकृति, ऋतु, एवं देवपूजन आदि के विशेष उत्सवों तथा पर्वों आदि का पारस्परिक संबन्ध इतना घनिष्ठ है कि इन्हें पृथक् करना असंभव है ।

हिन्दी और मलयालम में, विभिन्न ऋतु एवं त्योहार संबन्धी गीतों के तुलनात्मक अध्ययन करते समय ऊपर कही गई तत्वों पर ध्यान देना अनिवार्य मालूम

पड़ता है । मलयालम और हिन्दी के प्रान्तों में, जलवायु, भौगोलिक स्थिति प्राकृतिक सौन्दर्य आदि के भिन्न होते हुए भी, इन दोनों प्रदेशों के ऋतु एवं प्रकृति संबन्धी गीतों में पर्याप्त साम्य द्रष्टव्य है । विशेष स्थानीय परिस्थितियों के कारण कहीं कहीं किंचित, असमानता भी परिलक्षित होती है । लेकिन ऋतु की मादकता दोनों भाषाओं के प्रणय गीतों में छाई हुई है । सावन के झूले के गीत हिन्दी में जिस ओज से गाये जाते हैं, उसी ओजस्विता से केरल में सावन में झूला के गीत गाये जाते हैं[1] । शृंगार रस प्रधान कई गीत सावन में गाये जाते हैं । विप्रलंभ शृंगार के गीत भी इस अवसर पर गाते हैं । दोनों प्रकार के गीतों में प्रकृति उद्दीपन का कार्य करती है । वियोगिनियां हिन्दी लोक गीतों में काग, पपीहा, बुलबुल आदियों के द्वारा प्रियतम तक संदेश पहुंचाती हैं । यह रीति दोनों भाषाओं के लोक गीतों में समान रूप से देखी जाती है । मलयालम में हवा से भी प्रार्थना है[2] । प्रकृति सौन्दर्य ऋतु शोभा एवं प्रणय के विभिन्न पक्षों का निरूपण साधारणत: स्फुट गीतों में ही अधिक हुआ है । जबकि सावन के ऋतु में विप्रलंभ शृंगार के अधिक स्वर बारह मासा जैसे गीतों में हिन्दी प्रदेश में गाया जाता है । मलयालम में ऐसे गीतों का गायन भादों में भी होता है । हिन्दी के खड़ी बोली प्रदेश में एवं मैथिली, मगही आदि प्रदेशों में भी बारहमासा का बड़ा महत्व रहा है । केरल में बारह मासा की जगह-प्रेम गीत नाम अधिक शोभित हैं[3] ।

सांस्कृतिक अंतश्चेतना एवं भावधारा के ऐक्य के कारण केरल तथा हिन्दी प्रदेशों के लगभग सभी त्योहारों, व्रतों, अनुष्ठानों तथा पर्वों आदि में भी समानता परिलक्षित होती है । दोनों स्थानों में त्योहार आदि से संबंधित

---

1. ओणम, तिरुवातिरा दोनों अवसरों पर ये गीत गाते हैं ।
2. कार्‌रे वा, कार्‌रेवा,

   कुलिर्‌ कोण्टोटि वा, कार्‌रे वा ।
3. ओणकलिप्पाट्टु, तिरुवातिर कलिप्पाट्टु एवं पूरक्कलिप्पाट्टु भिन्न प्रणय गीतों के हैं । फेस्टोत्सव ।

जितने भी गीत उपलब्ध होते हैं उनके वर्ण्य विषय भावाभिव्यंजना, सांस्कृतिकता, एवं अन्य प्रवृत्तियाँ समानभावधारा के द्योतक हैं। तुलना करने पर यह स्पष्टतः ज्ञात होता है कि सार्वजनिक सांस्कृतिक महत्व के सभी त्योहार दोनों प्रदेश में समान रूप से आयोजित होते हैं तथा उनसे संबद्ध लोकाचार तथा आनुष्ठानिक कृत्यों में कोई विशेष अंतर नहीं। उनके गीत भी प्रायः समान विषय तथा भावधारा को व्यंजित करता है। रुद्र, दुर्गा, काली, राम, कृष्ण, हनुमान आदि देवों देवियों के नाम गाये जाने वाले गीत दोनों भाषा-क्षेत्रों में समान रूप से पाये जाते हैं। ~~[illegible]~~ पुराख्यानों में देवी देवताओं का जो रूप चित्रित हुआ है, गीतों में भी उनके वैसे ही रूपों का अवलोकन होता है। इसका कारण स्पष्टतः भारतीय संस्कृति एवं धर्म की एकात्मकता एवं समान स्रोत हैं। एकता की इस भावना में भौगोलिक अथवा भाषागत सीमाओं का कोई बन्धन नहीं रहा है।

हिन्दी प्रदेशों और केरल में समान रूप से मनाये जानेवाले त्योहारों की संख्या अधिक है। दशहरा, दीपावली, कृष्णाष्टमी, आर्द्रा-पोना, वेलोत्सव आदि सारे भारत में समान महत्व देकर मनाया जाता है। इन में किसी किसी को प्रांतीय संज्ञा होती है। जैसे आर्द्रा, पोना*। केरल में कुलदेवों की पूजा हिन्दी प्रदेशों से बढ़कर अधिक पायी जाती है। प्रत्येक कार्य के साथ प्रत्येक गीत भी गाया जाता है। ऐसी विशेषता केवल मलयालम लोक गीतों में ही पायी जाती है। वस्तुतः दोनों भाषाओं की ऋतुएं, त्योहारों और देवपूजा संबन्धी गीतों में भारतीय सांस्कृतिक अन्तश्चेतना की अजस्र धारा समान रूप से प्रवाहमान है।

विभिन्न जातियों के गीत

जाति केलिए अंग्रेज़ी में "कास्ट" शब्द प्रचलित है जो मूलतः पुर्तगाली शब्द "कास्टा" का अपभ्रंश है। इसे सामान्यतः किसी नस्ल" ब्रीड वर्ग (क्लास) तथा प्रजाति "रास" (Race) को लक्षित करके प्रयुक्त किया जाता है। हमारे यहाँ

* तिरुवातिरा

"जाति" शब्द जन्म जात शब्द से ही मानी जाती है।[x] साधारणत: जाति का अर्थ है व्यक्ति के सामाजिक स्तर एवं उसके आनुवंशिक व्यवसाय को प्रकट करनेवाला वर्ग।[1]

किसी "जाति" की प्रमुख विशेषता यह मानी जाती है कि उसके सदस्य समान उत्पत्ति एवं परंपरागत व्यवसाय में प्राय: विश्वास रखते हैं। संक्षेप में जब एक वर्ग पूर्णतया आनुवंशिकता पर आधारित रहता है, तो उसे हम जाति कहते हैं।

यद्यपि जातीय भेद की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में विद्वानों में मत वैभिन्य है तोभी मूलत: इसका जन्म वर्ण व्यवस्था के आधार पर एक सुव्यवस्थित सामाजिक संगठन एवं कार्य विभाजन के हेतु हुआ था जो कालान्तर में एक जटिल रूप धारण करके वर्तमान सामाजिक सुव्यवस्था का बाधक सिद्ध हुआ।[2]

असल में जातिवाद के रूप में आर्यों ने समाज के भीतर एक दीर्घ सीढ़ी खड़ी कर दी जिस में नीचे से ऊपर तक सभी श्रेणियों के लोग अपनी अपनी हैसियत के अनुसार आसानी से बैठ सकते थे। परन्तु कौन जानता था कि समय के प्रवाह के साथ-साथ, धार्मिक विचारधारा, रंग-भेद एवं अन्य आडंबरों से आर्यों का यह सिद्धान्त निर्जीव हो कर वर्तमान हिन्दू समाज केलिए घातक सिद्ध होगा।[0]

केरल और हिन्दी प्रदेशों में प्राप्त विभिन्न जातियों के गीतों का तुलनात्मक विवेचन करने पर यह स्पष्टत: ज्ञात हो जाता है कि जाति गत व्यवहार दोनों प्रदेशों में समान रूप से पाया जाता है। दोनों प्रदेशों की ये जातियां अपने शारीरिक श्रम से जीविका कमानेवाले हैं।

---

1. A. E.A. Gait. 'Caste' Encyclopaedia of Religion and Ethics. Vol. III p.273

2. B. T.N. Madan, Family and kinship - p.23

x फोर्म आफ एक्सिस्टेन्स फिक्सड के अर्थ : स्टूडन्स संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी
वी.एस.आप्टे

0. केरल में अद्वैतवाद एवं मानवत्व में एकत्व का सिद्धांत श्री.शंकर ने स्थापित किया
कास्ट एण्ड ट्रैब्स आफ कोचीन - एल.कृष्ण अय्यर - प.19

मलयालम और हिन्दी में जातिगत भिन्नताएं अधिक हैं तो भी, जाति संबन्धी गीत केरल में, कम मात्रा में पायी जाती हैं। इसलिए इन दोनों विभाग में तुलनात्मक अध्ययन करने योग्य गीत कम पाये हैं। लेकिन केरल में भी अहीर, धोबी, केवट आदि भिन्न जातियां प्राप्त हैं। इनके गीतों को श्रम जीवियों के गीतों में स्थान दिया गया है। यों हिन्दी प्रदेश में भी गाढ एवं भातों को छोड कर अन्य सभी जातियां पूर्ण रूप से शारीरिक श्रम द्वारा ही अपनी जीविका उपार्जित करती हैं। श्रमाधीन अथवा परिश्रान्त व्यक्ति की भावनाएं मनोवृत्ति मानसिक दशा एवं श्रम परिहार हेतु की हुई अभिव्यंजनाएं[1] देश एवं काल की सीमाओं से मुक्त प्रायः सर्वत्र एवं सर्वदा समान होती हैं। इस दृष्टि से केरल और हिन्दी प्रदेशों की जातियों के गीत, स्थान परिवेश एवं भाषा के पार्थक्य के होते हुए भी समान भावधारा के उत्कृष्ट उदाहरणों के रूप में प्रस्तुत किये जा सकते हैं[2]। दोनों प्रदेशों के धोबियों के गीतों को में। दोनों में समान प्रवृत्तियां दर्शनीय हैं। इसी प्रकार गूजरों, गोण्डों के गीतों के साथ केरल के पणिया [वयनाटु] एवं कुरुमों के गीतों की तुलना हो सकती हैं। चोलनायिकन, काटुनियन आदि गिरिजनों के गीतों की समानता गूजरों, गोंडों के गीतों में है। उनका "मृत्यु-गीत" समान शोकास्पद एवं हृदय द्रवीकरण शक्ति से संभूत बताया जा सकता है। हिन्दी के खडी बोली प्रदेशों में जो केवट जाति के लोग गंगा जमुना तटों में रहते हैं, ये लोग संख्या में बहुत कम हैं, तो भी उनका जातिगत गीत केरल के अरया [मछुआ] जाति के जाति गत-गीतों की समानता रखता है। अल्प संख्या में होने के कारण इन का कोई जातीय अस्तित्व प्राप्त नहीं है। हिन्दी प्रदेशों में प्रत्येक जनपदों में प्रत्येक नाम से जानी जाने वाली कुछ जातियां हैं। जिनके गीत और वाद्य यंत्र केरल और उत्तर में भी समान ही हैं। संस्कृति और स्थानीय प्रभाव के कारण बोल" में थोडा अन्तर देखा जाता है। अत्यंत स्थानीयता से अनुरंजित होते हुए भी दोनों प्रदेशों के विभिन्न जाति गीतों में पर्याप्त समानता विद्यमान है।

---

1. मार्क्स ने भी यही कहा है।
2. केरल के पाणन, गणकन्, पुल्लुवन, वेलन, मण्णान, आदि भिन्न जातियों का अपना अपना गीत है। लेकिन ये जातियां, श्रमजीवियों में नहीं आते। जाति संबन्धी रूढी वृत्ति मात्र उनकी जीविका कमाने की रीति नहीं।

श्रमगीत

आगे हम श्रमगीतों की ओर थोड़ा दृष्टिपात करें । वह गीत जो शारीरिक क्रियाओं के साथ गाया जाता है वही श्रमगीत है । इसे अंग्रेज़ी में वर्क्स सोंग्स कहते हैं[1] । स्टेन्डर्ड डिक्शनरि आफ फोकलोर माईथालजी एण्ड लिजन्ड - में श्रमगीत को - जो किसी शारीरिक क्रिया को करते समय कार्य कुशलता को बढाने कार्य की गति को अविरत रखने तथा कार्य क्षणों में श्रम का परिहार करने केलिए गाया जाता हो - ऐसा - निरूपण दे दिया है[2] ।

श्रम अथवा कोई शारीरिक क्रिया करते समय उत्क्रोशात्मक अथवा विस्मय बोधक ध्वनियों की अभिव्यक्ति करना मानव स्वभाव के अनुकूल भी है । संभवत: इसी कारण श्रम के दौरान अभिव्यक्त उद्गारों को वाणी तथा संगीत की उत्पत्ति का एक विशिष्ट कारण बतलाया गया है[3] ।

इस दृष्टि से श्रम गीत साहित्य का आदिम रूप माना गया है[4] । सभी प्रकार के श्रमिक वर्गों के अपने अपने गीत होते हैं ।

श्रम गीतों की निर्माण-प्रक्रिया आज भी जीवित है भले ही संदर्भों में परिवर्तन आया हो ।

---

1. Work songs: Standrad dictionary of Folk-lore, Mythology and Legent, Vol.II, p.1035

2. A song sung at a task to increase the efficiency of the effort by timing the work stroke, setting a steady work pace or whiling away the tedium of the working hours. Ibid p.1181

3. (a) Language originated in exclamations utted in work. A.S. The History and origin of Language (London 1960) p.25

   (b) Jack Lindsay : A History of Culture from pre history to Renasceene (London) 1962 p.25

4. Music originated in rhythmical communal work, and therefore the work song was the primal type of literature and Music. Literature among the primitives. p.57

मानव स्वभाव के अनुकूल मलयालम और हिन्दी के श्रम गीतों में पर्याप्त साम्य है। यद्यपि भिन्न भिन्न सामाजिक एवं भौगोलिक परिवेशों के कारण कहीं कहीं किंचित विषमता भी दृष्टिगोचर होती है। केरल और हिन्दी प्रदेश मूलत: कृषि पर निर्भर है। केरल में नगर सभ्यता भी कृत्रिमता से मुक्त है। यान्त्रिकता और मशीनी करण के अभाव के कारण दोनों का कृषि जीवन पूर्णरूप से अत्यधिक श्रम एवं प्राचीन कृषिविधियों पर ही आश्रित है। ऐसी परिस्थिति में श्रम गीत जो अनादिकाल से कृषकों का परिहार करते आये हैं, आज भी इन दोनों प्रदेशों के कृषक जीवन के संबल हैं।

इन दोनों प्रदेशों में प्राप्त कृषि संबन्धी गीतों की तुलना करने पर यह निस्संकोच एवं दृढता पूर्वक कहा जा सकता है कि हिन्दी प्रदेशों के कृषक गीतों के समान केरल के कृषक गीतों का प्रचलन अधिक हुआ है। यद्यपि शृंगार, नीति, अनुभव एवं धार्मिक विश्वासों से संबन्धित गीत दोनों प्रदेशों के कृषक वर्गों में समान रूप से बहुप्रचलित है। यह भी कहा जा सकता है कि शुद्ध श्रम गीतों का हिन्दी की अपेक्षा मलयालम में अधिक प्रचार है। लय एवं टेक आदि पर जो श्रमगीत के प्राण कहलाते हैं, दृष्टिपात किया जाए तो इस दृष्टि से भी मलयालम श्रमगीत, अधिक आस्वाद एवं भाव प्रधान मालूम पड़ता है। इन गीतों में आदिम तत्वों का आधिक्य भी रहा है। हिन्दी श्रमगीतों की अपेक्षा मलयालम श्रमगीतों में आदिम संगीत एवं काव्य तत्व भी स्वाभाविक रूप से अधिक रहा है। यहाँ कातित्तोटि, तेयलोयी, पुन्नोयिक्कन्ट एवं मारी मक्कल पोगिष्वे आदि लघु गीत इसके उदाहरण है।

---

1. केरल मलनाड होने के कारण, यहाँ नवीन यान्त्रिक विकास का होना असंभव भी है। उत्तर भारत के गाँवों में भी आम जनता और किसान मजदूर आज भी काम करते हैं। बैल और हल आज भी उनकी निरपर्याय है।

जहाँ टोने टोट के एवं अन्य आदिम विश्वासों से पूर्ण गीतों का संबन्ध है, दोनों प्रदेशों के गीतों में टोने से सम्बद्ध समान विश्वास एवं ध्येय परिलक्षित होते हैं। अन्तर केवल इतना है कि केरल के गीतों में, भिन्नतायें अधिक हैं। श्रम जीवियों के विभागों की संख्या और श्रम गीतों की संख्या भी अधिक है। यहाँ पशु-पक्षियों को टोने टोटके में अधिक स्थान है। हिन्दी में अदृश्य जीव, जैसे, भैंटा आदि को महत्व है। यहाँ मेंढकों की पुकार या लंब गीत, भकुलीहाकी पुकार आदि बरसात के समय की सूचना में लिया जाता है[1]।

ग्राम देवता और इष्ट देवों का नाम श्रम गीतों में अधिक आया जाता है। प्रत्येक ~~[illegible]~~ मनौती व धार्मिक क्रियाओं के आगे, इष्टदेव पूजा भी होती है। हिन्दी के कुछ गीतों में गोपाल, चारवाहों आदि का गीत, श्रमिक गीतों की श्रेणी में आते हैं। केरल में ऐसा नहीं। सब श्रम गीतों में स्थान प्राप्त कर चुके हैं। उनके गीतों में प्रकृति की, अद्भुत, प्रभावों में घूम कर अमोघ रीति, स्वरों में गाने की प्रथा अधिक है। उनका ताल और लय गाय बकरियों के खुरों के ताल लयों के समान होता है। यहाँ कृषि के औजारों और अन्य उपकरणों का ताल भी होता है[2]।

केरल के गाड़ी हाँकनेवाले, नाव चलानेवाले, भेड़ चरानेवाले आदि श्रम जीवियों की आँखें हमेशा प्रकृति की सुन्दरता एवं विस्मयता तक जहाँ चली जाती हैं, तहाँ हिन्दी की विविध प्रांतीय के या भोजपुरी के या छत्तीसगढ़ी के व मिथिला के श्रम जीवियों की आँखें साधारणत: पशुओं या भेड़ों के दलों पर मात्र चलती हैं। केरल की निरानेवाली या बोने वाले की आँखें, जीवन के सुख

---

1. रूसी, श्रम गीतों में भी, पशु पक्षियों को विशेष महत्व दिया जाता है।
रशियन फोक्लोर - पृ.176

2. रस्सी बनाने के लिए नारियल की छिलके को मार मार कर धागा बनाने वाली स्त्रियों का गीत एक विशेष ताल का होता है।

दुख एवं निरर्थकता तक कभी कभी जाती है, जहाँ उत्तर की चक्की पीसने वाली मज़दूरिन कौटुंबिक दुख से ओतप्रोत रहती है। कहने का मतलब यह है कि जीव के दार्शनिक भावों तक जाने की शक्ति, यहाँ मज़दूरिनों में भी है - शायद यह शंकराचार्य की जन्म भूमि होने के कारण होगा। हिन्दी और मलयालम श्रमगीतों की तुलना में यह विशेष ध्यान देने की बात है कि यहाँ चक्की तथा कोल्हू के गीतों में, अधिक हिन्दी प्रदेश में "मल्हार" राग के हैं। इस प्रकार का कोई स्वतंत्र उदाहरण हमें केरल में निर्धारित नहीं किया गया है।
नाव खेनेवाले के गीत में जलधारा की एवं लहरों की थोडे डाँड का ताल हमेशा रहता है - जैसे -

> वेयुं कायविलोक्म वेट्टुं,
> आई उन्नानेन्टे मारने -
> मारने, मणि मारने, एन्टे
> अम्पुट्टा मणिमारने ..... आदि - गीतों में यह स्पष्ट भी है।
>
> सित्तोयि, तेय तोय - तुम्तोयिकन्टु
> मारि मयकम, चोरिवि - - - - आदि भी इस विभाग में आते हैं[2]।

लेकिन तव्वोविक्प्पाट्टु एवं पूत्तुरम पाट्टु जैसे वटकन लोक गीतों के गाने वाले, उनकी अपनी एक-भाषा - राग में गा गाकर इस कमी से बच जा[ते]। उत्तर भारत में, श्रम-गीत स्त्री और पुरुष अलग अलग और सम्मेल स्वर में मिलकर भी गाते हैं। यह रीति केरल में भी देखी जाती है।

---

1. हिस्टरी इन इन ट्रेल ब्राडिस्ट सेम्स इन द स्टोरी आफ मानू
   द कोलंबिया इन्साइक्लोपेडिया

2. कौन मासे हरिवर पातर तिरिया
   कौन मासे गौना कौने जाई
   आवन मासे अहरिवर जातर तिरिया फागु न मास हरिवर।
   मैथिली लोक गीत - डॉ॰ तेजनारायण लाल - पृ॰ 172

वहाँ चक्की - कोल्हू, चर्खा आदि के गीत स्त्रियों का मात्र भी रहा है। यहाँ, तत्पश्चात् केवल स्त्रियों का मात्र देखा जाता है।

वस्तुतः इन दोनों प्रदेशों के इन गीतों में यद्यपि कहीं कहीं किंचित असमानता दृष्टिगोचर होती है तो भी वह अत्यंत ऊपरी एवं आकस्मिक हैं, और सामाजिक तथा भौगोलिक सीमाओं तक ही सीमित है। अतः मूल में देखने से स्पष्ट होता है कि गीतों द्वारा इस परिवार की स्वाभाविक जिज्ञासा एवं उत्सुकता केरल के श्रमिकों में भी उतनी ही तीव्र है जितनी हिन्दी प्रदेश के विविध बोलियों के प्रदेशों के श्रमिक वर्ग में तीव्र है। वस्तुतः पृथक वाणी या बोल एवं भाषा की भिन्नता से इस समान सहज एवं आदिम मानव जिज्ञासा में कोई अन्तर नहीं दिखाई देता है।

<u>अन्य विविध गीतों में तुलना</u>

§1§ <u>ऐतिहासिक गीत</u>

लोकसाहित्य का प्राचीन काल से इतिहास का संबंध है। लाला लाज पत राय का कथन किसी भी देश का यथार्थ इतिहास तथा नैतिक एवं सामाजिक उच्च आदर्श लोक साहित्य में इस तरह अनुस्यूत रहते हैं कि इस अमूल्य साहित्य का ह्रास एक वास्तविक क्षति होगी[1]।

इतिहास व्यापक अर्थ में मानव के व्यतीत की कथा है। मानव के चेतन संसार की समस्त घटनाओं का प्रलेख भी है। संभवतः इसी कारण धार्मिक परंपराएं अवदान पुराख्यान आख्यायिका तथा मानव की सभी आदिम अभिव्यक्तियों से इतिहास का प्रारंभ माना जाता है। वस्तुतः इतिहास व्यतीत का ऐसा क्रमबद्ध वर्णन है, जहाँ मात्र घटनाएं ही नहीं वरन घटनाओं के कारण भी ज्ञात होते हैं।

---

1. दे॰ सप्तसिंधु §पटियाला§ दिसंबर 1951 - पृ॰70

प्राचीन काल से लोक साहित्य से इतिहास का अविच्छिन्न एवं अटूट संबन्ध रहा है। गाथा कथाएं आदि अति प्राचीन काल से, ही इतिहास के प्रति अत्यंत यथार्थ एवं मौलिक रूप से जागरूक रही हैं।

प्राय: देखा जाता है कि ऐतिहासिक गीत एवं लोक गाथा में कोई मौलिक अंतर न मानकर भ्रांति से एक ही वस्तु समझा जाता रहा है, परन्तु यह धारणा नितांत भ्रामक सिद्ध हो सकती है। वास्तव में लोक काव्य की ये दोनों अभिव्यक्तियां भिन्न हैं।

ऐतिहासिक गीत लोक गाथा की अपेक्षा जीवन के अधिक निकट होता है। लोक गाथा में जहां कल्पना का मिश्रण रहता है, वहां ऐतिहासिक गीत, यथार्थ पर अधिक अवलम्बित होता है। ऐतिहासिक गीत में ऐतिहासिक घटनाओं एवं उनसे संबद्ध अथवा स्वतंत्र व्यक्तियों आदि का यथार्थ वर्णन रहता है, जब कि लोक गाथा किसी भी काल्पनिक व्यक्ति अथवा घटना पर आधारित हो सकती है। इसके अतिरिक्त लोक गाथा की भांति ऐतिहासिक गीत में किसी विशेष परंपरा अथवा काव्य कला का अनुसरण नहीं होता, वरन् यह स्वतंत्र रूप से इतिहास संबद्ध ही होता है। वस्तुत: ऐतिहासिक गीत, लोक गाथा से विषय एवं शैली दोनों प्रकार से भिन्न है।[1] मलयालम और हिन्दी में ऐतिहासिक गीत समान रूप से प्राप्त हैं।

राजनैतिक गीत

मलयालम और हिन्दी ऐतिहासिक और राजनैतिक गीतों की तुलना करते हुए यह कहा जा सकता है कि इन दोनों प्रदेशों के भौगोलिक सामाजिक, ऐतिहासिक एवं राजनैतिक परिवेशों के विभिन्न के रहते हुए भी दोनों प्रदेशों के

1. Historical song is, in its content more distinctly and nearly connected to real life than the By line (Ballad) transmitting historical facts (events and names of personage). Russian Folk lore, p.342

गीतों में भावात्मक एकता एवं लोक मानस की समान जागरूकता के उत्कृष्ट उदाहरण प्राप्त हैं[1]। यह एक निर्विवाद सत्य है कि दो भिन्न प्रदेशों का इतिहास हमेशा भिन्न रहता है। अतएव तुलना करने पर उन में समानता के बहुत कम लक्षण प्राप्त होते हैं। मलयालम और हिन्दी इस दृष्टि से अपवाद नहीं भी है। इन दोनों प्रदेशों के लोक कवि जिस निष्ठा एवं सजगता के साथ ऐतिहासिक परिवर्तनों के प्रति जागरूक रहा है, उस के आधार पर हमें अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्यों की उपलब्धि होती है।

दक्षिण भारत और उत्तर भारत का इतिहास आरंभ काल से ही सर्वथा भिन्न रहा है। लेकिन वर्तमान युग का इतिहास कई तरह से किंचित समान रहा है। इस दृष्टि से आदि कालीन गीतों में भिन्नता एवं आधुनिक काल के गीतों में समानता प्राप्त हुआ है। केरल, बहुत पुराने जमाने से एक पृथक इकाई के रूप में अपना इतिहास बनाता जा रहा था। हिन्दी प्रदेश, संयुक्त रूप से कभी एक पृथक राज्य सत्ता का रूप धारण न कर सका। यह प्रदेश कई राज्यों में एवं भिन्न बोलियों में सर्वदा विभक्त रहा और आज भी कई प्रान्तों, जनपदों और भिन्न बोलियों में रहा है।

लोक वाणी हर ऐतिहासिक घटना को शुद्ध इतिहास की भांति प्रस्तुत नहीं करती। काव्यगत विशेषताओं अर्थात् कल्पना, संगीत, शब्दों आदि के संयोग से उसे एक रूप [जो प्रायः कवि के व्यक्तित्व एवं निजी भाव बोध पर निर्भर है] देने का प्रयास करती है।

इसी कारण कभी, कभी महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य, अत्यधिक कल्पना संगीत एवं शब्दों के बोझ से दबकर लुप्त हो जाते हैं और गीत ऐतिहासिकता से शून्य कल्पना एवं वाग्विलास की वस्तु रह जाता है।

---

1. ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित गाथाएं अधिक लोक प्रिय है। जैसे आल्हा, कुंवरसिंह, हरवि कुट्टि पिल्ला पाट्टु।

इस दृष्टि से हिन्दी के प्रत्येक लोक काव्य की ओर देखें तो, यह विशेष महत्व से उल्लेखित, बताया जा सकता है कि सबों में ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं का उल्लेख है, परन्तु अत्यधिक कल्पना एवं लोक विश्वास के कारण इन का ऐतिहासिक महत्व लुप्त हो गया है[1]।

ऐसे अवसरों पर कुछ गीतों को अनैतिहासिक भी कह सकते हैं। स्थानीयता का अधिक पुट उन गीतों में अधिक पाया भी जाता है।

हमारे प्रत्येक लोक गाथाओं में अगर वे ऐतिहासिक हो तो उनमें शुद्ध ऐतिहासिक महत्ता के रहते हुए भी लोक काव्य की महत्ता भी रहा करता है। आधुनिक काल से संबद्ध कुछ राजनैतिक गीतों में निस्संदेह कतिपय ऐतिहासिक घटनाओं का अवलोकन हुआ है और ऐसी प्रवृत्ति दोनों प्रदेशों के लोक गीतों में समान रूप से विद्यमान है। उदाहरणार्थ स्वतंत्रता की लड़ाई से संबन्ध रखनेवाली कई घटनाओं पर अनेकों लोक गीत दोनों भाषाओं में समान रूप से प्राप्त हैं। नमक सत्याग्रह भारत छोड़ो प्रस्ताव आदि घटनाओं पर मलयालम में भी गीत प्राप्त है, हिन्दी की हर बोलियों में भी। ये गीत गान्धी वादी विचार धारा से प्रेरित हैं। मार्क्स वादी प्रभाव धारा के बने कई गीत आज भी मलयालम प्राप्त हैं। आज भी ऐसे गीत समाज में बनते जा रहे हैं। इन्हें राष्ट्रीय में गीत मात्र कह सकते हैं।

इसी प्रकार राजनैतिक व्यक्तित्वों पर आधुनिक युग में भी कई गीत रचे गये हैं। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, भगतसिंह आदियों पर आज भी लोग हर्षोन्मित्त विस्मय से गीत बनाकर गाते हैं। राज्य भक्ति, त्याग और आदर्शता पर भी गीत, बने जाते हैं[2]।

---

1. आल्हा - पृथ्वी राजा और कनोज का इतिहास लोक कवि की अति रंजित भावना का शिकार बन गया है।
2. कोट्टाटल्ल सुरेन्द्रन, अधिकोडन राघवन आदियों के निधन पर बने गीत मलयालम में आज भी प्रचार में है। संकट काल को जहाँ विनोबाजी ने अनुशासन पर्व कहा तो भी उसके विरुद्ध 1975- से 1977 तक कई गीत बने हुए केरल के 'राजन' के बारे में एक गीत भी प्रचलित है।

" नये राष्ट्रीय गीत - नारे भी इसमें प्राप्त हैं ।

वस्तुत: इतिहास के वैभिन्न्य के उपरान्त भी दोनों प्रदेशों का लोक मानस समय की प्रत्येक गतिविधि के प्रति अत्यंत सजग एवं जागरूक रहा है, यह लोक वाणी के उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट होता है ।

अन्य विविध गीतों की तुलना

अब गत पृष्ठों में हमने उन लोक गीतों का विवेचन किया, जो संस्कार गीत, ऋतु, पर्व तथा त्योहार अनुष्ठानों के अतिरिक्त जाति, धर्म एवं इतिहास पर प्रकाश डालते हैं । देवी देवताओं का पूजन प्रणय के विविध स्वर, प्राकृतिक सौन्दर्य की अभिव्यंजना आदि विषय भी गत अध्यायों में स्थान पा चुके हैं । अत: इस सर्वांगीण विवेचन के पश्चात वैसे तो कुछ अवशिष्ट नहीं रहता । परन्तु मानव जीवन चूंकि वैविध्य पूर्ण है, अत: इसके व्यापार भी गणनातीत है, अतएव जीवन की काव्य मयी अभिव्यक्तियां भी अनेक एवं असंख्या है । जिन का किसी एक सीमित स्थान पर अध्ययन प्रस्तुत करना कठिन ही नहीं, असंभव भी है । वस्तुत: प्रस्तुत अध्याय में लोक काव्य के उन रूपों का अवलोकन करना ही हमारा लक्ष्य है, जो सामान्यत: उपर्युक्त प्रकरण से पृथक पड़ते हैं ।

हास-परिहास संबन्धी गीत, व्यंग्य-गीत, पारिवारिक सम्बन्धों के गीत, आदर्श सतीत्व के गीत, सामाजिक कुरीतियों के व्यंग्य गीत, नीति संबन्धी गीत, साधारण लघुगीत आदि इस विभाग में आते हैं । बालगीत एक अन्य विधा है । नाटकीय अनुकरण के गीत एवं खेल गीत इस विभाग में आते हैं

लोक साहित्य की सभी अभिव्यक्तियां हास परिहास पूर्ण होने के कारण ही अत्यधिक लोक - प्रीय हो गयी है[1] ।

---

1. The popularity of Folk-lates, folk-songs, riddles etc. dipends on to a greater extent on the humour they contain An out line of folk lore p.53

कृत्रिमता एवं नागरिक अहंकार से मुक्त एक साधारण जीवन बिताने वाला साधारण आदमी परिहास का पात्र बनना साधारण बात है । हिन्दी और मलयालम में ऐसा कई गीत प्राप्त हैं । जो गौण किया जा सकता है ।

पारिवारिक संबन्धों के गीत

हमने देखा है कि आगे के अध्यायों में परिवार शब्द का प्रयोग एक ऐसी स्थायी संस्था के रूप में किया जाता है, जिसमें माता-पिता तथा उन की संतान रहते हो । परन्तु व्यापक अर्थ में परिवार कुटुम्ब, कुल तथा गोत्र आदि के भी सूचक हैं । इस दृष्टि से परिवार माता पिता तक ही सीमित नहीं रहता, वरन् मातृपक्ष तथा पितृ पक्ष भी परिवेश में लेता है । परिवार समाज की आधार शिला है और लोक गीत समाज की अभिव्यक्ति । अतः लोक गीतों में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में परिवार अथवा पारिवारिक संबन्धों की अभिव्यक्ति स्वाभाविक ही है ।

लोक गीतों में यत्र तत्र जिन पारिवारिक संबन्धों पर प्रकाश पड़ता है, उनमें ननद-भावज का संबन्ध अत्यंत रोचक एवं उल्लेखनीय है । सभी स्थानों पर ननद-भावज संबन्धों के प्रायः दो रूप मिलते हैं । एक रूप ननद का विरुद्ध पात्र अर्थात् कष्ट दायिनी तथा भावज के साथ सदैव लड़ने झगड़ने वाली का है और दूसरा रूप जो प्रायः बहुत कम गीतों में उभरा है ननद का सहचरी एवं भावज के साथ हंसी-मजाक का है । ऐसे गीत मलयालम में कम है । हिन्दी की विविध बोलियों में अधिक पाया जाता है । आपस में झगड़नेवाली ननद भाभी का चित्र हम साहित्य में अधिक देखते है ।

1· ई·एम· फेलेसे : "फामिली" इन्साइक्लोपेडिया आफ रिलिजियन, एण्ड एथिक्स - वोलियम् - 5, पृ·716

ऐसे प्रसंग दोनों भाषाओं के लोक गीतों में भी पाया जाता है, जिसका मलयालम और हिन्दी दोनों में उदाहरण भी पाया जाता है ।

कन्या का विवाह हुआ है । वह अपने नए घर में पदार्पण करते ही स्वयं को एक नए वातावरण में पाती है । एक ओर से उसे मायके से विच्छिन्न होने का दुःख सताता है, दूसरी ओर पति का अपरिचित व्यक्तित्व । सास और ससुर का अच्छा व्यवहार तथा ननद का हास्य परिहास एवं गुद-गुदी उसे एक विचित्र परिस्थिति में खड़ा कर देती है । अपरिचित होकर भी,,ननद उस केलिए सुहाग रात की तैयारियों में जुट जाती है । उसकी शय्या को फूलों से सुवासित करती है, और कमरे के अन्दर धकेल कर द्वार बन्द कर देती है । वधु कक्ष के भीतर स्वयं को एक अपरिचित कैद में अनुभव करती है, और ननद हँसी एवं खिल कौरियाँ लेती हुई वहाँ से चल देती है । मलयालम में भी ऐसे कुछ गीत हम ने पहले देखा है ।

कहीं ननद का दूसरा रूप भी गीतों में उभरा है । लोक-साहित्य में ननद झगड़ों केलिए विख्यात है । भाभज को सताना, उस के हर कृत्य पर व्यंग्य करना, ननद का स्वभाव रहा है । वस्तुतः ननद भाभज का संघर्षात्मक अथवा झगड़ालू संबन्ध आज भी किसी न किसी रूप में गीतों में दृष्टि गत है ।

हिन्दी लोक-गीतों में ऐसा कई प्रसंग प्राप्त हैं जो केरल में कम मात्र में मात्र पाया जाता है । जो दहेज संबन्धी है । नव विवाहिता को ससुराल में दहेज केलिए सताया जाता है । सास उसे ताना तथा दहेज केलिए असहनीय व्यंग्यात्मक चोटें करती है । वधु मूक रहती है, और उसकी आँखों से अश्रु टपकने लगते हैं । ननदि इस पर और भी अधिक बिगड़ जाती है और सान्त्वना देने के विपरीत माक्रोश पीटने तक का रूप दिखायी है । दाय अथवा दहेज के

कारण पति-पत्नी के संबन्धों में भी, असंतुलन उत्पन्न हो सकता है। कभी कभी तो भयंकर पारिवारिक कलह एवं उपद्रवों का मूल कारण भी दहेज बन जाता है।

निष्ठुर पति, उनकी कुबुद्धि तथा चरित्र-हीनता को गीतों में भली प्रकार उभारे हुए कुछ लोक गीत भी प्राप्त है।

घर में पाँच काम हेतु होने पर भी कुटिल स्त्री पति को छोड़ देने के लिए सताएगी *(तरसायगी) ऐसा निदर्शन भी लोक-कवियों ने यहाँ दिखाया है। स्त्री निन्दा के व्यंजक शब्द, ऋग्वेद जैसे प्राचीन ग्रन्थों में भी मिलते है। कुटिल, आलसी, एवं चंचल स्त्री की निन्दा सब कहीं की गयी है। इसमें हिन्दी मलयालम का कुछ भेद भाव नहीं है। दोनों भाषा में समान रूप के आशय लेने वाले कुछ ऐसे गीत प्राप्त हैं - बहू के अत्यंत आलसीपन एवं मिथ्यागर्व से कहीं कहीं, पति पत्नी एवं सास-बहू में कलह उत्पन्न होता है। रोष में सास उससे पूछेगी प्रात:काल से तुमने कुछ करना क्यों छोड़ दिया। तब बहू ने जवाब दिया, मैं ने चूल्हे की राख झाड़ दी, उसे टोकरे में भरा और बाहर फेंका। ये हुए तीन कार्य। तब बच्चे को जगाया। दूध पिलाया और फिर सुलाया तो मैं ने क्या छ: कार्य क्या नहीं किया ?

इसी प्रकार नारी पक्ष के कई सूक्ष्म एवं कलात्मक चित्रण, मलयालम में पाये जाते हैं। नारी को, माता, सास, ननद, भावज, बहिन, पत्नी आदि सभी रूपों में सजीवता से दर्शाया गया है। इसके अतिरिक्त परिवार से पृथक सामाजिक परिवेश में भी नारी, उसके स्वरूप व्यक्तित्व तथा अस्तित्व का आदर्श एवं यथार्थ दोनों रूपों में मूल्यांकन भी हुआ है।

* कहावत

नारी पक्ष का महत्व

भारतीय समाज में बहुपत्नी प्रथा के कारण नारीजीवन अति प्राचीन काल से खण्डित एवं अस्तित्व हीन रहा था । यह प्रथा वैयक्तिक पारिवारिक, एवं सामाजिक सभी स्तरों पर मूलत: हानिकारक सिद्ध हुई । प्रत्येक युग के शिष्ट साहित्य में इस स्थिति का चित्र उपलब्ध होता है । हमारी संस्कृति के कई स्वर्ण अध्याय इस कुप्रथा से लांछित हुए हैं । आज हम इस बात का अनुमान लगा सकते हैं कि हमारा रामायण, भारत आदि महान ग्रन्थों की आधार शिला भी यह कुप्रथा है । वस्तुत: बहुपत्नी प्रथा की प्रत्येक युग एवं समाज में वैयक्तिक एवं सामाजिक स्तर पर भर्त्सना की गयी है । लोक कवि ने भी इस प्रथाको नैसर्गिक रूप में उभारा है - हिन्दी में प्रचलित एक अनुभवोक्ति इस प्रकार है

पहली पत्नी, फूटती चमेली एवं बढ़ती आय के समान है, दूसरी पत्नी, पग पग पर कृपा की सूचक है, तीसरी पत्नी, कुवात समान है चौथा हो तो वह सारी सीमाओं का अतिक्रमण करेगी । इस अर्थ का एक लोक गीत मलयालम में भी प्राप्त है ।

पहली पत्नी प्रणय की देवता, दूसरी अनावश्यक पर फिर भी सहनीय परन्तु तीसरी अपने ऊपर कुल्हाड़ी मारने के समान है ।

विविध पारिवारिक परिवेशों में जहाँ लोक कवि ने नारी के लावण्य पूर्ण प्रणय मयी, वात्सल्यपूर्ण, कर्कश तथा कुटिल रूपों का यथार्थता से चित्रांकन किया है, वहाँ उसके दयनीय वैधव्य को भी, करुण एवं भावुक शब्दावली में उभारने में कोई कमी नहीं की है । भारतीय समाज में विधवा की दशा दयनीय रहा है।

1· विधवा शब्द - वियुक्त होना, अलग होना, अकेली, चंचला आदि

रण्टु कमृतत्ते वच्चु पूर्वतुन्न,

तन्टु तन्निष्टमृ सुखमिक्नोरिक्कनुं [कुंचन नंपियार]

वैधव्य की दयनीयता पर भी, कई गीत हिन्दी में मिला है । कम नवोढा सात दिन के अन्दर ही विधवा बन जाती है । उसके जीवन का कष्ट फिर क्या कहना है । दुर्भाग्य ही विधवा का जीवन चक्र है, दुर्भाग्य ही उसका संताप है दुर्भाग्य ही उसका करुण कथा है । सारी दुनियां उसे दुःख और विरह व्यथा बढानेवाली होती है । लोक कवि भी इस अवस्था को यही रूप देता है । इस प्रकार लोक-गीतों में विविध पारिवारिक संबन्ध पर विचार किया जाता है ।

आदर्श सतीत्व के गीत

नारी का आदर्श चरित्र लोक-गीतों का विषय बनता है । हिन्दी में जितने भी उदाहरण इस ओर देखा गया है । मलयालम में भी, इसका मकुटोदाहरण लभ्य है । नारी की चरित्र महानता, स्वामिभक्ति, आत्म समर्पण पति के साथ कमनीय एवं सौहार्द पूर्ण व्यवहार आदि इस प्रकार के लोक गीतों की प्रमुख प्रवृत्तियां हैं । नारी हमारा सांस्कृतिक गौरव है । युग युगान्तर के अत्याचार एवं पीडाओं में ग्रस्त भारतीय नारी आज भी उदारता, सहनशीलता, एवं महानता का प्रतीक है । इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारतीय नारी अपने चारित्रिक बल एवं आदर्श व्यक्तित्व से हर युग की चेतना को प्रेरित करती है । नैतिकता आत्मसमर्पण, त्याग, बलिदान एवं सहन शक्ति ही भारतीय नारी का वास्तविक परिचय है । हिन्दी की विविध बोलियों के गीतों और केरल के लोक गीतों निर्णित नारी भी सूक्ष्म दर्शन में वही हैं ।

आदर्श नारित्व की गति विधि में सारे भारत में "सीता" नमूना माना जाता है । आत्मसंयम, तपत्याग, सहनशीलता, समर्पण एवं स्वामिभक्ति, का आदर्श परिचय देकर समस्त नारी जाति को [illegible] स्वाभिमानित एवं गर्ववत किया । वस्तुतः सीता के ये गुण आज भी भारतीय नारी केलिए आदर्श

बने हैं और उनका नैतिक निर्देशन करते हैं । सीता की महानता त्याग एवं सहनशीलता आज भी लोक गीतों के प्रिय विषय हैं ।

रावण वध के पश्चात सीता के पुन: अयोध्या लौटने पर, तीनों सास मिलकर सीता से रावण के रूप रंग एवं व्यक्तित्व के बारे में पूछती है । सीता रावण का चित्र बनाकर देती है । अत: चित्र को सीता की चंचलता एवं अपवित्रता का प्रमाण मानकर राम को सीता त्याग करने पर विवश किया जाता है । आदर्श एवं लोक लाज के रक्षार्थ राम सीता का त्याग करता है । लक्ष्मण उसे वन में छोड आता है । राम कथा के शिष्ट एवं साहित्यिक रूपों में सामान्यत: सीता परित्याग संबन्धी कई घटनाएं उल्लेखित है, जिन में धोबी द्वारा सीता पर अपवित्रता का लांछन लगाने की घटना अधिक प्रसिद्ध है, परन्तु इसके नितांत विपरीत लोक धारा में प्रचलित रावण के चित्र से संबन्धित उक्त घटना का उल्लेख किसी भी साहित्य में नहीं मिलता । इस घटना का प्रचलन लग भग सभी जनपदों के लोकगीतों में समान रूप से है । वस्तुत: यह निश्चित करना कि वास्तविकता क्या है, यद्यपि अधिक कठिन है, परन्तु लोक में प्रचलित चित्र संबन्धी घटना नि:सन्देह अधिक स्वाभाविक एवं सहज प्रतीत होती है । मलयालम में इस लोक गीत को सीता दु:ख नाम है ।

भारतीय इतिहास, संस्कृति, सभ्यता, धर्म, एवं समाज साक्षी है कि नारी युग युगों के अत्याचार शोषण धर्मान्धता एवं सामाजिक कुप्रथाओं से पीड़ित रहकर भी, आत्म समर्पण त्याग एवं नैतिकता के प्रशस्त पथ से विचलित होकर कभी भी विद्रोहित नहीं हुई है । नैतिक आदर्शों की अखण्डता केलिए उसने "सती" एवं "अनुमरण" जैसे महान बलिदान तक दिए हैं । युग के अंधकार में उसे निरपराध होकर भी यातनाएं सहनी पड़ी पर नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों का अतिक्रमण उसने कहीं श्रेयस्कर नहीं समझा । वस्तुत: नारी की महानता हर युग में एक आदर्श रहा है । लोक कवि ने भी अपनी वाणी में इसी आदर्श को स्थापित किया है । हिन्दी और मलयालम में समान आशय का एक गीत ऐसा है - इसका भाव इस प्रकार है -

जो पति अपनी प्रणयभाव, स्वामिभक्ति एवं मधुरता का आदर करे, उस पति की दीर्घायु हो, उसे जगत माता धन-धान्य वाहन आदि से सुसम्पन्न करे और अपने चरण कमलों की छत्रछाया में सुरक्षित रखें। जो पति अपनी पत्नी का अनादर करे, उस पति की भी दीर्घायु हो, परन्तु ऐसी स्त्री को, जगत माता की कृपा दृष्टि से यदि एक मणि समान पुत्र प्राप्त हो।

नारी जीवन का दो पक्ष है, मायका एवं ससुराल। इन दोनों पक्षों के मध्य की श्रृंखला नारी बनती है। मायके में अमित सुख और वात्सल्य प्राप्त होता है तो ससुराल में पति का प्रेम होते हुए भी कभी कभी दुःख एवं असन्तोष भी होती है।

कुछ मनयातमम गीतों में नारी जीवन के इन दोनों महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन अत्यन्त कलात्मकता से किया गया है।

सामाजिक कुरीतियों के व्यंजक गीत

हमने देखा है कि लोक गीतों में लोक मानस की, यथार्थ एवं सहज अभिव्यक्ति होती है, इसी कारण साहित्य के अन्य विधाओं से वे समाज के दर्पण कह सकते हैं। लिपि बद्ध अथवा विशिष्ट काव्य में भी समाज के सूक्ष्म अध्ययन का उतना सामर्थ्य नहीं जितना लोक-गीतों में है। समाज के गुणों तथा दोषों की ओर संकेत करना तथा समाज की समस्याओं के प्रति एक ध्येय वादी दृष्टिकोण रखना, लोक-काव्य की एक जन्म-जात प्रवृत्ति है। विश्व का कोई भी स्थान, ऐसा नहीं है, जहाँ के लोक गीतों में समाज न बोलता हो अथवा जो समाज के गुण और दोष प्रकट न करते हो। वस्तुत: लोक काव्य समाज सुधार एवं जन मानस के विभिन्न आंदोलनों को अग्रसर करने का एक सशक्त

उपकरण रहा है । अन्य मानव शास्त्रों की भांति, व्यक्ति एवं उसके आसपास के समाज के सभी पक्षों का सूक्ष्म अध्ययन करना लोकगीतों का प्रमुख कर्तव्य रहा है ।

वर्तमान समाज में एक सामाजिक कुप्रथा है, दहेज की प्रथा । केरल में भी एक न एक रीति में यह कुप्रथा कम या न्यूनाधिक रूप में कायम रही है । दहेज युक्त विवाह आभूषण, वस्त्र, विविध घरेलू पात्र एवं अन्य उपहार आदि से युक्त हो भी यहाँ एक आदर्श विवाह माना जाता है । बिना पूर्ण दहेज के बिना कन्या का जीवन ससुराल में दुःखी एवं अनादर पूर्ण समझा जाता है । समाज की इस कुप्रथा की ओर यहाँ के लोक कवि का ध्यान निरन्तर जाता रहा है । अतः इस कुप्रथा के बहिष्कार एवं इससे उत्पन्न अन्य वैयक्तिक एवं सामाजिक समस्याओं पर भी लोक कवि ने गंभीर विचार किया है । कहीं हँसी उड़ाया भी है । हिन्दी भाषी प्रदेशों में वर्तमान समाज में दहेज की कुप्रथा इतना महत्व रखती है कि वर एवं वधू के गुणदोषों की परीक्षा करने के नितांत विपरीत दहेज के तोल मोल पर ही प्रायः विवाह निर्भर रहता है । मध्यस्थ व्यक्ति वर-वधू का चुनाव प्रायः दहेज के परिमाण एवं रकम के आधार पर ही निश्चित करते हैं । कभी कभी तो वर पक्षियों की दहेज निषेध अथवा दहेज के प्रति अरुचि के झूठे प्रदर्शन द्वारा कन्या के माता पिता को इस बंधन के फाँसे में फाँस कर कन्या को ससुराल के अभिशाप में धकेलना मध्यस्थ का कार्य होता है ।

नीति संबन्धी गीत [1]

स्वानुभूति अथवा परम्परा अनुभूति पर अवलंबित उपदेशात्मक अथवा अन्योक्ति प्रधान सूक्तियाँ नीति काव्य कहलाती है । नीति काव्य की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों का मत है कि प्राचीन काल में लिखित साहित्य के अभाव में मौलिक नीत्योक्तियों द्वारा सन्देश एवं विचारों का वाहन अधिक

---

1. नीतिशब्द - संस्कृत के "णीय" शब्द से उत्पन्न है । इसका अर्थ - ले जाना अथवा पथ प्रदर्शन करना है ।

सुगम एवं प्रेषणीय समझा जाता था। नीति काव्य के सृजन के विशेष केन्द्र भारत, ईरान, अरब तथा "रोम" आदि देश रहे हैं[1]।

भारत में नीति काव्यों की श्रेणी में लोक-काव्य ही पहले आते हैं। मलयालम में ऐसे गीत कम पाये जाते हैं। हिन्दी में सामान्यत: अधिक पाया जाता है। लोक कवि ने समाज के एक अभिन्न अंग के रूप में जिन अनुभवों को ग्रहण किया उनको छन्दोबद्ध करके उपदेशात्मक ढंग से वह अभिव्यक्त करता गया। परिवार, समाज, राजनीति, नैतिकता आदर्श एवं यथार्थ आदि जीवन के समस्त पक्षों का कटु अनुभव उनकी वाणी द्वारा अभिव्यक्त होता गया और जीवन के उस ठोस यथार्थ के अनुभव में जहाँ उसे वैयक्तिक दृष्टिकोण उपदेश अथवा किसी आदर्श को स्थापित करने की आवश्यकता पडी, वहाँ वह उस का उपयोग निःसंकोच होकर करता गया। अत: यही कारण है कि ऐसे गीतों में कवि की वैयक्तिकता अधिक झलकती है। उदाहरण केलिए एक पारिवारिक नीति गीत को लिया जा सकता है। लोक कवि को जहाँ सास के कटु व्यवहार एवं बहू पर किए जानेवाले अत्याचारों का कटु अनुभव है, वहाँ वह बहू को भी पूर्ण रूप से निर्दोष घोषित नहीं करता। वह उसकी चंचलता, मदमस्त यौवन, कर्कशता से परिचित है। अत: उसकेलिए सास रूपी अंकुश को अनिवार्य समझता है। गीत का भाव ऐसा है कि गठीली लकडी को फाडने केलिए प्रहारों की आवश्यकता होती है, गाँव के मुगदम को नियन्त्रित रखने केलिए एक मुखिया की अनिवार्यता है, और बहू केलिए सास तथा ननद रूपी अंकुश भी अनिवार्य है।

उसी प्रकार, युवक का बेकार रहना, बालक की माँ मरना, तथा बुढापे में विधुर होना एक समान है।

---

1. In earlier times, in the absence of all written books this was the easiest way in which information could be made attractive to the ear and be retained by the memory.
Encyclopaedia Britanica, Vol.VII, p.342

स्त्री का यौवन स्पर्श एवं उपभोग में है, नदी का यौवन उसके उफान और गति में है, वृक्ष का यौवन शाख की कसाव में निहित है और पुरुष का यौवन उसका स्वस्थ शरीर ही है ।

बालगीत

बालक-बालिकाओं के गीतों को बालगीत (चिल्ड्रन्स सोंग्स) कहा जाता है । खेल गीत बाल गीतों का एक विशिष्ट अंग कहा जा सकता है । संभवत: विश्व का कोई भी ज्ञात स्थान ऐसा नहीं है जहां बाल गीतों का प्रचलन नहीं ।

विभिन्न स्थानों के बाल गीतों में बहुधा विषय गत एवं संगीतात्मक साम्य दृष्टि गोचर होता है । इस के अतिरिक्त आदिम विश्वास त्योहार एवं अनुष्ठानों आदि से संबद्ध पर्याप्त लक्षण भी प्राय: बालगीतों में उपलब्ध होते हैं। अत: बाल गीतों का ऐतिहासिक, नृ-वैज्ञानिक एवं लोक वार्ता संबन्धी महत्व अपूर्व है[1] । लोक काव्य की आदिम सामग्री पर इन गीतों द्वारा पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । विशेष कर लोक संगीत एवं लोक नाट्य की प्राचीनता को सिद्ध करने केलिए संगीत के कुछ अवशेष अब भी बाल गीतों में विद्यमान है[2] । इसी प्रकार लोक नाट्य के अति प्राचीन एवं आदिम रूपों की व्यंजना भी नाटकीय एवं अनुकरणात्मक बाल गीतों द्वारा होती है । वस्तुत: बाल-गीतों में लोक-काव्यों के अन्य अंग शैली, कला, विचार एवं गंभीर भावाभिव्यंजना न होते हुए भी लोक साहित्य संगीत नाटक, भाषा एवं वार्ता साहित्य की दृष्टि से इनका अद्वितीय महत्व है । इसी प्रकार साधारण गीत, नाटकीय एवं अनुकरणात्मक गीत, खेल गीत आदि इस विभाग में आते हैं ।

---

1. Children's song: The oldest of most widly diffused of folk songs showing great similarity both as to melody and to subject matter all over the world and presenting the uestiges of ancient cermonies and beliefs.
2. It has been notéd that some songs of infants repeat the patterns of the earliest known and most prem ture forms of music. Ibid.
3. Game songs of Dramatic character are probably the survivals

हास-परिहास के गीत

हिन्दी और मलयालम में हास परिहास के गीत पर्याप्त रोचक प्रसंग उतारे हैं। हिन्दी में और केरल के माप्पिलप्पाट्टु में, विवाह संबंधी गीतों में जिस उच्च कोटि के हास्य रस की सृष्टि हुई है, उसे अन्यत्र पाना प्राय: कठिन है। विवाह के अवसर पर "सीठने" देने की प्रथा भी वस्तुत: हास्य परिहास की एक विशिष्ट परम्परा के रूप में ही हमें स्वीकार कर लेनी चाहिए। सीठने के गीतों में हास्य एवं व्यंग्य का इतना चुटीला, चुभता हुआ, सजीव रूप देखकर लोक कवि की हास्योद्रेक करने की प्रतिभा एवं अद्भुत सामर्थ्य पर आश्चर्य होता है। सीठने के अतिरिक्त विवाह के अवसर पर बरात प्रस्थान के उपरान्त, किए जानेवाले खोडिया के नृत्य एवं स्वांगों में भी अत्यन्त रोचक हास्य तथा व्यंग्य का परिपाक हुआ है।

हिन्दी प्रदेश के सीठने के गीतों में हास परिहास प्राय: शिष्टता एवं श्लीलता की सीमाओं में बंधा रहता है। परन्तु खोडिया के गीतों में इस प्रकार का कोई अंकुश अथवा प्रति बंध नहीं रहता। इस के अतिरिक्त विवाह के अवसर पर थापे देते समय भी वर से छन्न (छन्द) कहने का जो आग्र किया जाता है, वह भी प्राय: हास परिहास का अद्वितीय अवसर होता है। वस्तुत: हिन्दी की विविध बोलियों के विवाह संबन्धी गीतों में पग पग पर हास परिहास के पर्याप्त प्रसंग दृष्टिगत हैं।

हिन्दी प्रदेश के खडी बोली प्रदेश में परम्परया प्रचलित एक सीठने व गीत देखिए :-

तू तो····· पतला, तेरी जोरू मोटी
आप खावे घी बूरमा, तुझे जो की रोटी।

आप सोवे सुख सेज पे, तुझे टूटी खटोली ।
ऐसा काला तू बन्ना रे, जैसे उड़द की दाल
दाल होय तो धोय लूँ,
तेरा रंग न धोया जाय रे ।।

अर्थात्

बन्ना पतला है, उसकी बन्नी मोटी ।

बिन्नी तो स्वयं ही सुरमा लगायेगी, फूलों की सेज पर सोयेगी और बन्ने को जौ की रोटी और टूटी खाट देगी । बन्ना उड़द की दाल के समान काला है । दाल तो धोकर साफ की जा सकती है, परन्तु बन्ने के रंग को कैसे धोया जाए । उड़द की दाल के वाक्य का लाभ उठा के गीत में निसन्देह अद्भुत हास्य की सृष्टि हुई है ।

इसी प्रकार हिन्दी और मलयालम लोक गीतों के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है दोनों प्रदेशों में जीवन का सच्चा स्वरूप, गीतों में देखने को मिलता है । आगे के अध्यायों में प्राप्त लोक गीतों के नमूनों के आधार पर हम प्रत्येक प्रस्तावों संयुक्त उदाहरण भी हमने देखा है । यहाँ हिन्दी और मलयालम में समान विषय वस्तु, भाव एवं शैली के गीतों पर मात्र विचार किया गया है ।

निष्कर्ष

मलयालम और हिन्दी के विविध गीतों के विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनों भाषाओं में संस्कार, ऋतु, त्योहार, श्रम, जाति एवं इतिहास संबन्धी गीतों की विशिष्ट परंपरा के अतिरिक्त जीवन के अन्य विविध पक्षों से संबद्ध गीत भी अत्यन्त समृद्ध एवं महत्व पूर्ण गीत है । हास परिहास लोक गीतों की सजीवता का परिचायक है । लोक-गीतों में हास्य का पुट प्रायः किसी न किसी प्रकार अवश्य रहता है । गीत चाहे संस्कारों के हों

अथवा ऋतु संबन्धी विभिन्न जातियों के हों अथवा ग्रामादि के नीति संबन्धी हों, अथवा ऐतिहासिक हास्य की उपस्थिति उनके किसी न किसी अंश में अवश्य रहती है। इसी कारण हास परिहास के गीतों का एक पृथक वर्गीकरण प्रायः कठिन हो जाता है। हास्य परिहास के विभिन्न गीतों की तुलना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि साधारण ग्रामीण जन, मलयालम तथा हिन्दी के विविध बोली प्रदेशों में समान रूप से अत्यन्त कटु हास्य के पात्र बने हैं। ग्रामीणों के साधारण एवं अकृत्रिम स्वभाव से लाभ उठाकर दोनों भाषाओं के गीतों में स्वस्थ हास्य की सृष्टि की गई है। विशेष कर व्यावहारिक हास्य [प्राक्टिकल जोक] के सृजन में ग्रामीणों के विभिन्न परिहास पूर्ण व्यवहार एवं गतिविधियाँ अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई हैं। हिन्दी प्रदेशों में गंगा जमुना का बड़ा क्रम है। इस कारण कहीं नल देखा तो उसे भी गंगा समझ कर उसमें महात्मा टोपी के स्थान में पैजामा पहनना आदि हास युक्त गाँव स्वभाव है। मलयाली गीतों में भी, सुपारी के पेड़ से छाछ गिरने का सपना देखना और छीर समझकर अमेध्य का खाना आदि अपढ़ एवं अपरिष्कृत गाँववालों के व्यावहारिक हास्य के अत्यंत उत्तम समान उदाहरण हैं। अन्त में मलयाली गीतों में प्राप्त हास्य और भी तीखा और अश्लील बन जाता है। हिन्दी प्रदेशों में विवाह के अवसर पर होने वाली हास्य परिहास का भी वैसा ही उदाहरण मलयालम में प्राप्त है, जो वात्तिल तुर प्पाट्टु में अधिक स्पष्ट देखा जाता है। उत्तर केरल के मुसलमानी गीत [माप्पिला प्पाट्टु] और कृस्तीय गीतों में भी ऐसे प्रसंग सुलभ हैं।

विभिन्न पारिवारिक संबन्धों को व्यक्त करने अथवा उनकी सामान्य व्याख्या करने वाले गीतों में, ननद एवं भावज के गीत दोनों भाषाओं में प्रचलित हैं। दोनों भाषा में, वधू, ननद, सास, पति, सब, विचित्र स्वभाव के और समान विशेषता के मालूम पड़ते हैं। ननद और सास दोनों, दोनों भाषाओं में

कष्ट दात्री के रूप में ही व्यंजित हुए हैं । लेकिन विवाह संबन्धी कार्यों में बधावे के समय पर भावज से उचित नेग एवं धन आदि केलिए झगड़ने वाली ननद सामने आती है । दोनों प्रसंगों में ननद का उग्र, लालची एवं धन ठालु रूप ही उभरा है । परन्तु विडंबना यह है कि खड़ी बोली आदि हिन्दी के अधिकांश गीतों में अचेत अथवा सचेत रूप में ननद से अधिक क्रूर एवं कर्कश रूप भावज का भी उभरा है ।

भारतीय नारी जहाँ अथाह प्रेम एवं वात्सल्य की प्रति मूर्ति कहलाती है, वहाँ वह कुटिल एवं कर्कश रूप में भी अंकसरित होती है । हिन्दी प्रदेश वाली स्त्री पति के सिर पर बालम तोड़ती है, स्वयं दही मक्खन खाती है, पति को छाछ केलिए भी हाँडी चढ़ाने देती है । जहाँ मलयालम स्त्री, अपनी खिचड़ी अलग पकाती, अच्छी स्वादिष्ट चीज़ें स्वयं खाती एवं मुखापान पति को देती । ये दोनों हिन्दी प्रदेश के कुटिल स्त्री के कर्तूत से थोड़ा भी कम नहीं । लोक गीतों में दोनों समान भाव धारा की हैं ।

सामाजिक कुरीतियों और कुप्रथाओं के अंकन में भी, लोक कवि ने अत्यंत सजगता से तटस्थ दायित्व का परिचय दिया है । कोई भी उदाहरण ऐसा प्राप्त नहीं जहाँ उनके निजी व्यक्तित्व की छाप अंकित हुई हो अथवा जहाँ उसका तटस्थ दायित्व शिथिल पड़ा हो । हिन्दी प्रदेश का लोक-कवि जिस उत्तर दायित्व के साथ दहेज अथवा अन्य सामाजिक कुप्रथाओं की ओर इंगित करता है, उसी प्रकार मलयालम प्रदेश के लोक-कवि भी बेमेल विवाह और लड़की की माँ का धन लोभ आदि पर हँसी उड़ाता है । वह अपनी सामाजिक परिस्थिति के अनुकूल उसी परिवेश में से बुराइयों को चुन चुन कर सजगता से गीतों में प्रस्तुत करता है । दोनों प्रदेश के गीतों में समान भाव तथा उद्देश्यों की अभिव्यक्ति हुई है । अन्तर केवल इतना मालूम पड़ता है कि इस प्रकार के मलयालम लोक गीतों में गांभीर्य का पुट प्रायः अधिक झलकता है, जबकि हिन्दी के लोक कवि अत्यंत हास्य एवं विनोद प्रिय ही जान पड़ता है ।

मलयालम और हिन्दी के लोक गीतों में नारी के महान गुणों और आदर्शों एवं उसके उज्ज्वल सतीत्व को भी दर्शाया गया है । सीता परित्याग की कथा दोनों भाषाओं में समान रूप से पाया जाता है । मलयालम में इस गीत को सीता दुःखं पाट्टु कहा गया है ।

रावण के चित्रांकन केलिए सीता परित्याग की विवादास्पद कल्पना भी संभवतः इसी ध्येय से की गयी है कि यथार्थ के ठोस धरातल पर लाकर भारतीय नारी की महानता एवं उसके उच्चादर्शों का सही मूल्यांकन हो सके । किसी भी आदर्श को अपनाने से पूर्व, उसके हर पक्ष की परख करना मानव स्वभाव का एक महत्व पूर्ण लक्षण है । सीता चूंकि भारतीय नारी का महान आदर्श रही है । अतः उसके व्यक्तित्व एवं चरित्र की दृढ़ता का मूल्यांकन करना लोक कवि ने आवश्यक समझा । अतः लोक गीतों में सीता के व्यक्तित्व के साथ रावण के चित्रांकन का प्रसंग जोड़कर लोक कवि ने "सीता" रूपी आदर्श का भंजन नहीं किया है, वरन् उसे अधिक दृढ़ता एवं बल प्रदान किया है ।

केरल और हिन्दी प्रदेशों के नीति-गीतों का प्रचलन भी समान स्वभाव का मालूम पड़ता है जिनमें, गार्हस्थ्य एवं सामाजिक जीवन के कटु अनुभवों को छन्दों बद्ध किया गया है । मलयालम में ऐसे गीत बहुत कम पाये जाते हैं । कबीर और अन्य संतों के गीतों को भी हिन्दी बोलियों के लोक गीतों के संग्रहकारों ने मिला दिया है । असल में ये गीत शिष्ट साहित्य की कोटी में आते हैं लेकिन उन में जो लोक तत्व निखर उठता है, उस तत्व ने उन्हें इतना लोकप्रिय बना दिया है ।मलयालम में, श्री नारायण गुरु के कुंजनिप्पाट्टु आदि भी इस श्रेणी में आते हैं ।

---

1. मलयालम के सीता परित्याग के गीत में कौसल्या ही मुख्य कार्य कराती है । हिन्दी में ननद का आरोप भी प्रस्तुत किया है ।

देसिल बअनी सब जन मिट्ठा

किसी भी भाषा की सफलता एवं समर्थता तभी निश्चित होती है, जब उस में सूक्ष्म से सूक्ष्म मानव विचारों एवं भावनाओं को अभिव्यक्त करने की क्षमता हो । दूसरे शब्दों में माधुर्य सरलता एवं प्रांजलता भाषा के सर्व श्रेष्ठ गुण माने गये हैं । लोक भाषा इन सभी गुणों से पूर्ण होती है । इसीलिए इसे देसिल बअनी सबजन मिट्ठा कहा गया है । भारत जैसे महान देश की भिन्न भिन्न भाषाओं में प्रवाहित जन हृदय का प्रकृत एवं मधुर रूप लोक-संस्कृति का संस्कार करता है । लोक गीतों में लोक मानस का उर्मिल स्वरूप अधिक निखरता है और गीतों के सौष्ठव एवं अर्द्ध स्वरों में एक अनंत रस लोक की सृष्टि होती है । लोक गीतों द्वारा किसी जाति की समीक्षा होती है । इसी कारण लोक गीतों को सांस्कृतिक वैभव, रीति रिवाज परम्पराओं, धार्मिक विश्वासों एवं आदिम मानव की अन्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का संवाहक कहा गयाहै । लोक गीत, काल एवं समय के प्रभावों से मुक्त प्रत्येक युग में मानव मन को आन्दोलित करते रहे हैं ।

भारतीय लोक-गीतों में हम ने देखा है कि वैभिन्य और वैविध्य है । यहाँ की बहुरंगी परम्पराओं, एवं विविध सांस्कृतिक विचार स्रोतों के अनुरूप ही यहाँ के लोकगीतों में विविधता दृष्टिगत होती है । इतने बडे देश में जहाँ कई प्रकार की जातियाँ रहती हों, जिन की भाषा पृथक हो, रहन-सहन एवं विचारों में अन्तर परिलक्षित होता हो, इस प्रकार की विविधता का होना प्राय: स्वाभाविक ही है । परन्तु भारतीय संस्कृति के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने से यह स्वत: सिद्ध होता है कि यद्यपि भारत के विभिन्न भागों में प्रादेशिक परंपराओं का प्रभुत्व भी है जो वस्तुत: स्थानीय परिवेशों से व्युत्पन्न है, परन्तु तत्वत: कोई भी परंपरा ऐसी नहीं जो जो भारतीय संस्कृति की

एकात्मकता अथवा अखण्डता की ओर निर्देश न करती हो । सांस्कृतिक एकीकरण यही भावना प्रत्येक क्षेत्र में विद्यमान है और यही भारतीय संस्कृति की विशिष्टता भी है ।

केरल और हिन्दी प्रदेश के लोग स्वत: धर्मावलंबी है । हिन्दू जीवन मूलत: धर्माश्रित है । जीवन में धर्म का इतना अधिक महत्व अन्यत्र दुर्लभ ही देखा जाता है । हमारी संस्कृति और धर्म बहुरंगी होते हुए भी जीवन्त है । विभिन्न धार्मिक विचारधाराओं, के आधिक्य के कारण हिन्दू जीवन में धर्मान्धता का थोडा भी महत्व नहीं रहा है । इसे निरपेक्षता, निष्पक्षता, एवं विवेक का अद्भुत, सामर्थ्य भी मिला है । इन दोनों प्रदेशों के लोक काव्यों की तुलना से यही तत्व मिल जाता है । भारतीय संस्कृति के समन्वित एवं संतुलित रूप के ये ज्वलंत उदाहरण हैं । इन की एक एक पंक्ति में सांस्कृतिक अंतश्चेतना का यही रूप स्पष्ट हुआ है । हमारे सांस्कृतिक जीवन के सभी पक्ष इस में अनुस्यूत हैं ।

मलयालम और हिन्दी के लोक - गीतों के अध्ययन से, दोनों भाषा के गीतों में आज भी प्राचीन, मानव संस्कार का ज्वलंत उदाहरण जीवित पा सकते हैं । संस्कारों के स्वरूप विधिविधान महत्व एवं अनिवार्यता आदि का जैसा वर्णन प्राचीन धर्म ग्रन्थों में मिलता है वैसा ही आज भी लोक मानस में विद्यमान है । उनकी सांस्कृतिक अभिव्यंजना मात्र गीतों में हुई है । यद्यपि कई ऐसी प्रथाएं एवं रीति रिवाज जो पूर्णतया स्थानीय परिस्थितियों से उद्भूत हैं, वर्तमान विभिन्न संस्कारों में घुल मिलक गई है । वे उन भारी परिवर्तनों के सूचक नहीं जिन की अपेक्षा इतनी लंबे युग में की जा सकती है । आधुनिक काल में हमारी प्राचीन परंपरा की कई विधियां नष्ट हो गयी है, तो भी गीतों में से उसका प्राचीन रूप जान सकता है । गीतों में उसका वैसा ही रूप पा सकता है जो युगों के पहले था । संस्कार संबन्धी गीतों में केवल उन्हीं अनिवार्य कृत्यों एवं तत्वों को लोक में जीवित रखा गया है, जो प्राय: अपरिहार्य समझे

गये और जिसका सामाजिक महत्व भी अधिक था । मात्र विवाह के विभिन्न कृत्यों एवं गीतों में कुछ स्थानीय परम्पराओं का मिश्रण हुआ है । जो वस्तुतः कुछ ऐतिहासिक परिवर्तनों का फल है । विभिन्न संस्कारों की अनिवार्यता एवं महत्व को, पौराणिक एवं धार्मिक पात्रों अथवा उनसे संबद्ध घटनाओं विभिन्न कृत्यों एवं प्रतीकों द्वारा जिस प्रकार मलयालम लोक गीतों में अभिव्यक्त किया है, वैसा प्रायः हिन्दी की भिन्न बोलियों में दृष्टि गत नहीं होता । कहीं कहीं उसने अधिक महत्व देता भी है तो भी गीत में उसका पर्याप्त चिह्न नहीं पाया जाता । खड़ी बोली, ब्रज, मैथिली, आदि भिन्न बोलियों में प्राप्त गीतों में आदिम विश्वासों की मात्रा अधिक है फिर भी असमानताएं अधिक है । यह बात स्थानीय लोक संस्कृति की प्राचीनता की दृष्टि से महत्व पूर्ण है । केरल में इन सब का एक ही रूप है ।

हिन्दी प्रदेशों में आज भी हिन्दुओं की परम्पराओं में प्रचलित सभी अनुष्ठान, धार्मिक कृत्य, उत्सव, एवं पर्व बड़े उत्साह के साथ निष्ठा पूर्वक मनाये जाते हैं । अमरनाथ से रामेश्वरं तक या कन्या कुमारी तक भारतीय संस्कृति की एकात्मकता का जो भाव मान्य रहा है, उसका दिग्दर्शन वहां के गीतों में परिलक्षित होता है । केरल में सालों तक शैव मत, एवं बौद्ध धर्म का भी प्रचार रहा था, इस में सन्देह की कोई बात नहीं है । हैन्दव संस्कार, याने आर्य संस्कृति का प्रभाव द्राविड संस्कृति पर पड़ने पर दोनों संस्कृतियों में जो विकार या परिवर्तन उत्पन्न हुआ, उसका भी उचित लक्षण आज भी प्राप्त है । कोटुङल्लूरम्मा, अय्यप्पन आदि उसके प्रतीक हैं । कोटुङल्लूर क्षेत्र और वहां की क्षेत्रविधियों को बौद्ध शैव हिन्दु संस्कृतियों का समन्वय रूप भी मान सकता है । गीतों में उसका परमोत्तम उदाहरण द्रष्टव्य है । आज भी कहीं कहीं शैवों का प्रभुत्व रहा है तो और कहीं वैष्णवों का प्रभुत्व रहा है । आलुवा में शैव महत्व रहा है तो, गुरुवायूर में वैष्णव महत्व है । परन्तु लोक गीतों को साक्षी रख कर हम यह बता सकते हैं कि केरल का जन मानस किसी सांप्रदायिक दुराग्रह से जकड़ित नहीं है । भारत के अन्य भागों में हम हिन्दू धर्म के जिस समन्वयात्मक रूप के दर्शन करते हैं उसकी अभिव्यक्ति केरल के धार्मिक लोक गीतों में भी हुई है ।

"अम्मा" और "अय्यन" गोमाता और नागमाता, नदी माता और कटम्मा एक या एक विशिष्ट पूजा का कारण बनता है । आदिवासियों का घर भार भिन्न जातियों में अधिक कहीं कहीं स्पष्ट होते हैं कि यक्षी, गन्धर्व, पिशाच-तीनिकवाली आदि की पूजा भी होती है । आज भी प्रत्येक गांव में ऐसे कई मन्दिर तथा धर्म स्थान मिलेंगे कि जहां एक ही जगह शिवलिंग है, विष्णु मूर्ति है ब्रह्मा भी है । तिरूनावाया जो इतिहास प्रसिद्ध मामांक का घाट है - वहां तीनों मूर्तियों का अलग अलग मंदिर है । अतिप्रसिद्ध तृक्काकरा मन्दिर जो है, जहां, विष्णु [वामनमूर्ति] के साथ साथ, शिव, पार्वती, लक्ष्मी, काली, नाग देव, अय्यप्पन सब की अलग अलग मूर्तियां एक ही मन्दिर के अन्दर ही है । विश्व प्रसिद्ध गुरूवायूर में, भगवान राधा-कृष्ण की, मूर्ति के साथ अन्य देवी देवताओं की मूर्तियां भी शोभायमान हैं । यह स्थिति इस बात की ओर संकेत करती है कि मध्ययुग में शैवों, शाक्तों का जो धार्मिक संघर्ष प्रचलित था, समय की धारा में वह विलीन हो गया और उसका स्थान एक समन्वयात्मक धार्मिक भावना ने ग्रहण किया, जिसे हम सामान्य शब्दों में हिन्दू धर्म भावना कह सकते हैं । यह केवल केरल की बात नहीं है, बल्कि सारे हिन्दू स्थान की बात है ।

विभिन्न धार्मिक पर्व, अनुष्ठान तथा त्योहारों से संबन्धित हिन्दी और मलयालम लोक गीतों में इस प्रकार की अद्वितीय धार्मिक समन्वयात्मकता, द्रष्टव्य है । मलयालम लोक गीतों में धार्मिक पुरुषों में राम, कृष्ण आदि शिव गणपति, सुब्रह्मण्य पार्वती, दुर्गा, लक्ष्मी देवी, ~~लक्ष्मी देवी~~ काली, भद्रकाली आदि देवों का नाम और परम सत्ता प्राप्त है । हिन्दी के लोक गीतों में भी, ऐसे कई प्रसंग हैं, राम, कृष्ण एवं शिव केशव का संयुक्त रूप प्रस्फुटित है । इसी प्रकार आद्या शक्ति के विभिन्न रूपों, अष्टादशा, भुजादुर्गा, महालक्ष्मी, अग्निजिह्वा कालिका, जगदम्बा सर्वमंगला आदि का अवलोकन एवं रूप वर्णन दोनों प्रदेशों के लोक गीतों में समान रूप से हुआ है । देवी देवताओं पर प्राकृतिक एवं अन्य शक्तियों को लोक मानस ने प्राय: उसी रूप में ग्रहण किया है, जो प्राचीन धर्म ग्रन्थों एवं पुराख्यानों में वर्णित है । इसके अतिरिक्त यक्षी

बोली प्रदेश तथा केरल में कुछ गीत ऐसे भी प्रचलित हैं, जिन में कई विशेष स्थानीय देवताओं एवं देवियों की वंदना की गयी है । ऐसा वस्तुतः स्थानीय परिवेश एवं परिस्थितियों के कारण है । भारतीय लोक मानस में प्रकृतिपूजन की प्रवृत्ति प्रबल है । प्रकृति के विभिन्न तत्वों में देवत्व की प्रतिष्ठा करके उन्हें पूजना यहाँ प्राचीन काल से होता रहा है । अतः गीतों में इस प्रकार की प्रवृत्ति का आभास मिलना प्रायः स्वाभाविक ही है । विशेष पर्व एवं त्योहारों के अतिरिक्त इस प्रकार के स्थानीय देवी देवताओं का उल्लेख संस्कार संबन्धी गीतों में भी बार बार आया है ।

कुछ ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण कुछ सांस्कारिक लोक गीतों में हेर-फेर घटना जनपदों और बोलियों में स्वाभाविक है । मलयालम में ऐसे अधिक गीत प्राप्त हैं । "ओणम" जैसे त्योहारों से संबन्धित गीत इस विभाग में आते हैं । दो विरोधी संस्कृतियों का अन्तर्द्वन्द्व एक दूसरे को प्रभावित करके भिन्न भी बन जाता है । ऐसा गीत, मलयालम और हिन्दी में मिलती है । एक स्वस्थ एवं सशक्त संस्कृति का विशिष्ट लक्षण उसका स्थायित्व होता है । राजनैतिक अथवा ऐतिहासिक परिवर्तन उसे केवल प्रभावित कर सकते हैं उन्मूलित नहीं कर सकते । ऐसा भी कहा जा सकता है, परिवर्तित रूप में कालान्तर में वह सामने आता है । आज की केरलीय कला रानी - "कथकली" हजारों लोक नाट्यों का परिवर्तित रूप स्थापित कर सकती है[1] । कभी कभी एक विशिष्ट संस्कृति का उन्मूलन उससे भी अधिक संपन्न एक विशिष्ट संस्कृति कर सकती है । परस्पर आदान प्रदान एवं प्रभाव से भी एक संस्कृति दूसरी संस्कृति से समता रख सकता है । लोक साहित्य में अन्य साहित्य से अधिक इसका प्रभाव हो सकता है । हिन्दी लोक गीतों में सूफी धर्म का प्रभाव इस प्रकार स्पष्ट दिखाई देने लगा । हिन्दु और मुसलमान संस्कारों का एक एकत्रित और घुल मिला रूप है यह । लेकिन मलयालम लोक गीतों में ऐसी एक विधा देखी नहीं जाती है । सूफी धर्म का प्रचार केवल उत्तर भारत और काश्मीर तक रहा ।

द्रष्टव्य है - केरल का लोक नाट्य : लेख - अनुशीलन, हिन्दी विभाग, कोचीन विश्वविद्यालय- लेखक : के॰ करुणाकरन एर्णाकुलम, 1976

दक्षिण में उसका प्रचार कम हुआ । इस कारण मलयालम में भी इसका प्रभाव कम हुआ । उसके स्थान में, क्रिस्तीय संस्कृति [क्रिस्टानिटी] का प्रभाव थोड़ा हुआ । लेकिन परिवर्तनात्मक कम रहा है ।

हिन्दी प्रदेश की हिन्दु जाति कई जातियों और उपजातियों में विभक्त है । केरल में भी यही हाल हुआ है । इस कारण दोनों प्रदेशों के लोक गीतों में जातीय भावना समान रूप से मिलती है । तो भी सवर्ण जातियों की रीतिरिवाज और सांस्कारिक प्रथाएं उत्तर के लोक गीतों में अधिक देखने को मिलती है ।

लोक-कवि सृष्टा भी होता है और दृष्टा भी । अपने साधारण परिवेश में समाज के प्रत्येक पक्ष की स्वानुभूति को वह लोक वाणी द्वारा रूप देता है । समाज के उज्ज्वल एवं घृणित, सभी पक्षों का चित्रण वह अत्यंत स्वाभाविकता एवं यथार्थता से करता है । इस दृष्टि से केरल और हिन्दी प्रदेश के लोक कवि अपने अपने परिवेश में समाज के प्रति अत्यन्त जागरूक रहे हैं ।

हर सामाजिक कुरीति की ओर उन्होंने उंगली उठायी है । सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, जैसे सभी पक्षों का पक्ष भी उठाया है । देहेज प्रथा, बहुपत्नित्व, बाल्य विवाह जाति पाति आदि सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्षों के साथ, साथ आर्थिक उच्च नीच भावों की ओर और राजनैतिक क्षेत्र में, अराजकता एवं क्रम हीनता पर भी उन्हें तीखा प्रश्न उठाया है । यह लोक कवि की अद्भुत प्रतिभा एवं उसके उच्चादर्शों का परिचायक है । अपनी मौलिक उद्भावनाओं को भी वे दूर नहीं थे । उदाहरणार्थ रामायण की कथा वस्तु के अन्य रूपों से विरुद्ध सीता परित्याग का कारण अलग कर देता है । रावण के चित्रांकन पर सीता परित्याग की कल्पना का दुस्साहस कर लोक कवि ने वस्तुतः भारतीय संस्कृति का रक्त शोधन किया है और इसे अधिक दृढ़ता प्रदान किया है ।

वस्तुतः मलयालम और हिन्दी के लोक काव्यों के तुलनात्मक अध्ययनोपरान्त यह स्पष्टतः ज्ञात होता है कि स्थानीय परम्पराओं, भौगोलिक स्थिति एवं विविध ऐतिहासिक परिवर्तनों के बावजूद भी इन दोनों प्रदेशों के संस्कार ऋतु त्योहार, अनुष्ठान, पर्व, जातीय, श्रम, ऐतिहासिक, राजनैतिक तथा अन्य प्रकार के गीतों में संस्कृति का वही शाश्वत, ज्वलंत एवं अखंड रूप दृष्टिगत है, जो प्रायः इस महान देश के अन्य भागों में देखा जा सकता है। दुनियाँ के हर क्षेत्र के लोक काव्यों के समान हिन्दी और मलयालम के लोक-काव्य का अध्ययन भी इस सत्य की ओर संकेत करता है कि मानव हृदय सर्वत्र एक सा है। ठीक है एक ही आकाश के नीचे एक ही भूमि पर दो पद रखकर चलनेवाला यह प्राणी, अपनी लाड़ स्पंदन की प्रेम विरोध की, अनुराग विराग की, एक ही मानवता का अधिकार जमाता है। जितना भी अधिक हो जाए तो भी जीवन को वह जितना सार पूर्ण बना देता है। विज्ञान, नवचेतना एवं नव जागरण के वर्तमान परिवर्तन शील युग में लोक-कवि किस प्रकार अपना दायित्व कुशलता से निभाता रहा है, इसका उदाहरण मलयालम तथा हिन्दी लोक गीतों में सहज ही मिलता है। ये गीत नये युग के अनुकूल बन गये हैं। रचना प्रक्रिया, विषय, भाव एवं शैली गत प्रयोगों में ये गीत नये हैं। समाज एवं जीवन के बदलते मूल्यों के अनुरूप सामयिक भाव एवं विषय लेकर परम्परा एवं संस्कृति के स्वस्थ धरातल पर उनकी नवीन व्याख्या करना तथा नव चेतना एवं नवजागरण की दृष्टि से उनकी परख करना वस्तुतः आधुनिक लोक कवि की सफलता का मर्म है।

विज्ञान आधुनिक मानव जीवन का मूलाधार है। अतः इसके प्रति भी लोक कवि का दृष्टिकोण स्वस्थ ही रहा है। आकाश में वायुयान को उड़ते देखकर वह जितना उल्लसित होता है उतना ही निराशा एवं क्षुब्ध वह विध्वंसक तथा विनाशक अस्त्र-शस्त्रों की होड़ देखने से ही होता है।

अतएव अपने प्रणय मिश्रित नैसर्गिक चेतना से वह हम को भी प्रणय एवं स्नेह के मधुर पाश में बांधने का प्रयत्न करता है । इसी प्रकार आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति में ही छिपी मानव जाति की जर्जर एवं दयनीय दशा भी उससे ओझल नहीं है । महंगाई, अकाल एवं अभावग्रस्त आधुनिक मानव की निर्धन दशा का चित्रण वह अत्यंत कारुण्य के साथ प्रस्तुत करता है ।

'कन्ट्रोल', 'कूपन', रेशन कार्ड, 'क्यू' आदि के झूठे प्रतिबन्धों में जकड़ा हुआ, निर्धन कृषक वर्ग, आम जनता एवं गांव वाले दोनों प्रदेशों के गीतों का विषय आधुनिक युग में बना है । वस्तुतः नव चेतना प्रगति एवं नवजागरण के वर्तमान युग में भी निर्धनता अभाव एवं असहायता की कितनी भयंकर दरारें पड़ी हुई हैं । इसका चित्रण मलयालम एवं हिन्दी के गीतों में सजगता एवं समान दृष्टि से हुआ है । मलयालम और हिन्दी के बाल गीतों का क्षेत्र भी अत्यंत विस्तृत है । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इन का अद्वितीय महत्व है । बाल मनोवृत्ति एवं जिज्ञासा का पूरा पूरा चित्रण इन गीतों में हुआ है । इसी प्रकार खेल गीतों में भी विभिन्न बाल-क्रीड़ाओं का पूरा पूरा परिचय मिलता है । दोनों प्रदेश के खेल गीतों का पर्यालोचन करने पर प्रायः भिन्न समान तथ्य प्राप्त होते हैं । अतः दोनों भाषाओं के खेल गीतों में जीवन के गंभीर कार्यों का विनोदात्मक अनुकरण निहित है । आदि मानव से आधुनिक मानव तक के जीवन का ब्योरा मिलता है । भाषा के विकास में अनुकरण का ब्योरा मिलता है । चारित्रिक उदात्तीकरण के विशिष्ट तत्व निहित हैं, जो बालक के बौद्धिक एवं शारीरिक विकास में सहायक सिद्ध होते हैं । बाल मनोवृत्ति एवं मनोवैज्ञानिक बहुमूल्य सामग्री समाविष्ट है ।

वस्तुतः समग्र रूप से देखने पर यह प्रायः स्पष्ट हो जाता है कि अन्य राष्ट्र के लोक गीतों की भांति मलयालम तथा हिन्दी के विविध गीत साहित्य में भी अद्वितीय साम्य है जो मानव स्वभाव की समान धाराओं एवं समान सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिवेश का सूचक है ।

आठवाँ अध्याय

हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं का तुलनात्मक अध्ययन

पिछले अध्याय में हमने लोक गीतों की तुलना प्रस्तुत की आगे लोक गाथाओं पर विचार करेंगे । लोक गाथाओं के वर्गीकरण के समय हमने दोनों भाषाओं की लोकगाथाओं को सामान्य रूप से सामूहिक कथाओं पर आधारित एवं पौराणिक कथाओं पर आधारित इस प्रकार मुख्य दो रूपों में विभक्त किया । हिन्दी की विविध बोलियों में प्राप्त लोक गाथाएं इस विभाजन के अन्दर आते हैं । उन्हीं को फिरसे, वीरकथात्मक, प्रेमकथात्मक, रोमांच कथात्मक, इस प्रकार तीन विभागों में भी वर्गीकृत किया । हिन्दी के कुछ प्रदेशों में योग कथात्मक गाथाओं का भी प्रचार है । यह विभाजन मलयालम लोक गाथाओं में नहीं है ।

महाकवि उल्लूर, पी॰गोविन्द पिल्ला, आर॰नारायण पणिक्कर, डा॰ के॰एम॰जार्ज आदि साहित्य इतिहासकारों ने इस विभाजन प्रक्रिया को

1. केरल साहित्य चरित्रम - भाग-1 - पृ॰202
   केरल भाषा चरित्रम - भाग-1 - पृ॰192
   केरल भाषा साहित्य चरित्रम - पृ॰104
   केरल साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे - पृ॰199

स्वीकार किया है । प्रसिद्ध लोक-साहित्य प्रवर्तकों ने भी यही मत प्रकट किया है । इस कारण से सामान्यतः हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों के वर्गीकरण में हम विषय वस्तु, भाव, एवं रीति में समानता देख सकते हैं । हिन्दी की विभिन्न बोलियों में प्राप्त लोकगाथाओं में से, समस्त हिन्दी प्रदेश में प्रचलित इस पन्द्रह लोक-काव्यों को हम तुलनात्मक अध्ययन में ला सकते हैं । इन में आल्हा लोरिक, विजयमल, बाबु कुँवरसिंह आदि वीर कथात्मक लोक गाथाएं हैं । प्रेम कथात्मक लोक गाथाओं के बीच शोभानयका बनजरा निहाल दे, चन्द्रावली, कुसुमादेवी, आदि आती हैं। रोमांच कथात्मक लोकगाथाओं में, सोरठी, बिहुला, राजवामा, ढ़ल्लेया आदि आती है ।

मैनावती, ढोलामारू, हीरा, रानि महादेव के ब्याहुले, सारवनीर (कथणकथा) आदि गीतों का भी लोकगाथाओं में स्थान है । योग कथात्मक लोक गाथाओं के बीच राजा भरथरी गोपी चन्द आदि आती हैं[1] ।

<u>हिन्दी और मलयालम लोकगाथाओं में विषय वस्तु</u>

इन मुख्य लोक गाथाओं के अतिरिक्त हिन्दी की विविध बोलि स्थानीय लोक गाथाओं के रूप में और भी गाथाएं प्राप्त है । प्रत्येक स्था में इन लोक गाथाओं का अलग अलग नाम भी है । राजस्थान में प्राप्त लोक गाथाओं को "पँवाडा" कहा जाता है । मिथिली, भोजपुरी, मगही में गाथा ही नाम है । कहीं कथागीत नाम भी है । जन कल्याण के लिए प्राणोत्सर्ग तक करनेवाले वीरों की जीवन गाथाएं इन लोक गाथाओं के माध्य से गायी जाती हैं । मलयालम में भी ऐसी कई गाथाएं प्राप्त हैं ।

1. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (षोडश भाग)
पृ॰107 (भूमिका)

ये गाथाएं बहुधा, आंचलिक महत्व रखती हैं । "वटक्कन पाट्टु", तेक्कन पाट्टु", "इटनाटन पाट्टु" आदि स्थानिक नामों से युक्त हैं ये गाथाएं । मलयालम में ये गीत प्रचलित भाषा में, जन जीवन से चुनी हुई उपमाओं में बने हिन्दी प्रदेशों में भी ये गाथाएं ऐसी ही हैं ।

राजस्थानी के पाबूजी नानडिए, मेणादे, निहालदे आदि इस विभाग में आते हैं । पाबूजी का पांवड़ा राठौड़ वंश के वीर पाबूजी की जीवन गाथा प्रस्तुत करता है । नानडिया इन्हीं के बड़े भाई बूढ़ेजी का पुत्र था । उसी का जीवन वृत्त नानडिए का पंवाड़ा है । ये दोनों लोक गाथाएं, मलयालम के वटक्कनपाट्टु में प्रसिद्ध आरोमल चेकवर और उसका भतीजा आरोमुण्णि की वीर कथात्मक गाथाओं के समान है । तच्चोली ओमू की कथा भी इस तरीके की है ।

नानडिया पाबूजी के बड़े भाई बूढ़ोजी का पुत्र था । पाबूजी तथा बूढ़ोजी की मृत्यु के समय वह गर्भ में था । सती होते समय गैली रानी ने अपना उदर फाड़कर पुत्र को निकाला तथा देवल चारणी जिसकी सहायता केलिए युद्ध करके वीर पाबूजी का निधन हुआ था, केपास दिया था । देवल चारणी ने उस बालक को नानी के पास पहुंचा दिया । नानी ने उसका पालन पोषण किया था ।

~~नानडिया ने~~ युवा बन जाने पर अपने पिता और मामा के निधन की कथा नानडिया ने जान ली । प्रतिशोध लेने की भावना उस वीर बालक में जागृत हुई । नानी के मना करने पर भी, बाबा गोरख नाथ का वह शिष्य बन गया । उनसे दीक्षा तथा शक्ति लेकर जायल-खींची के जिसे से युद्ध करते समय उसके पिता तथा काका स्वर्ग वासी हुए थे, नगर में पहुंचा ।

सारी विघ्न बाधा को लेकर भी उसने उसका सिर काट लिया अपना प्रतिज्ञा निभाया । हिन्दी की इस लोक-गाथा के ठीक समान रूप की कथा है मलयालम - "वटक्कन पाट्टु" की आरोमुण्णी की लोकगाथा । कथा इस प्रकार है -

आरोमल चेकवर के निधन के समय आरोमुण्णी का जन्म नहीं हुआ था । वह माँ की कोख में था । उण्णियार्चा ने जो आरोमल चेकवर की बहिन थी उस समय यह प्रण किया था कि इस खून का बदला अपने कोख का बच्चा, पुरुष हो तो वह लेगा । ठीक वैसा ही हुआ । उण्णियार्चा का बेटा आरोमुण्णी के नाम से बन गया । जवानी चढ़ते चढ़ते उसने चन्तु से जिसने आरोमुण्णी के मामा आरोमल चेकवर को धोखे से मार डाला था बदला लिया । उस का सिर काट कर अपनी माँ के चरणों में रख दिया और अपना प्रतिज्ञा चुका दिया । लोक-कवि ने दोनों गाथाओं में समान विषय को प्रधानता देकर गाथाओं का चयन किया है ।

नागडिया ने, खींची का सिर काटकर उसके पिता और काका की समाधि पर चढा दिया, आरोमुण्णी ने भी ठीक वैसा ही किया ।

निहालदे की गाथा का भी मलयालम में समान आदर्श नारी का कथागीत वटक्कन पाट्टु में पाया जाता है जो "पूमातु" नाम से प्रसिद्ध है । मानागूजरी, जगदेव पंवारे, ढोलेवाले, रघुवीरसिंह, नर सुल्तान, राव बाना आदि भी स्थानिक गाथाएं है, जिनकी तुलना मलयालम की कुछ लोक गाथाओं

1• कौरवी लोक गाथाएं - पृ•46

से की जा सकती है । कनोजी, बुन्देली, लोक गाथाओं में जो स्थानिक मात्र हैं, नल-दमन की लोक गाथा भी प्रसिद्ध है, जिसकी तुलना मलयालम के माणिक्य-विषिकरन, कथागीत से हो सकती हैं, जिसका परिचय उत्तर केरल की लोक-गाथाओं के बीच प्राप्त है । ये दोनों भाई - भाग्य विपर्यय से अलग होते हैं और भाग्य वैभव से आपस में मिल जाते हैं । जगद्देव, कारस देव, पेमादी आदियों की लोक गाथाएं भी स्थानिक मात्र हैं जिनकी तुलना, मलयालम की इसलामेय गाथाओं के साथ हो सकती है । गुगा्गा, जाहर पीर जैसी लोक-गाथाओंकी मलयालम में कोई समान गाथा नहीं मिलती । यहां योग कथाएं बहुत कम है ।

महादेव के ब्याहुले, बहुला, सरवरनीर जैसे कई गीत कथाएं मलयालम में भी प्राप्त हैं । इतिहास प्रसिद्ध, घटनाओं से संबन्ध रखनेवाली कई लोक गाथाएं मलयालम में प्राप्त हैं । उनमें अधिकांश गीत, तीन सौ से अधिक साल पुरानी नहीं हैं । तिरुविताकूर राजघराने से संबद्ध कथागीत कम में अधिक हैं । उत्तर केरल का कण्टर मेनोन पाट्टु, पावेर पाट्टु, एवं तेक्कन पाट्टु विभा में प्राप्त, इरविक्कुट्टिपिल्लाप्पाट्टु, अंचु तंपुरान पाट्टु जैसे, कुंवरसिंह, झांसी की रानी आदि लोक गाथाएं भी, समान स्वभाव की हैं।

इसी प्रकार हिन्दी की विविध बोलियों में प्राप्त, स्थानीय लोक-गाथाओं के समान, केरल के उत्तर दक्षिण और बीच के हर एक प्रदेश में प्रचलित कई लोक गाथाएं प्राप्त हैं । उन सब की यहां विस्तृत व्याख्या देने की जरूरत नहीं । आगे हिन्दी और मलयालम के प्रमुख लोक काव्यों की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करेंगे ।

आल्हा और तच्चोलिप्पाट्टु

हिन्दी की सर्वप्रथम वीर कथात्मक लोक गाथा है आल्हा । बुन्देली वीर कथा पर आधारित वीर गाथा होते हुए भी, सारे उत्तर भारत में आल्हा का खूब प्रचार है । प्रत्येक बोली में आल्हा का प्रचार कम परिवर्तन के साथ हुआ है । यह गाथा प्रधान रूप से महोबे पर ही आधारित है । आल्हा खण्ड में विशेष रूप से विवाहों और युद्धों का वर्णन है । उस समय विवाह में युद्ध होना स्वाभाविक था । आल्हा के नायक, आल्हा और ऊदल बनाफर शाखा के क्षत्रिय थे । वे परमाल के सामन्त और सेनापति थे । इन वीरों ने अनेकों युद्ध किये, कई अन्य राजाओं के अहंकार का दमन किया। अनेकों राजकुमारियों के साथ विवाह भी किया । गाथा का अन्त, अत्यंत कारुणिक है कि युद्ध में सारे बनाफरी पराजित हो जाते हैं, आल्हा और उसका बेटा इंदल बच जाते हैं । लेकिन वे दोनों अन्त में घर-बार छोड़ कर सदा केलिए चले जाते हैं । लोगों के बीच आज भी यह विश्वास रहा है कि महोबा का दुःख दूर करने केलिए वे पुनः लौटेंगे ।

मलयालम का कोई भी लोक-काव्य आल्हा की समानता नहीं करेगा तो भी, काल खंड, कथावस्तु प्रतिपादन आदि मुख्य तत्वों के आधार पर विवेचन करने पर यह सिद्ध होता है कि तच्चोलि ओतेनन पाट्टु एक हद तक आल्हा की बराबरी करती है ।

तच्चोलि ओतेनन और चापन चरित्र में आल्हा और ऊदल के समान थे । देश राजा की अनुमति से "कर" वसूल करना, राज्य में होने वाले झगड़ों का अन्त करना, आदि कार्य में ओतेनन लगा हुआ था । अपने समय का सबसे प्रधान वीर था ओतेनन । उसका साथी चापन भी उसी कोटी का थ

उन दोनों ने मिलकर, कई, कलरियों में युद्ध किया । अनेकों सुन्दरियों के साथ उनकी शादी हुई । अनेकों अत्याचारी देश राजों और सामन्तों का उन्होंने मद मर्दन किया । ओतेनन का अन्त करुणार्द्र था । एक द्वन्द्व युद्ध के बाद जब लौटते समय उसका हथियार अंकत्तट [मल्लयुद्ध का तख्त] में भूल गया था । उसे लौट लेने जाते समय दुश्मनों ने धोखे से उसपर गोली मारी। उसका निधन शान भी हुआ । आल्हा का चरित्र और ओतेनन का चरित्र समान आदर्शों का है । दोनों का जीवन भी, समान लक्ष्यों की पूर्ति केलिए सौंप गया है । दोनों के जीवन काल को भी लग भग समान समय का कहा सकता है । आल्हा का चरित्र राजपूती वीरता के सुन्दर एवं भव्य उदाहरण है । ओतेनन का चरित्र भी केरलीय वीरता का भव्य और हृदयहारी उदाहरण है । ओतेनन का निधन कतिरूर गुरुक्कल से, जो "अंक" [द्वन्द्व] हुआ था उसके साथ साथ हुआ है । रण कुशलता एवं उदारता में "ओतेनन" आल्हा की बराबरी करता है । भारतीय वीरता के आदर्श प्रस्तुत करते समय इन दोनों वीरों का चरित्र समान रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है । खड्ग [उरुमी] ही दोनों का जीवन साथी था । दोनों के सामने, जीवन की प्रत्येक समस्या का उत्तर खड्ग ही करते थे । ओतेनन और आल्हा दोनों के जीवन का मूलमंत्र यह हो सकता है कि -

> बारह बरस लें कूकर जीयें,
>
> और तेरह ले जीयें सियार ।
>
> बीस अठारह छत्री जीयें,
>
> आगे जीवन को धिक्कार ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इन वीरों में वीरत्व की भावना उग्र रूप से वर्तमान थी । आल्हा और ऊदल ने उस समय के प्रमुख राजा पृथ्वीराज को भी परास्त किया । यहाँ ओतेनन ने भी वापन की सहायता से अनेकों मल्लों का सत्यानाश किया उस समय के सबसे प्रधान वीर मल्ल कतिरूर गुरुक्कल

तक की हत्या की । जिस प्रकार आल्हा महोबा वासियों का वीर पुरुष था उसी प्रकार ओतेनन कटत्तनाट्टु [नोर्थ मलबार] का भी वीर रोमांच था । इन दोनों वीरों के अन्त ही भिन्न रहे । आल्हा राज्य एवं घर छोड कर चला गया। महोबा वासियों का दृढ विश्वास आज भी उनके संबन्ध में यह है कि आल्हा आज भी केदली वन में रहते हैं, महोबा को जब उनकी सहायता की मांग होगी तो वे तुरंत लोट आएंगे । तच्चोलि ओतेनन के बारे में यह प्रतीक्षा नहीं कि वे लोट आएंगे कि इन का निधन समाज के समुख ही हुआ था । परन्तु आज भी, उसकी वीर स्मृती केरल के हर जवान के दिल को वीरे ताल लगती जा रही है ।

आल्हा और ओतेनन दोनों की वीरता की कोई उपमा नहीं है - खड्ग लेकर शत्रु के दल में पिल पडना, निरंतर लडते रहना, तथा शत्रु को मौत के घाट उतार देना, दोनों वीरों केलिए बाएं हाथ का खेल था। वे दोनों एक, उत्तर का एक दक्षिण का धीर, वीर थे । दोनों देश के लोक कवि दोनों समाज में रहकर एक ही भाव धारा का, निर्माण करके, कृतकृत्य हुए है।

हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं में इन दोनों लोकगाथाओं का महत्व पूर्ण स्थान है । आल्हा आज भी घर घर पर गाया जाता है । तच्चोलिप्पाट्टु भी उसी पेमाने में, महत्व देकर गाया जाता है ।

1. ओतेनन को केरल का रोबिहुड कहा जाता है ।

डॉ॰ चेलनाट अच्युत मेनोन - बेलडस ओफ नोर्थ मलबार
"भूमिका"

लोरिकायन और इळनाडम पाट्टु

हिन्दी प्रदेशों में समान रूप से प्रचलित एक दूसरी वीरगाथा है लोरिकायिन या लोरिका । इसका नायक लोरिक है जो वीर नायकों में आता है । लोरिक की समकक्ष में, मलयालम में प्रचलित एक वीर गाथा है इटनाटम पाट्टु । लोरिकायिन की कथा, अधिक विस्तृत होते हुए भी, लोरिक नामक एक वीर की साहसिकता पर आधारित है । इसी प्रकार मध्य केरल के एक वीर साहसी के जीवन पर आधारित मलयालम लोक-काव्य है इळनाडमपाट्टु । इस का नायक इळनाडम नामक वीर योद्धा है ।

लोरिक का कथागीत अहीर जाति के लोग बडी प्रधानता देकर आज भी गाते हैं । लोरिक अहीर जाति का माना जाता है ।

इळनाटम भी, हरिजनों के बीच का माना जाता है । हरिजन खास कर केरल के 'पुलया' जाति के लोग इस गाथा को उस गौरव से अपनाते है जिस गौरव से, लोरिका को अहीर जाति के लोग स्वीकार करते हैं ।

लोरिक और इळनाटम दोनों का चरित्र भी, समान सत्ताका मालूम पड़ता है । लोरिक के जीवन का मुख्य उद्देश्य सती स्त्रियों के जीवन का उद्धार करना एवं दुष्ट प्रवृत्ति के व्यक्तियों का नाश करना था । इळनाडम ने भी अपना सारा जीवन इन्हीं उद्देश्यों केलिए सौंप दिया था। लोरिक को लोग भगवान लाल देव का अवतार मानते थे । इळनाडम भी हनुमान सेवा में निरत बताया गया है । लोरिक की वीरता भारत वर्ष की मध्य युगीन वीरता है, जिसमें विवाह और उसकेलिए युद्ध, श्रृंगार और उस केलिए वीरता का विधान हुआ करता था । ठीक, इळनाडम का समय भी वही माना गया है। लोरिक एक पराक्रमी ग्वाला था और था प्रतापी योद्धा ।

उसका रूप गुण इस प्रकार है -

सुप सन-सन कान छलई,
    छिटा समक कपार,
ढोंका सन सन आँखि छलई
    दाँत जेना फार,
मट भरि टिक्की फहराइ छलई
    सीना हाथ चार,
मुट्ठी भरि डेडाँड छलई
    धोती पेंच दार[1] ।

इस में लोरिक के कान की उपमा सुप से दी गई है और कपाल उसका टोकरी के समान है । ढोंके की तरह उसकी आँखें थी और हल के फाल की तरह दाँत थे । चोटी लम्बी थी और चार हाथ चौड़ा उसका सीना । उसकी कमर पतली थी, और पेंदार धोती पहने था । यह एक जोरदार पहलवान की सुडौलता का आकर्षक रूप है । लोक कवि ने उसका चित्रण सही दिल से किया भी है ।

मलयालम लोक गाथा के इडनाटन का चित्र भी देखिए -

कुन्नि कडुप्पोत्त कण्णु तिळिट्टट
नेंचत्ते रोमङ्ङल तिंगिन्तु कोम्टे
कामि करितुड तुम्पिच्चु कोम्ट्
एनिवाक्कल पुन्निमीश वलिच्चुनिरत्ति... [2] ।

---

1. मैथिली लोक गीतों का अध्ययन - डॉ॰तेजनारायणलाल - पृ॰222
2. केरल साहित्य चरित्रम - भाग - 1 - पृ॰222
   तीसरा संस्करण 1967

देखिए, लोरिक के वर्णन से कितना मिलता जुलता है इडनाडन का रूप वर्णन । एक सुडौल एवं वीर पहलवान का संपूर्ण वर्णन यहाँ पाया है । उसकी कुछ आँखें, कुम्भकुड के समान है । विशाल वक्ष के काले काले बाल, फट-फटाये है । पैर का उर्ध्व भाग की मांस पेशियाँ लोहे की गोली के समान उभरे और गिल्ली के समान है - बस, एक शक्तिशाली वीर पहलवान का पक्का रूप वर्णन है ।

लोरिक कई सुन्दरी राज कुमारियों का मानस हर था, वैसे तो, इडनाडन भी, अपनी रूप भंगिमा एवं वीरता के कारण कई कन्याणियों के हृदय का राजा बना । सुन्दरी, चनुआ आदि युवतियों के अंगराग से, लोरिक की छाती दिन व दिन लाल हो जाती थी । सारंगपुर में वह एक कलारिन से परिचित होता है । उसके जाल में फंस भी जाता है । यहाँ इडनाडन भी तच्चीर मुक्कं के पास एक कलारिन कन्या के जाल में फंस कर रहने लगता है । वह जादू से नहीं काय बल से सबको मुग्ध कर के लूट लेता है तो, लोरिक को, अम्मा देवी ने सपने में - रास्ता दिखाकर बचाया है ।

लोरिक की संपूर्ण लोक गाथा में और उसके समस्त रूपों में वह वीरता का अवतार है । वह लोक रक्षा व्रत का है । प्रेम कुशल भी है । उसका जीवन व्रत लोक रंजन और लोक सेवा है । मलयालम लोक गाथा के इडनाडन का चरित्र भी वैसा ही है । दोनों लोक गाथाओं के नायक के नाम पर गाथा का नाम भी आया है । दोनों गाथाएं नायक प्रधान वीर गाथाएं हैं । दोनों प्रान्तों के लोक-कवियों और लोक गायकों ने दोनों पर मुग्ध होकर समान आवेश से गाया है ।

विजयमल और चेड्डम्पूर आलि

इन दोनों लोक-गाथाओं की समानता इस कार्य में है दोनों वीर, द्वन्द्व युद्ध एवं कलरी [व्यायामालय] के मल्ला [योद्धा] थे। विजय मल एक, वर्णराजा का [ट्रैवेल" पुत्र था। "आलि", निम्न जाति के होते हुए भी, वर्ण मेला का बेटा था। दोनों वीर समान रूप से, आमजनता के मन की मोती है। विजयमल का दूसरा नाम था "कुंवर विजय"। गाथा में इसे तेली नामक निम्न जातिका योद्धा बताया गया है। परम्परा में विश्वास करने वाले गायक वृन्द विजयमल को तेली जाति से ही संबन्धित बतलाते हैं। वर्णव्यवस्था में तेली लोगों की गणना शूद्रों में की जाती है। विजय मल और "आलि" के कथागीतों का प्रचार निम्न जातियों ही अधिक है। विजयमल का जन्म देवी दुर्गा के अनुग्रह से दिव्य रूप में हुआ माना जाता है। चेड्डम्पूर आलि भी, जन्म से दिव्य एवं परमगामी बताया गया है। बावन सुबे की "तिलकी" से विजयमल का विवाह होता है। अन्य कई, युवतियों का वह प्राण नाथ था। यहाँ, "आलि" भी, कई युवतियों के साथ विवाह कर लेता है। लेकिन "पानुर्व पेण्णु" नामक धीर वनिता के साथ उसकी सच्ची शादी होती है। पानुर्व कोयी, के साथ वह द्वन्द्व करके उसे पराजित करता है। उस के बाद वह कुन्नुर्व माणी नामक युवती से भी शादी करता है। कुञ्ञालि उन्नीस कलरियों में जाकर अठारह कलरी नाथों [आचार्य] को पराजित करता है। अठारह गढ़ों में जाकर उन गढ़ाधिपों का सत्यानाश करके अठारहों गढ़ों का अधिप बन जाता है। आलि पर काय प्रवेश और आल्मारट विद्या [अपनी जान को अन्य जीव में लगाने की विद्या] जानता था। उस के धर्म गुरु, करिया पणिक्कर भी यह विद्या जानते थे। जिसकी सहायता से आलि ने ये सारी विद्याएं सीख लीं। चेड्डम्पूरालि ने उस समय के सब

1. विजयमल के नाम में "मल" शब्द के जोड़ने से लोग इसे क्षत्रिय बतलाने को भी उत्सुक रहते हैं। वास्तव में यह ठीक नहीं। उस समय "मल" शब्द, हर द्वन्द्व निपुणों के नाम से जुड़ाया जाता था। केरल में कुरुक्क शब्द द्वन्द्व युद्ध सिखाने वाले आचार्यों के नाम से जुटाया जाता था।
केरल चरित्रम भाग-1, पृ॰472

सामन्तों प्रभुओं और जमीन्दारों से युद्ध किया । उन सब को पराजित करके लोक कल्याण का आदर्श जमा कर दिया । लोक गाथा में उन सब का उचित वर्णन ठीक रूप में पा सकता है । पेरुतम्पुर आदि का गुरु एक बैल 'कबूतर के देश में आया हुआ, "करियाल पणिक्कर" माना जाता है । वही कबूतर आदि को हर संकट से बचाने में सफलता पाता है । लोक-तत्व के आधार पर सारा कार्ययुक्त गाथा में लोक कवि ने प्रस्तुत किया है ।

हिन्दी के विजयमल की तुलना में यह लोक काव्य इसलिए बराबरी करता है कि विजयमल लोक-काव्य के सारे गुणों का समावेश इस में भी हुआ है । विजयमल भी बावन, गढ, बावन सूबेदार, आदि को दमन करके अपना अधिकार जमाता है । जब मानिक चन्द ने बावन गढ में सारे बारातियों को कैद कर दिया तब विजय मल ने अकेले, किले में उन्हें दिया । वहाँ "सिंहल बछडा ने जो विजयमल का गुरु घोडा था, उसे बचाया । उसे आगने में का भी गया तो सिंहल बछडे ने उसे वहाँ से, उठा कर उडकर देवी जगदंबा के पास लिटा दिया । देवी जगदंबा ने उसे फिर से जीवन दान देकर होश करा दिया । बावन गढ के अन्दर वह फिर पहुँचा । और जेल का द्वार खोलकर सब बराती को मुक्त किया और तिलकी को साथ लेकर सिंहल बछडे पर सवार होकर अपने देश पहुँचा ।

इन साहसी कहानियों से विजयमल का चरित्र और कुञ्जाली का चरित्र मिलता जुलता है । दोनों वीरों की जीवन गाथा लोक-मानस को मुग्ध करनेवाली है । हिन्दी और मलयालम वीरकथात्मक लोक-गाथाओं में वीरत्व की प्रवृत्ति एक समान नहीं मिलती । प्रथम या तो वह वीर अवतार के समान चित्रित रहता है, या देव अनुग्रह युक्त रहता है ।

वीर लोरिक अवतारी पुरुष माना जाता है । इसी प्रकार विजयमल भी माता देवी जगदंबा के अनुग्रह का पुत्र था । आल्हा, लोरिक विजयमल, तीनों अद्भुत पराक्रमी थे । उसी प्रकार मलयालम में भी, तच्चोली ओतेनन, इरुमाटन एवं आली अद्भुत पराक्रमी थे । ओतेनन और आली के बारे में लोक विश्वास है कि देवी काली माता के निस्सीम अनुग्रह के वे प्रतीक माने गये हैं । इरुमाटन को विशेष कर ऐसा दिव्यत्व गाथा में दिया नहीं गया है । ये सारे वीर अकेले अनेकों शत्रुओं को मार डालने में समर्थ बताये गये हैं । पुराण पुरुषों के समान एक ही समय में अकेले हजारों शत्रुओं को धराशायी करना इन्हें सुगम कार्य था । पेरुकम्पूर आदि और विजयमल दोनों बाल्य काल से अद्भुत वीरता का परिचय देते थे ।

विजयमल और पेरुकम्पूर कुञ्ञादि दोनों लोक गाथाओं में यह भी समानता है कि दोनों वीरों की सहायता में एक गुरु होता है । यह आवश्यक नहीं कि वह गुरु मनुष्य ही हो, कुत्ता, घोड़ा, केकड़ा, हाथी, कबूतर अथवा किसी भी जीव जन्तु हो सकता है । यहाँ विजयमल का गुरु, बिछल बछड़ा नामक घोड़ा और आली का गुरु एक कबूतर है । ये दोनों उन दोनों को सभी विपत्तियों से बचाते हैं, तथा समय समय पर संकेत भी करते रहते हैं । इस प्रकार दोनों वीर, प्रस्तुत लोक गाथाओं में देवी कृपा युक्त, अद्भुत वीरता की क्षमता रखने वाले तथा गुरु की सहायता से परिपूर्ण वीर है । ये दोनों वीर वीर होते होते अद्भुत प्रेमी भी थे । दोनों वीर अपनी प्रतिज्ञा पर मर मिटनेवाले भी थे । दोनों विवाह तथा स्त्री प्रेम से अधिक शत्रु से बदला लेने को अधिक महत्व देते थे, उन केलिए प्रेम व्यवहार एवं विवाह कार्यों में भी लग गये । वे सत्य को ईश्वर से अधिक महत्व भी देते थे । अनेक कठिनाइयों के पश्चात दोनों को सफलता मिलती है इस प्रकार दोनों वीर-गाथाएं विषय वस्तु में समान हो जाती हैं ।

प्रेम कथात्मक लोक गाथाएं

मलयालम में प्रेमकथात्मक लोक गाथाएं, बहुत कम हैं । माप्पिल लोक गाथाएं हसनुल जमाल और लैला मजनू कथागीत प्राप्त हैं दोनों उर्दू और फारसी कथाये हैं । हसनुल जमाल, मलयालम में अति मोहक लोक-काव्य है, जिसको महान लोक-कवि मोयिन कुट्टि वैद्यर का बना हुआ कहा गया है[1] । वटक्कन पाट्टु में तुंबोलार्चा और हिन्दी लोक काव्यों में, 'जसुमति' की लोक गाथाएं तुलना में समान मानी जा सकती हैं । जसुमति को शोभानायक भी नाम है, जो, जसुमती के पति शोभानायका के नाम पर बोला जाता है ।

शोभानायक और जसुमति में आपसी प्रेम था । दोनों के मिलन का समय कम हुआ था । वह जसुमति से मिलने के उद्देश्य से तिरहुत पहुंच गया । जसवन्ती और शोभानायक का मिलन वहाँ हुआ । रात को दोनों ने बिना किसी को पता दिये, जसवन्ती के महल में सोहाग रात मनायी। सबेरे जाते समय शोभा अपना रुमाल जसवन्ती को देकर चला गया ।

एक ही रात के मिलन से जसवन्ती गाभिन बन गयी कुछ दिनों के बाद ननद को भी पता चला । उसने जसवन्ती को कुल कलंकिनी समझा । उसे महल से बहिष्कृत कर दिया । आखिर शोभा ने सारा हाल सब को समझा कर अपनी पत्नी जसवन्ती को, कुल कलंकिनी नाम से बचाकर अपना लिया ।

वटक्कन पाट्टु में प्रसिद्ध आरोमल चेकवर की गाथा से संबद्ध रखनेवाली एक कथा गीत है तुंबोलार्चा ।

---

1. मोयिन कुट्टि वैद्यर - मलप्पुरम जिला के कोन्टोटी में इस सदी के आरंभ में जीवित थे । माप्पिल कवियों में उनका नाम अविस्मरणीय माना जाता है ।

तुंबोलार्चा आरोमल चेकवर की, अनुनियमवधु [मुरप्पेण्णु][1] थी । एक दिन आरोमल चेकवर मामा के यहाँ गया । वहाँ उसने तुंबोलार्चा को नवयौवन से युक्त पाया । उसी रात को बिना किसी को समझे बूझे तुंबोलार्चा के अन्तःपुर में आरोमल चेकोर और तुंबोलार्चा का मिलन हुआ । उसी दिन से वह गार्भिन बन गयी । सबेरे सबेरे आरोमल चला गया । कुछ दिन बाद को, सारी स्त्रियाँ उससे पूछने लगीं तुम्हारा क्या हो गया । शादी के पहले किसी स्त्री का गार्भिन बनना कलंक था । तुंबोलार्चा ने उससे पर्दा रखना चाहा । लेकिन अड़ोस पड़ोस की स्त्रियाँ वे तो सयानी हैं उससे ऐसा पूछने लगीं ।

"मुलक्कण्णु रण्टुं कर्त्तिरुन्नोटी ?
करिनिरं पोले निरमुटन्नो
कटवयर तन्ने तटिच्चु कण्टु
पोक्किल कोटियुं मलच्चु कण्टु"

भाव :- तुम्हारी छाती के स्तनों की चोंचें ऐसी क्यों काली काली हो गयी हैं, देखने से ऐसा लगता है तुम गार्भिन हो । तेरे पेट का निचला भाग ऐसा क्यों ?

ये सब गार्भिन बनने का उचित लक्षण है । तब वह कुछ बोल नहीं सकी । अभी तक वह उनको यही समझाती थी कि किसी पुरुष का स्पर्श भी नहीं हुआ था । अब उन स्त्रियों के प्रश्न के सामने उसे अवाक रह जाना ही पड़ा । आखिर तुंबोलार्चा ने भी एक बच्चे को जन्म दिया ।

---

1. मुरप्पेण्णु का मतलब कौटुंबिक नियम का है । किसी लड़के के पिता की बहिन की बेटी, अपना अनुरूप वधु नियमानुसार समझा जाता है ।

वह आरोमन केवर का रूपान्तर था । तब उसने आरोमन केवर को संदेश भेजा । वह आडम्बर से आकर अपनी पत्नी और बच्चे को साथ लेकर अपना घर चला गया ।

जलुक्की और तुबोलार्चा की कथा समान है । दोनों गाथाएं वीर नायकों के जीवन वृत्त से संबन्ध रखने वाली भी है ।

दोनों गाथाओं में नायिका नायकों का चरित्र रीतिकालीन नायक-नायिकाओं के समान चित्रित हुआ है । दोनों नायक अपनी अपनी नायिकाओं के साथ अभिसार भी करते हैं ।

दोनों गाथाओं के नायक अपनी अपनी नायिकाओं को विश्वास के साथ अपनाते हैं । उनके ऊपर लगी हुई लांछना के कलंकों को दूर भी करते हैं । इन दोनों प्रेम काव्यों में प्रेम तत्व का एक उच्च आदर्श स्पष्ट चित्रित हुआ है ।

दोनों गाथाओं में नायकों से अधिक सबल चरित्र नायिकाओं का है । जलक्की और तुबोलार्चा के चरित्रों का यथावत् विकास भी हुआ है । दोनों में भारतीय नारियों के आदर्श का सफल रूप में निर्वाह है । दोनों नायिकाओं का पति प्रेम, विरह यातना सामाजिक लांछना एवं मातृत्व की भावना सब भारतीय वीर नायिकाओं के अनुरूप हैं । दोनों नायिकाओं का स्वाभिमान पतियों के गौरव को नष्ट किये बिना अपने अभिमान की रक्षा करने का प्रयत्न कुटुंबी और समाज के कलंक लगाते परिहास देने से दुखी अस्त्रों का सहन, सत्य ईश्वर तथा पतिदेवों में विश्वास, रखना संतोष के साथ नायकों में के आगमन की स्वीकृति सब, लोक-गाथाओं के स्वाभाविक महत्त्व का निदर्शन है ।

भारतीय आदर्शों का सुन्दर समावेश दोनों लोक गाथाओं में समान रूप से हुआ है ।

सहलेस और आरोमल चेकवर के गीत

आरोमल चेकवर की वीरगाथा मलयालम में सब से प्रधान वीरगाथा मानी जाती है । उनका पुत्तरियंकं सहलेस के चुठोल चोर को पकड़ने के द्वन्द्व युद्ध के समान है । सहलेस जाति का दुस्साध था । राजा के लिए मर मिटना दुस्साधों का धर्म था ।

सहलेस ने राजा के लिए चुठोल चोर से द्वंद्व किया । द्वंद्व में वह बुरी तरह घायल हुआ । तोभी, एक ही लपक में उसने चोर को मार डाला । यह सहलेस का प्रथम द्वन्द्व था । लोगों ने उस वीर की तारीफ की । आज भी सहलेस का नाम वीर मल्लों में लिया जाता है । आज भी सहलेस की पूजा देवता की भांति होती है । सहलेस के नाम से कई गीत प्राप्त हैं । "सहलेस गाथा" जो वीर गाथा है, उनमें मुख्य है ।

सारी दृष्टियों से सहलेस की गाथा आरोमल चेकवर की गाथा की बराबरी करती है । चुठोल चोर से सहलेस का द्वन्द्व और अरिङ्ङोडर से आरोमल चेकवर का द्वन्द्व समान है । दोनों की वीरता एवं जीवन की सफलता समान है ।

दीना-भद्री और चन्तु केनु के कथागीत

दीना-भद्री के कथागीत में, दीना और भद्री दोनों भाई वीर नायक हैं। ये आज मुसहर के देवता माने गये हैं। ये दोनों किसान मज़दूर स्वतंत्रता प्रेमी वीर थे। कनकसिंह नामक ज़मीनदार ने दीना का वध किया। वध करने में दीना की प्रेमिका ने कनक सिंह को सहायता दी। यह बात भद्री को मालूम हुई। उसने उस स्त्री का वध कर डाला। यह जान कर कनक सिंह ने उसको भी ख़तम किया। अंत में दीना-भद्री फिर जीवित हो गये। और कनक सिंह को भी मार डाला।

पुलुनाडन चन्तु और भाई केनु नट्टौलि मेनोन नामक ज़मींदार के अधीन रहने वाले किसान थे। मेनोन का उनपर बड़ा अधिकार था। लेकिन ये दोनों भाई स्वतंत्रता की पुजारी थे। मेनोन किसी न किसी प्रकार दोनों का सत्यानाश करना चाहता था।

चन्तु की पत्नी "मातु" को मेनोन ने प्रलोभित किया। उन्होंने उसे तीन हज़ार रुपये दाम का सोने की करधनी भेंट की। इस पर वह स्त्री चकित हो गयी। वह मेनोन के हाथ में पड गयी। उसकी सहायता से मेनोन ने चन्तु को मार डाला। चन्तु के दो पालतु कुत्ते थे। उन कुत्तों ने केनु के आगमन के समय तक चन्तु के शव की रखवाली की। जब केनु को पता मिला तो उसकी आंख बबूल हो गयी। उसने मातु के बाल पकडे। एक प्रश्न करके नाक काटी। दूसरा प्रश्न करके स्तन काटा। तीसरा प्रश्न करके बाल काटे। इसी प्रकार उसने उस कुलटा स्त्री की हत्या की।

यह बात मेनोन को भी अच्छी नहीं लगी। छल से उसने केनु का भी वध किया।

कुछ दिन बाद भैनोन को केलु और चन्तु की दुर्देवता ने मार डाला। लोक-गीतों में दोनों भाइयों को देवता बनाया गया है। आज भी उनके नाम उत्सव मनाया जाता है। चन्तु-केलु का कोलम [तेय्यम कली में] लगाया जाता है।

दोनों लोक-गाथाएं, चन्तु-केलु और दीना-भद्री समान इतिवृत्त और भाव में समान हैं।

हिन्दी और मलयालम रोमांच कथात्मक लोक-गाथाएं

वीरकथात्मक और प्रेम कथात्मक लोकगाथाओं के बाद रोमांच कथात्मक लोकगाथाएं अधिक ध्यान देने योग्य है। हिन्दी और मलयालम रोमांच कथात्मक लोक गाथाएं उस विभाग में आती हैं, जिसे अंग्रेज़ी में सुपर नाचुरल एलिमेंट कहते हैं। यहाँ रोमांच शब्द थोड़ा अलग अर्थ भी रखता है। वास्तव में यह वह भाव है, जो किसी अद्भुत दृश्य देखने अथवा अद्भुत कार्य करने के कारण उत्पन्न होता है। इसके दोनों पक्ष भी हैं। मनुष्य की कल्पना के परे कोई सुन्दर दृश्य अथवा उदभुत कार्य जैसे घोड़े का उड़ना, पेड़ का बोलना इत्यादि देखकर मन को आनंद प्राप्त होता है। इसके विपरीत भूत-प्रेत-जादू टोना आदि के कार्य देखकर भय भीत भी होता है। ये दोनों तत्व रोमांच तत्व के अंतर्गत आते हैं।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध लोक-काव्य-सोरठी, बिहुला, मलयालम की, मीनिकधप्पाट्ट, पुरुषा देविप्पाट्टु, आदि इस विभाग में आते हैं। इन कथागीतों में, अमानुषिक तत्व अधिक हैं। इन दोनों विभाग के कथा-गीतों में देवी - देवता, भूत - प्रेत, आदि मुख्य स्थान रखते हैं।

जादू मंत्र, टोना-पूजा आदि भी इन में हैं । जब किसी लोक-गाथा की वास्तविक लोक घटना के साथ अन्य रोमांचकारी तत्वों का समावेश हो जाता है, वही रोमांचक लोक गाथा होती है ।

रोमांच कथा संबन्धी लोकगाथाएं मुख्यत: "सत्य" पर आधारित होती है । देवी-देवता, नदी तालाब, पशु-पक्षी सब, सत्य का ही पक्ष लेते हैं । असत्य चाहे कितना भी प्रबल क्यों न हो परन्तु अन्त में उसका पराभाव ही होता है । यद्यपि इन लोकगाथाओं का अन्त आध्यात्मिकता की अन्तिम सीढ़ी पर पहुँच जाता है, अन्त मंगल मय ही होता है । आध्यात्मिकता तो भारतीय.जीवन की चरम स्थिति है ।

सोरठी और पंचवंकाट्टु नीली

सोरठी की कथा मलयालम की लोक गाथाओं के अनुकूल रोमांच कथा पर आधारित है । उसका जन्म स्वर्ग से हुआ है । व्यास पंडित की कुबुद्धि ने उसे गंगा में बहा दिया । गंगा ने उसे मरने से बचाया । केना कुम्हार और उसकी पत्नी ने उसका पालन पोषण किया । बृजभार से उसकी शादी की व्यवस्था हो गयी । उसे कई परीक्षा लेनी पड़ी है । आखिर "सोरठी" की तपस्या एवं चारित्र शुद्धि के कारण सारी टोना-टोटके एवं जाल-इन्द्र जालों से बचकर बृजभार के साथ उसका जीवन सुखमय होता है ।

प्रस्तुत लोकगाथा में आदर्श एवं स्फूर्ति का केन्द्र सोरठी है । उसका जीवन चरित्र अनिवार्य रूप से महत्व पूर्ण है । मलयालम रोमांच कथात्मक गाथा नीलिकथा भी रोमांचकारी तत्व से भरी है । (इस गाथा का दूसरा नाम पंचवंकाट्टु नीली है) एक मंदिर की दासी वहाँ के नंपी[1] को

---

1. नंपी = पुजारी - मन्दिर में पूजा करनेवाला ब्राह्मण ।

अपनी बेटी का पति बनाकर उसकी सारी संपत्ति छीन लेती है । जब सारा धन छिन चुका तो बुढ़िया दासी छमाट को निकाल देती है । दासी की बेटी भी, प्यार में पड़ने के कारण माता बुढ़िया दासी का कहना टाल कर पति के साथ निकल पड़ती है । मंगी के मन में प्रतिशोध की चिनगारी है । वह पत्नी होते हुए भी उस बुढ़िया की बेटी को मार डालता है । "ठन्नियकाडु" नामक जंगल में एकांतता में मंगी ने अपनी पत्नी की हत्या की थी । उस समय वह स्त्री गार्भिन भी थी । मरते समय उसने "कल्लि" पोधा को कसम खाई थी ।

मंगी का मरण भी साँप काटने पर उसी जंगल में हुआ । उस स्त्री की आत्मा ने फिर यक्षिणी बनकर, मंगी की पुनर जनी, चेट्टी का वध किया । इस में भी, रोमांच तत्व है । मरी आत्मा की पुनरजनी, एवं सत्य की विजय आदि यहाँ भी, लोक-गायकों का विषय बन गया है ।

पुन्नादेवी की कथा भी इस प्रकार है । उसने भी, युद्ध में हारते समय अपना पेट खोल कर प्रजा को बाहर लेकर दुश्मन के मुख में फेंक दिया । अपनी वीर-मृत्यु से स्वयं देवता बन गयी । उसकी आत्मा भी यक्षिणी बन बन गयी गीतकारों ने उसको उचित स्थान दिया है ।

आल्हा में जिस प्रकार बेला, सती बन जाती है, उसी प्रकार कन्नडियन की बेटी भी, कुलशेखर को मृत पाकर उस के गले में वरण माल्य सौंपा कर उसी आग में सती हो जाती है । फिर वह चैम्पकक्कुट्टी नामक देवता बन जाती है । "वटुकच्चिममला" में उसका मन्दिर बनवाया गया उस वीर वनिता के नाम आज भी पूजा चलाती है । यह गाथा प्रेमात्मक गाथाओं में अधिक स्थान रखती है ।

मान्निक्क्या की लोक गाथा में मान्निक्क्यो की माँ, गर्भ से मान्निक्क्ये को बाहर लेकर, छाती के हाथ देकर ही सती बन जाती है। कुसुमा लाज और धर्म की रक्षा केलिए तालाब में कूदकर जान देती है।

मलयालम लोक गाथा की मालयम्मा भी इसी रूप में प्राण त्याग कर देती है। उदय गिरि गढ में पीपल-पेड के नीचे आत्माहुती करनेवाली चैक्कवल्ली भी मलयालम वीर नारियों में आती है। इन सारी स्त्रियों के फिर दीया बनने की सूचना गाथा में है।

<u>कण्णाण्डी और जलेछी की गाथाएं</u>

मलयालम लोकगाथा में वीरप्पनरयन की बेटी है कण्णाण्डी। वीरप्पनरयन स्वाभिमानी था। एक विशेष अवसर पर वीरप्पन ने सभी संबन्धी एवं देश के धनाढ्यों को अपने घर की दावत में भाग लेने को निमंत्रण दिया लेकिन वैर और जलन के कारण उसके घर में कोई नहीं गया। इस धृष्टता से रूठकर वीरप्पन अरयन ने, उनके देश से बहनेवाली नदी को बांध बनाकर रोका। उसका उद्देश्य यह था कि दुश्मनों को पानी न मिले। बांध का निर्माण, जितना भी यत्न करने पर भी पूरा नहीं हुआ। पूरा होते होते बांध टूट जाता था। इस का कारण ढूंढने पर कुलदेवता ने अरय राजा को यह निर्देश दिया कि अपनी बेटी को बांध पर सिर काटकर बलि दी जाय तो बांध टिक जाएगी। इस पर राजा बहुत चिन्तित हुए। फिर भी उन्होंने अपनी एक मात्र बेटी से बात कही। तो वह प्रसन्न हो गयी और स्वयं बलि हो जाने को तैयार हो गयी। वह मुस्कुराती हुई बांध पर आ खड़ी हो गयी। उसे बलि देकर भी राजा वीरप्पन ने अपना बदला चुका था।

हिन्दी की जलेछी की कथा भी इस कथा से मिलती जुलती है। जलेछी के पिता भी देश राजा थे। उन्होंने एक गांव में पोखर खुदवाया।

उस पोखरे में पानी नहीं निकला । सौयत्न करने पर भी फायदा नहीं हुआ । कारण ढूंढा तो पुरोहित ने राजा से कहा कि अपनी पुत्री की बलि से पोखर में पानी निकल आयेगा । राजा ने अपनी कन्या को बुलवाया । उसने पोखर में, प्रवेश किया जैसे जैसे उसने पोखर में प्रवेश किया, वैसे वैसे पानी पोखर के भीतर से ऊपर बल बला आया । जलेच्छी उस पानी में डूबती डूबती गयी । पानी ऊपर ऊपर बढ़ता बढ़ता आया । लोकगाथा आज भी जलेच्छी का नाम देवता के रूप में लिया जाता है । कर्माण्डी और जेलेच्छी समान भावधारा और विषय वस्तु की लोक गाथाएं हैं । चाहे मलयालम में हो चाहे हिन्दी में, दोनों लड़कियों की गाथा पढ़कर पाठक आंख पोंछेगे ।

इतिहास प्रधान लोककाव्य

बाबू कुंवरसिंह और इरविक्कुट्टिप्पिल्ला

कुंवरसिंह और इरविक्कुट्टिप्पिल्ला दोनों इतिहास के जीते जागते प्रतीक हैं । कुंवर सिंह, राजशासन के समय के होते हुए भी, विदेशियों के आक्रमण और शासन से देश को निमुक्त करने के प्रयत्न में वीर स्वर्ग पा चुके थे । इरवि देश राजा का मंत्री था । आक्रमणकारियों से लड़ते लड़ते तब भी स्वर्ग सिधार गया ।

कुंवर सिंह भारतीय विद्रोह के प्रधान अधिनायक थे । उनकी वीरता, झांसी की रानी लक्ष्मी बाई नाना साहब आदि से कम न था । अस्सी साल की वृद्धावस्था में ही कुंवर सिंह ने वह पराक्रम दिखलाया, वह भोजपुर सरकार नाम से विदित था । देश की स्वतंत्रता की लड़ाई में उनकी जान

कुरबान कर दी गयी । इरवि कुट्टिटपिल्ला वेणाट् राजा की सेना के नायक एवं मंत्री थे । तिरुमला-नायक नामक पड़ोसी राजा के आक्रमण से अपने राज्य को बचाने की कोशिश में उन्हें भी अपना जान न्योछावर करनी पड़ी । इरवी उस समय पक्का जवान था । उनकी आयु बत्तीस साल की थी ।

लोक-कवियों ने इन दोनों वीरों पर जो कुछ वीरगाथाओं में वर्णित रखा दोनों 'भाव-साम्य' में समान है । एक अर्थ में दोनों वीर, स्वातंत्र्य प्रेमी एवं देश भक्त थे । बाबू कुंवर सिंह के सामने अंग्रेजी सेनापति लीग्रेंड था इरविकुट्टिटपिल्ला के सामने तिरुमल नायिक का सेना पति रामप्पय्यन था । स्वतंत्रता संग्राम में बाबू कुंवरसिंह को पहले अपना एक हाथ, अपनी तलवार से काटकर गंगा में भेंट करना पड़ा । फिर जीवन की तिलांजलि भी दी । इरविकुट्टिटपिल्ला ने अनेकों शत्रु सैनिकों को मार कर, उनकी तलवार को अपना सिर, भेंट दिया ।

बाबू कुंवरसिंह और इरविकुट्टिटपिल्ला दोनों के नाम से रचे गये लोक-काव्यों की ऐतिहासिकता से थोड़ा भी, अंतर नहीं है । आधुनिक लोक गाथाएं होने के कारण घटना और के विषय में गलत फहमी की जगह कम है ।

भारतीय पुन:जागरण के इतिहास में बाबू कुंवर सिंह का नाम अमर है । इसी अर्थ में इरवि कुट्टिटपिल्ला का नाम भी अमोघ है । कुंवरसिंह ने अपने जीवन के संध्याकाल में जो वीरता दिखलाई उसके विरुद्ध, अपने जीवन के अपराह्न में ही [मध्य काल से पूर्व ही] इरवी ने, अन्य वीर लोक-नायकों के

समान, अपनी जान से, खेल खेला । दोनों जीवन गाथाओं में देश स्नेह एवं स्वातंत्र्य भावना की लहर है ।

बाबू कुंवर सिंह और हरिवक्कुट्टिपिल्ला दोनों में वीरता के साथ साथ नीतिमत्ता की थाह भी जम गयी थी । संग्राम में भाग लेने पर उन्होंने क्षत्रियत्व के आदर्श को कभी नहीं छोड़ा । दोनों कुशल सिपाही एवं कुशल सेनापति थे । युद्ध कला तंत्र में भी दोनों निपुण थे । युद्ध कुशलता के कारण एक बार अंग्रेजों को धोखा देकर उनकी आँखों से बच जाने को भी कुंवर सिंह तैयार हो गये । एक दिन गंगा पार करते समय उन्होंने अपनी वीरता भी दिखाई थी । युद्ध नीति में युद्ध धर्म को छोड़ना उन्हें कभी भी पसंद नहीं था ।

बाबू कुंवर सिंह की व्यक्तिगत वीरता को गाथा में - लोक कवि ने रूप दिया है -

"रामा गोली आई, लागल दहिना: बहियारेना
रामा हाथ होइ गइल बेकरवा रेना
रामा जानिकर हाथ बेकरवा रेना
रामा काटिदिहले लेने तरवरवा रेना
रामा कहे ले जे लेबू गंगा बहवा रेना
रामा अधिकर उतना बचनवा रेना
रामा डाल दिहले गंगाजी में बहवा रेना
रामा वीर जगत के दैहे निशानवां रेना
रामा गंगा जीके रहल बजरानवां रेना"

यही श्री॰बाबु कुंवरसिंह के चरित्र की संक्षिप्त झांकी है, जहाँ, हरिवक्कुट्टिपिल्ला को भी देखिए -

अय्यो ! इन्नत्तुरेये प्पोले
अवनिक्किन्नल पार्तालोवरुन्टो
माकुतिक्कालिन्न हरिक्ये प्पोल
मन्न मन्निति मारकनुन्टो
ओठु नन्निनिरन्नुन्ट अय्यन
अनकिन पठेत्तामो हरिक्येताम ?

x x x x x x

केयु मेपुपिरतो हवरे वेट्ट ?
कन्टवर मनुवु मिरन्नातो ?

भाव : हे भगवान इस हरिक्कुट्टिपिल्ला के समान वीर दूसरा कोई इस दुनियाँ में है क्या ? भगवान शिवजी ने इतने महान वीर को और कहीं बनाया है क्या ? इसे मार डालने की शक्ति इस दुष्ट व्यक्ति के मन में कहाँ से आयी ? एक बार उसे जिसने देखा है कैसे काट लेता ?

मधुर नायिकन की यह वाणी हरिक्कुट्टिप्पिल्ला के बारे में है। इन दोनों वीरों की तुलना में इससे अधिक लोक-गायकों की ओर से क्या मदूत रखना है ?

इसी प्रकार हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों में विषय वस्तु में समानता हर कहीं देखी जाती है।

हिन्दी की विविध बोलियों में, स्थानिक महत्व की और देशीय महत्व की कई लोक-गाथाएं प्राप्त हैं। इन सारी गाथाओं की तुलना में मलयालम लोक गाथाएं कम नहीं हैं। इन लोकगाथाओं के चरित्रों में,

मलयालम लोक गाथा के वीर नायक और वीर नारियां, हिन्दी की लोक गाथाओं में प्राप्त वीर, नायक और नायिकाओं से पीछे नहीं । उन सब का जीवन वृत्त और महान कार्यों का विवरण, तुलनात्मक दृष्टि से देना संभव नहीं है । कुछ मुख्य चरित्रों और, कथा वस्तुओं की ओर ध्यान देना मात्र यहां मुमकिन है ।

आगे हिन्दी और मलयालम लोक काव्यों के कला पक्ष एवं भाव पक्ष पर विचार किया जाएगा ।

हिन्दी और मलयालम लोक काव्यों में भाव साम्य

भाव साम्य की दृष्टि से देखने पर ऐसा लगता है कि सृष्टि के प्रत्येक मानव की मूल भावनाएं एक ही है[1] । हिन्दी और मलयालम दोनों भाषाओं के लोक काव्यों के अध्ययन के द्वारा यह तथ्य सिद्ध करना ही हमारा लक्ष्य है । हिन्दी की समस्त बोलियों के लोक काव्यों का संपूर्ण अध्ययन अभी तक किसी ने भी नहीं किया है । मलयालम लोक साहित्य के समस्त पद्य विभाग का अध्ययन भी नियमित रूप से नहीं हुआ है । किसी ने लोक गीतों का अध्ययन किया है तो और किसी ने लोक गाथाओं का परिचय दिया है । दोनों विभागों के समस्त लोक-काव्यों या पद्यविभाग का अध्ययन इस दृष्टि से एक मौलिक, पर कठिन कार्य है । इस लक्ष्य की ओर हमारा यह प्रयत्न इस उपलब्धि को ध्यान में रख कर हुआ है कि भाव साम्य में, इन दोनों का कौन सा संबंध है । एक तो सुदूर दक्षिण की भाषा है तो

---

1. मानव हृदय सर्वत्र एक सा है ।
मेरी सत्यान्वेषण परीक्षाएं : एम॰के॰ गांधी – पृ॰472।

दूसरा उत्तर की भाषा है । एक आर्य भाषा है तो दूसरा द्राविड़ भाषा है । इस अन्तर के रहते हुए भी, दोनों जन विभागों में समान जीवन धारा का साम्य विशेष ध्यान देने योग्य है ।

इस विचार ने हम को इस कार्य की ओर अग्रसर कराया कि हिन्दी की लोक साहित्य विधा के समस्त पद्य विभागको और मलयालम लोक साहित्य विधा के समस्त पद्य विभाग को एक ही स्थान पर लाकर उनपर एक तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करें। यह कार्य बहुत मंगल सारपूर्ण एवं मौलिक कार्य सिद्ध होता है । इस विषय में जितनी भी सामग्रियां मिल सकती हैं, उन सब का हमने आकलन किया ।

इस विषय के बारे में पण्डितों ने जहां जहां अपना अपना मत प्रकट किया है, उन सब का संशोधन भी किया । जितनी सामग्री मिली उन सब का वैज्ञानिक ढंग से विवेचन किया । किसी भी पूर्व विश्वास या रूढ़ि को इस विभाजन संशोधन प्रक्रिया में उसी प्रकार स्वीकार नहीं किया है । आकलित और संशोधित सामग्री का वस्तु-निष्ट ढंग से अध्ययन किया । नये सिरे से उन सब का मूल्यांकन भी किया । नये जीवन मूल्यों के आधार पर सबसे नये परिप्रेक्ष्य में इस अध्ययन को प्रस्तुत करने पर इस तथ्य की ओर अग्रसर करने की प्रेरणा अधिकाधिक एवं उत्तरोत्तर होती रही है कि, मनुष्य चाहे कहीं भी रहेगा वह उस परिस्थिति का गुलाम होता है। हिन्दी की विविध बोलियां बोलने वाले सर्वसाधारण मानव एवं मलयालम बोलने वाली आम जनता दोनों एक ही दिल के प्राणी हैं । दोनों कहां रहते हैं, उन्हें जो कुछ मिलता है उसी पर अपना गुजारा करते हैं । तो भी उनके मानसिक खुराक की ओर देखते समय हम उस परम सत्य के पास पहुंचते हैं कि - समान, भावना की चीज़ें वे समान रुचि से ढूंढ लेते हैं । इस कारण से हम बता सकते है

कि सृष्टि के प्रत्येक मानव की मूल भावनाएं एक ही है[1]। उनके हृदय के दुःख, सुख, आशा-निराशा प्रेम-ममता, क्रोध-घृणा आदि की भावनाएं आलोड़ित और विलोड़ित होती हैं। समता या समानता की ये प्रवृत्तियां साहित्य में परंपरा से संचरित होती आ रही है। ये प्रवृत्तियां लोक-काव्यों में और भी अधिक मुखरित होती रही हैं। यही कारण है कि सभी भाषाओं के लोक काव्यों में मूल भावों की समानता पायी जाती है[2]।

यदि हम मलयालम और हिन्दी की सभी के लोक काव्यों की भाषा, छन्द, शैली आदि के बाह्य रूपों को हटाकर उनकी आन्तरिक भावधाराओं का तुलनात्मक एवं समन्वयात्मक अध्ययन करते हैं तो हमें उनके तल में सामूहिक चेतना और प्रेरणा दृष्टि गोचर होती है जो कि प्रत्येक मानव के भावों और क्रिया कलापों में अभिव्यक्त है। विशेष परिस्थितियों के कारण कुछ विशेष स्थानों में एक किंचित भाव में अन्तर आ जाता है जिस में उनकी अपनी भौगोलिक और सामाजिक विशेषताएं सम्मिलित रहती हैं। भाव साम्य भी राष्ट्रीयता की आधार शिला है। इसी से जनता में प्रेम ऐक्य भातृत्व एवं गौरबोध की भावनाएं भी बढ़ती हैं। इस दृष्टि से इस अध्यायमें हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक महत्वों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। इस कार्य में, विषयगत वस्तुगत, भौगोलिक, सामाजिक धार्मिक, ऐतिहासिक एवं राजनैतिक घटनाओं पर भी विचार करना पड़ता है। पहले लोक गीतों का अध्ययन

---

1. कबीर : डॉ॰ हज़ारी प्रसाद द्विवेदी - पृ॰40
2. यदि सब देशों के लोक-गीत संकलित किये जा सकें और उनका तुलनात्मक अध्ययन हो तो यह प्रत्यक्ष होगा कि उनमें एक ही मन और एक ही हृदय छिपा है जो मनुष्य मात्र में समान है।
   - रवीन्द्र नाथ ठाकुर - जनमन - भूमिका - पृ॰416

मुख्य है कि विषय एवं वस्तु परक विभाजन दोनों विभागों के लोक गीतों में पहले ही हुआ है । विषय की सुविधा और स्पष्टता इस कारण दोनों विभागों में अधिक प्राप्त हुई है । इस प्रकार इन दोनों भाषाओं के गीतों में विषय, भाव और रूप की समानता स्पष्ट होती है ।

तुलना के समय इन दोनों भाषाओं के लोक-काव्यों की तुलना में कुछ वैषम्य भी मालूम पड़ता है जो मुख्यतया क्षेत्र गत है । मलयालम भाषा कम वर्गमील क्षेत्र की भाषा है । यह दो करोड़ से कम जनता की भाषा है । तो भी हमने देखा है कि इस भाषा का महत्व बहुत प्राचीन काल से संगत है । भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, एवं आर्थिक दृष्टि से भी इस क्षेत्र का अपना महत्व है । साक्षरता एवं सांस्कृतिक स्तरों में भी इस देश की विशिष्टता है । आबादी का महत्व सबसे अधिक ध्यान देने योग्य है । तुलना के समय इस कार्य को भी प्रधानता देनी पड़ती है कि मलयालम की भिन्न बोलियाँ प्राप्त नहीं है । इस की उत्तरी, मध्य, और दक्षिणी सीमाएं हैं । उसी प्रकार पश्चिमी, मध्य और पूर्व, सीमाएं भी भौगोलिक दृष्टि से प्राप्त है । इस दृष्टि से केरल की भाषा को, उत्तरी, केरली, दक्षिणी केरली, पश्चिमी केरली, पूर्व केरली, एवं मध्य केरली नाम भी दिया जा सकता है । मध्य केरली को आदर्श केरली नाम भी दे सकता है । लोक-साहित्य की दृष्टि से वटक्कन [उत्तरी] तेक्कन [दक्षिणी] किषक्कन[पूर्वी] पटिञ्ञारन [पश्चिमी] इटनाटन [मध्य] - नाम भी भौगोलिक परिस्थिति के आधार पर दिया जा सकता है । लोक काव्यों के संपादकों ने इस प्रकार वर्गीकरण करने का प्रयत्न भी किया है । पश्चिमी भूमि, समुद्र तट से संबन्ध रखने वाली है । इस कारण उस भूभाग को, तीर भूमि [तट-प्रदेश] नाम दिया गया है । पूर्वी भाग, जंगल से संबंद्ध रखता है इस भूभाग को मलनाट [जंगली स्थान] नाम दिया है । मध्य की जमीन को इटनाट [मध्य देश] नाम भी दिया गया है । इन तीनों विभाजन को दक्षिण से उत्तर तक समान रूप से ले सकता है । जन जीवन भी, उत्तर दक्षिण के भेदभाव के बिना प्राप्त है ।

मलनाट या सबसे पूर्व के भागों में सह्याद्रि [पश्चिमी घटम] की तराई है। इसी जंगल और जंगली जीवन का यहाँ महत्त्व रहा है। केरल के आदि वासी, जन जिन्हें हम "गिरिजन" नाम देकर पुकारते हैं, सब यहीं पर बसे हैं। पणिय, अडियर, तोडर, नायिक्कर, चोलनायिक्कर, कुरुमर, काणिक्कार, अरयर, आदि भिन्न जाति के लोग यहाँ रहते है। उन की जनगणना ठीक ठीक अभी तक नहीं हुई है। यद्यपि बडी संख्या में ये लोग जंगलमों रहते हैं। इन लोगों की भाषा का अपना महत्त्व है।

ये मलयालम बोलते हैं, तोभी असल में उनकी भाषा एक प्रकार की खिचडी है। आदि भाषा की कई मूल रेखाएं उन में प्राप्त हैं। उनकागीत, जो लोक साहित्य विधा का धरोधर है। इस प्रबन्ध में आदि वासियों के गीतों का उपयोग भी यथा संभव हुआ है। इन गीतों का आकलन पूर्णरूप से नहीं हुआ है। उत्तर भारत की भिन्न बोलियों में प्राप्त आदिवासियों के गीतों की तुलना, केरल के आदिवासियों के गीतों से किया जाय तो अचरज की खनियां खोली जाएगी। आज का सभ्य कहने वाला मानव उन की भाषा में, कहीं कहीं छिपा रहता है, यह तत्व जरूर निकल जाएगा। केवल सोंठे शिकार के गीत मात्र इस विषय में प्राप्त है। मध्य केरल, जो वटनाट बताया गया, के गीत ही अधिक मात्रा में पाया है। उन गीतों की संख्या, हजारों की तादाद में है। उन में, कथा गीतों की तुलना मात्र इस अध्याय में हुई है। उन गीतों में, केरल का इतिहास गूँज उठता है। पीढ़ीगत जन जीवन की झांकी मात्र से उसे छोड दिया है। लोक गीतों की तुलना में भी भिन्न, विधाओं का, अध्ययन हुआ है। उनकी सूचनाएं मात्र देकर छोड दिया है। वडनाडन पाट्टु विधाओं से बढ कर, अधिकांश वडक्कन एवं तेक्कन पाट्टु, मध्य केरल के जन जीवन से संबन्ध रखने वाले हैं।

पश्चिमी सीमा तट के गीतों का आकलन बहुत कम हुआ है। इतिहास से संबन्ध रखनेवाले गीतों से इस तीर भूमि की भाषा, और यहाँ के गीत, सम्मिलित है। शहरों और राजधानियों का संबन्ध भी इन गीतों से है। पय्यन्नूर पाट्टु जैसे कथा गीतों में इस तीरवासी जन जीवन का प्रभाव सम्मिलित है।

समस्त केरल की दृष्टि से ये सारे के सारे गीत, चाहे कथा गीत हो, या लघुगीत सब उत्तर की विभिन्न बोलियों में प्राप्त समान गीतों की बराबरी करते हैं।

हिन्दी और मलयालम लोक-गाथाओं में सांस्कृतिक महत्व

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के मूल में प्रधान रूप से वीर प्रवृत्तियों का समावेश विद्यमान है। हिन्दी और मलयालम लोक काव्यों के समग्र अध्ययन से यह बात स्पष्ट रूप से, सिद्ध होती है। केरल की लोक गाथाओं के अध्ययन के प्रसंग पर यह बात स्पष्ट की थी। वीरकथात्मक, प्रेमकथात्मक एवं रोमांच कथात्मक लोक-काव्यों में समान रूप से वीर प्रवृत्तियों का महत्व अधिक दृष्टिगत है। वीरता का यहाँ व्यापक अर्थ देना अनिवार्य है। इसमें केवल युद्ध वीरता नहीं। जीवन की प्रत्येक जटिल परिस्थिति का साहस के साथ सामना करना भी वीरता है। हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं के प्रत्येक नायक नायिका इस कार्य में सफल हो जाते हैं, इसलिए हम यह बात स्पष्ट बता सकते हैं कि भारतीय सभ्यता का मूल तत्व ही वीरत्व है जिसका समावेश हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों में समान रूप से स्पष्ट होता है।

इन दोनों गाथाओं के लोक-गीत लोक-गाथा दोनों विधाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि ये गाथाएं प्रधानतः मध्ययुगीन सभ्यता एवं संस्कृति से सम्बन्ध रखती हैं। मध्य युग, राजनैतिक एवं धार्मिक क्षेत्र में भी, उथल-पुथल का समय था। उस समय देश में विदेशियों का आगमन हुआ। नए राज्यों की स्थापना हुई, पूर्व कई महान राज्यों उजाड हुए। इस राजकीय अराजकता के समय भी लोक-जीवन और ग्रामीण स्वत्व शान्तिमय रहा। राजा राजा से लड़ते थे। सेना सेना से लड़ती थी। प्रदेशों और प्रांतों का निपटारा होता था, परन्तु गांवों का जीवन वैसे ही चलने लगा। जो अधिकार में आता था, उसकी लाठी और उसकी भैंस यह स्थिति थी। उन ग्रामीणों की आंतरिक चिन्ताधारा वैसी ही चली। उस समय में भी वे वीराराधना में लीन थे। देवी देवताओं के पूजा-पाठ में निरत थे।

मध्य कालीन ग्राम जीवन, धार्मिक विश्वासों में हुए हेर-फेर से परिचित था। ईसाइयों का आगमन, मुसलमान धार्मिक विचारों का समावेश ये सब हिन्दु जीवन में थोडा परिवर्तन लाने लगे। तोभी हिन्दु जीवन का अपना महत्व रहा। ग्रामीण, शैव, वैष्णव, शाक्त भिन्नता तब भी वैसी ही रही। कहीं कहीं नाथ-धर्म का चिह्न भी परिलक्षित होने लगा। ये सब अगर उत्तर की बातें हैं तो दक्षिण भारत की स्थिति थोडी भिन्न थी। वहां ईसाई धर्म की प्रवृद्धि होती रही। नयी विचार प्रक्रियाएं उभरने लगी। उत्तर में वैष्णव, शैव, शाक्तेय, नाथ, पंथी सब एक ही हैन्दव धर्म के भिन्न रूप थे, जहां इस्लाम धर्म का पदार्पण नयी चिन्ता धारा के आविर्भाव का कारण बना। तुलसी, कबीर जैसे महान कवियों के निर्माण का कार्य इस सांस्कारिक उत्थान ने किया। केरल में भी नवजागरण का चिह्न मिला। एषुत्तच्छन जैसे महान कवि का जन्म इसी काल-युग की देन रहे। लेकिन दोनों समाजों में, लोक-जीवन एक अन्य धारा को बनाते, बनाते चला। लोक गाथाएं उस का समर्थन करती है लोकगाथाओं में युद्ध, संघर्ष, मतमतान्तर

आदियों का चित्र उपस्थित है । परन्तु सभी में एक निरंतर एकात्मकता है । सब में समान रूप से, सत्यं, शिवं, सुन्दरम का समावेश पाया जाता है । खल-प्रवृत्तियों का कितना प्राबल्य उनमें चित्रित किया गया हो, परन्तु अन्त में विजय उसी की होती है जो मानवता के चिरन्तन सत्य और आदर्श केलिए हुआ हैं । उस सत्य और उस आदर्श का आधार भारतीय संस्कृति ही है ।

भारतीय संस्कृति की मूल भावना में आध्यात्मिक जीवन को श्रेष्ठता मिली है । हिन्दी और मलयालम लोक काव्यों में इस मूल भावना की प्रसाद आस्था प्रदर्शित की गयी है । लोक-गाथाओं के नायक और नायिकाएं यही धर्म ध्वजा को लेकर - आदर्श को चरितार्थ करने की इच्छा से आगे बढ़ते हैं । वे कभी कभी तीव्र प्रेमी होते हैं तो भी मर्यादा की सीमा को कभी नहीं लांघते । कुछ लोक गाथाओं के नायक देवी कृपा से पूर्ण हैं तो भी, मानवोचित प्रवृत्तियों से दूर नहीं । यहां एक बात ध्यान देने योग्य है, जो - पाश्चात्य विचार धारा की भिन्नता है । पाश्चात्य लोक गाथाओं के नायकों को प्रिमिटीव कल्चर [आदिम संस्कृति] का बताया गया है ।[1] यहां भारतीय विचार धारा के अनुरूप नायक और नायिकाएं सुसंस्कृत है । हिन्दी लोक गाथाओं के अधिकांश नायक अवतार -बताए गये है, जहां मलयालम लोक-गाथाओं के अधिकांश नायक साधारण मनुष्य हैं जिनमें शारीरिक बल और वीरता अधिक दिखाई पड़ती है । लेकिन दोनों विभागों की लोक-गाथाओं के नायक समाज में सुव्यवस्था एवं सामंजस्य निर्माण करने केलिए समान रूप से तुले हुए हैं ।

1. Prewitive Culture in Western Ballads. A.G. Bose, p.144 (1960)

67. हिन्दी लोक गाथाओं में चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का पता अधिक चलता है । उस के विकास में नायक - नायिकाओं की देन का चित्र भी पाया जाता है मानव की स्वाभाविक चित्त प्रवृत्तियाँ उनका धर्माचरण उनका सदाचार उनकी ईर्ष्या एवं कलह के जीवन का स्वाभाविक चित्रण हुआ है ।

हिन्दी लोक-काव्यों में ब्राह्मण जाति का स्थान अनिवार्य है । कुल पुरोहित के रूप में उनका चित्रण अधिक हुआ है । पूजा-पाठ, दान-दक्षिणा तथा संस्कारों का संचालन करना ही उनका मुख्य ध्येय है । मलयालम लोक-काव्यों में इस जाति-महत्व की प्रधानता नहीं दी गयी है । दोनों की समाजिक व्यवस्था इस का कारण बनती है । हिन्दी लोक-काव्यों में ब्राह्मण सुसंस्कृत एवं लोक रंजक है । केवल "सोरठी" के व्यास पण्डित, एवं बिहुला के पिजाहरी ब्राह्मण ईर्ष्यालु एवं कपट मुख दिखानेवाले हैं । मलयालम लोक गाथा में "चेपुतिरी" अगर आया है तो वह सुखलोलुप एवं कामी दिखाई देता है । लोक-कल्याणकारी प्रवृत्तियों से उनका संबन्ध कम है । यहाँ क्षत्रिय ही - वीर गाथा में अधिक महत्व रखते हैं । निम्न जाति के वीर लोगों के नायक भी, इस ओर अधिक ध्यान रखने वाले हैं । वैश्यों के जीवन से संबन्ध रखने वाली लोक-गाथाएं भी हिन्दी गाथाओं के बीच प्राप्त है । शोभा नयका बनजारा" उसका उदाहरण है । इन सब के अतिरिक्त, हिन्दी और मलयालम लोक गाथाओं में ध्यान से दृष्टि डालने पर यह सत्य, निश्चित रूप में स्पष्ट हो जाएगा कि प्राय: समस्त लोक-काव्य समाज के निम्न वर्ग में प्रचलित हैं । अतएव, शूद्र और अंत्यज [हरिजन, चमार, दुसाध] के जीवन का व्यापक चित्रण उत्तर की लोक गाथाओं में अधिक मिलता है । केरल की लोक गाथाओं में भी यही स्थिति है । इस कारण से यह स्पष्ट है कि लोक गाथा चाहे उत्तर, भारत में हो या दक्षिण भारत में हो, वह निम्न जाति के लोगों का साहित्य है । उनके जीवन वृत्त की रेखा है ।

निम्न जाति के लोगों के जीवन का वर्णन इसलिए अधिक आया है कि वे अधिकांश रूप से सेवाकार्य में लीन थे । उनका जीवन दूसरों केलिए था । उत्तर लोक गाथाओं में शूद्रों के जीवन का महत्व अधिक व्यापक रूप में वर्णित भी है । नाई, कहार, चमार, मल्लाह, धोबी, दुसाध तथा अहीर आदि निम्न जाति के लोग इस में अधिक आते हैं, ये चातुर वर्ण व्यवस्था के अनुसार निम्न विभाग के हैं । केरल की लोक गाथाओं में ऐतिहासिक लोक गाथाओं को छोड़कर बाकी सब निम्न जाति के वीर लोगों के जीवन वृत्त से, संबन्ध है ।

दोनों विभागों के लोक-काव्यों का समान रूप से इस कार्य में महत्व है कि सामाजिक संस्कारों का मनोरम चित्रण दोनों विभागों के लोक-काव्यों में प्राप्त है । जन्म, विवाह आदि का वर्णन इस का उदाहरण है । लेकिन वीर काव्यों में, विवाह संस्कार का महत्व ही अधिक है जिसके कारण ही युद्ध होता है ।

विवाह संस्कार संबन्धी वर्णन जितना महत्व देकर उत्तर के लोक काव्यों में वर्णित है उतना महत्व दक्षिण के लोक काव्यों में प्राप्त नहीं है । उत्तरी भारत में विवाह की जो प्रथाएं प्रचलित है उनका सांगोपांग वर्णन उत्तरी लोक-गाथाओं में भी प्राप्त है । इन लोक गाथाओं में, वर देखना, फलदान चढ़ना, तिलक चढ़ाना, बरात की धूम-धाम से तैयारी करना, कन्या पक्ष की ओर बरात केलिए तथा दहेज का भर पूर प्रबन्ध करना आदि वर्णित है । इस के पश्चात बरात की अगुवानी, द्वारपूजा तथा लग्न मंडप में विवाह का विधिवत् वर्णन मिलता है । आल्हा के विवाह में, बारात की तैयारी ऐसी हो रही है, जैसे रणक्षेत्र में सब जा रहे हैं -

चलल अगराजी परबतिया, परबत केलाकर बांधे चले तरवार
चलल अंगाली, अंगा के लोहन में बड चंडाल,
चलल मर हट्टा, दक्खिन के पक्का गोगो बोला आया
नौ सौ तोप चलल सरकारी मांगी जोते तेरह हजार
बावन गाड़ी पथरी लादल तिरपन गाड़ी बारूद
बत्तीस गाड़ी सीसा लद गेल जिन्ह के लगे लदला तरवार
एक कलेमा एक डेबा पर चढ़के लाख असवार ।

इस प्रकार वर्णित है । इससे हम समझ सकते हैं कि वीरगाथाओं में बारात की सज-धज इसी प्रकार की है । विवाह मंडप में भी युद्ध होना अनिवार्य है । अन्य लोक गाथाओं में विवाह का शांति एवं सौजन्य पूर्ण वर्णन मिलता है ।

दहेज की प्रथा भी, उत्तर की लोक-गाथाओं में अधिक स्पष्ट है :-

तीन सौ पचासी गाउँवा तिलक के चढ़ाई
बारह सौ घोड़वा देई बहिनी के दहेज,
पाँच सौ हथिया दिहलीं हंकवाई
कह लीं आज बहिनियाँ के दिह से कम पे नाहीं जाईं[1] ।

उस समय लोक जीवन, सुसंपन्न एवं सौभाग्य मय था इसलिए बहिन के विवाह में हाथी, घोड़ा, गाय देने में था । केरल के लोक काव्यों में भी विवाह संबन्धी कई वर्णन मिलते हैं । मौलिक जीवन के सुचि स्तरों का वर्णन और युवतियों के भी, चलते समय हथियार अपने साथ सुरक्षित रखने का वर्णन मलयालम लोक काव्यों में भी प्राप्त है । तटकान पाट्टु में उण्णियार्चा का वर्णन :-

---

1. भोजपुरी लोक गाथा - डॉ॰ सत्यव्रत सिन्हा - पृ॰212

चन्दन कण्णिलम्टे यरिके वेन्नु
चन्दन मुरलि कुरि वरन्नु
कण्णाडि नोक्कि त्तिलकं तोट्टु
पीलिमित्तकमुडि केट्टिवेच्चु
अ जर्न कोन्टक्ल कण्णेकुत्ती
कस्तूरि कलमुकुळ पुरुन्नुम्टे
मेत्र्याभरण पेट्टितुरन्नु वेच्चु
पक्कुळोडि वन्न पट्टु
पञ्चोलप्पट्टु पुलियुं तीर्ते
पूक्कुलञ्जोरिंवे च्चुलुक्कुन्नुम्टे
पोन तोड पेठुर, चमपुन्नुम्टे
....
उरूमियेटुत्तु अरयिल चुट्टि ।

यहाँ भी, दारिद्रय का वर्णन कहीं भी नहीं मिलता । लोगों का रहन सहन, श्रृंगार, सज्जा, एवं भोजन इत्यादि बड़े सुरुचि पूर्ण ढंग का है । लोक गाथा के प्रमुख चरित्र अधिकांश रूप में विशाल महलों, अट्टालिकाओं में निवास करते हैं, सहस्रों दास दासियों से घिरे रहते हैं सुन्दर से वस्त्र पहनते हैं, तथा छप्पन प्रकार के व्यंजनों का भोजन करते हैं । वस्तुतः हमारे देश का लोक जीवन पुरातन काल से समृद्ध रहा है । चाहे उण्णियार्चा, चाहे आरोमल चेकवर, चाहे आल्हा, या लोरठी, कोई भी हो, उत्कृष्ट वस्त्राभूषण उत्कृष्ट भोज्यपदार्थ का वर्णन प्रायः सभी ग्रन्थों में मिलता है । लेकिन किसी उत्सव के देखने जाते समय साट-आभूषणों के बाद, तीखी तलवार (उरूमी) को भी, अपनी कमर में बांध कर चलती एक युवती का चित्र, न उत्तर की समस्त लोक गाथा में प्राप्त है, न अन्य दक्षिणी प्रांत में भी ।

सोरठी की लोकगाथा में कुजभार की स्त्री, हवेन्ती का श्रृंगार वर्णन भी देखिए :-

हेवन्ती सिंगार करती बढी,
पहने पायल पाव जेवरा,
डंड जोरे दखिन के चीर,
चोली बंका के पहन नारी,
कान में कुंडल, नाक में बेसर
सोनन के बन्हनिया पेनहतारी
बाँह में बाजु बन्द, बाँधे नारी
नग के जड़वल अँगूठी पेन्ह ।
सोरहों सिंगार बत्तीसों अभरन कइली, रेनु की ।

आल्हा की लोक गाथा में - "सोनवाँ" का श्रृंगार भी देखिए -

खुलल पेटारा अधठा के मन्ह के सार दे था लगाय,
पेनहल घाघरा पच्छिम के मखमल गोट चढाय,
चोलिया पोन्हे मुलक के जेह में बावन बंद लगाय,
पोरे पोरे अँगूठी, पछिमल और मारे चुनरिया के झकझार
सोने नगीना कनगरिया में जिन्ह के हीरा चमके दांत,
लाल लाल के मींटीका है लिलार में लेली लगाय ।
जूड़ा खुल गइल पीठन पर जैसे लोटे करियवा नाग
काठ दरपनी मुँह देखे सोन वाँ अपने मन करे गुमान ।

हिन्दी लोक गाथाओं की नायिकाएं, हेवन्ती और सोनवा दखिन की चीर और मुलक की चोली ही पहनती हैं तो दक्षिण की, नायिका उण्णियार्चा, मखमल के जगह, नारियल के पेड के हरेपत्ते की गाठ-हरी, साडी पहनती है ।

उत्तर की नायिकाओं के प्रमुख आभूषणों में चन्द्र हार, मांगटीका, बाजू बन्द, पाय जेब, नाक में कील, [नक बेसर] अंगूठी, इत्यादि का वर्णन मिलता है । दक्षिण की नायिका का - उनकी भी एक आभूषण का स्थान रखता है । लोकगाथाओं में अधिकांश रूप में निरामिष भोजन का वर्णन है । नैमित्तिक भोजन में दोनों क्षेत्रों में कोई कमी देखा नहीं जाती । घी, दूध, दही, और मिठाई इत्यादि का तो बाहुल्य है । भोजन के साथ साथ पान, तंबाकू, फरशी इत्यादि का भी वर्णन पाया जाता है ।

मदिरा और मांस का उत्तरी लोक-गाथाओं में कम स्थान है । लोरिक में एक जगह और नयकेस में दूसरी जगह भी इसका उल्लेख है । केरल की लोक गाथा में भी बहुत कम प्रसंगों पर इसका चित्रण मिलता है ।

शृंगार वर्णन दोनों भाषाओं की लोक-गाथाओं में समान रूप से पाया जाता है । विलास-चित्रों का समावेश बीच बीच में पड़ता है । असभ्य जीवन का चित्र भी कहीं कहीं मिलता है ।

शृंगार वर्णन दोनों भाषाओं की लोक-गाथाओं में समान रूप से पाया जाता है । विलास चित्रों का समावेश बीच बीच में पड़ता है । असभ्य जीवन का चित्र भी कहीं कहीं मिलता है ।

इन लोक गाथाओं के अध्ययन से, हम, उनकी सांस्कृतिक पक्ष पर इतना कह सकते हैं कि किसी भी देश को मूल रूप में समझना हो तो वहां के लोक जीवन से बिना परिचित हुए, उस देश की सांस्कृतिक चेतना को हम नहीं समझ सकते । हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों के अध्ययन से यही स्पष्ट होता है कि भारतीय जीवन का आदर्श एवं भव्य चित्र, दोनों भाषाओं में समान स्वभाव से पाया है ।

हिन्दी और मलयालम लोक गाथा में मानवेतर तत्व

हिन्दी की लोक गाथाओं में अमानव तत्व तालाब, पहाड़, वन, पशु-पक्षी, आदि सीधे नायकों के जीवन से संबन्ध रखते हैं। कोई भी वस्तु जड़ नहीं चित्रित की गई है अपितु सभी गतिमान है और कथानक में प्रमुख स्थान भी रखते हैं। वस्तुत: इन लोक गाथाओं में अमानव तत्व का प्रधान स्थान दिखलाया गया है। भारत में यह परम्परा अति प्राचीन और व्यापक है। लोक गाथाकारों ने और संभव है कभी कभी गायकों ने भी इन तत्वों के अनुसार नये पंक्तियाँ जोड़ दी भी हो।

मलयालम लोक गाथा में भी अमानवतत्व सामान्यत: मिलता है। देवी देवता, पक्षी, मृग आदि इन लोक गाथाओं में भी नायक नायिकाओं की सहायता में प्रकट होते हैं।

हिन्दी की समस्त लोक-गाथाओं में गंगा, नदी सक्रिय रूप में नायक नायिकाओं की सहायता करती हैं। "सोरठी" की गाथा में सोरठी को व्यास पंडित गंगा में फेंका देता है तो भी गंगा उसे डूबने से बचाती है। बिहुला की लोक गाथा में बिहुला गंगा में डूबना चाहती है, परन्तु गंगा उसे डूबने नहीं देती तथा उस के सम्मुख प्रकट होकर उस के दु:ख का निवारण करती है।

मलयालम लोक-गाथा में, रात को उण्णियार्चा कुलदेवता को सपने में देखती है। इलिम्मलरकाव मन्दिर की देवी उसे सपने में जगाकर आगे आनेवाली आपतीका पता देती है। तच्चोलि ओतेनन को भी अम्मा देवी का सपना होता है। उसकी दिये गये रक्षा बंधन उससे छूट जाने पर वह अशक्त बन जाता है। मरने से उसे कोई बचा नहीं सकता है। हिन्दी लोक-काव्य भरथरी में वनदेवी उसकी सहायता करती है। उसे हिंस्र पशुओं से बचाती है।

वनदेवी हंस का रूप धर कर उसे पीठ पर बिठलाकर पिंगला के यहाँ पहुँचाती है। शोभा नयका नामक लोक गाथा में हंस हंसिनी शोभा नयका की सहायता करती है। वे शोभानयका को उस रानी के यहाँ पहुँचाती है।

आल्हा की लोक-गाथा में बेंदुला घोड़ा का सुन्दर वर्णन है। बेन्दुला घोड़ा आकाश मार्ग से भी उड़ता है और युद्ध में उदल को विपत्तियों से बचाता है। इस प्रकार विजयमल की लोकगाथा में बिछना बछड़ा [घोड़ा] विजयमल की सहायता करता है। विजयमल की प्रेमिका तिलकी का मिलन वही कराता है। इसी प्रकार केकड़ा, रेवा मछली आदि का भी उल्लेख है।

इस अध्ययन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर भी पहुँच सकते हैं कि संसार की सभी भाषाओं में अमानव तत्व का समावेश है। इसका मुख्य कारण यह है कि प्राचीन युग में विज्ञान की इतनी उन्नति नहीं हो पाई थी। इस कारण मानव मन में इस प्रकार के विश्वासों का जड़ और भी गहराई में पकड़ गया था। संसार की घटनाओं की व्याख्या आज के समान उन दिनों में होती नहीं थीं।

प्रकृति के प्रत्येक अवयव का मानवीकरण संस्कृति की उच्चतम अवस्था का द्योतक है। कुछ विद्वानों का यह कथन कि लोक साहित्य में अबुद्धिवाद रहता है हम उस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकते। यदि हम सम्यक एवं भावपूर्ण दृष्टि से इन लोक गाथाओं पर विचार करें तो हमें स्पष्ट होगा कि इनमें देश की संस्कृति देश की आकांक्षाएं ललित भावनाओं का अनुपम एवं

---

1. सी॰एम॰ टानी – दी ओशन आफ स्टोरी-वाम – पृ॰25 [मैजिकल आर्टिकिल्स – मोटिफ इन फोकलोर]

आदर्श चित्र उपस्थित किया गया है । सृष्टि के गूढ़ रहस्य एवं समाज हृदय की सूक्ष्म भावनाओं को सीधी एवं सरल वाणी में निश्छल गायकों ने हमारे सम्मुख उपस्थित किया है । लोक-काव्यों में सत्य एक मात्र सत्य अन्य सभी बातों से ऊपर उठता है ।

ऊपर के विवरणों से यह स्पष्ट है कि लोक गाथाएं देश की संस्कृति एवं सभ्यता के अग्रदूत है । इन से हम देश की विगत, ऐतिहासिक धार्मिक सामाजिक भौगोलिक एवं राजनैतिक अवस्था का परिचय प्राप्त कर सकते हैं । यद्यपि इनकी कथा पुरानी होती है, परन्तु, इनमें इतनी नवचेतना भरी है कि ये वर्तमान युग को भी, कर्मशीलता और आनंदमय आदर्श जीवन का संदेश देती है ।

आज के संक्रमण युग में लोक गाथाएं विलुप्त होती जा रही है । इनका संग्रह कार्य अति क्लिष्ट कार्य बन गया है । लोक काव्यों का अध्ययन तभी सरल कार्य बन जाएगा जब उसे कोई संस्था अपना ध्येय मान ले ।

लोक-काव्यों में कलापक्ष - हिन्दी और मलयालम

साहित्यिक महत्व

लोक-गाथाओं की प्रमुख विशेषता उसकी वर्णनात्मकता है । उसके साथ साथ गेयता भी है । भाषा गत लालित्य ही इस गेयता का कारण बनता है । लोक गाथाएं मौखिक परम्परा की अनुगामी है । इस कारण इन में साहित्य के महत्व का प्रश्न नहीं उठता । साधारणतः ये ग्रामीण जनता की संपत्ति होती हैं । इस कारण साहित्य का महत्व इस में गौण

रहा करता है । ग्रामीण जनता के सामने, छन्द, अलंकार, रस आदि का कोई स्थान नहीं है । लोकगाथाओं के गायक घटनाओं का वर्णन करते है । लोक गाथाओं के गायक, घटनाओं का वर्णन करते हैं । उनके वर्णन में नायक अथवा नायिकाओं का सांगोपांग जीवन रहता है । इसलिए वे द्रुतगति से तथा अत्यन्त विस्तार के साथ घटनाओं का वर्णन करते हैं । लोकगाथाओं में जीवन की समस्त घटना वर्णित है । इस में क्रम बद्ध कथानक का सिलसिला भी रहता है । गायक को यही चिन्ता रहती है कि कहीं भी कोई घटना अथवा कथानक छूटने न पाये । अतएव वह धारा प्रवाह रूप में वर्णन करना चाहता है । लोक गाथा के चरित्र को यदि दु:ख मिल रहा है तो गायक का स्वर करुणा से परिपूर्ण हो जाएगा, यदि वह युद्ध स्थल में है तो उस के स्वर में वीरत्व का ओज आ जाता है । इन्हीं मार्मिक एवं सुखद अनुभूतियों के फलस्वरूप लोक-गाथाओं में अनायास ही अलंकारों एवं रस का परिपाक देखने को मिल जाता है । संसार की सभी लोक गाथाओं का यह गुण हिन्दी लोक गाथाओं और मलयालम लोक गाथाओं में समान प्रसंगों पर समान रूप से प्राप्त है ।

लोक-गाथाओं में भी नव रसों का समावेश है । लेकिन तीन रसों का अधिक महत्व रहा है । अलंकृत काव्य और लोक-गाथाओं मुख्य अन्तर यह माना जा सकता है । वीर श्रृंगार एवं करुणा - ये तीन मुख्य रस हैं । अन्य रसों का कम उदाहरण प्राप्त है ।

हिन्दी और मलयालम लोक-गाथाओं का रंगीन वर्णन है । वीर रस का एक चित्र देखिए :-

फांद अछैठा पर चढ़ि गइल गंगा तीर पहुँचाय

पड़ल लड़ाई है छोटक से

तड तड तेगा बोले उन्ह के छटर छटर तर धार

जैसे छेरियन में हुंडा पढ़ि गइल वैसे पलटन में पड़ल रूदन बुकुव

जिन्हके टंगरी ओ बीगे से भ चूर चूर होइ जाय

मस्तक ओर हाथी के जिन्हके डोंगा चलल बहाय

थापट उंटन के धार टांग चित हो जाय

मया लाख पलटन कटि गइल छोटक के

जोलक मारे छोटक के सिवा बुबखण्ड होय जाय

भागत तिलकी छोटक के राजा इन्दर मन के दरबार

अठिन लंका ब बध उदल के कटि बदल मयदान ।।

लोरिक की वीरता का वर्णन -

एक बेरी छरकल उहवां लोरिकवा खिसिये बाय,

छरिकी के उहवां लोरिकवा तेगवा दिहलस घुमाय

भोसो फउदिया मुड़वा काटी दिहलस गिराय

जैसे त काटे य दादा खेती लोग किसान

तैसे त कटता फौदिया लोरिकवा मनि ये यार

फुरूब से पैठे लोरिकवा उतर निकलि रे जाय

घुमि घुमि पलटन के दादा काटत रे बाय"

मलयालम लोक गाथा में -

कन्टर मेनोन और चन्तु का द्वंद्व वीर रस प्रधान युक्ती है :-

आतक्कं कन्टुळन कुञ्ञिच्चन्तु
ईरप्पुलिपोले येतिर्कुन्नुन्टु
पोर्तु कलयुं चेक्कर्कुपोले,
मानत्तु कलियिटि वेट्टुंपोले,
बालिसुग्रीव युद्ध पोले ....
....
पकरि तिरिञ्ञुडु वेट्टिचन्तु
तव्वोमि योतिरं वेट्टु वेट्टी
ओन्पतु मुरियायि वीणु मेनोन
आर्तु चिरिच्चुळन कुञ्ञिच्चन्तु ।

भाव :- यह युक्ती पाकर कुञ्ञि चन्तु कन्टर मेनोम से सामने आकर लडने लगा । यह देखने से ऐसा लगा मानों जंगल का शेर और काला हिरण आपस में लड रहे हैं । उनकी आवाज आसमानी तलवार सी लगी । बालि सुग्रीव युद्ध की स्मरणादि लानेवाला था । यह द्वंद्व युद्ध । आखिर चन्तु ने कन्टर मेनोन को नौ टुकडों में काट डाला ।

और :-

आरोमुण्णी और चतियन चन्तु का द्वन्द्व :-

चीरिट्टयडुक्कुन्नु आरोमुण्णी
वाटि मडक्कुन्नु चन्त्वल्लाणु ....
.... आदि ...

चेकोन्मारायि अनिक्वान पिन्ने
वालकणियिल चोरल्लो चेकोन्मार्क
पुत्तूरं वीट्टिल अनिरुन्नोर्क्
नेर्चक्कोषियुडे वयस्सल्लु ..... आदि

भाव : जब आरोमुण्णी ने साँप के समान फुफकारते हुए शत्रु पर आक्रमण किया तो वह आंवला सा फीका पड़ा । उसका धैर्य छिन गया । जिसका जन्म पुत्तूरं घराने में हुआ, वह चेकोन, तलवार से जीने को निश्चित किया है । उसकी आयु उस मुर्गे की सी छोटी है जिसे मन्दिर में काटने का रखा है ।

वीर रस प्रधान पंक्तियों से भरा पड़ा है -
हिन्दी और मलयालम की लोक गाथाएं । श्रृंगार रस का भी उदाहरण देखिए :-

सोरठी - संयोग श्रृंगार

बगिया में सोरठी जब पहुँचलि
देखि के फुलवरिया खुशिया भइल
जोगिया के लगवाँ सोरठी गइल
चारू नजरिया जब मिल्लास
प्रेम वा के मारे गिरका ढलेला .... रेनुका ।।

आल्हा में सोनवा का सौन्दर्य वर्णन :-

काढ दरपनी मुँह देखै सोनवा
मने मन करे गुमान ।

मरजा भइया राजा सुन्दर मन
        धरे अछिमि राखे कुंवार ।
बैस हमार बीत गये नैनागढ में
        रहलीं बार कुंवार ।
आग लगाइब एह सूरत में
        नैनोवली बारकुंआर"

मलयालम में :-

कोकिल कोडुत्तोर ओरत्तुक्का
नारि कोडुत्तोर पोल कुप्पायं .... आदि से
शोभित आरोमल चेकवर से माँ कहती है -
        चम्पं कुरञ्ञुण्णी पोल मकने
        करिकण्णु तम्मेयुं तट्टिप्पोकुं

उसी प्रकार तुंबोलार्चा को आरोमल इस प्रकार देखता है -

ओकिमिन्नल पोलल्लु कण्टु चेकोन
पुष्टमरिच्चउडु नोकि चेकोन
पुचिरि कओन्टु चिरिच्चु चेन्नु । आदि

चोल पर्नकिलिक्कुपोले
पर्नकन्टल तत्त परक्कुंपोले
नादापुरं कुक्कुं पोले
नाट्टु कुयिलु चिलिक्कुं पोले - शब्द माधुरी

करुण रस :-

आरोमल का अन्त -

इनियुळ्ळ काण्डयुं नम्मळ तम्मिल
इनियुळ्ळ कालत्तु काण्कयिल्ला
कळ्ळ कचिक्कट्टे नेरन्गुळा
कळ्ळ कचिक्कट्टे उण्णिआर्चे,
कळ्ळ कचिक्कट्टे कुंजुण्णुलिये
कळ्ळ कचिक्कट्ट मालोकरे,
इनियुळ्ळ काण्डयुं नम्मळ तम्मिल
इनियुळ्ळ कालत्तु काण्कयिल्ला
कळ्ळकचिच्चु मरिच्चु पोयोन ।

भाव : मेरा जीवन यहाँ समाप्त होता है । आगे हमारा मिलन इस दुनिया में नहीं होगा । ऐसा कहकर उसकी युद्ध पोशाक कच्चा उतारी गयी । उसके प्राण पक्षी उड गये ।

भरथरी को योगी बनने का प्रसंग :-

जग में अम्मर राजा भरथरी
कर में लिया वैराग
मेरी मेरी करके जग में ऐसे
मेरी माया की जंजाल
x x x x
गळे की धोती लामी धुमिल मभाले
माई छूटल पियरी दाग ।

राजा भरथरी के काले मृग शिकार का प्रसंग -

गिरत के अइल राजा से मिरग कहले
नयना से जवाब,
बिना कसुबा राजा हम्में मारतीं
सीधे जइबे सुरधाम
खाल्हिया काढि राजा अपनी रानी के दीह
बेठल करिहे सिंगार
सिंघिया काढि कोनो राजा के दीह
कि बैठे आसन लागय,
असुबा तमहरि राजारीरे लावत कि
जोगवा अम्मट होइ जाय
अगना कइ मिरगा परान छोडे तो
मिरगि करती है जवाब
कि जैसे मस्तर से मिरगिन कलपे
वैसे कल्पे रानियां तोहार ।।

हिन्दी और मलयालम लोक-गाथाओं में लोक संस्कृति की अभिव्यक्ति

हिन्दी और मलयालम लोकगाथाओं में लोक संस्कृति की अभिव्यक्ति किस प्रकार हुई है, इसका परिचय पाने की कोशिश करें ।

किसी नायक नायिका के जन्म होते ही, तो लोक कवि लोक संस्कारों वाले सभी क्रिया कलापों में समता दिखाई देता है । यह स्पष्ट मालूम पड़ता है कि यह जन्म, सारे उत्तर भारत के किसी प्रांतों में हुआ किसी लड़की लड़के का जन्म है । समस्त लोक गाथा की अन्य घटनाएं भी ऐसी लगती है । जहाँ विवाह पक्का करने के लिए तिलके की आयोजना की गयी है, वहाँ लोक कवि लोक-जीवन की विवाह पक्का करने की पद्धति नहीं

भुला सकता । नेग जैसे लोक जीवन के बहुत सूक्ष्मतम तत्व को भी वह विस्मृत नहीं कर सकता । मतलब यह है कि लोक गाथाओं में सारे उत्तर भारत के भिन्न जन पदों के लोक जीवन एवं लोक संस्कृति की स्पष्ट एवं सजीव झलक अभिव्यक्त की जाती है ।

<u>लोक संस्कार की अभिव्यक्ति</u>

प्रत्येक लोक-काव्य में लोक कवि समस्त लोक जीवन में प्रचलित पद्धतियों को अपनाते प्रस्तुत करते हैं । पुरोहितों को दान-दक्षिणा दिलाना सगाई आदि की बात पक्का करने में साधारण रीति नीति का अनुसरण करा देना आदि सभी बातें इस ओर आते हैं ।

गोपीचन्द के योगी बनते समय माँ का मोह :-

बड बड जतनियाँ से बेटा गोपीचन्द पालीं
कह मीं अबव गाढे दिनवा गोपी चन्द कामें
मो तो और भरिमवा बेटा कोखिया में लोई
तोहरे करमवाँ बेटा प्राण मइलीं
तोहरे अस करमवाँ बेटा खुआ तिरव वा कहलीं ।।

अलंकारों का उदाहरण :-

शोभामयता का सुन्दर रूप :-

रामा मयना के सुरतिया जैसे उगल सुरजवा रेना

सोरठी का सुन्दर रूप :-

फफियाा हो, रामा, सुरज के जोतिया
सम बेरेनी सुरतिया हो"
केसवा नागिनियाँ लहरावे रेभुली"

मातु :-

कुम्मस्तु कोम्म्यु पुत्तपोने
इलमाविल तयपु तनिरत पोने

कुञ्यम्मा का शब्द :-

पोल प्यनं किमि कुर्यु पोने
मादटु कुयिलु विनिककुपोने .... आदि

वीर - कालक्ये प्योले कइत्त वीर -

इसी प्रकार अलंकारों का उदाहरण भी इन गीतों एवं गाथाओं में मिलते हैं ।

वस्तुतः लोक गाथाओं में अलंकारों का विधान बहुत कम पाया जाता है । उन में तो प्रत्येक पंक्ति के साथ साथ कथा आगे बढ़ती है । घटनाओं का समन्वित इतना अधिक रहता है कि गायक को भाषा सजाने का अवसर ही नहीं मिलता ।

इस कारण से लोक-काव्यों में अलंकृत काव्यों के समान, कलापक्ष और काव्य तत्वों का होना स्वाभाविक नहीं । लेकिन जो कुछ मिलता है - वह अक्लिष्ट एवं ललित सुन्दर तथा स्वाभाविक होता है।-

~~प्रत्येक में अतिशय~~ लोककाव्यों में कतिपय लोक विश्वासों का समावेश है ।

(1) जीवोत्पत्ति विषयक लोक-विश्वास

हमारे धार्मिक लोक-विश्वासों के अन्तर्गत एक लोक-विश्वास यह होता है कि परम पिता परमेश्वर का ब्रह्मा स्वरूप तो सृष्टि करता है । इसी लोक-विश्वास का एक और विकसित रूप कई लोक-गाथाओं में पाया जाता है ।

माया की लगाए डोलें,
कैलासी दासी के बासी
की लिए डोले बन में
औ मल्यो मनि मैल छुडायो ।
पुतरा बनाकर बनिगई पुतरी
एक कन्या तो पैदा की मी । [महादेव के त्याहले]

यहां ब्रह्मा के मैल से पार्वती की उत्पत्ति का लोक-विश्वास है ।

[2] कन्या विवाह विषयक लोक विश्वास

सारे उत्तर भारत में यह लोक विश्वास प्रचलित है कि कन्या का विवाह शीघ्र से शीघ्र करना चाहिए । वैसे स्मृतियों में ऐसा उल्लेख भी आया है कि रजस्वला होने के पूर्व ही कन्या कन्या कहलाती है । रजस्वला हो जाने पर किसी भी कन्या का कन्या संज्ञा समाप्त हो जाती है । इसलिए उसका विवाह शीघ्र ही हो जाना चाहिए । यदि माता-पिता विवाह नहीं कराते तो वे पाप के अधिकारी होते हैं । स्मृतियों की यह विचारधारा ही सम्भवतः लोक-जीवन में व्याप्त हुई हो उसी का चित्रण एक लोक-कवि ने ऐसा किया है -

इम धरई पे राखें बेटी कूं
इतिनी सुन के रानी बोली
सुन लेउजी राजा मेरी
क्वारी कन्या जनुमर लावे,
पीवे को नाहि जनु राजा"

यह भी एक लोक-विश्वास है कि क्वारी कन्या के हाथ का जल पीना व भोजन करना भी पाप होता है । विवाह योग्य कन्या हुई नहीं कि माता पिता को नींद नहीं आती -

विवाहादि कार्यों में लग्न पत्रिका

कहीं शादी होती तो उसके लिए लग्न पत्रिका का लोकाचार कायम है ।

महादेव के ब्याहुले नामक लोक-गाथा में यह लोकाचार का प्रभाव देखा जा सकता है। प्रज लोक-गाथा है यह । जब हिमाचल को समाचार मिला कि पुरोहित शिवशंकर जैसे योगी को शादी पक्की कर आये हैं तब वह लग्न पत्रिका भेजता है, और साथ में एक पत्र भी जैसा कि लोक-जीवन में बरात कैसे आवे ? इसके संबन्ध में लग्न पत्रिका के साथ चिट्ठी जाया करती ठीक वैसी ही चिट्ठी इस लोक-गाथा में लिखी गयी है -

- कोरो कागद कलम -

....

.... ब्याहन आवे ।

विवाह संस्कार

जब बारात आती है, उसकी आवभगत लेने घराती जाते हैं । बारोठी एवं भोज, पलकाचार आदि भी लोकाचार कई गाथाओं में समान रूप से प्राप्त हैं ।

विवाह संस्कार

जब बारात आती है, उस की अगवानी लेने बराती जाते हैं। बारोठी एवं भोज, पलकाचार आदि भी लोकाचार कई गाथाओं में समान रूप से प्राप्त हैं।

लोक विश्वास

कुछ लोक काव्यों मे हमने देखा है कि समस्त संस्कारों के सूक्ष्म से सूक्ष्म लोकाचारों पर लोक-कवियों ने ध्यान छोडा है। जिन विश्वासों को सामान्य जन-जीवन में परम्परा से स्थान मिला है, तथा जिन के पीछे कुछ तार्किक आधार कम रहता है, उसे अंध विश्वास शब्द अंग्रेजी का "सुपरस्टिशन" शब्द का पर्याय मान लिया गया है। किन्तु अंधविश्वास में कुछ हीनता का भाव रहता है। अत: हमने लोक-विश्वास का प्रयोग किया है।

सुनि केकई राजा मेरी
जिन घर कन्या स्यानी है गईं
उन्हें नींद कैसे आवे"

शकुन और अपशकुन संबन्धी लोक विश्वास

लोक-विश्वासों की परिधि इतनी विस्तृत होती है कि किसी भी प्रकार की मान्यता जो परम्परा से प्राप्त होती है, वही लोक-विश्वास कहलाती है। कुछ कार्यों को शुभ और कुछ को अशुभ कहा जाता है। ये ही शकुन अपशकुन कहाते हैं। कुछ गाथाओं में जब ब्राह्मण और नाई सगाई पक्की करने

निकलते हैं तो अपशकुन होने की बात कही गई है ।

हरविकुट्टिपिल्ला जब युद्ध सज्जा में निकले उस समय भी अपशकुन देखने का उल्लेख है -

मंड नल्लार अमृतु कोन्दु वेच्च
मुन्नेवुत्त अमृतु तन्निले
मुल्लप्पू माल पोले तम नाड"

हरवी की पत्नी ने खाने को भात सामने रख दिया । हरवी ने एक मुट्ठी भर भात प्रथम बार उठाया उसमें एक लंबा बाल, जिस में भात के कण उस प्रकार दिखाई दिया जैसे जुही की कलियों की माला हो ।

हरवी कुट्टिपिल्ला का यह अपशकुन उनकी वीर मृत्यु की सूची थी

"वन" संबन्धी लोक विश्वास

लोक-विश्वासों को संभवत: लोक कल्पनाओं ने ही जन्म दिया होगा । ऐसी लोक कल्पनाएं कुछ वनों के विषय में भी प्रचलित हैं । यद्यपि भूगोल में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता, तथापि लोक-कल्पना के आधार पर ही कजरी वन का लोक विश्वास व्याप्त है कि वह घना वन है और उस में दामे रहते हैं ।

पर्वत विषयक लोक विश्वास

जिस प्रकार कुछ वनों का आधार लोक कल्पना ही है, उसी प्रकार कुछ पर्वतों के नाम भी लोक-कल्पना पर आधारित प्रतीत होते हैं ।

मैनाक पहाड़, अरिष्या और मठिला - आदि पहाड़ों का उल्लेख इस प्रसंग में ध्यान देने योग्य है ।

नंदीगण संबन्धी लोक विश्वास

नंदी गण की कल्पना लोक-कल्पना है, यद्यपि इसे पुराणों में भी स्थान मिला है । पुराणों में जहाँ समस्त देवी देवताओं के वाहनों का उल्लेख आया है । वहाँ शिव शंकर के वाहन के रूप में नन्दीगण का नाम आ गया है । किन्तु इस लोक-विश्वास की पुष्टि कई लोक-गाथाओं में की गयी है । शंकर ने श्रृंगार बनाते समय कुछ विलक्षणता लाने के लिए उसकी [नंदी की] जीभ आँख में, सींग कपाल में और पाँच पैर बना दिए । अब अन्य श्रृंगार तो प्राय: छूट गये हैं, केवल जीभ का श्रृंगार रह गया जिस किसी बैला की जीभ अन्य किसी स्थान पर निकल आती है, तो उसे नन्दी कहने लगते है । ऐसे बैला को एक झूले से सजाकर कुछ लोग भिक्षा माँगने का काम भी करते हैं । नन्दी गणों के बारे में जो लोक-विश्वास है, उसके मूल आधार पर कुछ परिचय महादेव को ब्याहुले - जैसी लोक - गाथाओं में प्राप्त हैं ।

इतनी सुनिके सिधु बोले
सुनिले रे नन्दिया बेटा
बाबेटा सिंगार बनावै
पाँच पाइ को करिडारयो
जाकी आँखि में जीभ निकारि दइ
जाकी कपाल में सींग लगाइ दयो ।

इस प्रकार अन्य लोक-गाथाओं में पशु पक्षियों के बोलने का उल्लेख आता है ।

तप और इन्द्रासन विषयक लोक-विश्वास

अनेक पौराणिक एवं लोक गाथाओं में विविध नारियों एवं पुरुषों के तप के कारण इन्द्रासन हिलने का उल्लेख आया है । हिन्दी और मलयालम की लोकगाथाओं में यह विश्वास समान रूप से प्रचलित पाया है ।

मृतक को जीवित रखने का लोक-विश्वास

लोक - साहित्य के हर कोने में यह विश्वास प्राप्त है । लोक गाथाओं में इस के कई उदाहरण देखे जा सकते हैं । कन्नी उंगली तराश कर उस का रक्त मृतक के मुंह में डालना एक साधारण सी बात है । ऐसा करने से कभी कभी मृतक जीवित हो उठता है । मलयालम की अपेक्षा हिन्दी के हर लोक काव्य में यह बात दृष्टिगत होती है ।

लोक-विश्वासों के लोक गाथाओं में और भी, कई उदाहरण दे सकते है । स्थानाभाव के कारण यह प्रकरण यहाँ संक्षिप्त करना उचित समझता हूँ ।

हम देख चुके हैं, हिन्दी और मलयालम के लोक-काव्यों में, हर कहीं, मानव जीवन, उसकी सभी विशेषताओं के साथ प्रस्फुटित हो उठता है । जीवन का यह हरा रंग सही सुधि एवं स्वाभाविक ढंग, साहित्य की अन्य किसी और धारा में इतना ओज पूर्ण दिखाई नहीं देता ।

नवाँ अध्याय

उपसंहार

हिन्दी और मलयालम लोक-काव्यों में दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तत्वों का निरूपण एवं उपसंहार

मानव जीवन दुनियाँ का सर्व श्रेष्ठ विषय है । उसके बिना न तो किसी भाषा का जन्म होता है न उसमें साहित्य रचा जाता है । उसमें संस्कृति ही पनप नहीं सकती । आदि काल से ही मानव अपनी प्रत्येक क्रिया में अपने आप को अभिव्यक्त करता आ रहा है । उसने अपने जीवन का विकास मनन एवं अनुकरण के द्वारा किया है । उसका मानसिक विकास उत्तरोत्तर होता ही रहता है ।

यह मानव जीवन एक के बाद एक के क्रम से चलनेवाला एक नितांत निरवच्छिन्न प्रवाह है । यह एक प्रकार का अन्वेषण भी है । वह स्वयं अपने को जानने की खोज में हमेशा लगा रहता है । सर्वप्रथम अपने आप को जानने के पश्चात प्रकृति को जानने का भी, वह शौकीन रहा है । वह उसे अभिव्यक्त करना भी चाहता है । उस की अभिव्यक्ति का यह रहस्य ही उसकी कला है । सच तो यह है कि उसने अपने को

जैसा पाया वैसा ही व्यक्त किया ।

दैनिक जीवन में[1] वह प्रकृति को अपनाता रहता है । प्राचीन काल में प्रकृति को वह शक्ति का प्रभाव मानता था । प्रकृति के व्यापार के प्रति इस कारण एक रहस्यमयी दृष्टि, उसने प्रदान की वास्तव में वह प्रकृति में, तल्लीन हो गया । उसके बारे में वह ऐसा सोचने लगा कि यही सर्वसत्ता है । इस कारण से वह उसकी ओर श्रद्धाभाव रखने लगा । उसकी आराधना के गीत गाने लगा । उसके रहस्यों को जानने के लिए अनेकों कल्पनाएं की अनुमान किये और वह अपनी कल्पनाओं और अनुमानों के आधार पर दार्शनिक होने लगा ।

मानव जीवन में भूख, वासना और भय का अपना स्थान था । उन्हीं के आधार पर उस का उत्तरोत्तर विकास हुआ । मेयर के मतानुसार आदि मानव का सांस्कृतिक विकास उसकी यौन क्रियाओं के अनुकूल होता है । श्रम के द्वारा प्रकृति के साथ संबन्ध जोड़कर उसने भूख मिटायी और आत्मरक्षा की । वास्तव में श्रम ने ही उसे सभ्य बनाया । उसे मनन और कर्म का अवसर दिया[2] । सब से बढ़ कर तो उसे मृत्यु का भय हुआ । उसने प्रार्थना की - मृत्योर्माऽमृतं गमय । सघन वन, अंधेरी गुफा, बादल के गर्जन आदि आदि मानव को भयविह्वल बनाने वाले थे । वे उसे विभीषिका के रूप में दीख पड़े होंगे । उसने अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने की चिंता में चारों ओर देखा होगा । पृथ्वी ! वही उसकी माँ दीख पड़ी होगी । वही उसकी रक्षा करने वाली शक्ति हुई होगी । वह स्वयं "भूमिपुत्र" नाम स्वीकार करने लगा । माताभूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः[3] वाला विचार

---

1. मानव जीवन में, भूख, वासना और भय की चेष्टाएं प्रमुख रही । [मेयर का अनुमान]
2. Theory of work and Establishment : Mayor : p.90
3. यजुर्वेद:

तब से शुरू हुआ होगा । ऐसी मधुरतम उद्भावनाओं और कल्पनाओं ने उसे, मानव, बनाया । उसके मन में दार्शनिक भावों का संचार तबसे हुआ होगा । तब से उसने दार्शनिक [illegible] मन का गीत गाना शुरू किया । उसने दार्शनिक गीतों की रचना प्रारंभ की । प्रकृति के अन्तराल में विराट-रूप का दर्शन किया । उसने बाह्य जगत के परे किसी अज्ञात असीम शक्ति के अस्तित्व की कल्पना की । गीतों में उसका प्रभाव पड़ा ।

लोक-काव्य में दर्शन का भाव

पिछले, अध्यायों में हमने देखा है कि लोक-काव्य में भी दर्शन का आभास कहीं कहीं पाया जाता है। । दर्शन बौद्धिक साधन है, जबकि गीत हृदय-पक्ष का साधन है । मस्तिष्क पक्ष की चीज़ को हृदय पक्ष की चीज़ में पाने का प्रयत्न एक हद तक असंगत है । लेकिन लोक-काव्य में हम दोनों के प्रकृष्ट उदाहरण प्राप्त हैं । प्रत्येक लोकगीतकार प्रकृति की सत्ता में विश्वास रखता है और उसका वह पुजारी है । इस दृष्टिसे वह स्वभावतः रहस्यवादी कहलाता है । दर्शन के मूल में बौद्धिकता रहती है और रहस्यवाद के मूल में प्रेम प्रतिष्ठित होता है ।

लोक गीतकार को आनंद की भावना को लेकर अपना रास्ता ढूंढना पड़ता है । मनुष्य अपने जीवन में हमेशा सुखेच्छु रहा करता है । उसकेलिए वह उतावला भी रहता है । यदि उसे आनंद मिल जाता है तो उसे और कुछ चाहिए भी नहीं । लोकगीतकार उस आनंद को अपने

1. Each poet develops and represents a single aspect of an easthetic doctrine.....

William K. Wimsatt : A Short history - p.9

गीत में अभिव्यक्त करना चाहता है । इस कारण से लोक गीत सब की पसन्द का होता है । इन गीतों से आदमी का हृदय प्रभावित हो उठता है । उसके सुप्त भाव जाग जाते हैं और वे क्रियाशील बनते हैं । लोक गीतों में जो प्रभाव की शक्ति रहती है । उसका आधार तो आनंद है । यह आनंद सत, चित एवं आनंद के बीच में बड़ा परमानंद भाव है ।

मुलिकळुडिकुन्नु मुम्पल्लो वक्की
मुल्लं मुकुन्न पठर्न्नुक्क वळि्ळ
नाम्बिकळुडिकुन्नु नामल्लोक्क्की.... यह गानेवाला कवि परमानंद में लीन हो जाता है । यही परमानंद जो निर्वृत्ति वाचक है, वही एक अर्थ में दार्शनिक वस्तु बन जाता है । अपनी आत्मानुभूति के निमित्त, लोकगीतकार को कभी कभी अपना संबन्ध बाह्य जगत से तोड़ना पड़ता है । सामाजिक बन्धनों के स्तर से कभी कभी उसे ऊपर उठना भी पड़ता है । उसकी कल्पना दिव्य एवं तीव्र हो जाती है, तो भी उसे अपनी भाषा में व्यक्त करने में वह कहीं कहीं असमर्थ हो जाता है । इस कारण से लोक काव्यों और असली काव्यों में दार्शनिक भावों में असमानता आ जाती है । पिछले अध्यायों में हिन्दी और मलयालम के कुछ गीतों में हमने इन दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक भावों की सूचना दी है । उनपर यहाँ विचार करना अधिक सुगम होगा ।

मानव को सभ्य बनाने में श्रम का महत्व पूर्ण स्थान है । प्रकृति के द्वारा श्रम को मिटाकर ही आदि मानव ने अपनी आवश्यकताओं की स्फूर्ति की थी । उसमें खेतीबारी की भावना भी वैसे आ गयी थी ।

---

1. सत्, चित्, आनंद आदि एवं सत्यं, शिवं, सुन्दरम आदि दार्शनिक भावों की आधार शिला है ।

भारत मुख्यतया कृषि प्रधान राज्य है । इस के हर प्रान्त के लोक जीवन में उसकी छाप पड़ी हुई है । कृषकों की संख्या भी अत्यंत बड़ी है । श्रमिक वर्ग भी अधिकतर खेतों में ही काम करते हैं । कृषकों का प्रकृति पर निर्भर रहना स्वाभाविक है । वर्षा, ग्रीष्म, शीत आदि को वह प्रकृति की देन मात्र समझता है । ऐसी स्थिति में उसे प्रकृति की सत्ता को अधिक मानना पड़ता है । किसी कारखाने में काम करनेवाले मजदूरों को इस कारण प्रकृति का दास या आराधक होने की आवश्यकता अधिक नहीं पड़ती । उसे धार्मिक या दार्शनिक पक्षों पर अधिक समय पाने की प्रेरणा नहीं मिलती । केरल की भी यही स्थिति है यहाँ अधिकांश लोग कृषक मजदूर हैं । उत्तर भारत के भी अधिकांश लोग कृषक हैं । इस कारण से हिन्दी और मलयालम के अनेकों कृषक गीतों में समान दार्शनिक भावों का होना स्वाभाविक है ।

'मुल किऴक्कुम्नु मुन्नलो वक्की', नामक मलयालम गीत और, पान, पन, पन, पन छने, वाले हिन्दी लोक ग ीत दोनों, में समान दार्शनिक भावों का समावेश द्रष्टव्य है । साधारण जीवन में ऐसे भावों को निरूपित करना और उस अज्ञात शक्ति की ओर संकेत कर जीवन को सात्विक और धार्मिक बनाने का जो प्रयास है, वह समस्त भारत में देखा जा सकता है । प्रत्येक बोली के प्रान्त गीतों में इस विधा के गीत पाये जाते हैं । इस भाव साम्य की एकता का आधार जीवन यापन का मार्ग है । एक हिन्दी गीत को उदाहरण में ले लें ।

कनभुआ मथना में हीरा लगाद,
जकरहिं हिया परमात्मा बसय
से कोना रन बन भरमाय ।
कन भुआ जतना में हीरा लगाउ ।

1. एक मैथिली गीत : हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास-पृ.49।

इस गीत में ज्ञान रूपी शीशे के द्वारा हृदय मंदिर में बसे हुए परमात्मा को देखने केलिए संकेत किया गया है । जब तक परमात्मा अपने अंतरतम में विद्यमान है तो उसे जंगल में खोजने की आवश्यकता नहीं है । समान रूप और भाव का एक गीत मलयालम में ऐसा प्राप्त है :-

कण्णाडि येन्निलमा कण्णेन्नु कण्णे
कण्णल्ला निन्टेकत्तण्णु कण्णे
अंतकरणित्तल नीयिरिक्कुमेल
कण्णन्टे कण्णने कण्टिडाँ पोम्मे[1]।
....

अल्लाहु अल्लाहु अक्बा
अल्लाहु निन्मे विविक्कुम्मडियार
इन्नेकु नीयेन्त अर्मंडक्केल्ला
इन्नेकु नीतन्मे येयियकु रब्बे[2]।

भाव : हे कण्मणी । [आँखों के तारे] तुम्हें यह चश्मा क्यों ? तुम्हारी आँखों के कोने की नीलिमा से अधिक इस दुनिया में क्या सौभाग्य है ? जब तक तुम्हारे अंतरतम में वह रहता है तब तक बिना चश्मे के इस शीश महल की दिव्य रश्मी को तुम ताड ले सकोगे अपने भगवान और अपने प्रिय दोनों को एक अंतरतम में प्रतिष्ठित किया गया है[3]। अपना जो धर्म है, उसे आज ही किया जाय तो उससे अधिक कौन पूजा ईश्वर को चाहिए ? सब खुदा का ही कार्य एवं कार्य क्रम समझना ही ठीक है ।

---

1. माप्पिलपाट्टुकल - टी॰ उबैद
2. वही
3. मिथिला के गीत : पृ॰104

कबीर ने जहाँ तेरा साईं तुझ में कहा और नानक ने जो काहे रे बन खोजन जाई ... कहा, रहिमन जो प्रतिम छवि नैनन बसी, - कहा ये रहस्यवादी भाव भंगिमाएं इन छोटे लोक गीतों की पंक्तियों में भी समान महत्त्व लेकर आती हैं।

हिन्दी के एक झूमर गीत में [मैथिली] नश्वर शरीर के संबन्ध में ध्यान आकर्षित किया गया है, और प्राणों को एक तोते की तरह माना है। यहाँ माटी शरीर है, और उस का सुगना आत्मा है। कदम का पेड परमात्मा है। उसी पर वह उड उड कर बैठता है। उसी से उसे रसशक्ति मिलती है, और उस के बिना उसका कोई अस्तित्व नहीं है। वह गीत इस प्रकार है :-

बोलिया सुना व कहाँ गैलै रे
माटी के सुगनमा...1
उडि उडि सुगना कदम चढि बइसल
बोलिया सुना व कहाँ गैले रे
माटी के सुगनमा 1
उडि उडि सुगना कदम चढि बइसल
कदम के सब रसले लेगले माटी के सुगनमा।

दार्शनिक भावों का और एक गीत :-

पलन सुगा नहीं पोसिय,
नेह लगाविय
सुगवा हैत, उड्यात, अन गृह जाए व[2]।

यहाँ भी, सुगवा का संकेत आत्मा के प्रति है, और वह आत्मा जहाँ से आयी है वहीं चली जाएगी। अर्थात् वह परमात्मा का अंश है और

1. मिथिला के गीत : पृ.104
2. वही पृ.108

वह उसी में मिल जाएगी । परमात्मा के प्रति प्रेम निवेदन और उससे मिलने की आकुलता अधिकांश लोकगीतों में चित्र में जैसा खींची गयी है । लोक कवि इस विषय में अन्य कवियों से पीछे नहीं । जीव-ब्रह्म के बीच माया का आरोप और उसके अनुसार गीत रचने की प्रथा भी दार्शनिक गीतों में है । लोकगीतकार साधारणत: भक्त और भगवान को एक ही धरातल का बना देता है । कहीं वियोगिनी आत्मा अपने प्रियतम परमात्मा के वियोग में यह उपालंभ देती है, और उसे निठुर बतलाती है, और कहती है कि पुरुष के प्रेम [परमात्मा के प्रेम] का विश्वास नहीं क्योंकि यहाँ पर आत्मा जब जीव के साथ रहती है, तब उसे भौतिकता के कारण निराशा होती है और माया के कारण अपनी अमरता का भ्रम हो जाता है ।

विद्यापति की ये पंक्तियाँ :-

"जाहि प्रेम रस तलहि दुरन्त,
पुन कर पलटि निविहल गुम मंत्र ।

अपने प्रियतम परमात्मा की खोज में दृढ़ता एवं संकल्प लेकर चलने वाली एक नयी वधू जोकि आत्मा के रूप में है - एक गीत उदाहरण में देख सकते हैं :-

फोरबई में सेवा बूडि, फार बई में चोलिया
से घर बह योगिनिया क लेब आवे सखिया ।
दास कबीर ए हो गावेल समझाउन
करबह में पिया के उदेश आवे सखिया[1] ।

विरहिणी की विरह व्यथा ही अपने प्रियतम से मिलन करा सकती है, यही उसका संबल है ।

---

1. कबीर के पद - पृ.503 [दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा]

भक्त के उपालंभ की कोटी में मलयालम का यह गीत भी द्रष्टव्य है :-

मरणायिडुन्ने पिरन्नु ञानीह
नरक वारिधि नडुविल ताम,
नारकिलिडेन्नु करकेरीडण...
तिरुवैक्कं वाणु शिव शंभो...।

भाव : हे, वैक्कं महा मन्दिर के रहने वाले शंभो, महादेव । इस आत्मा की प्रार्थना सुन लीजिए । इस ऐहिक जीवन रूपी नरक सागर की मंझधार में मैं पड़ा हुआ हूँ । आप इस नर जन्म से, मोक्ष देकर मेरी रक्षा कीजिए ।

रहस्य वाद में दाम्पत्य प्रेम की भांति ही आत्मा और परमात्मा के मिलन का वर्णन किया गया है । लोक गीतों में इस वर्णन की सजीवता और भी अधिक निखर उठने का कारण है, साधारण गार्हस्थ्य जीवन का आलंबन । एक भोली भाली ग्राम वधू के मुंह से सुनिये :-

पहु परदेस गेल,
पोखरी खनाय गेल,
रोपि गेलने मुआक गाछा ।
फरिय फुलाय गेल
अधरस चुबि गेल
कतेक दिन रखबे जोगाय ....¹ ।

भाव : प्रेम वृक्ष रोपकर प्रियतम चला गया । उसे आंसू से वियोगिनी ने सींचा । वह अब फूल कर फलने लगा । अर्थात् उस में यौवन - विकास

---

1. नवीन तिरहुत गीत : बाबू रघुवर सिंह ।

हो चुका है । उससे रस मजता है, और कितने दिनों तक यह सुरक्षित रख सकती है । प्रियतम के वियोग में रोते रोते, प्रेम और भी पवित्र हो गया है और प्रगाढ भी बन गया है ।

इस आशय की समानता में एक मलयालम प्रेम गीत, जो माप्पिल प्पाट्टु विधा में आता है :-

अल्लाविन्टे वाक्कतु केट्टप्पोळ ञान
ओररक्कालेन्नि नटक्कारायि
एन्निट्टुं कण्टल्ल आविने ञान
पिन्नेयुं मेल्ले नटकानि एल रिन्टे....।

यह प्रेमी लंगडा है, तो भी अल्लाह की कृपा के कारण अपनी प्रेमिका की खोज में निकला है । कहीं उस का मिलन न होने पर अपने एक पैर की सैर वह जारी रखता है । अपने मन में उस प्रेमिका से मिलने की साध है, इच्छा है । वही उसे आगे बढाता है....। यह प्रेमिका माने कौन है ?

इसी प्रकार लोककाव्य की लंबी सूची में, रहस्यवाद और दार्शनिक भावों से युक्त कई गीत प्राप्त हैं ।

<u>मनोवैज्ञानिक भावों का निरूपण</u>

प्रत्येक लोक-काव्य का प्राय: कोई न कोई मनोवैज्ञानिक आधार होता है । हिन्दी और मलयालम के गीत इस तथ्य से छूटे नहीं रहते । इन गीतों में करुण क्रन्दन, विवशता की अकुलाहट, और ग्लानि में गलने के भावों का यत्र तत्र निरूपण किया गया है । जहाँ हम मनोभावों का चित्रण

किया गया है वहाँ इनकी अभिपूर्ति के निमित्त आवेगोद्रेक, उत्तेजना और क्रियाशीलता की ओर उन्मुख होने की उत्कंठा एवं उत्साह भी कम नहीं हैं। केरल के लोक जीवन में, तत्कालीन विषम परिस्थितियों से असन्तुष्ट हो जाने के कारण यह भी विशेषता आयी है कि अतीत की गौरव गरिमा के गुणगान कम नहीं हुए हैं। और इस प्रकार की कुंठाओं को आध्यात्मिक पुट देने की कला दिखाई गई है। जीवन के नाना प्रकार के भावों की पूर्ति के लिए आदिकाल से ही मानव अपना काल्पनिक जगत की अपेक्षा विस्तृत और व्यापक रहा है। अभाव का भराव यदि न हो पाता, तो मानव जीवन का विकास उत्तरोत्तर नहीं हो सकता था। मानव अपने अभाव की पूर्ति लिए सदैव प्रयत्न शील रहा है। कोई भी लोकगीत, मानव के हृदय को तभी प्रभावित करता है, जबकि उसमें मानव के मन की बात निहित रहती है और सुन्दरतम ढंग से, व्यक्त किया जा सकता है। प्रत्येक लोकगीत में मानव अपनत्व देखता है और इसी से उसके प्रति उसे मोह एवं आकर्षण होता है, क्योंकि युग युग से वह अपने साथ रखता आया है। प्रत्येक लोक गीत उसके मनोवैज्ञानिक तत्वों का ही प्रतिफलन है। मानव के मन में जो भावोदय होते हैं उनका आभास वह प्रकृति में भी देखने लगता है। और प्रकृति तथा जीवन के साथ चेतनात्मक संबन्ध स्थापित कर वह प्रकृति को सजीव रूप में देखता है।

पिछले अध्यायों में हिन्दी की विविध बोलियों के गीतों में, और मलयालम गीतों में भी ऐसे कोई उदाहरण देखे हैं। एक मल्हार गीत में एक विरहिणी का कथन इस प्रसंग का सुन्दर उदाहरण है। वह बादल से विनती करती है, क्यों कि बादल उसकी विरह व्यथा को और भी उभार देता है और वह उसके प्रियतम के अभाव की अनुभूति कराता है। इससे उसका जीवन भार सा बन जाता है, और उसकी वेदना असह्य हो उठती है।

रे बदरा मति बरसु पहि देसा,
रे बदरा बरसु ललनजी के देसवा
बदरा सुन के भिजाऊ सिर टोपिया रे बदरा,
एकत बैरिन मेल सासु रे ननदिया,
दोसर बैरिन तुहुँ भैले रे बदरा ।।

इस गीत के अर्थ समझने से यह मालूम हो जाएगा कि किसी नववधू का कथन है "रे बादल" तू यहाँ मत बरस । जहाँ मेरे प्रियतम रहते हैं, वहीं बरसा उनके सिर की टोपी तू बरस बरस, कर भिगो दे । यहाँ पर यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि वियोगिनी का प्रियतम टोपी पहनता है और जब उसकी टोपी को बादल भिगा देगा तब संभव है उसे, अपनी प्रियतमा के वियोग की अश्रुधारा का स्मरण हो आएगा, और वह व्याकुल होकर, शीघ्र ही परदेश से लौट आएगा और अपनी प्रियतमा की पावस से उभरी हुई विरह वेदना को दूर करेगा । पावस ऋतु के बादलों ने यहाँ उस विरहिणी के मन में उद्दीपन का कार्य किया है । वास्तव में ये बादल उसे काटने आते हैं क्यों कि उस का पति यहाँ नहीं है । यदि वह उसके साथ रहता तो यह बादल भी उसके सुख का साथी बन जा सकता । लेकिन यहाँ बात बिलकुल भिन्न है । समान भावधारा का एक गीत मलयालम में भी देखिए -

वेर्ड कायलिलोर्ड वेट्टुपो-
कोर्ड आमेन्टे मारने
कारह वन्नेन्टे ककिल मुट्टुपो
कोर्ड आमेन्टे मारने
मारने मणि मारने एन्टे
अन्पुरर मणि मारने•••••।

यह भी एक विरहिणी का कथन है । उसके संबन्ध में अपने प्रियतम की पुण्य स्मृति मात्र उसके साथ है । वह कहती है - जब वेर्ड की झील में लहरें उठेंगी तब मैं अपने प्रियतम का स्मरण करुँगी । रात की खामोशी में

जब हवा के झोंके मेरे दरवाजे को खटखटयेंगी तब मैं अपने उस प्रियतम की याद करके जाग पड़ूंगी । वह प्रेम स्वरूप, आज भी मेरी आँखों में, खड़ाँ इतनी तीखी विरह-वेदना का चित्र अन्य गीतों में कम मात्रा में पाया जाता है । यहाँ इस मधुआरिन के मन में जो जो बीता है, वह और किसी के जीवन से संबद्ध नहीं होता । ऊपर की नायिका की उलाहना से अधिक यह भी, सत्य है कि वह ठीक ठीक जानती है कि अपना साजन आगे कभी भी नहीं आयेगा । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से लोक कवि ने, इस मलयालम गीत में बहुत कुछ बताया है ? ऊपर के गीत की नायिका ने बादल को संदेश वाहक मानकर अपनत्व का भाव प्रकट किया है । उसके मनोभाव का प्रसंग हमें स्पष्ट मालूम है कि जब दुःख का साथी मानकर साहस बांधा जा सकता है । लेकिन उस मधुआरिन का दुःख कभी भूलने वाला या किसी के सहारा देने पर या हाथ बाँटने पर भी भुलाया नहीं जाता सकता है । झील की लहरें हवा के झोंके दोनों उसे और भी सताते हैं । यहाँ प्रतीक्षा की दिया बुझ गयी है । इन दोनों गीतों में लोकगीतकारों ने वियोग व्यथा के दोनों पक्षों पर मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रकाश डाला है ।

नारी-मनोविज्ञान - एक अन्य रूप

किसी विवाहिता कन्या को अपनी ससुराल के नये वातावरण में सर्वप्रथम क्षीण होने का अवसर मिलता है तो उसे अपने नैहर जानेकी उत्कंठा तीव्र हो उठती है और उसका भयंकर रूप तब दीख पड़ता है, जब कि वह अन्य वधुओं को नैहर जाते हुए देखती है जो उससे बाद में ससुराल आयी हैं । इस प्रकार के कई गीत हमने पिछले अध्यायों में पाये हैं । निम्न लिखित ममदाउन में एक कन्या का मन वैसा ही स्पष्ट होता है :-

कतेदिन से परतारव, हे पति,
आब मरब विष खाय,

कालाहिक भामिनि भाग कुमक मन
सब उनि मइहर जाय ।

यह सुन्दरी अपने पति से नैहर जाने केलिए अनुमति प्राप्त करना चाहती है, लेकिन उसकी धमकी देखिए कि वह विष खाकर मर जाएगी । यदि उसका पति उसे जाने न देगा । इस प्रकार का भाव मन में तभी उठता है जब कि अपनी इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो पाती और वे भीतर ही भीतर मन को मथती रहती हैं । जब कोई नायिका अपनी इच्छाओं की पूर्ति किसी प्रकार नहीं कर पाती तब दूसरों के सुख को देखकर उसे ईर्ष्या होती है । इस मनोवैज्ञानिक तत्व पर आधारित है ऊपर का गीत । मलयालम में भी ऐसे कई गीत प्राप्त हैं, जिनका विवरण पहले दिया है ।

कुऽऽाप्पूसिनेमा एन्ने काणिच्चिल्लेन्किल
मुर्रत्तु निल्कुन्न कोम्प मरत्ते तूङ्ङि मरिक्कुं ञान ।

यह गीत अधिक पुराना नहीं है । लेकिन इस का प्रचार तो अधिक है । इस गीत की नायिका ग्राम वधू अपने पति देव को धमकी देकर समझाती है कि अगर आप मुझे कुऽऽाप्पू सिनेमा देखने न ले जाते तो मैं आपके सम्मुख इस आँगन के कोम्बा-पेड़ पर रस्सी बाँध कर फाँसी पर चढूँगी । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से दोनों नायिकाओं का समान स्थान है । सम्मदाउ मे की नायिका विष खाकर आत्म घात करने की धमकी देती तो मलयालम गीत की नायिका रस्सी में लटककर मर जाने की धमकी देती है । दोनों ग्राम वधुटियाँ हैं । इस प्रकार अनुकरण का दृष्टान्त देकर लोक कवि ने मधुर भावों की अभिव्यंजना की

---

1. कुऽऽाप्पू सिनेमा - वह सिनेमा जो आदि काल में प्रचार में था, इस सिनेमा का शब्द नहीं था, केवल चित्र और उसका अभिनय मात्र था । इसका अभिनय भी मलयालम में बोला जाता था ।

और पारिवारिक परिस्थितियों की ओर संकेत किया है । नैहर में रहनेवाली एक स्त्री की पतिगृह जाने की इच्छा को भी लोक गीत कार ने अपने गीत का विषय बनाया है, देखिए :-

उठ भइया, उठभइया बिदा मोहि दिउ,
गहना दे अइत, भाइ ले नन्ही ननुआइ,
पाथर के छतिया बहिन बिहसि मेहे जाउ
चलहत के बेरिया बहिनि देल समुझाइ ।

ऊपर दी हुई इस समदाउन में यह बताया गया है कि आँगन छोटा है और परिवार बड़ा, बेटे के मिलने जुलने में भी हानि हो गई और जब वह पतिगृह जाने की सबसे बिदा माँगती है तो उसका भाई कहता है कि - पत्थर की तरह कठोर हृदयवाली है मेरी बहिन । बिदा के समय हँसी मत । इसका कारण यह है कि भारतीय समाज में यदि कोई विवाहिता कन्या सर्वप्रथम ससुराल से नैहर आने के बाद फिर पतिगृह जाती है तो उसका इतनी व्यग्रता दिखलाना उचित नहीं माना जाता । यह स्वाभाविक ही है कि बेटी की बिदाई के समय बड़ा ही कारुणिक दृश्य उपस्थित हो जाता है और सब के सब रो पड़ते हैं । लेकिन बेटी की ही आँखों में आँसू नहीं छलकता तो यह चिंतनीय अवश्य है । एक मनोवैज्ञानिक तथ्य यहाँ समझना आवश्यक है कि जब किसी लक्षित वस्तु के प्रति आत्म बोध स्पष्ट हो जाता है तो विशेष परिस्थिति में भी मनुष्य अपने मन को नियमित कर सकता है वह बदल नहीं सकता । इस गीत में संभवतः यही कारण है कि बेटी की बिदाई के समय उसके हँसने का उल्लेख किया गया है । ऐसा लगता है कि उसे अपने पति से मिलने की इतनी तीव्र उत्कण्ठा और व्यग्रता है कि वह सबके साथ गले मिलकर रोना ही भूल गयी । भावातिरेक में यही स्थिति आती है । आजकल प्रायः यह देखा जाता है कि पढ़ी लिखी लड़की पति-गृह जाते समय नहीं रोती ।

---

1. समदाउनी गीत - पृ.20

इस का कारण यह है कि उसे लक्ष्य बोध पहले से ही हो जाता है । समान मानसिक तल का एक मलयालम गीत भी देखिए :-

कुन्निन्मेट मोळे परे वेय्येन्टप्पा,
                    रे रि रे रो,
एन्टप्पा रारि रे रो ।
कीरणोरें काणां, पोणोरें काणां,
          वेररें तिन्नां, कोट्टें नेय्यां....
          रारि रे रे रो, एन्टप्पा
          रारि रारा रो ।

यह लड़की, पढ़ी लिखी नहीं है तो भी उसके मानसिक भावों में एक शादी केलिए उचित वर को चुनने की प्रेरणा और उसका हर्षोल्लास गूँज उठता है ।

वल्लिय मनिस्सरे परञ्ञ विळप्पा,
वेरिय मनिस्सेरे परञ्ञाकल्लप्पा ... ।

आदि उस भाव का द्योतक है ।

लोक कवि के सामने पुरुष की सूझ से नारी की सूझ कम नहीं है । हर जगह लोकगीतकार नारी की सूझ की मनो वैज्ञानिक दृष्टि से काम लेता है

दांपत्य जीवन में जब तक समानता का भाव नहीं उत्पन्न हो सकता तब तक वह संतुलित नहीं कहा जा सकता । व्यंग्य विनोदों से ऐसा जीवन आनंद मय हो उठता है ।

प्रेमियों का प्रेम गीतातीत है,
हार में जिस में परस्पर जीत है।[1]

पत्नी और पति के बीच कोई व्यवधान तो आही नहीं सकता। बड़े और छोटे का प्रश्न प्रेम में नहीं उठता क्योंकि दोनों की आत्मा एक है। दोनों के हृदय मिलकर एक हैं और एक की हार दूसरे की हार है और एक की विजय दूसरे की विजय है - प्रेम में कुछ भी बुरा नहीं होता।

पत्नी अपने नैहर की महत्ता पर बराबर बल देती है। उसका यह संस्कार परम्परानुगत है। पति पत्नी में विनोदपूर्ण वाद विवादों और साथ ही साथ नारी के प्रगति शील मनोभावों का एक गीत हिन्दी में ऐसा है पत्नी अपने भाई के ब्याह के अवसर नैहर जाना चाहती है - लेकिन पति उसे जाने नहीं देता। वह कहता है कि हे प्रियतमे! तुम यदि नैहर चली जाओगी तो मैं दूसरा ब्याह कर लूंगा और तुम्हें फिर कभी नहीं बुलाऊंगा। इस पर उसकी पत्नी का व्यंग्य बाण सुनिए :-

पिया हे! नइहर में भाई अछि वकील,
तो ही के बांध लायब,
पिया हे! नइहर में भाई छथि दरोगा।
तो हिके पिटवा एब!

प्रत्युत्पन्न मति, नारी की झलक इस गीत में प्राप्त है। वह कहती है, धमकी देती है कि - मेरा एक भाई वकील है, दूसरा दारोगा है। अगर आप मुझे तलाक देंगी तो आप को उसका फल भुगतना पड़ेगा।

यहां पत्नी का यह कहना वैज्ञानिक दृष्टि से, समझा जाय तो भय को डराने को वीरता का सहारा लेना है। यहां पत्नी का डर है कि

1. साकेत - पृ.5-10-1

पति कहीं दूसरा ब्याह न करे । इसी से वह पति को धमका देती है । जब कोई दबा भावना उभरना चाहती है तब उसका रूप उत्तेजक और विक्षिप्ता-त्मक होता है ।

एक ग्राम वधूटी की प्रेम भरी उलाहना का वर्णन निम्न लिखित फाग-गीत में देखा जा सकता है ।

तोरा लागि अयनि, बरदाखरि, रे कोरवा,
स पिया लागि पालनि रे जो अममा !
कपेम हुआ तोर, टूटउ मोहमा तोहर म,
रसवा बहि जाय रे गो अरवा ।

वह ग्रामवधू अपने पति से कह रही है कि हे बालम, तुम्हें गांव के खेत में हँस रोपने केलिए मना किया था । तुम अपना जीवन आठों पहर खेत में ही बिताया करते हो । अगर हे बैल ! तुम खूटा तोड कर दौड़के यहाँ आओ तो मेरा प्यारा तुम्हें ढूंढकर शायद यहाँ आए ।

नारी के हृदय की ये कोमल भावनाएं युग युग से लोक हृदय को शीतल और स्निग्ध करती आ रही हैं । इस गीत से किसान के जीवन की झांकी तो मिलती ही है, साथ ही किसान वधू के सरल, स्वाभाविक प्रेम का परिचय भी प्राप्त हो जाता है ।

समानभाव का यह मलयालम गीत भी इसकी साक्षी है -

पुल्लिक्काल पेण्डिअोन्ना, पिन्ने काणाँ मुत्ताक्कु
ओक्कत्तु तिन्नु पोरत्तु कोडुत्ता, कण्णिकाणाँ कण्णाक्कु"

हमारा छुटवाला बैल, खेत में से बिगाड कर यहां आया इसलिए मेरे प्रियतम को एक बार देखने का सौभाग्य मुझे हुआ। अगर उसे कुछ में मैं सुरक्षित भी न रखा तो, उस दिन, मार खाकर मर जाना ही पड़ता। मतलब है किसान आठों पहर खेत में ही जीवन बिताता है। उसको घर आकर पत्नी के साथ जीवन बिताने की फुरसत नहीं है। लेकिन बधु को हमेशा उसकी बाट जोह कर खाना पकाते बैठना चाहिए। उसके आते समय कुछ नहीं हो तो, उस दिन मारपीट की ही गुंजाइश होती। लेकिन बात ऐसी है, जब बैल उस से बिगाड कर घर आता है, तभी उसकी खोज में ही वह घर आता है।

प्रकृति के साथ जीवन का सामंजस्य स्थापित कर नाना मनोभावों का विश्लेषण करना ही लोक-कवियों का अभीष्ट रहा है। उपर्युक्त विवेचनों से यह बात भली भांति स्पष्ट हो जाती है और लोक काव्य में निरूपित मनोवैज्ञानिक भावों का विश्लेषण यथासंभव यहां हुआ है।

लोक-काव्य में सामाजिक भावों का स्वरूप

लोक काव्य प्रधानतः समाज की संपत्ति है। परम्परा से वह समाज से प्रेरणा स्वीकार करता है और उसी से अनुप्राणित हो उठता है। हम स्पष्ट बता सकते हैं कि लोक-काव्य के विकास का आधार सामाजिकता है। यह सामाजिकता व्यक्ति के द्वारा ही निखर सकती है। व्यक्ति के सुख-दुखों की अनुभूति की अभिव्यक्ति में जो अन्तर आ जाता है उस का कारण है सामाजिक स्थिति। इसी लिए संभव है, विभिन्न प्रान्तों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों की अभिव्यक्तियों की प्रणाली में भिन्नता आ जाय।

सामाजिक नियमों के कठोर बन्धनों के कारण लोक कवि के मन में में जो कुण्ठा रहती है वह समाज के प्रति व्यंग्योक्तियों एवं कटूक्तियों के रूप में अभिव्यजित होती है और कभी कभी समाज के प्रति उपेक्षा के भाव भी

व्यक्त हो जाते हैं। व्यंग्योक्तियों एवं कूटोक्तियों का उल्लेख लोक गीतों में नारी के मुंह से कराने की प्रथा भी चलती है। लोक-गीतकारों ने अपने गीतों के द्वारा समाज के नियमों पर व्यंग्य बाण परखे हैं। विषाद एवं वेदना का कारण प्रियतमा की अनुपम स्थिति शायद होगी। उस निष्ठुरता का कारण साधारणतः समाज-नीति होती है। समाज के बंधन के प्रति उलहना असाधारण नहीं होता। इन लोक गीतों में कहीं उलाहने के भावों की अभिव्यक्ति है तो कहीं वेदना, विषाद की और व्यंग्य विनोद की। उनमें पारिवारिक जीवन के सामंजस्य को सुदृढ रखने वाले अनेकों प्रकार के भावोन्मेष निहित हैं। माता-पिता, सास-ससुर, भाई-बहिन, ननद भौजाई के मधुर संबन्धों के अनेक गीत, लोक मानस को शीतल कर देते हैं। इन गीतों में जो माधुर्य है, जो सौन्दर्य है जो पवित्र भाव हैं, जो आत्मा मुक्तता है, वे अनायास ही हृदय को प्रभावित करते हैं।

हिन्दी में सामाजिक भावों को व्यक्त करनेवाले कई लोक-काव्य प्राप्त हैं मुक्तक और प्रबन्ध दोनों रूपों में। मुक्तक विभाग में लग्न गीत, त्योहार गीत आदि अधिक सामाजिक हैं।

बाल्य-विवाह जैसी सामाजिक कुरीति की ओर इशारा करने वाले कुछ छोटे गीत हैं। कहीं तो बेमेल विवाह, कहीं तो बूढ़े के साथ बालिका का विवाह, कहीं प्रौढ स्त्री के साथ बालक का विवाह। विवाह के संताप से प्रपीड़ित स्त्री का करुण क्रन्दन इन गीतों में अधिक पाये जाते हैं।

गाल छइन बोकटल, मुंह छइन घो कटल,
मुंह मधे एको, गोने दांत गे भाई।
सउसे देह बुढवा के थर थर कंपइन,
पुरुष बड भोगि अर, गे भाई।

पिया मोर बालक, हम तरुणी
नहीं मोरा ठेको अम्हिनहिं धेनु गाइ
कौन विधि पोसब, बालक जमाइ ।

ठीक इस विधा का एक गीत मलयालम में भी, उदाहरण में दे सकता है :-

पणक्कारन मल्लन ब्रह्मा कन्टम्म-
पिरिक्कुन्नु मोडु करयुन्नु"

माँ को धनी आदमी को जामाता के रूप में पाने का हर्ष है । लेकिन लड़की उसको पसंद नहीं करती, उसे मालूम है, चाहे कितना भी धनी हो फिर भी हाथी के पैर जैसा उस का पैर देख कर उसे रोना आता है । ऐसे कई प्रसंग लोक-काव्य में और भी प्राप्त हैं ।

प्रेम महत्व संबन्धी

राजा हम न बधनियाँ के भूखल,
दर्शन चाहिए है ।

है, प्रियतम मैं तो तुम्हारे प्रेम की भूखी हूँ । गहने लेकर क्या करूँगी ? मुझे तो सिर्फ तुम्हारे दर्शन चाहिए ।

सीता की कथा

सामाजिक कुरीति स्त्री पर कहाँ तक लागू होती है, उसका महदुदाहरण है, सीता परित्याग की कथा । हिन्दी और मलयालम में हमने यह गीत, एक ही प्रसंग के आधार पर पाया है ।

सीता को लोक जीवन की भावभूमि में, उतार कर एक आदर्श ग्रहण करना लोक गीतों की सामाजिकता का परिचायक है। उत्तर रामायण का सीता-परित्याग का प्रसंग इस विभाग में आता है। सीता के गर्भिन होते हुए भी लोकापवाद के कारण राम ने उसे बाहर भेजने की आज्ञा दी। तब सीता ने राम से कहा कि नैहर में न तो मेरी माँ है, न पिता या सहोदर। इसलिए जनकपुर जाने में कोई तुक नहीं। पति के रहते ही पत्नी का नैहर में रहना भी ठीक नहीं है। अन्त में लक्ष्मण उसे किसी जंगल में छोड़ आता है। सीता अपनी प्रसव पीड़ा के कारण कहती है - हाय ऐसे अवसर पर मेरा दुःख कौन बँटाएगा ? कौन मेरे नवजात शिशु का नाल काटेगा। पुत्र जन्म की बधाई में कौन मुझ से सोने की हँसुली पुरस्कार में लेगा ? और मेरी लालसा कैसे पूरी होगी। सीता का यह करुण विलाप सुनकर वन देवियाँ बाहर निकल आती हैं, और अपने आँचल से सीता के आँसू को पोंछती हैं। वे कहती हैं - हे ! सीता बहिन, धीरज धरो, तुम्हारी देख भाल हम करेंगी। हम ही तुम्हारे नवजात शिशु का नाल काटेंगी, और तुम्हारे पुत्र जन्म की बधाई में सोने की हँसुली लेंगी। इस प्रकार तुम्हारी लालसा पूरी हो जाएगी।

दुखे कैसे अपने रघुनाथ कि धनि के बोला बोल हे
धनि अपनो नइहर या के ने बोल कि हमें तुहुँ जायब हो।

नय मोरा नइहर में माय
भइया सहोदर हे।

× × × ×

काने सीता करम करे
अँचरे लोर पोछथि हे

× × ×

ललना हम सीता आगु पाछु होएब,
हमें नार छीन बरे

ललना हमें लेब सोने के झंझुनिया
हृदय चुराएब रे ।

सीता के प्रति किये इस निष्ठुर व्यवहार की कड़ी निन्दा ग्रामीण स्त्रियों ने की है । अनेक कवियोंने दैनिक जीवन में राम और सीता के दाम्पत्य जीवन को अवश्य लिया है, किन्तु उस में जो अन्याय और निष्ठुरता है, उस की ओर अंगुली उन्होंने उठाई है । प्रेम के आगे कर्तव्य को भी हेय माना है । यह गीत सोहर गीतों में आता है । इस में यह भी अंकित किया है कि नाथ के साथ दम्पती भी रहना मानवता के नाते आवश्यक है । लोक गीत कारने यह स्पष्ट बताया है ।

<u>वसुधैव कुटुंबकं वाला आदर्श</u>

प्रत्येक लोक गीत हिन्दी और मलयालम में वसुधैव कुटुंबकं वाले आदर्श को चरितार्थ करने के योग्य हैं । ग्रामजीवन के उच्च आदर्श को बताकर संस्कृति की महत्ता दिखा करने में भी ये उत्सुक हैं । एक लोक गीत का सारांश देखिए :-

मैं ईश्वर के दरबार में प्रसन्नता के साथ रहूँगा । अन्न,धन और स्वर्ग किस केलिए है, यह रूप किस केलिए है ? और स्वस्थ शरीर किस केलिए है ? किस केलिए यह पुत्र है ? इन प्रश्नों का उत्तर है - अन्न सोना और धन दान के निमित्त है । रूप देखने केलिए है । स्वस्थ शरीर तीर्थ यात्रा केलिए है । प्यासे को पानी पिलाने केलिए है पुत्र ।

मूठ्ठे लागि अन धन सोना,
देखब लागि रूप ।

तीर्थ जलइ लागि निर्मल काया,
जल भरि लावथ पूत ।
हम न खुसी से रह अब ए
बहज भाथ दर बार में ।

सामाजिक कार्य की पूर्ति का बोध लोक-कवि को कोई नई चीज़ नहीं । इस लोक गीत में जो सामाजिक तत्व आया है, उसमें ध्यान देने योग्य बात समाज सेवा और समाज में धन दौलत के बाँटने की है । स्वस्थ शरीर तीर्थ यात्रा के लिए है, ऐसा कहने का मतलब यही है कि धार्मिक कार्यों में ही जीवन की सफलता एवं सार्थकता है । तीर्थ यात्रा के द्वारा नाना प्रकार के अनुभव प्राप्त होते हैं । उन अनुभवों से जीवन में सफलता मिलती है । प्यासे को पानी पिलाने के लिए पुत्र है । अर्थात् दूसरों की सेवा करना, उन के दु:ख को दूर करना, नाना प्रकार की इच्छाओं और आवश्यकताओं की तृप्ति करना ही पुत्र का कर्तव्य है । पुत्र जन्म का यही कारण है तो इससे सामाजिक चीज़ और क्या हो सकता है ? इस प्रकार के सामाजिक भावों की अभिव्यंजना करने में लोक गीतकार हमेशा उत्सुक रहा करता है । यह सामाजिक कर्तव्यों के विषय में लोक-काव्यकार की सजगता प्रकट करता है । अन्न, धन, सोना आदि के दान करने का जो निर्देश प्राप्त हुआ है, उसके बारे में भी यही बताया जा सकता है कि समाज में यदि किसी के पास अधिक संपत्ति हो जाय तो उसे दान में बाँट देना व्यक्ति का कर्तव्य है । ऐसा करने से समाज में दूसरों का भरण पोषण होता है । दूसरों की भलाई में आत्मशांति मिल जाती है । न्यायोचित धन-वितरण के बिना समाज में सुख एवं शांति की स्थापना असंभव है । प्रस्तुत लोक गीत इस महान सामाजिक तत्व की ओर इशारा करता है ।

सामाजिक बातों में तीजत्योहारों का संबन्ध

लोक जीवन का प्रथम पक्ष तीज त्योहारों से संबन्ध रखता है । प्रत्येक जाति या धर्म संबन्धी उत्सवों से संबद्ध कई गीत समाज में प्रत्येक त्योहार से संबन्ध रखते हैं । उन का लोक मानस को प्रभावित करने का महत्व पूर्ण स्थान है । होली, फाग जैसे त्योहार उत्तर में और ओणम, विषु जैसे कई त्योहार दक्षिण में भी प्रचलित हैं । इन सब का निरूपण लोक गीतों में यथा संभव पाया जाता है ।

पक्षी पशु वृक्ष आदि का निरूपण।

क।ग)

आदि मानव का दार्शनिक भाव नदी, पहाड, सूरज, चांद आदि से जिस प्रकार जुडा रहा करता है, उसी प्रकार वृक्ष-लता, पशुपक्षी आदि से भी अपना खुला संबन्ध रखता है । पशु-पक्षियों से, उसका निकटतम संबन्ध युग युगों से चला आ रहा है । आज के वैज्ञानिक युग में भी कौए, कोयल और सुग्गे को संदेश वाहक रूप में भेजा जाता है ।

> काक भाख निज भाखहु रे, पहु आओत मोरा ।
> खीर खांड भोजन देव रे, भरि सोनवा कटोरा ।
> सोनहि चुंचु मढाएब रे, देव चरन मढाई,
> प्राण प्यारा आंगन बिच जौं आओत आई ।

एक ग्राम वधू काग का संबोधन करती है - हे काग बताओ । मेरा प्रियतम आएगा कि नहीं ? यदि वह आएगा तो सोने के कटोरे में भर कर खीर खाने को दूंगी । तुम्हारे चोंच तथा पैरों को सोने से मढ्वा दूंगी ।

एक मलयाली युवती काग से, ऐसा कहती है कि रे काग, तू अपने तारस्वर से, मेरे अनुकूल वर को बुला लाना। अगर वह सुन्दर या सुमुख हो तो, आज मुझे थोड़ा अंजन लगाना पड़ेगा। कोई बूढ़ा हो तो, उसको देने के लिए थोड़ा पान बनाकर रखना है।

चाहे मलयालम में हो, या हिन्दी में काग, सुन्दरियों की अभिलाषा की पूर्ति में थोड़ी मदद करने वाला पक्षी है। लोक-कवि ने उस की ओर अपना ध्यान देना कहीं भी नहीं छोड़ा है।

गिरी पर्वत सं सुगा एक आएल
सुतल कोइ लिया जगा वह हो रामा।
तोहें कोइलि जाइ अमरे अमोलिया
हम सुगा जाइ छी गहुमाक खेत हो रामा।

हे, कोयल यहाँ आओ, मधुमिश्रित षड्रस भोजन खाओ और मेरे प्रियतम के पास जाकर कहो कि उसने मेरी सुधि क्यों भुला दी?

आनदिन बोले कोइली सांझ भिनु सरवा
आज कोना बोले आधी रतिया
सुतल बालम मोरा जागल कोइलिया।

कोयल ने कुहुक कुहुक कर आधी रात में ही मेरे प्रियतम को जगा दिया। मेरा प्रियतम मेरे साथ सोया हुआ था। पहले तो कोयल प्रातःकाल कुहु करती थी। आज न जाने वह क्यों आधी रात में ही कुहकने लगी।

मलयालम में भी लोक कवि ने कोयल से, कई तरुणियों के मादक भावों का उत्साहात्मक चित्र प्रस्तुत कराया है।

पशु

पारिवारिक जीवन में गाय, बैल, भैंस, बकरी, कुत्ते, बिल्ली, आदि पशुओं का निकटतम संबन्ध रहा है और उनके प्रति मानवीय चेतना अधिक सजग और सजीव होती रही है। बेटी की बिदाई के कारुणिक दृश्य को देखकर गाय भी रो पड़ी। लोक-कवि ने उस प्रसंग का वर्णन ऐसा किया है :-

गैया जो है करय दुहान केर बेर
बेटी के माय हँकरय रसोइया केर बेर।

दूध दुहने के समय गाय पुकारती है और रसोई घर में बेटी की जुदाई में माँ भोजन करने के समय बिसूरती है। प्रकृति के सहचर में भी इस करुणा की परम सीमा दिखाई गयी है।

वृक्ष

चैत बैसाख केर, धूप मत ओभा,
धिया मोरा जहति कुम्हलाय।
जौं हम जनितौं धिया सासुर जयती,
बाटहिं बिरिछ लगाय।

माँ कहती है यदि यह जानती कि बेटी ससुराल जाते समय चैत बैसाख की कड़ी धूप में कुम्हला जायगी तो मार्ग में दोनों ओर वृक्ष लगवा लेती। यहाँ माता का वात्सल्य द्रष्टव्य है। लोक-काव्यों में वृक्ष के प्रति इतनी सजग भावना है कि आम और महुए के विवाह के बिना विवाह संस्कार संपन्न नहीं होता।

फूल

लोकगीतों में फूलों का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीनकाल से ही फूलों की सुन्दरता एवं सुगन्ध पर लोक-गीतकार मुग्ध थे। फूलों की कोमलता से मानव

जीवन के भावों को सुसज्जित करने की रीति कायम थी ।

कमलक फूल सन बाप
    पुरइन देह सन माय हम तेजलता,
छुटि गेल बाबा के राज ।
    डारि अआरि जब देखल्हि पिया ।

ऊपर की पंक्तियों में एक बेटी कहती है कि कमल के फूल की भांति मैं पिता को छोड आयी । कमल से हरे भरे तालाब की भांति मां को त्याग दिया । बाबा के सुखमय राज्य को भी छोड दिया । ससुराल जाते समय रास्ते में जब उसने डोली का पर्दा उठाकर देखा तो जन्मस्थान की याद आ जाने से उसका हृदय ककडी की तरह फटने लगा ।

कोन फूल फूले आधी आधी रतिया,
कोन फूल फूले भिन सार मधुबन में,
    बेली फूल फूले आधी आधी रतिया,
    चम्पा फूल फूले भिन सार मधुबन में ।

इन लोक-काव्यांशों के द्वारा यह प्रमाणित होता है कि लोक जीवन कितना सरल और साधारण है । इनमें, पक्षी, पशु, वृक्ष, फूल आदि के साथ उसका रागात्मक संबन्ध युग युगों से जुटा चला आ रहा है और लोक जीवन में उनका महत्वपूर्ण स्थान है । उन्हीं से वह विकसित और अनुप्राणित है ।

<u>लोककाव्यों में संगीत तत्व</u>

मोकगीतों की यह विशेषता है कि किसी खास अवसर पर खास गीते गाये जाते हैं । लोक जीवन सरल और साधारण होता है ।

उसमें भावुकता हमेशा भरी हुई है। प्रकृति की हर वस्तु से उसका रागात्मक संबन्ध है। युग युग से यह क्रम चला आ रहा है। वास्तव में उसका विकास इस से होता है। लोक जीवन की जान लोक संगीत है।

हिन्दी और मलयालम प्रदेशों में इन गीतों के गाने के ढंग में थोड़ा अन्तर पाया जाता है। उत्सव और पर्वों के समय गाये जानेवाले गीतों को छोड कर, मलयालम में, खास गीत खास, अवसर का यह विभाजन कम है। संस्कार गीत और अनुष्ठान-गीतों का सम्मिलन भी कहीं कहीं होता है। जाति गीत और, श्रम गीतों में भी यह पार्थक्य कम पाया जाता है। इसलिए संगीत और वाद्योपकरणों की बात भी ऐसे अवसरों पर भिन्न रहा करती है। लेकिन हिन्दी की विविध बोलियों में खास खास गीत के गाने का अलग समय और वाद्यों का नियम भी निश्चित किया गया है।

बेटी की बिदाई के समय समदाउन गायी जाती हैं। कमरखुआँ तीर्थ यात्रा के समय मात्र गाये जाते हैं। तिरहुति एक खास रागिनी है, नचारी, महेशवाणी आदि भक्तिपरक गीत हैं। ग्राम स्त्रियाँ यहीं कहीं, लोकगीतों को सामवेद के समान गाती हैं। जब कि पुरवधुटियाँ संगीत सामग्रियों की सहायता से ये गीत गाती हैं। ऐसा करने से गीतों की स्वाभाविकता मारी जाती है। स्वर भंग होने की संभावना भी है। इस कारण लोक संगीत की मधुरिमा नष्ट हो जाती है।

संगीत सुनने की वस्तु है। उससे कान के द्वारा हृदय को आनंद मिलता है वह प्रभावित होता है। लोक गीतों में श्रवण का महत्वपूर्ण स्थान है। लोक गीतों की सर्व श्रेष्ठ महत्ता उसके संगीत में रहती है।

अनादि काल में इस दृष्टि से संगीत फूट पड़ा हो । भाषा के साथ साथ संगीत ने ही मानव जीवन को मुग्ध करा दिया है । प्रत्येक लोक गीत के निरीक्षण से ऐसा मालूम पड़ता है कि संगीत की शास्त्रीयता से भी ये गीत सुसज्जित हैं । संगीत की एक विशिष्ट प्रेरणा यह है कि वह सौन्दर्याभिव्यक्ति का महत्त्व हमेशा रखता है । अन्य भाषा विषयक नियमों से लोक-काव्य चाहे कहीं भी संपुष्ट न हो फिर भी संगीत की बात उसके संबन्ध में भिन्न है । वह संगीत का स्रोत ही बना देता है ।

नृत्य और लोक-काव्य

पण्डितों का एक मत आज भी शक्तिशाली रहा कि सर्ग के आरंभ में ब्रह्मा के मुँह से "ओं"कार का प्रणयन हुआ । यह शब्द की प्रथम ध्वनि एवं संगीत का आद्य नाद माना जाता है । लोगों का और भी विश्वास है कि समुद्र मंथन के समय जो शंख ‖सौंखा‖ प्राप्त हुआ, उसके बजाने पर वाद्य संगीत का प्रथम नाद निकल आया । उसका श्रेय भगवान विष्णु को प्राप्त है । त्रिपुर दहन के समय शिव प्रसन्न होकर आनंद नृत्य करने लगे जिसके फलस्वरूप नृत्य कला की सृष्टि हुई । नाट्य कला के भिन्न रूप को भरत मुनि ने ऐसा विभक्त रखा - नृत्त, नृत्य और नाट्य । नृत्य के भी दो रूप हैं, ताण्डव एवं लास्य । प्रथम उग्र भाव प्रदर्शक है तो दूसरा मधुर भाव व्यंजक है । ताण्डव पुरुषों और लास्य स्त्रियों के लिए निश्चित है । इन दोनों रूपों के भावमूलक अवस्थानुकृति कहते हैं । इन में स्थायी और संचारी दोनों भावों को व्यक्त करने में ये सार्थक और सफल माने जा सकते हैं । भारतीय संस्कृति में संगीत ‖गायन, वादन और नृत्य‖ आदिकाल से देवताओं से संबन्धित रहा है और आज भी पूजन कीर्तन आदि में प्रयुक्त होता हुआ धर्म का अंग बना हुआ है ।

1• मत्स्यपुराण

लोक-नृत्तों का लोक-काव्य से संपूर्ण ही संबन्ध है। लोक-नृत्य लोक-गीतों के सहारे से ही आज तक जीवित है। हिन्दी के खासकर पूर्वोत्तर भागों का लोक नृत्य जट-जटिनी, श्यामा-चकोवा आदि को ही लें। ये गीत-नृत्य हैं। जितने ही साधारण लोक-गीत प्रचलित हैं वे सब, चाहे अनुष्ठानक था, सामाजिक भी हो मलयालम में हो या हिन्दी में सब नृत्य से संबन्ध रखने वाले हैं। इन नृत्य और गीतों पर ध्यान रखने से ऐसा मालूम पड़ता है कि ये नृत्य और गीत सारे के सारे एक दूसरें से संबन्ध रखते हैं और साथ साथ चलते हैं। उन की सर्व श्रेष्ठ विशेषता भी यह है।

मलयालम लोक गीतों को गाते नृत्य करनेवाले भिन्न जाति के लोग - उडुक्कु [डमरू] का उपयोग करते हैं। उन गीतों और नृत्यों का नाम भी उन जातियों के नाम से मिला जुला होता है। अय्यप्पन पाट्टु, तीयाट्टु, कालिनृत्य आदि के साथ भी गायन वादन के समय अपने अपने विशिष्ट उपकरणों का प्रयोग होता है। हर कहीं डमरू घट, चिंचिली आदि का प्रयोग साधारण है। परयन्तुल्लल [परय जाति का नृत्य] पूतक्कलि, गन्धर्वन कलि आदियों में एवं - ताळप्पुलु में भी भिन्न भिन्न वाद्यों का प्रयोग है। परयन तुल्लल को "परा" नगाड़ा] के उपयोग की एक विशिष्ट रूढि है। ताल प्पुत्तु में, केरल के लोक मंच पर प्रयुक्त समस्त वाद्योपकरणों का प्रयोग समान रूप से होता है। लेकिन सारे भारत में हर लोक-मंच पर "डमरू" का उपयोग विशेष ध्यान पूर्वक विचार करने की बात है। भगवान शिव के हाथ का वाद्य है - डमरू। इस डमरू से ही "ताल" शुरू हुआ। इस विश्वास के समर्थन करने में यह समर्थक है। उसके अलावा समस्त भारत में "शैव" धर्म की अनश्वर धारा की प्रबलता, जारी रखने का निदर्शन भी है यह। उत्तर भारत के नचारी, महेश वाणी आदि गीतों के साथ डमरू बजा बजा कर नृत्य करने की परंपरा आज भी चली आ रही है। लोहर झूमर, जट-जटिनी समदाउन, तिरहुति, मलार, फाग वसन्त, फाग आदि लोक गीतों में नृत्य की भावुकता रही है। रास, पचासी, गुंज, सिल्ली, आदि के साथ भी नृत्य का अटूट संबन्ध रहा है।

दक्षिण की पुलैक्कलि, संघक्कलि, कुम्मादट्टी, कुम्मिक्कलि, कोल कलि, सट्टक्कलि, वेलकलि, तिरुवातिरकलि, ओप्पना आदि के साथ गीतों का अटूट संबन्ध भी इस सामान्यवाद् कारण का स्वरूप है । इस कारण से हम कह सकते हैं कि नृत्त गीत और ताल - तीनों का समन्वय लोक कलाओं का मार्मिक अंश है । लोक काव्यों की सार्थकता इस समन्वयकारी पक्ष पर अधिक आधारित रहती है । समस्त लोक काव्य की संसार इस तत्व पर आधारित है ।

आल्हा, लोरिक, शोभानयका बनजारा, ढोला मारु, कुंवरसिंह, संत वसंत, सोरठी आदि लोक गाथा एवं पंवाडाओं के गायन के समय, विविध वाद्यों का उपयोग करना साधारण है । गायक लोग कहीं कहीं, इन उपकरणों के साथ टोली बनाकर एक गांव से दूसरे गांव जाकर गाते हैं । इन टोलियों को देखते ही लोग समझ लेते हैं ये आल्हा के गायक हैं या सोरठी के ।

उसी प्रकार मलयालम में भी चण्ड, मद्दलं, इडक्का, उडुक्कु, जालर, इंलत्तालम आदि के साथ गायक वृन्द, रामकथप्पाट्टु, तच्चोलिप्पाट्टु, भीलिकथप्पाट्टु आदि आज भी गाते हैं ।

इसी प्रकार लोक गायक सारे प्रान्तों में गीत और तालों को समान महत्व देकर गायन वादन में भाग लेते हैं । ताल और गीतों की अभिन्नता का कारण हम लोक काव्य के अध्ययन से और भी समझ सकते हैं । लोक काव्य आदि नाद और आदि ताल का उत्स बना देता है । शिष्ट काव्य शिष्ट संगीत दोनों युगों के बाद की - नितांत प्रयोग विभाजन के बाद की उपलब्धि हैं । उसके सामने शास्त्रीयता एवं मनन का अंश रहा है । लेकिन आदि मानव के सामने "वह" और उस के सामने की प्रकृति मात्र थी । उस समय से उत्पन्न कला और काव्य की व्याख्या ही हमारा लक्ष्य है । ताल और गीतों का मिलन ठीक वैसा ही हुआ है जैसे शरीर और प्राण । दोनों के सम्मिलन पर ही मात्र दोनों का अस्तित्व है । आजकल "शास्त्र" ताल और गीत के बारे में क्या कहता है - यह भी इस प्रश्न पर दर्शनीय है ।

ताल

ताल की उत्पत्ति के संबन्ध में, कई प्रचलित मतों को छोड कर हम इस बात को स्वीकार कर सकते हैं कि आदमी के पदचलन के क्रम से "ताल" नियमों का निर्माण किया जा सकता है ।

जब कोई साधारण आदमी चलता है तो उसके दोनों पैरों के रखने की "रीति" और उसके बीच के "समय" को लेकर "ताल गणना" सिद्धान्त स्वीकृत किया गया है । इस "क्रम" को "स्वर प्रतीक" बताया गया है ।

"त" "क" "ति" "मि" - इन स्वरों में उस "समय" और "क्रम" दोनों को स्पष्ट कर सकते हैं । किसी साधारण आदमी के चलने की चाल से अतिरिक्त किसी लंगडा आदमी के चलने की चाल, रीति और उसके समय को भी ले सकता है - "त" "कि" "डा" । पहले के चार शब्द - तकिमिम और दूसरे के तीन शब्द "तकिडा" - दोनों को मिलाकर -

"तकितिमि तकिडा" सात शब्द ताल के मूल शब्द निकाले है ।

इन सातों शब्दों को, मिलाके और घटा के ताल मालिका के अन्य शब्द भी बनाये गये हैं । इस प्रकार 35 ताल मालिका शब्द और उन सबका "वर्ग" और नाम बतलाया गया है । इन में चार "वर्ग" - जो इस प्रकार है :-

चतुरश्र, तिश्र, मिश्र, खण्ड ।

एक को काटकर दूसरे से मिलाकर तीसरा बनाया गया है । इस क्रिया में समय का महत्व रहा है । ध्रुव, मध्य रूपक, जंब, त्रिपुट, अट एकं आदि का निर्माण इस प्रकार हुआ है । वाद्यों में उनका प्रकरण भिन्न दिशा में निश्चित किया गया है । "मृदंग" में - तरिकिट तद्दिं किन तों ।
"तबला में - ता धि धि ना ति कि ना धा - इस प्रकार है ।

गीतों को इन क्रमों से मिलाकर ही रखा है । ताल के अनुकूल ही ये सब गत बनते हैं । छन्दों का निर्माण [मीटर] इस के अनुकूल आता है । मलयालम की "अन्न नडा", संस्कृत का "शार्दूलविक्रीडित" आदि, मानवेतर जीव की चाल के आधार पर हुआ है । प्रकृति के अन्य जीवजालों की चाल को देखकर अवर की क्रिया का समावेश कराया गया । भुजंग प्रयाता आदि छन्दों को सर्पयान से मिलाया जा सकता है । इस कथन का मतलब यही है - आदि मानव की कला उस के और उसके सामने के जीवन जन्तु के चाल-चलन, रीतिक्रम, क्रीं-विकार, रंग ढंग आदि से व्युत्पन्न है । "तालों" के अर्थ में यह मानव मात्र से शुरू होकर अन्य जीवन-जन्तुओं तक बना । भिन्न तालों का निर्माण भिन्न चाल के अनुकरण में हुआ । वाङ्मय में इस का आविर्भाव और भी, स्पष्ट दीखने लगा । तालों की भिन्नता भी है । छन्दों की भिन्नता का कारण हुई । गीतों में यह और भी स्पष्ट है कि - गीत-शब्दानुकरण पर आधारित है । ताल और गीत में इस मेल मिलाप का संबन्ध और भी स्पष्ट दिखाई देने लगा । आदमी की गाने की प्रेरणा ही अपने अंतर तम की प्रेरणा के साथ साथ बाहरी शब्दानुकरण का प्रलोभन भी होगा[1] ।

पशुपक्षियों के शब्दों से ही आज का शास्त्रीय [संगीत] निष्पन्न माना गया है । स्वर प्रतीकों में तालों का मेल मिलाप - जिन मूल स्वरों से सप्त स्वरों का निर्माण हुआ है - उन स्वरों से संबन्ध रख कर ताल भी बनाया गया है । यहाँ "ताल" और "स्वर" दोनों मिल जाते हैं । उनका तन्मयीभाव भी होता है जिन स्वरों को "श्रुति" बताया गया है उनका आविर्भाव जन्तु गत है । उनका नामकरण भी वैसा ही हुआ है ।

---

1. ताल-मालिका एवं संगीत मालिका :- सी. श्रीकृष्णशास्त्री - पृ.60
"अ" - अप्पुकुट्टन वाडाम्मण्णी - मातृभूमि साप्ताहिक - पृ.4, 14.6.1973
"आ"- "स" षड्ज मोर, | "र" ऋषभ बैल
"ग" गान्धार बकरा, | "म" मध्यमा क्रौंच
"प" पंचम कोयल, | "ध" धैवत घोडा
"न" निषाद हाथी |

इस अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि संगीत और नाम का संबन्ध निकट है। लोक काव्य के बारे में कहते समय यह भी स्पष्ट बता सकते हैं कि आदि मानव ने उसकी कला के निर्माण में पहले अपने को देखा और उसके बाद प्रकृति को देखा। उसका परिणाम स्वरूप है उसका नृत्य और गीत। लोक काव्य वही है जिस के निर्माण का वह मुहूर्त आज भी, वैसा ही रहता है।

लोक-काव्यों का कुछ समान ध्येय और आदर्श

भिन्न प्रान्तों के लोक काव्य के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इन लोक काव्यों में भाव-साम्य अधिक है। कभी कभी लोक काव्यों में से एक गीत या गाथा अपनी आंचलिक सीमाओं को तोड कर ऊपर उठती है और वह समस्त जनता की हो जाती है। हर भाषा में ऐसे कुछ विशिष्ट गीत या गीत-कथा प्राप्त होते हैं। संभवतः इस बात को ध्यान में रख कर ही श्री॰ धीरेन्द्र वर्मा ने कहा है कि लोक काव्य की परंपरा कदाचित उतनी ही पुरानी है जितनी मनुष्य जाती है। वह समस्त भाषा भिन्नता से ऊपर उठकर मनुष्य जाति की परंपरा गत विकास परिस्थिति के साथ आज भी बहता आ रहा है। वह संगीत मयी भाषा का बहता रूप है। हिन्दी लोक-काव्य के अध्ययन से उसकी विशेष बोलियों में इस गेय विधा का प्रामुख्य दृष्टि गत होता है, जो अपनी जातिगत, धार्मिक, आचारपरक नीति संहिताओं को अकुण्ण निधि के समान सुरक्षित रखता है। मलयालम लोक काव्य की आधार शिला भी इन तत्वों पर अधिष्ठित मालूम पडती है। दोनों में सर्वभूत हिताय एवं सर्वजन सुखाय वाले आदर्श की भावनाएं अभिव्यक्त की गयी हैं। एक में उत्तर भारतीय जन जीवन और संस्कृति का सुन्दरतम चित्रण पाया जाता है तो दूसरे में दक्षिण की संस्कृति की झलक अधिक पायी जाती है। लेकिन दोनों की तुलना में एकतानता और समानता अधिक दीख पडती है।

समस्त भारतीय जनजीवन को ग्राम्य जीवन बताया जा सकता है। ग्राम जीवन की विशेषता यह है कि उस में समस्त जनोपयोगी, समस्त प्राणिहित का कार्य किया जाता है। इतिहास भी इसका साक्षी है कि जनोपयोगी कार्यों पर सारा समाज एक समय दिल दिया करता था। गांवों में कुआं खोदवाने, तालाब बनवाने बाग लगवाने आदि की प्रथा पुराने जमाने में सदा से रही। यह कार्य सारे गांववालों के उपयोग केलिए समस्त प्राणिहित होता था। लोक काव्य उस "लोकोसमस्तो सुखिनो भवन्तु" वाले आदर्श की ओर समाज को लेजाने की चेतावनी देती है। कुआं खोलने का फल पानी भरनेवाली पनिहारिनों को थोडा आराम देना था बाग लगवाने का फल यही था कि पथिक उस छाया में बैठकर आराम कर लें और मन चाहा आम तोड कर खावें। पोखरा खोदवाने की सार्थकता इस बात पर है कि गाय बैल आकर ठंडा पानी पी सकें। सारे लोक काव्यों के अध्ययन से भी इस आदर्श की सार्थकता समान रूप से प्राप्त होती है कि भाषा या प्रान्त के परे इस भाव गरिमा का सर्वत्र आभास होता है। चाहे केरल के लोक-काव्य में हो, या उत्तर के लोक-काव्य में इस प्रकार के कुछ समान आदर्शों का दिग दर्शन सुलभ है। देश के हर कोने के लोक काव्य में इस तरह की भावोक्तियां पायी जाती हैं, उस की कोई सीमा रेखा खींची जा नहीं सकती। प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, आचार विचार आदि को आज भी इन लोक-काव्यों ने अक्षुण्ण बना रखा है - और उनकी निगूढ आत्मा सर्वत्र इन में समान रूप से मुखरित हो उठी है। जीवन का कोई भी महत्व पूर्ण अंग ऐसा नहीं है जो लोक-काव्य में अभिव्यंजित नहीं हुआ हो। यहां समस्त मानव समाज इन से अत्यन्त प्रभावित और उपकृत रहा है। ऐसा भी जान पडता है कि लोक-काव्य के बिना कहीं का भी जीवन सूना पड जाता है। एक देश का जन जीवन सचमुच ऐसी उपलब्धियों के द्वारा ही अपने आप में ही समायी रहती है और स्वयं प्रगति की ओर उन्मुख भी रहता है। लोक-काव्य उसके गुण दोष, सुख दुःख आदि सभी प्रवृत्तियों पर स्वाभाविक ढंग से प्रकाश डालता है। इस प्रबन्ध में हम ने समस्त लोक काव्य का अध्ययन किया है। उसके निष्कर्ष के रूप में हम निस्सन्देह ही बता सकते हैं कि इस देश का लोक-काव्य यहां के जन जीवन में हमेशा प्राण फूंक रहा है। सच है, समस्त जगत में भी

यही बात हो रही है । यह हम को इस निष्कर्ष पर ले आता है कि सृष्टि के प्रत्येक मानव की मूल भावनाएं एक ही हैं, उसका हृदय सर्वत्र एक सा है । समता की ये प्रवृत्तियां लोक साहित्य में परंपरा से संचित होती आ रही हैं । लोक काव्य उस का साक्षी है ।

हिन्दी और मलयालम लोक काव्य के अध्ययन से यह तत्व और भी सार्थक सिद्धकिया है । ठीक है, इन दोनों भाषाओं के लोक-काव्य के पीछे एक ही मन और एक ही हृदय छिपा है जो मनुष्य मात्र में समान रूप से पाया जाता है । ठीक ही महात्मा गांधी जी ने भी एक जगह ऐसा लिखा है - मानव हृदय सर्वत्र एक सा है ।

उपसंहार

इस प्रबन्ध के उपसंहार के रूप में यह जोड़ना अनिवार्य मानता हूं कि साहित्य शब्द के आरंभ में "लोक" प्रत्यय लगाने से मात्र से लोक साहित्य शब्द द्वारा आभिजात्य संस्कार शास्त्रीयता और पाण्डित्य की चेतना अथवा अहंकार शून्य परम्परा के प्रवाह में जीवित मनुष्य की लिखित, अभिव्यक्ति से भिन्न विविध जातियों और परस्पर रूप से एक दूसरे में अंतर भुक्त समुदायों की वाणी गत व्यंजना का बोध मात्र होता है । यह व्यंजना धर्म गाथा, लोक गाथा, परम्परा गत कथा अवदान संग्राख्यान लोक गीत पहेलिकाओं चुटकुलों और मंत्रों के रूप में - मौखिक अभिव्यक्ति मात्र में उपलब्ध है । मौखिक वाणी विलास के रूप में प्रवाहमान ऐसा समस्त साहित्य खुले अर्थ में लोक-संस्कृति का एक अंग भी है । उस के अंतर्गत जो "गेय" रूप प्राप्त है वही इस प्रबन्ध में अध्ययन का विषय बनाया गया है । यद्यपि यह केवल एक अंग मात्र है, तोभी यह एक विशाल वनस्थली है । उसकी झांकी भर एक मात्र यहाँ है । उन सब का आकलन और परीक्षण निरीक्षण कठिन काम है । सबसे अधिक कठिन काम, शुद्ध पाठ का निर्णय और काल विभाजन है । विषय वस्तु के विभाजन और तुलना में भी कठिनाई अनुभव हुई । भाषागत अंतर भी कहीं कहीं, बाधा डालती है

पूर्व सूरियों के मतों को कहीं कहीं उसी प्रकार इसलिए स्वीकार करना पड़ा है । तो भी, मौलिक उद्भावना से जहाँ समर्थन जुट कर सकता था । वहाँ, वैसा ही काम किया है ।

भारत एक विशाल भू भाग है । यहाँ तरह तरह की जातियाँ अपने विशेष परिवेश और मानसिक रचना के अनुकूल अपने आचरण तथा चरित्र को ढालने का प्रयास कर रही हैं । तदनुसार मूल आंतरिक एकता के बावजूद उनके अपने व्यक्तित्व तथा चरित्र भी हैं । देश के दो विभिन्न क्षेत्रों में रहने बसने, वाली जातियों और उपजातियों की एक दूसरे पर जो क्रिया - प्रतिक्रिया और घात प्रतिघात हुए उनके अनुरूप इन प्रदेशों में सर्वत्र अलग अलग अपनी अपनी विशेषताएं दीख पड़ती हैं ।

केरल के बारे में संक्षेप में कहते हुए यह उपसंहार भी पूरा करना अधिक अच्छा होगा कि दक्षिण भारत के इस सुदूर दक्षिणी आंचल में भी भारतीय संस्कृति का एक रचना एक विशेष प्रकार से हुई, जिसकी झांकी इस भूभाग के निवासियों की भाषा, रीति रिवाज सामाजिक अनुष्ठान इत्यादि में देखी जा सकती है । प्रागैतिहासिक युग से लेकर बारहवीं सदी तक का कोई क्रम बद्ध इतिहास इस छोटे आंचलिक विषय में भी नहीं है । यहाँ के लोक काव्य के अध्ययन ने हम को इस नितांत सत्य की ओर भी अग्रसर किया है । उस समय के बाद भी एक केन्द्रित सत्ता का अभाव सर्वत्र प्राप्त है । उसके बाद भी यह देश टुकड़ों में बांट कर अलग अलग राजाओं के हाथ में था । हमारे प्राप्त लोक काव्य के अधिकांश भाग को उस काल खण्ड की उपलब्धि बता सकते है । इस कारण मलयालम लोक-काव्य में सामंत कालीन आचार विचारों एवं रीतिरिवाजों की झलक अधिक पड़ती है । इस से ऐसा नहीं समझना कि केरल की संस्कृति केवल इन बातों पर मात्र आधारित है । उत्तर भारत के अधिकांश लोक काव्यों एवं पंवाड़ों की भी यही स्थिति है । लेकिन इस ऐतिहासिकता के क्षेत्र में खड़े हुए हम यह बता सकते हैं कि लोक जीवन के सहज स्वाभाविक और आडंबरहीन

कार्यव्यापारों की यहाँ की स्थानीय संस्कृति पर गहरी छाप है । उसके अनुकूल ही यहाँ का लोक काव्य भी रहा है ।

लोक काव्य के इस अध्ययन को इस प्रकार समाप्त कर सकते हैं कि विविध बोलियों में व्याप्त हुए होते हुए भी यह इस प्रकार है :-

हँणं मारां, हण मारां
इतिवृत्तं पुटल नृत्तं
ओर कथ्युं तीरुवति-
ल्लत्तु तुळराय पडवन्नु
पल्लाटिल, पल्लाट्टिल
.... यही इसकी विशेषता है ।

मात्र : लय बदल जा सकता है, नायक नायिका बढ जा सकती है, कथानक जीवन का सब कुछ हो सकता है, लेकिन कहीं भी इसका अन्त नहीं होता । लगातार चलती है, हर प्रांत में हर गीत में.......।

इन गीतों, कविताओं के बारे में भी यही कह सकता है कि, इनके गाने का ढंग शायद बढ लेगा इसमें व्यक्त कथा पात्रों कथानकों में चरित्र में अन्तर भी हो सकता है, इसका कथानक कभी कभी जीवन की समस्त दशाओं को पार करके अंतिम संस्कार तक पहुँच जानेवाला हो सकता है, - लेकिन इस की यही विशेषता है, इस का कभी भीअन्त नहीं हो सकता, इस काव्य धारा के सिलसिले व कड़ी बनती बनाती यह लगातार जारी रहती है । हरेक देश में अपनी अपनी गाथा में । इसका प्रवाह जीवनधारा के साथ उसके क्रम से हमेशा रहेगा । इतिह को बनाता है, यह इतिहास को बदलता भी है ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

क्र०सं०	ग्रंथ नाम	रचयिता / प्रकाशक का नाम	वर्ष
	संस्कृत - हिन्दी		
1.	अथर्व वेद		
2.	अवधी का लोक साहित्य	डा० सरोजिनी रोहतगी नेशनल पब्लिकेशन्स, दिल्ली	1971
3.	आदि हिन्दी की कहानियाँ और गीत	राहुल सांकृत्यायन राहुल पुस्तक प्रतिष्ठान, पटना	1959
4.	आश्वलायन गृह्य सूत्र		
5.	ऋग्वेद		
6.	ऐतरेय ब्राह्मण		
7.	कनौजी लोक साहित्य	डा० सन्तराम अनिल अभिनव प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली	1975
8.	काव्य के रूप	गुलाब राय	1934
9.	केरल की जनकथाएं	डा० एन०ई० विश्वनाथ अय्यर कोचिन विश्वविद्यालय, कोचिन	1977
10.	केरल की वीरगाथाएं	केरल विश्वविद्यालय, त्रिवेन्द्रम	1967
11.	खड़ीबोली का आन्दोलन	शितिकंठ मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी	
12.	खड़ीबोली हिन्दी और पंजाब में उसका व्यवहृत रूप	डा० विनयमोहन शर्मा, भाषा विभाग, पंजाब	1962
13.	खड़ी बोली का स्वरूप	ओंकार राही रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली	1969

14	खड़ी बोली का लोक साहित्य-डा॰सत्यागुप्त	हिन्दुस्तानी एकादमी,इलाहाबाद	1965
15	गाथासप्तशती		
16	ग्राम साहित्य,कविता कौमुदी-राम नरेश त्रिपाठी भाग - 5	हिन्दी मन्दिर, प्रयाग	1952
17	" भाग - 3	राम नरेश त्रिपाठी, आत्माराम एण्ड सन्स,दिल्ली	1952
18	छत्तीसगढ लोकजीवन और लोक साहित्य का अध्ययन	डा॰शकुन्तला वर्मा रचना प्रकाशन	1971
19	जाहर पीर, गुरुगुग्गा	डा॰सत्येन्द्र आगरा विश्वविद्यालय,आगरा	1956
20	धरती गाती है	देवेन्द्र सत्यार्थी राजहंस प्रकाशन,नई दिल्ली	1951
21	धूलि धूसरित मणियाँ	सीता,दमयंती,लीला प्रभाकर नेशनल पब्लिशिंग हाउस,दिल्ली	1964
22.	प्रकृति और मानव	डा॰रघुवंश नेशनल पब्लिशिंग हाउस,दिल्ली	1960
23	पारस्कर गृह्यसूत्र	"	1951
24.	बाजत आवे ढोल	देवेन्द्र सत्यार्थी राजहंस प्रकाशन, दिल्ली	1951
25.	बेला फूले आधी रात		1948

26	भारतीय लोक साहित्य	डा॰श्याम परमार राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	1958
27	भाषा विज्ञान	डा॰श्याम सुन्दर दास इण्डियन प्रेस, प्रयाग	सं॰2006
28	भाषा विज्ञान	डा॰ भोला नाथ तिवारी किताब महल, इलाहाबाद	1976
29	भोजपुरी लोक गीत - 1	डा॰कृष्णदेव उपाध्याय हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग	सं॰2023
30	" - 2		
31	भोजपुरी लोक गाथा	डा॰सत्यव्रत सिन्हा हिन्दुस्तानी एकाडमी,इलाहाबाद	1965
32	भोजपुरी लोक गीत में करुणरस	दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग	1965
33	भोजपुरी लोक साहित्य	डा॰कृष्णदेव उपाध्याय हिन्दी प्रचार पुस्तकालय,काशी	सं॰2019
34	मध्यदेश-ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सिंहावलोकन	डा॰धीरेन्द्र वर्मा बिहार राष्ट्रभाषा परिषद,पटना	1955
35	मध्य युगीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्त्विक अध्ययन	डा॰ सत्येन्द्र विनोद पुस्तक मन्दिर	1963
36	मनुस्मृति		

37	महाराष्ट्र का हिन्दी लोककाव्य	कृष्णाजी गंगाधर दिवाकर हिन्दी साहित्य भंडार	सं॰2020
38	मालवी लोक गीत एक विवेचनात्मक अध्ययन	चिन्तामणी उपाध्याय, मंगल प्रकाशन, जयपुर	
39	मालवी लोक साहित्य	डा॰श्याम परमार राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	1958
40	मैथिली लोकगीत	राम इकबाल सिंह राकेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग	सं॰1999
41	मैथिली लोकगीतों का अध्ययन	डा॰तेजनारायणलाल विनोदपुस्तक मन्दिर	1960
42	याज्ञवल्क्य स्मृति		
43	रघुवंश	कालिदास	
44	रामचरितमानस	तुलसीदास	
45	रामायण	वाल्मीकि	
46	राजस्थान के लोकगीत	सूर्य करण पारीक नरोत्तम हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग	1956
47	लोक गीतों का उदगम एवं विकास-डा॰जवाहरलाल हाण्डु	सप्तसिंधु, पटियाला	1968
48	लोक गीतों की सामाजिक व्याख्या-कृष्णदास	साहित्य भवन, इलाहाबाद	1962

49	लोकगीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि-डॉ॰विद्याचौहान		
		प्रगति प्रकाशन, आगरा	1972
50	लोक साहित्य और संस्कृति	डॉ॰ दिनेश्वर प्रसाद	
		लोक भारती प्रकाशन,इलाहाबाद	1973
51	लोक गीतों का विकासात्मक अध्ययन-डा॰कुलदीप		
		प्रगति प्रकाशन, आगरा	1972
52	लोक साहित्य विज्ञान	डा॰सत्येन्द्र	
		शिवजी अग्रवाल एण्ड कंपनी,आगरा	1962
53	लोक साहित्य विमर्श	डा॰श्याम परमार	
		कृष्णाब्रदर्स अजमेर	1972
54	लोक साहित्य के प्रतिमान	डा॰कुन्दलाल उप्रेती	
		भारत प्रकाशन	1971
55	लोक साहित्य की सांस्कृतिक परंपरा-डा॰मनोहर शर्मा		
		वोहरा प्रकाशन	1971
56	लोक साहित्य की भूमिका	डॉ॰कृष्णदेव उपाध्याय	
		साहित्य भवन, इलाहाबाद	1957
57	ब्रज और बुन्देली लोक गीतों में कृष्ण कथा	डा॰ शालिग्राम गुप्त	
		विनोद पुस्तक भण्डार	1966
58	ब्रज भाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन	डा॰ कैलास चन्द्र भाटिया	
		सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा	1962

59	ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन	डा॰सत्येन्द्र	
		साहित्य रत्नभण्डार, आगरा	1957
60	श्रीमद्भगवद्गीता	गीता प्रेस,गोरखपुर	सं॰2028
	संस्कृति के चार अध्याय	रामधारी सिंह दिनकर	
		राजपाल एण्ड सन्स	1956
	संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर	रामचन्द्र	
61	हमारे संस्कार गीत	कृष्णदास	
		मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद	1962
62	हाड़ौती लोक गीत	डा॰ चन्द्रशेखर भट्ट	
		कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर	1966
63	हिन्दी साहित्य कोश-भाग-1		
64॰	हिन्दी साहित्य का आदिकाल	हजारी प्रसाद द्विवेदी	
		बिहार राष्ट्रभाषा परिषद,पटना	1969
65	हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	किरण कुमारी गुप्त	
		हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग	1950
66	हिन्दी साहित्य का इतिहास	रामचन्द्र शुक्ल	
		काशी नागरी प्रचारिणी सभा	सं॰2005
67	हिन्दी साहित्य का बृहत	[सं] राहुल सांकृत्यायन	
	इतिहास भाग[16]	काशी नागरी प्रचारिणी सभा	सं॰2017
68	हिन्दी साहित्य का उद्भव और	रामबहोरी शुक्ल और भगी	
	विकास	भगीरथ मिश्र	
		हिन्दी भवन,जालन्धर	1959

69	हिन्दूसंस्कार	डॉ॰ राजबली पाण्डेय विश्वविद्यालय प्रेस,वाराणसी	1960

मलयालम विभाग

71	अरबि मलयालम साहित्य चरित्रम	ओ॰ अबु॰ एन॰बी॰एस॰ कोट्टयम्	1970
72	आधुनिक मलयालम साहित्य	पी॰के॰परमेश्वरन नायर एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम्	1972
73	आधुनिक साहित्यं	एस॰ गुप्तन नायर एन॰बी॰एस॰,कोट्टयम्	1973
74	इन्ड्यम माडोक्कित्तल्ल [वि]	टाटापुरम सुकुमारन एन॰बी॰एस॰,कोट्टयम	1960
75	इरविक्कुट्टिपिल्लपाट्टु	[सं] काञ्ञिरक्कुलम कोच्चु कृष्णनाडार	
76	पेवर मार्क	डा॰चुम्मार चून्टल एन॰बी॰एस॰,कोट्टयम	1976
77	ओरु मुल्लाटन पाट्टुकल	किळिमानूर विश्वंभरन पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस	1961
78	कळियाट्टम	सी॰एम॰एस॰ चन्तरो	1967
79	कलालोकं	के॰पी॰नारायण पिषारोडी मंगलोदयं लिमिटेड, त्रिशूर	1960

80	कुम्माट्टि	डा॰चुम्मार चून्टल एन॰बी॰एस॰,कोट्टयम	1971
81	केरल चरित्रत्तिले इरुण्ड एडुकल-इलमकुलम	एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1964
82	केरलत्तिले नाटोटि नाटकड्डल	डा॰एस॰के॰ नायर, एन॰बी॰एस॰,कोट्टयम	1965
83	केरलत्तिले नाटन पाट्टुकल	किलिमानूर विश्वंभरन एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1957
84	केरलत्तिले आफ्रिका	के॰पानूर एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1965
85	केरल पाणिनीयं	ए॰आर॰राजराज वर्मा एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1956
86	केरल भाषयुडे विकास परिणामड्डल-इलंकुलम	एन॰बी॰एस॰,कोट्टयम	1960
87	केरल भाषा विज्ञानीयं	डा॰के॰गोदवर्मा	
88	केरल साहित्य चरित्रम,भाग-1,5	उल्लूर एस॰ परमेश्वरय्यर केरल विश्वविद्यालय	1967
89	केरल भाषा साहित्य चरित्रम	आर॰ नारायण पणिक्कर	1960
90	केरलत्तिले कृस्तीय चरित्रम	डा॰ पी॰जे॰ थामस एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1964

91.	केरलियुटे कथा	एन.कृष्ण पिल्ले एन.बी.एस., कोट्टयम	1975
92	चरित्रवुं संस्कारवुं	डा.टी.के.रवीन्द्रन पूर्णा पब्लिकेशन्स, कालिकट	1971
93	चेङ्कम्पूर कुञ्ञाति	वेट्टियार ए.प्रेमनाथ प्रभात प्रिन्टिंग एण्ड पब्लिशिंग, ट्रिवान्ड्रम	1964
94	जनकीय गानङ्ङल	अप्पुकुट्टिगुप्तन एन.बी.एस., कोट्टयम	1960
95	तच्चोलि ओतेनन	कटत्तनाट्टु माधवि अम्मा एन.बी.एस., कोट्टयम	1970
96	तच्चोलि पाट्टुकल	के.वी.के. नंपियार	1970
97	तोररम पाट्टु	जी. शंकर पिल्ले एन.बी.एस.,कोट्टयम	1958
98	द्राविडवृत्तङ्ङलुम अवयुडे दशापरिणामङ्ङलुम	अप्पन तंपुरान, मंगलोदयं	1960
99	नम्मुडे दृश्यकलकल	के.आर.पिषारोडी एन.बी.एस., कोट्टयम	1963
100	नम्मुडे नाडन कलकलुं नाडोडि पाट्टुकलुं	वेट्टियार ए.प्रेमनाथ एन.बी.एस.,कोट्टयम	

101	नाडोडिप्पाट्टुकल	तामरश्शेरि गोविन्दनकुट्टी वी॰के॰ब्रदर्स, कालिकट	1960
102	नीतिकथा	शूरनाट्टु कुञ्ञन पिल्ले यूनिवेर्सिटी प्रेस	1960
103	पद्यगोल प्रपंचं	वळ्ळत्तोल राजराजवर्मा एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1967
104	पय्यन्नूर पाट्टु	सी॰एम॰एस॰ चन्तेरा मातृभूमि	1967
105	पद्यपाट्टुकल	ए॰डी॰हरिशर्मा एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1961
106	परिप्रेक्ष्यं	एन॰वी॰कृष्णवारियर एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1964
107	पाट्टुकल भाग - 1,2	मंगलोदयं, लिमिटेड,त्रिशिवपेरूर	1963
108	प्राचीन केरलम्	ए॰आर॰बालकृष्णवारियर एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1964
109	हुस्नुल जमाल,बदरुलमुनीर	मोयिन कुट्टि वैद्यर, आमिना बुक्स	1960
110	भाषयुं साहित्यवुं मलयाळपरिचियुं	इलंकुलम एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1964
111	मतिलकत्तु कथप्पाट्टु	कािञ्ञारकुळम कोच्चुकृष्णनाडार	

112	मावारतम् पाट्टु	डा॰सी॰अच्युतमेनोन यूणिवेर्सिटी, मद्रास	1957
113	रामकथप्पाट्टु	डा॰पी॰के॰नारायणपिल्लै एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1970
114	लीलातिलकं	शूरनाट् कुञ्ञन पिल्लै एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1968
115	लीलातिलकं	इलंकुलम कुञ्ञनपिल्लै एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	
116	वडक्कनपाट्टुकल [संपूर्ण]	श्रीरामविलासम प्रेस, कोल्लम	
117	तेक्कन पाट्टुकल	,,	
118	तेक्कन पाट्टुकल	,,	
119	वृत्तशिल्पं	कुट्टिकृष्णमारार मातृभूमि	1968
120	पूंतानं कृतिकल	के॰आर॰ ब्रदेस, कोषिक्कोड	
121	श्री अय्यप्पन	डा॰एस॰के॰ नायर एन॰बी॰एस॰, कोट्टयम	1965
122	संक्रांति	सुमन प्रकाशन,कोषिक्कोड	1970
123	साहित्य चरित्रम प्रस्थानङ्ङलिलूटे	[सं] डा॰के॰एम॰जार्ज एन॰बी॰एस॰	1973
124	साहित्य भूषणम्	कुट्टिकृष्ण मारार मातृभूमि	1961

125 संपूर्ण नाटक पाट्टुकल — कल्लाणिक्कल कृष्णनाशान — 1970

126 महर्ष नाटक पाट्टुकल {भाग-1} — " — सुमन प्रकाशन, कोषिक्कोड — 1970

127 सन्तान गोपालं पाट्टु — कुञ्चिक्कुट्टन तंपुरान — मंगलोदयं लिमिटेड — 1957

अंग्रेज़ी

128 An introduction to popular Religion and Folk-lore of north India. — Crook.W — West Minister, London — 1894

129 An outline of Indian Folk-lore — Durga Bhagavat — Popular Book Depot, Bombay — 1952

130 A study of orisan Folk-lore — K.B. Das — Viswabharathy Santhinikethan — 1953

131 A History of Indian Literature — Wintenitz, L.P. — University of Culcutta — 1959

132 A History of Malayalam Literature — Krishnachaitayna — Orient longman, New Delhi — 1971

133 A Servey of Malayalam Literature — Dr. K.M. George — Orient longman, New Delhi — 1965

134 A Study of Malayalam meters — N.V. Krishna Warrier — South Indian Books — 1964

135 Ballads of North Malabar — Dr. Chelanat Achutha Menon, Madras University Press — 1960

136 Caste and tribes of Cochin — L. Krishna Ayar — South Indian Books — 1960

137 Cambridge History of English literature — Cambridge University Press, London

138 Chambers Encyclopaedia Ist Edn.

139 Coloumbia Encyclopaedia 3rd Edn.

140 English and scottish popular Ballads — Chield.F.J. (Edited by Kutteredge and surgent) Hungton Mulffian & Co. — 1932

141 Encyclopaedia Britanica (Vols. 1 - 7)

142	Encyclopaedia Americana (Vols. 1-10)	America	
143	Encyclopaedia of Relegion and Ethics: 4th Edn.	Edited by James Hastings Vols. 1-12) New York	
144	Fundamentals of Folklore	Rever, T.R. Anthropology Publications Oosterhout, Nether lands.	1962
145	Four symposia on Folk-lore	Indian University Press Bloomme tonu, U.S.A.	1953
146	Greek Lyric poetry	Bowara C.M. Oxford University Press, London	1960
147	History of Kérala	A. Sreedhara Menon, N.B.S., Kottayam	1965
148	Hindu manners customs and ceremonies	Dubois.L, Larendon Press, London	1906
149	Hindi Folk-Songs	Shieref.A.G. Hindi Mandir, Allahabad	1936
150	Journal of American Folk	Folk-lore (6) Dorsey, J.O.	1893
151	""	(16) Chamberitan	1897
152	""	(38) ''	1903
153	""	(38) ''	1925
154	""	(68) ''	1955
155	Literature among the premative–John Greenway	Folk-lore Associates, Pensylvania, U.S.A.	1964
156	Linguistic survey of India Part 1,2, Vols.III to IX	Grierson, S.G. Calcutta	1889
157	On Literature	Gorky, M(Arlecles and speeches Foreign Languages Press, Moscow	1937
158	Oxford English Dictionary:	Oxford, London	
159	On folk-lore in the Stories–	Crook, W, (Introduction to Hantins taleo) John merry and Co., London	193
160	Poetry and the People	Kenneth Richmond, Othans Books, London	198

161	Russian Folk-lore	Sokolove,Y.M. Translated by Smith Mecmillan and Co.New York	195
162	Race Language and Culture	Boas Franz. Mecmillan & Co. New York	196
163	Songs of the forest	Elvin,V Hivale George Allen and Univer, London	
164	Society	Maciver,R.M. Macmillan and Co. London	195
165	Standrad Dictionary of Folk-lore, Mythology and Legend, Vol.1,2,	Edited by: Maria Leach Funk and Wagnalls Co. New York	
166	The American Rythm:	Austian Mary (Studies and experiences Amerindian Folk-songs) Houghton Mufflin and Co- Boston:	193
167	The Mythology of the Hindus:	Charles coleman Parbury Allen and Co-London	183
168	The History and origin of Language:	Diamond.A.S. Methien and Co. London	196
169	The new Golden bough:	Fraser,J.G. Edited By Gaster: Crilerian Books, New York	195
170	The Mythology of Aryan nations-	Cox.G.W. (Chowkhamba Sanskrit Series office, Varanasi)	196
1971	The Science of Folk-lore:	Krappe-A.H.Barnio and Noble New York	196
172	The Social Function of Art	Mukerjee Radhakamal Hindi Kitab House, Bombay	195